पृथ्वी दर्शन

२

ज्ञान-गंगोत्री ग्रंथश्रेणी विज्ञान-विद्याशाखा

पृथ्वी दर्शन

लेखक श्री विजयगुप्त मौर्य
अनुवादक श्री प्रवीणचन्द्र रुपारेल

भारत सरकार, शिक्षा मंत्रालयकी मानक
ग्रंथोंकी प्रकाशन-योजनाके अंतर्गत प्रकाशित

सरदार पटेल युनिवर्सिटी - वल्लभविद्यानगर

आभार दर्शन

लेखन श्री विजयगुप्त मौर्य

प्रस्तावना डा० बाबूराम सक्सेना

स्वागत श्री उमाशंकर जोशी

प्रकाशन मार्गदर्शन रविशंकर रावल ० बचुभाई रावत ० मोहनभाई पटेल

चित्र फोटो कवर – चन्द्र त्रिवेदी ० अस्तर – नगेश पिंगले

आकृतियाँ नासिककर ० खगोल विज्ञानी रसाकन रविशंकर रावल

अन्य चित्र देशी विदेशी ग्रंथों के आधार पर

ब्लॉक तारकमंडल (आणंद) ० श्री बाज (नवजीवन मुद्रणालय)

मुद्रण एवं जिल्दबंदी सम्मेलन मुद्रणालय, प्रयाग

मुद्रण शुद्धि श्री विजयगुप्त मौर्य

कागज रोहित पेपर मिल्स लि०, पारडी

योजना-दान हरि ॐ आश्रम, नडियाद।

भारत सरकार, शिक्षा मंत्रालयकी मानक-ग्रंथोंकी प्रकाशन योजनाके अंतर्गत इस पुस्तकका अनुवाद और पुनरीक्षण वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोगकी देखरेखमें किया गया है और इस पुस्तककी एक हजार प्रतियाँ भारत सरकार द्वारा खरीदी गयी हैं।

प्रकाशन तिथि

१ली आवृत्ति ३००० प्रतियाँ १२ जुलाई, १९६९

कीमत

रु० २०.०० Rs (20.00)

प्रकाशक कांतिलाल अमीन रजिस्ट्रार सरदार पटेल युनिवर्सिटी वल्लभविद्यानगर (INDIA)

मुद्रक

सम्मेलन मुद्रणालय १३ सम्मेलन मार्ग प्रयाग

प्रस्तावना

हिंदी और प्रादेशिक भाषाओंको शिक्षाके माध्यमके रूपमें अपनानेके लिए यह आवश्यक है कि इनमें उच्च कोटिके प्रामाणिक ग्रंथ अधिकसे अधिक संख्यामें तैयार किये जाएँ। भारत सरकारने यह कार्य वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोगके हाथमें सौंपा है और उसने इसे बड़े पैमाने पर करनेकी योजना बनायी है। इस योजनाके अंतर्गत अंग्रेजी और अन्य भाषाओंके प्रामाणिक ग्रंथोंका अनुवाद किया जा रहा है तथा मौलिक ग्रंथ भी लिखाये जा रहे हैं। यह काम अधिकतर राज्य सरकारों, विश्वविद्यालयों तथा प्रकाशकोंकी सहायतासे प्रारंभ किया गया है। कुछ अनुवाद और प्रकाशन-कार्य आयोग स्वयं अपने अधीन भी करवा रहा है। प्रसिद्ध विद्वान अध्यापक हमें इस योजनामें सहयोग दे रहे हैं। अनूदित और नये साहित्यमें भारत सरकार द्वारा स्वीकृत शब्दावलीका ही प्रयोग किया जा रहा है ताकि भारतकी सभी शिक्षा-संस्थाओंमें एक ही पारिभाषिक शब्दावलीके आधार पर शिक्षाका आयोजन किया जा सके।

ज्ञानगंगोत्री श्रेणीका द्वितीय ग्रंथ पृथ्वी दर्शन आयोग द्वारा प्रस्तुत किया जा रहा है। इसके मूल लेखक श्री विजयगुप्त मौर्य और अनुवादक श्री प्रवीणचंद्र रूपारेल हैं तथा पुनरीक्षक श्री गिरिराज किशोर हैं। आशा है भारत सरकार द्वारा मानक ग्रंथोंके प्रकाशन संबंधी इस प्रयासका सभी क्षेत्रोंमें स्वागत किया जाएगा।

बाबूराम सक्सेना
अध्यक्ष
वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग

निवेदन

स्वतन्त्रता प्राप्तिके पश्चात हमारे देशमें शिक्षाका विस्तार हुआ है। साथ ही उच्च शिक्षा परिपाटीके कारण ज्ञान विस्तारके नये अवसर सुलभ हुए हैं। तकनीकी क्षेत्रमें भी हम उसे कदम भर रहे हैं। इतना होते हुए भी, कई कारणोंसे, उच्च शिक्षाकी प्राप्तिके लिए साधारण छात्रके पाठ्य-सहायकोंका संबल पर्याप्त नहीं है, और विश्वविद्यालयीय छात्रका ज्ञान-व्याप भी बहुत कम प्रतीत होता है।

यह भी स्वाभाविक है कि स्वाधीन लोकतान्त्रिक समाजके सर्वांगीण विकास-आरम्भ सब साधारण शिक्षित प्रजाजनको चुनौतियाँ देने वाली अगम्य जटिल समस्याएँ ही उपस्थित होती रहें। ऐसी परिस्थितिमें बौद्धिक तालीमका ज्ञानसंचय अपर्याप्त रह जाने पर एक सुसज्ज नागरिकके रूपमें उभर व्यक्तित्वकी क्षति वैयक्तिक व राष्ट्रीय—दोनों दृष्टियोंसे प्रभावशाली पूर्तिकी अपेक्षा करती है।

इस क्षति-पूर्तिके उद्देश्यसे सरदार पटेल युनिवर्सिटीने अपनी सीमाओंमें रहकर यथासंभव, एक अल्प किन्तु सनिष्ठ प्रयास किया है, और इस 'ज्ञान-गंगोत्री' के माध्यमसे मानव विद्याशाखाके बीस और विज्ञान विद्याशाखाके दस—इस तरह कुल तीस ग्रंथोंकी मालाकी योजनाका आरंभ किया है।

महाविद्यालय स्तरके छात्र व शिक्षित नागरिकोंको ध्यानमें रखकर यह ग्रंथमाला तैयार करनेका निश्चय किया गया है। इस ग्रन्थ माला के उद्देश्य हैं

(१) अध्ययनकी इच्छावाले पाठक इन ग्रंथोंको थोड़े परिश्रमसे किंतु रसपूर्वक पढ़ें, उनकी ज्ञान पिपासा अधिक बढ़े, (२) अध्ययनके उपरांत अध्येताके चित्त पटल पर बहुविध विकासके मुख्य सोपान उभर आवें, (३) जानकारी व तथ्योंकी अनेकविधता द्वारा ज्ञान प्राप्तिका 'गुर' पाठक हस्तगत करें और (४) अध्येताओंके चित्तमें मूलभूत सत्य एवं मूल्योंके प्रति श्रद्धाका बीजारोपण हो।

इस दृष्टिसे इतिहास, चिंतन साहित्य, ललितकला और विज्ञान जैसे विविध क्षेत्रोंके विभिन्न प्रकारके आलेखनोंके लिए कुछ आधारभूत बातें स्वीकार करके ही हम अग्रसर हुए हैं। यथा—

(१) मानव विकासमें अनेक प्रेरक शक्तियाँ क्रियाशील रहती हैं, परंतु अंततोगत्वा परिस्थितियोंके परिवर्तनमें मानवीय चेतना ही प्रमुख भूमिका अदा करती है, और हरेक मानवके व्यक्तित्वके यथासंभव पूर्ण विकासकी नींव पर ही सामाजिक व सामुदायिक विकासका भवन रचा जाना चाहिए।

(२) विज्ञानका रहस्य परिवर्तनशीलतामें निहित है और अखंड शोध-वृत्ति ही उसकी कुंजी है। विज्ञानकी विश्लेषणता तथ्योंके भंडारका संचय करनेमें नहीं है किंतु बाह्य विशृंखलताओंमें अंतर्निहित संवादिता खोज लेनेमें है।

(३) अन्वेषणकी इस प्रक्रियामें मानवकी चेतना और कल्पनाशक्तिका योगदान असाधारण है, और यह वैज्ञानिक सत्य मुक्त मानवके निर्णयका ही फल है।

(४) आखिर तो विज्ञान भी अन्य मानवीय क्षेत्रोंकी भाँति मूल्योंके निर्णयके बिना मात्र यांत्रिक प्रवृत्तिके रूपमें टिकेगा नहीं। इस संदर्भमें विज्ञान और मानव विद्याओंके बीचकी ज्ञान सीमाएँ अभिन्न प्रतीत होती हैं।

(५) जीवनकी समग्रताके साथ आध्यात्मिक तत्त्वसमूल बनी सर्जन प्रवृत्तियोंके प्रति विशेष अभिमुख होना व आत्मीयता जगाना उचित है। हमारा विद्यार्थी और नागरिक सौन्दर्य निरखनेवाला बन, सौन्दर्य पहचाननेवाला बन और उसका आस्वादन करनेवाला अर्थात् परमानन्दी घूँट पीनेवाला बन ऐसी धर्ममित्र सृजन शक्तिका रहस्योद्घाटन करना चाहिए।

(६) इस ग्रंथमालाका लक्ष्य उस रहस्यको अवगत करना है कि ज्ञान केवल जानकारी नहीं है, विज्ञान भौतिक या प्राकृतिक तथ्योंका केवल संकलन या पृथक्करण नहीं है, अनुभूति केवल घटनाओंका बाह्य स्पर्श नहीं है, ज्ञानानुभूति इससे भी कुछ विशिष्ट है।

हमने सदैव इस समानताका अनुभव किया है कि उपर्युक्त बात सिद्ध करनेका कार्य अति दुष्कर है। एक ओर युवकों व नागरिकोंके स्तर, उनकी अभिरुचि, अध्ययन-क्षमता और बोध-क्षमता की सीमाएँ हैं, तो दूसरी ओर इतिहास विकासकी झाँकी करानेका कार्य कठिन है। गंभीर व कठिन समझे जानेवाले विषयोंको गंभीरतासे किंतु आस्वाद्य बनाकर प्रस्तुत करनेका कार्य लेखकों के लिए कसौटी रूप है। सम्पादकोंकी भी मर्यादाएँ होती हैं। इस प्रकार यह प्रयास महत्त्वाकांक्षी व दुराराध्य लगते हुए भी अति महत्त्वाकांक्षी किंवा असाध्य नहीं है। इस योजनाका आरंभ हमने इस विश्वाससे किया है कि गंगावतरण करानेका तो नहीं, गंगोत्तरीमें आचमन करानेका यश तो हमें मिलेगा। विदेशी ग्रंथोंके अनुवाद या रूपांतरोंको प्रस्तुत करनेके बजाय यथासंभव मौलिक अध्ययन व चिंतन प्रस्तुत करना हमारा उद्देश्य है।

अपने इस प्रयासमें हरि ॐ आश्रम नडियादवाले पूज्य श्री मोटासे, भारत सरकारके शिक्षा मंत्रालय और राज्य सरकारके शिक्षा विभागसे तथा अन्य सज्जनों और संस्थाओंकी ओरसे जो आर्थिक सहायता हमें प्राप्त हुयी है उसके लिए हम इन सभीके बहुत ही कृतज्ञ हैं। नडियाद और रांदेरके अपने भक्तों और प्रशंसकों द्वारा ज्ञान-गंगोत्री श्रेणीके ग्रंथोंके प्रकाशनार्थ दो लाख रुपयों का दान सरदार पटेल युनिवर्सिटीको दिलवाकर पूज्य श्री मोटाने ज्ञान-गंगोत्रीके इस कार्यका मंगलारंभ किया है।

मगर यह हुयी गुजराती ग्रंथ श्रेणीकी बात। इस श्रेणीके प्रथम दो ग्रंथोंके प्रकट होनेके बाद पूज्य श्री मोटाने सोचा कि यह ग्रंथ श्रेणी हिन्दी जनताके लिए भी उतनी ही उपयोगी है जितनी गुजराती जनताके लिए। और उन्होंने ज्ञान-गंगोत्रीकी हिन्दी आवृत्तिके लिए पचीस हजार रुपयेका दान सरदार पटेल युनिवर्सिटीको देनेका विचार प्रकट किया। पूज्य श्री मोटाकी यह शुभ भावना फलवती साबित हुयी। हिन्दी संस्करणके लिए अन्य व्यक्तियोंसे हमें दान

मिलने लगा और इस प्रकार इस श्रेणीके प्रथम ग्रंथ 'ब्रह्मांड दर्शन' के हिंदी-संस्करणका प्रकाशन शक्य बना। हम पूज्य श्री मोटाके और अन्य सभी सज्जनोंके बहुत कृतज्ञ हैं। हम आशा करते हैं कि हिंदी संस्करणके इस कार्यमें भारत सरकारके शिक्षा मंत्रालयसे भी हम सहायता प्राप्त होगी।

गुजरातके अनेक श्रेष्ठ चिंतकों व लेखकोंने इस योजनाके सम्पादक मण्डलके सदस्यों और परामर्श दाताओंके रूपमें अपनी सेवाएँ अर्पित कर तथा अनेक प्राध्यापकों, अध्येताओं और विद्वानोंने लेखनका दायित्व स्वीकार कर हमारी योजनाको मूर्तरूप दिया है, तदर्थ हम उनके ऋणी हैं।

ज्ञान गंगोत्री श्रेणीकी हिंदी आवृत्ति का हिंदी जगत के समक्ष लाने का श्रेय दिल्लीकी राधाकृष्ण प्रकाशन संस्थाके अध्यक्ष श्री ओमप्रकाशजीका है। उन्होंने इस ग्रंथ मालाके प्रमुख वितरक होनेकी स्वीकृति देकर हमारी योजनाको बल प्रदान किया है।

हमारी युनिवर्सिटीकी सिण्डिकेटके सदस्यों, अन्य अध्यापकों और प्रशासनीय कर्मचारियोंने 'ज्ञान गंगोत्री' के इस कार्यमें उत्साहपूर्वक सहयोग प्रदान किया है। उस बातका तथा इस योजना के सम्पादक श्री मगनलाल गांधी और सह सम्पादक श्री बंसीधर गांधीकी निष्ठिक यत्न-शीलताका यहां उल्लेख करते हुए मुझे प्रसन्नता होती है।

भारत सरकारके राज्य शिक्षा मंत्री श्री भक्तदर्शनजीने 'पृथ्वी दर्शन'की हिंदी आवृत्तिको प्रकाशनविधि करनेकी और राजस्थान सरकारके शिक्षामंत्री श्री शिवचरणजी माथुरने प्रकाशनविधि समारम्भके सभापति होनेकी सम्मति देकर हम बड़ा गौरव प्रदान किया है। इस सौजन्यके लिए हम इन महानुभावों के अत्यधिक आभारी हैं।

भारत सरकारके शिक्षा मंत्रालय द्वारा निर्धारित पारिभाषिक पदावलीका प्रयोग इस ग्रन्थ-श्रेणीमें किया गया है।

ईश्वरभाई पटे
उपकुलप
सरदार पटेल युनिवर्सिटी-वल्लभविद्यान

वल्लभविद्यानगर
३० ६ १९६९

नि

स्वागत !

'पृथ्वीका पुत्र हूँ मैं !' अथर्ववेदके ऋषिने बडे गौरवके साथ अपना ऐसा परिचय दिया है। परंतु इस पृथ्वीका हमें कितना परिचय है? पुराणोंमें भुवनकोश वर्णन है तथा हमारे पूर्वज थल व जल मार्गोंसे यात्रा करते थे, ऐसे पर्याप्त उल्लेख भी पाये गए हैं। परंतु पृथ्वी प्रदक्षिणाका हमारा ख्याल तो चार धामोंकी यात्रा तक सीमित था।

विज्ञान और यंत्रशास्त्रके विकासके कारण मानवने अब पृथ्वीका विस्तृत पट, समुद्रकी गहराइयाँ, भू-गोलका भीतर व बहिरंग वायुमंडल—इन सभीका सुचारु रूपसे परिचय कर लिया है और अब तो वह रॉकेट पर सवार होकर एक दिनमें कई बार पृथ्वी प्रदक्षिणा कर लेता है।

अनंत ब्रह्मांडमें आकारकी दृष्टिसे पृथ्वी तो बिलकुल नगण्य-सी है। कालके महाप्रवाह पर नजर डालें तो कुछ अरब वर्षों पहले पृथ्वीका नामोनिशान भी नहीं था। सूर्यसे अलग हुए, धधकती वायुसे बने गोलेके रूपमें हस्ती पानेवाली पृथ्वी, इतने वर्षोंके बाद वर्तमान स्वरूप प्राप्त करके मनुष्यादि जीवोंका निवास-स्थान बनी है। क्या पता, कुछ अरब वर्षोंके बाद यह वर्तमान मानवके जीनेके लिए निरुपयोगी भी हो जाए और शायद उसका अपना अस्तित्व भी न रहे !

पृथ्वीका अस्तित्व अनंत स्थलकालमें एक अनोखे बुदबुदेकी-सी घटना है। अमृतस्य पुत्राः—अमृतके उत्तराधिकारी मानव-बाल इसपर घडीभरके लिए अपनी जीवनलीलाके लिए आ जाते हैं।

इन मानवोंने आज पृथ्वीके वर्तमान स्वरूपका, इसकी आज तककी आयुष्य-यात्राका तथा इसके आसपासके विराट शून्यके विस्तार व स्वरूपका काफी अच्छा परिचय सुलभ कर देनेवाली वैज्ञानिक दृष्टि पायी है। यह परिचय-कथा बडी रोमांचकारी है। हमारी भाषामें ज्ञान-गंगोत्री ग्रंथश्रेणीकी प्रथम दो पुस्तकें—'ब्रह्मांड दर्शन' तथा 'पृथ्वी दर्शन'—से यह परिचय अब सर्वसुलभ होगा।

ज्ञान-गंगोत्री ग्रंथश्रेणीकी प्रकाशन-योजना शुरू करके सरदार पटेल युनिवर्सिटीने पाठक गणको ऋणी बनाया है। हमारी प्रजाकी ज्ञान पिपासा अब तेजीसे बढ रही है। ऐसी हालतमें नयी पीढीके हाथमें योग्य पाठ्य सामग्री रख देना अत्यंत आवश्यक है और इसमें भी विज्ञान विषयक पुस्तकें हमारी भाषाओंमें प्रकाशित करनेकी आवश्यकताको तो सर्वोपरि प्राथमिकता ही देनी चाहिए। कहते हैं कि कलकत्ता युनिवर्सिटीके संचालकोंने एक बार कहा कि विज्ञान विषय बंगालीमें नहीं दिया जा सकता। तब रवीन्द्रनाथने विज्ञानकी बाल सुलभ पुस्तक 'विश्व

परिचय' लिखकर उस ललकारका जवाब दिया था। आज जब श्री छोटुभाई सुथार तथा श्री विजयगुप्त मौर्य नितान्त सरल फिर भी शास्त्रीय ढंगसे 'ब्रह्माण्ड-दर्शन' तथा 'पृथ्वी-दर्शन' प्रस्तुत करने लगे हैं तब भारतीय भाषाओंके बारेमें रवीन्द्रनाथकी श्रद्धा फलीभूत होनेकी सुखद प्रतीति होती है।

यह ज्ञान गंगोत्री-ग्रंथश्रेणी पाठकोंके लिए गृह विद्यापीठका काम देगी, ऐसा इसके इन दो ग्रंथोंको देखकर निस्संदेह कहा जा सकता है।

गुजरात युनिवर्सिटी
अहमदाबाद
२०।१।१९६८

—उमाशंकर जोशी

स्वागत !

'पृथ्वीका पुत्र हूँ मैं !' अथर्ववेदके ऋषिने बड़े गौरवके साथ अपना ऐसा परिचय दिया है। परंतु इस पृथ्वीका हमें कितना परिचय है ? पुराणोंमें भुवनकोश वर्णन है तथा हमारे पूर्वज थल व जल मार्गोंसे यात्रा करते थे, ऐसे प्रमाण उल्लेख भी पाये गए हैं। परंतु पृथ्वी प्रदक्षिणाका हमारा खयाल तो चार धामोंकी यात्रा तक सीमित था।

विज्ञान और यंत्र शास्त्रके विकासके कारण मानवने अब पृथ्वीका विस्तृत पट, समुद्रकी गहराइयाँ, भू-गोलका भीतर व बहिरंग वायुमंडल—इन सभीका सुचारु रूपसे परिचय कर लिया है और अब तो वह राकेट पर सवार होकर एक दिनमें कई बार पृथ्वी प्रदक्षिणा कर लेता है।

अनंत ब्रह्मांडमें आकारकी दृष्टिसे पृथ्वी तो बिल्कुल नगण्य सी है। कालके महानीय प्रवाह पर नजर डालें तो कुछ अरब वर्षों पहले पृथ्वीका नामोनिशान भी नहीं था। सूर्यसे अलग हुए, धधकती वायुसे बने गोलेके रूपमें हस्ती पानेवाली पृथ्वी, इतने वर्षोंके बाद वर्तमान स्वरूप प्राप्त करके मनुष्यादि जीवोंका निवास स्थान बनी है। क्या पता, कुछ अरब वर्षोंके बाद यह वर्तमान मानवके जीनेके लिए निरुपयोगी भी हो जाए और शायद उसका अपना अस्तित्व भी न रहे !

पृथ्वीका अस्तित्व अनंत स्वल्पकालमें एक अनोखे बुदबुदेकी-सी घटना है। अमृतस्य पुत्रा—अमृतके उत्तराधिकारी मानव बालक इसपर घडीभरके लिए अपनी जीवनलीलाके लिए आ जाते हैं।

इन मानवोंने आज पृथ्वीके वर्तमान स्वरूपका, इसकी आज तककी आयुष्य-यात्राका तथा इसके आसपासके विराट द्युलोकके विस्तार व स्वरूपका काफी अच्छा परिचय सुलभ कर देनेवाली वैज्ञानिक दृष्टि पायी है। यह परिचय-कथा बडी रोमांचकारी है। हमारी भाषामें ज्ञान-गंगोत्री ग्रंथश्रेणीकी प्रथम दो पुस्तकों—'ब्रह्मांड दर्शन' तथा 'पृथ्वी दर्शन'—से यह परिचय अब सर्वसुलभ होगा।

ज्ञान गंगोत्री ग्रंथश्रेणीकी प्रकाशन-योजना शुरू करके सरदार पटेल युनिवर्सिटीने पाठक गणको ऋणी बनाया है। हमारी प्रजाकी ज्ञान पिपासा अब तेजीसे बढ रही है। ऐसी हालतमें नयी पीढीके हाथमें योग्य पाठ्य सामग्री रख देना अत्यंत आवश्यक है और इसमें भी विज्ञान विषयक पुस्तकें हमारी भाषाओंमें प्रकाशित करनेकी आवश्यकताको तो सर्वोपरि प्राथमिकता ही देनी चाहिए। कहते हैं कि कलकत्ता युनिवर्सिटीके संचालकोंने एक बार कहा कि विज्ञान विषय बंगालीमें नहीं दिया जा सकता। तब रवीन्द्रनाथने विज्ञानकी बाल सुलभ पुस्तक विश्व

परिचय' लिखकर उस कलाका जवाब दिया था। आज जब श्री छोटुभाई सुथारको तथा श्री विजयगुप्त मौर्यको नितांत सरल फिर भी शास्त्रीय ढंगसे 'ब्रह्मांड-दर्शन' तथा 'पृथ्वी-दर्शन' प्रस्तुत करते देखते हैं तब भारतीय भाषाओंके बारेमें रवीन्द्रनाथकी श्रद्धा फलीभूत होनेकी सुखद प्रतीति होती है।

यह ज्ञान प्रसारी ग्रन्थश्रेणी पाठकोंके लिए गृह विद्यापीठका काम देगी, ऐसा इसके इन दो ग्रन्थोंको देखकर निस्सन्देह कहा जा सकता है।

गुजरात युनिवर्सिटी
अहमदाबाद
२० १ १९६८

—उमाशंकर जोशी

यह पुस्तक क्यों?

ज्ञान विज्ञानकी सीमाएँ विस्तृत होती जा रही हैं और वे आकाश अवकाश, पाताल तथा वर्तमानमें प्रकाशवर्षकी दूरी तक पहुँच चुकी हैं जिससे अन्तरिक्षयात्री अवकाशमें उड़ने लगे हैं और चन्द्र तक करीब करीब पहुँच भी गए हैं एवं पनडुब्बियाँ समुद्रका तला छान रही हैं पर हम अभी उपन्यासोंकी दुनियामें ही बाहर नहीं निकल पाये हैं। रशिया, यूरोप, जापान तथा अमरिकामें इस वक्त महामानवोंकी नयी पीढ़ी तैयार हो रही है और हम अभी मारकाट, तोड़फोड़ तथा चीरफाड़से ही फुरसत नहीं मिलती।

फिर भी यह हकीकत है कि शिक्षाका प्रमाण बढ़ रहा है। शिक्षाका प्रसार बढ़ा है पर उसमें गहराई नहीं है। विद्यार्थी और नवशिक्षितोंकी पीढ़ी अब आगे आ रही है। उसने अध्ययनकी पाठ्य पुस्तकोंसे ज्ञान विज्ञानका आस्वाद किया है और उसकी जिज्ञासा अब उत्प्रेरित हो रही है। इस जिज्ञासाको उत्तरोत्तर उत्प्रेरित करता रहे व तृप्त करता रहे ऐसा साहित्य इस वक्त तो सिर्फ अंग्रेजीमें ही प्राप्य है। परंतु अंग्रेजी पुस्तकें बहुत ही महँगी व अप्राप्य होती जा रही हैं। अंग्रेजी भाषाका हमारा ज्ञान भी काफी कमजोर हो चुका है। प्रादेशिक भाषाओंमें ज्ञान विज्ञानकी ऐसी किताबोंका अभाव है।

जो सिनेमा देखने निकलता है वह सिनेमा देखकर ही रहेगा—फिर फिल्म चाहे अच्छी हो, चाहे बुरी। वैसे ही नवशिक्षितोंको पढ़नेके लिए कुछ चाहिए ही। अच्छी पुस्तकें प्राप्य होंगी तो वे अच्छी पुस्तकें पढ़ेंगे, अच्छी पुस्तकें नहीं होंगी तो वे निम्न कोटिका साहित्य—कुरुचि, अपराध वृत्ति, विकृति प्रेरक साहित्य—पढ़ेंगे।

हम समयके साथ कदम नहीं मिलाएँगे तो समय कुछ हमारे लिए ठहरनेवाला नहीं है। दुनिया आगे बढ़ती ही जा रही है अन्य देशोंमें महामानवोंकी नयी पीढ़ियोंका उत्थान हो रहा है पर हमारे समाजका बृहद भाग अभी तक गड्ढेमें बंद और गंदले पानीकी सी दशामें है।

'ज्ञानगंगोत्री' इस दशाको ताजगी भरने व सदा आगे बढ़ते हुए प्रसन्न प्रवाहमें बदल देनेका एक प्रयास है। 'ब्रह्मांड दर्शन' के बाद 'पृथ्वी दर्शन' हमें आसपासकी दुनियाका परिचय कराता है। असलमें इसमें पूरा दर्शन नहीं है सिर्फ झलक ही है। हमारे सूर्यमंडलमें हमारी पृथ्वी ही एक ऐसा ग्रह है जिसमें हवा, पानी व जीवनका अस्तित्व है। हवा, पानी व धरतीमें उनकी सजीव और निर्जीव सृष्टिमें इतने अजायबात हैं और करोड़ों वर्षकी उसकी उम्रमें ऐसी आश्चर्यजनक उत्क्रांति हुयी है कि इन सभीका वर्णन करने बैठें तो ऐसे दस ग्रंथ भी कम होंगे। इस ग्रंथको तैयार करनेमें मुझे कई मर्यादाओंका खयाल रखना पड़ा है। परिणामस्वरूप इसमें गणितके

आवमन मानस ही सताप करना पडा है। फिर भी एक ात अवश्य कहूँगा कि जितना श्रम और समय मैंने इस ग्रथके लिए लगाया है, आज तक किसी और पुस्तकके लिए नही लगाया।

केन्द्रीय सरकारके उप शिक्षा मत्री श्री भक्तदर्शनके हाथो इस हिन्दी आवृत्तिका प्रकाशन हो रहा है, यह बडे आनद और गौरवकी बात है।

यह पुस्तक सर्वसाधारणका सामान्य ज्ञान प्रदान करे और उनकी ज्ञान पिपासामे वृद्धि करे, यही इसका उद्देश्य है।

१५ जून, १९६९

—विजयगुप्त मौर्य

सम्पादकीय

ज्ञानगंगोत्री का यह दूसरा ग्रंथ प्रकाशित करते हमें हर्ष होता है।

प्रथम ग्रंथ 'ब्रह्माण्ड दर्शन'की उस विषयके विशेषज्ञों द्वारा 'अधिकृत ग्रंथ'के तौर पर प्रतिष्ठा की गयी है। हमारे विश्व चिंतक आचार्य श्री काका साहेबने, पुराणकी नाया 'ब्रह्माण्ड दर्शन'से प्रारंभ होनेवाली ज्ञान गंगोत्री ग्रंथ श्रेणीके उस प्रथम प्रकाशनको भारतीय परंपराके योग्य माना है। विज्ञान प्राप्तिके क्षेत्रमें हमारी भाषाओंमें रहे फासलेको एक ही पीढ़ीमें तय करनेके साहसकी हामी भरनेवाली इस ग्रंथ श्रेणीका उसे मंगलाचरण बताकर उन्होंने जो प्रशंसा की है इससे हमारा पुरुषार्थ अधिक श्रद्धान्वित व प्रोत्साहित हुआ है।

ज्ञानगंगोत्री श्रेणीका यह दूसरा ग्रंथ पृथ्वी दर्शन हमारी प्रजाको विज्ञानकी भिन्न भिन्न शाखाओंमें प्रवेश करानेवाले श्री विजयगुप्त मौर्यकी आस्वाद्य कलमसे लिखा गया है। भारतके हवामान विज्ञानके निष्णात श्री भीमभाई देसाईने इस ग्रंथमें अपने विषयसे संबंधित साहित्य देकर इस ग्रंथको अधिक समृद्ध किया है।

गुजरातके अग्रणी कवि विवेचक श्री उमाशंकर जोशीने इस ग्रंथका स्नेहपूर्ण आदर किया है। ब्रह्माण्ड और पृथ्वीका सुभग समन्वय साधनेवाले इस ग्रंथके मूल गुजराती ग्रंथका प्रकाशन, बम्बईमें ता० २६ जनवरी १९६८, गणतंत्र दिनके शुभपर्व पर आयोजित समारंभमें श्री गगनविहारी महेताके हाथों हुआ था। उस अवसर पर हमें श्री एच० एम० पटेल जैसे निपुण प्रबंध निष्णात तथा शिक्षा प्रेमीसे जो प्रोत्साहन मिला उसे हम विशेष आनंदकी बात मानते हैं।

इस ग्रंथकी यह हिंदी आवृत्ति अब जनता जनार्दनके हाथमें रखते हुए हम कृतार्थताका अनुभव करते हैं।

ज्ञानगंगोत्री

मानविकी विद्याशाखा [२० ग्रन्थ]

- मानवकुल दर्शन (विश्व-इतिहास-सोपान) ३ ग्रन्थ
- विश्व दर्शन (क्रान्तियाँ और वैज्ञानिक विकास) ३ ग्रन्थ
- भारत दर्शन (आदियुगसे अद्यतन विकास) ७ ग्रन्थ
- विदेश दर्शन (दुनियाके प्रमुख देशोंका परिचय) ३ ग्रन्थ
- साहित्य दर्शन (विश्व साहित्य गुजराती साहित्य) २ ग्रन्थ
- ललित कला दर्शन (विविध कलाएँ सिद्धांत परिचय) २ ग्रन्थ

विज्ञान विद्याशाखा [१० ग्रन्थ]

- ब्रह्मांड दर्शन
- पृथ्वी दर्शन
- स्वास्थ्य दर्शन
- जीव रहस्य
- रसायन-विद्या
- यंत्र-विद्या
- कृषि-विद्या
- परमाणु-दर्शन
- गणित-विद्या
- विज्ञान मानव और मूल्य

कुल **३०** ग्रन्थ

हरेक पुस्तककी कीमत रु० २०.०० (Rs 20.00) + डाक खर्च रु० २.०० (Rs 2.00)

प्राप्तिस्थान

राधाकृष्ण प्रकाशन

२, अन्सारी रोड, दरियागंज, दिल्ली – ६

अनुक्रम

पर्वतारोहण भी एक कला है।

१ : पृथ्वीकी सवारी

राजाकी सवारीको देखना किसे न भाएगा? दशहरेके दिन जब मैसूरके महाराजाकी सवारी निकलती तो उस मनोहर दृश्यको देखने देश-विदेशके लोग आते और रोमांचकारी आनन्दका अनुभव करते। आज हम किसी नगरके राजाकी सवारी नहीं वरन् अपनी संपूर्ण पृथ्वीकी सवारीके दर्शन करेंगे। यह दृश्य इतना तो विस्मयकारी और रोमांचक है कि ब्रह्माण्डका तो कौन जाने परंतु हमारे सूर्यमण्डलमें इसका कोई सानी नहीं है। अरबों वर्ष पहलेकी बात है। समयका पर्दा उठता है और एक विशाल बादल दिखता है। इस महाकाय बादलमेंसे हमारे सूर्य, हमारी पृथ्वी और ग्रहोंका निर्माण हुआ। पृथ्वीकी यह सवारी लगभग चार अरब वर्ष पहले निकल चुकी है।

इस चपटे बादलके बीचमें सूर्यका एक विराट गोला और उसके आसपास ग्रहोंके छोटे ...ले उत्पन्न हुए। गुरुत्वाकर्षणके बलपर ये गोले आसपासकी धूल और वायुको ग्रहण करके बड़े ...ने गए। वह विराट बादल इन गोलोंमें समा गया। उसके बचे भागसे उपग्रह और धूमकेतु ...। दस एक करोड़ वर्षमें इस प्रकार हमारे सूर्यमण्डलका निर्माण पूरा हुआ। सूर्य अपने गुरुत्वा...णकी शक्तिसे ग्रहोंको अपने आसपास घुमाने लगा। कुछ ग्रह एक अथवा अनेक उपग्रहोंको ...त चक्रको अपनी गुरुत्वाकर्षण शक्तिसे अपने आसपास घुमाने लगे। इधर-उधर भटकने बादलकी भाँति मनचले धूमकेतु विद्रोह करके सूरजदादाके कुटुम्बसे अवकाशमें भाग...ा प्रयत्न करते थे परंतु वे भी सूरजदादाके गुरुत्वाकर्षणमें फँस गए। फिर भी उनकी वृत्ति ...भाग छूटनेकी ही होनेके कारण उनकी भ्रमण कक्षा दूर लम्बगोल हो गई। इस प्रकार हमारे सूर्य मण्डलकी सवारी आ पहुँची। उसके ग्रहोंके रूपमें अनेक अनिर्दिष्ट उसकी परिक्रमा करने लगे। उन ग्रहोंमेंसे हम तो केवल पृथ्वीकी सवारीकी ही बातें करेंगे।

उसके पश्चात सूर्यके आसपास घूमता हुआ पृथ्वीका यह अग्निपिंड वायुसे प्रवाही रूप ...रण कर उबलते रसके गोलेके रूपमें ही फिरता रहा। युगों तक यह अग्निरसका गोला ...रासमें सूर्यके आसपास घूमता रहा और अपनी गरमी निकालता रहा। इसके परिणामस्वरूप ...ा सतह ठंडी होने लगी। उसके अपनी धुरीपर घूमते रहनेके कारण लोहे जैसी भारी ...ओंका रस उसके केन्द्रमें इकट्ठा हो गया और कम भारवाला रस ऊपरकी तरफ आ गया। आज हम देखते हैं कि लोहा, निकल, सोना वगैरा जैसी भारी धातुएँ गहराईमें चली गई हैं और अल्मीनियम जैसी हल्की धातुवाले शिलाखंड सबसे ऊपर रह गए हैं।

दक्षिणकी सोपान शिलाएँ

ये शिलाएँ दक्षिण भारत से लेकर सौराष्ट्र और सिंध तक फैली हैं। उनकी तहकी मोटाई बम्बई के पास १०,००० दक्षिण में ठीक मलबार सिरे तक २,००० कच्छ में २,५००, सिंध में १०० से २०० और पूर्व में ५०० फुट की है।

पृथ्वीकी यह सवारी आगे बढ़ती है। इसमेंसे भाप निकलती रहती है और कार्बन डाइ आक्साइड, मिथेन और अमोनियाके घन वातावरणमें भापके बादल छा जाते हैं। उसमेंसे सूर्यके दर्शन नहीं होते। उबलते रसवाली पृथ्वी उबलती रहती है और अधिकाधिक गरमी अवकाशमें उड़ जाती है। अग्निकी लपटों और धुएँके बादलोंके बीच कहीं-कहीं लावारस टूटा पड़ता है पुनः डूब जाता है और उसपर फिर ऊपर आये हुए लावारसकी परत जम जाती है। इस प्रकार बहुत समय बीतनेपर लावारसके महासागरपर जमकर पृथ्वीने पहले टापू प्रकट होते हैं। ये भी पुनः डूब जाते हैं और फिरसे नये टापू प्रकट होते हैं। धरतीके आदि खंड कैसे थे आज हम नहीं जानते क्योंकि वे जमकर पुनः उबलते लावारसमें डूब गए होंगे। परंतु भरतखंडमें दक्षिणके शिलाखंडोंको देखकर हम समझ सकते हैं कि महाराष्ट्रकी जमीनमें दरार पड़ी होगी और उनमेंसे लावारस बारबार उभर आया होगा। इसी प्रकार जमकर परतके ऊपर परत जमी होगी। इन शिलाखंडोंको भू-विज्ञानमें 'दक्षिणकी सोपान शिलाएँ' नामसे पहचाना जाता है।

समय बीतते अंतमें पृथ्वीकी सतह जम गई। आज अरबों वर्षोंके बाद भी वह बहुत ठंडी हुई है ऐसा तो नहीं कहा जा सकता। पृथ्वीकी तुलना सबके साथ करें, तो कह सकते हैं कि मानो सबके छिलके जितनी ही ऊपरी पतली परत अभी तक ठंडी हुई है। इस परतके नीचे दबी उष्णता बाहर नहीं निकल सकती और अन्दर किरणोत्सर्गी धातुओंके अणुओंके विभजनसे उत्पन्न गरमी उसे गरम रखती है।

उपनिषन्में पृथ्वीकी तुलना अंडेके साथ की गई है। अंडेके बीच बाल्जीव होता है उसी प्रकार पृथ्वीके केन्द्रमें धातुरसका केन्द्र, उसपर लावारससे बना मिश्र आवरण है। उसके ऊपर चट्टान मिट्टी तथा रेतसे बनी परत (या भूकवच) है जो शिला-आवरण (lithosphere) भी कहलाती है। उसके ऊपर जलमंडल (hydrosphere) है और उसके ऊपर वातावरणके रूपमें वायुमंडल (atmosphere) है। अंडेमें बाल्जीवके ऊपर पीली जर्दी, उसके ऊपर सफेदी तथा उसके ऊपर त्वचारूपी आवरण है और उसके ऊपर भी ठोस परत और सबसे ऊपर हवा होती है।
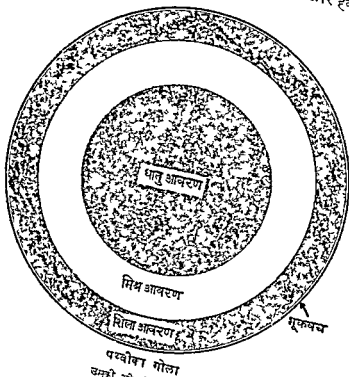
पृथ्वीका गोला
उसकी भीतरी रचना।

विषुवन्वतपर पृथ्वीका व्यास ७९२६ मील है और दोनों ध्रुवोंके बीचका अंतर लगभग २७ मील कम है, यानी पृथ्वी ध्रुवोंपर चपटी है। कृत्रिम उपग्रहोंसे पता चला है कि पृथ्वी नारंगी जैसी तो नहीं पर नाशपातीसे कुछ मिलती है। विषुव रेखापर इसकी परिधि यानी घेराव २५००० मील है।

खानमें जैसे जैसे नीचे उतरते हैं वैसे-वैसे पृथ्वीके अन्दरकी गरमी अधिक लगती है। दुनियामें सबसे गहरी खान है मैसूरमें कोलारकी सोनेकी खान और दक्षिण अफ्रीकामें रॉबिन्सन डीप (Deep) नामक खान जो करीब दस हजार फुट गहरी है। वहाँका तापमान इतना अधिक है कि ऊपरकी हवाके सहारे अन्दरकी गरमीको कम किए बिना काम नहीं हो सकता। वहाँकी चट्टानें बहुत गरम हैं। संसारका सबसे गहरा तेल-कुआँ अमरिकामें व्योमिंगमें है। वह २०,५२१ फुट गहरा है

जा पूरा चार मील भी नहा जब कि पृथ्वीका यद्र ता चार हजार मील गहरा है। अमेरिकाम उम तल-कूपम और गहरे जाएँ ता वहा इतनी अधिक गरमी है कि लाहेका मोटा बरमा भी पिघल जाए। तात्पय यह है कि दा मील गहरी खान आर लगभग चार मील गहरे तल-कूपसे अधिक गहराईपर हम निर्जीव साधनका भी नहा भेज सकत।

दुनियाके सबसे ठडे प्रदेश—दक्षिण ध्रुव प्रदेशम—भी खान या कुआ खादनम इतना ही गरमीका सामना करना पडता है। हर एक हजार फुटकी गहराइ पर ९ अश सटीग्रेड उष्णता बढ़ती है। कही अधिक भी। दा मीलकी ही गहरी खानाम ठडी हवा न भेजी जाए ता खानम काम करने वाले मनुष्य गरमीसे झुलसकर मर जाएँ। ता उधर पानाका उबालनेके लिए आवश्यक १०० अश सेंटीग्रेड गरमावाली चट्टानें आनम कितनी देर लगेगी? ससारम अनक स्थलापर गरम पानीके झरने, फुहार और भापके फुहारे निकलते है। इनस पता चलता है कि लावारसके ऊपरकी कितनी पतली परतपर जीवनका विकास हुआ है।

हर एक हजार फुटकी गहराद पर ९ अश सेंटीग्रड उष्णता बढ़ती है तो ३० मील्स अधिक गहराईम १२०० अशस भी अधिक उष्णना हागी। उमम ता कई प्रकारकी चट्टानें भी ठोस रूपम नही रह सकती। उसस थाडा और गहराई पर ता २००० अश सेंटग्रेडक बराबर उष्णताम लावारस ही हा सकता है। आज भा सक्रिय ज्वालामुखी अपन पटम लावारसका बाहर फेंककर बतात हैं कि पृथ्वीके गभम इतनी गहराई पर क्या है।

आआ अब पृथ्वीके पटम जरा झांक लें। यहा जो किरणोत्सर्गीय पदार्थोंका विसजन हो रहा है (उदाहरण स्वरूप—यूरेनियमका विसजन होकर सीसा बनता है) उसकी गरमीस पृथ्वाका गभ खदक रहा है। अनुपातम सेबक पतल छिलके सा पतली परत ही हमार और इस खदकत भागके बीच है। फिर भी हमपर उस किरणोत्सर्गी उष्णताका या किसी अय प्रकारका असर नहा हाता, यह हमारा सौभाग्य है। पृथ्वीक मध्य ३०००से ६,००० अश सेंटीग्रेड उष्णता हानेका अदाजा है और सबसे अधिक गरमीका अदाजा १०,००० अश सेंटीग्रेडका लगाया जाता है जा सूयकी ऊपरी सतहकी गरमीके बराबर है।

जस ऊपर बताया है पृथ्वीके केद्रम लोहकुल (लोह जाति)की धातुआका रस है। इस जाननके दो माग है। प्रथम भूकपकी लहरें पृथ्वीके गभस होकर जिस ढगस गुजरती हैं, उससे कहा जा सकता है कि य लहरें कसे माध्यमस होकर गुजरी ह। धरतीम खनिज तल है या नहा यह भी इन लहरोंक द्वारा जाना जा सकता है। दूसरा माग है आकाशसे गिरती उल्काआका जाचनका। किसी समय मगल और गुरुक बीच एक ग्रह था जा फटकर टकडे टुकडे हा गया। इन अवशेषोंमे जा उल्काएँ पृथ्वीपर अभी तक गिरती रहता है उन उल्काआम भी लोहा और पत्थर हाता है।

अब हम पृथ्वीकी ऊपरी परतका जाच शुरू करें। ऊपरके भूकवचम मिट्टी और धूल है। नीचे भाठकी बनी जलनिर्मित चट्टानें है। उनके नीचे लावारसके जमनेसे बनी अग्निनिर्मित चट्टानें है। जलनिर्मितका अथ यह है कि पानी द्वारा बहकर मिट्टीके एक स्थानसे दूसरे स्थानपर पहुँचनके बहुत कालके बाद, उस परके दबावसे बनी चट्टान। जलनिर्मित और अग्निनिर्मित चट्टानें मिलकर पृथ्वीपर करीब चालीस मील मोटी परत बना है। गहरे समुद्रम यह परत पतली है।

चालीस मीलकी इस परतमें मुख्य रूपसे ग्रेनाइट और बसाल्ट होता है। इसके नीचे लोह पत्थरका आवरण है। उसमें पत्थरकी अपेक्षा लोहेका प्रमाण अधिक है। इस घनस्वरूप आवरणके नीचे प्रवाही रूपमें निकल-लोहका आवरण है और उस आवरणके नीचे घनरूप निकल-लोहका वजनदार ठोस पदार्थ है। उसकी बनावट, घनता और मोटाईका नाप आकृतिमें बताया गया है।

बनावट	घनता	मोटाई-मील में
ग्रेनाइट बेसाल्ट घनस्वरूप	२' से ३४	३ से ४०
पत्थर और लोहा लोहा अधिक	५५	१८००
निकल-लोह प्रवाही	९५ से १२	१४००
निकल लोह ठोस	१४५ से १८	८००
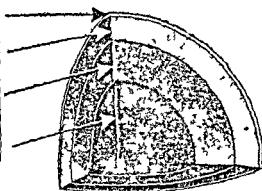
परन्तु हम मान लें कि धरतीके पेटमें लावारस खदकता है तो वह ठीक नहीं होगा। क्योंकि ऊपरके स्तरोंका इतना तो भयंकर दबाव है कि लावारसको खदकनेका स्थान ही नहीं मिल पाता। खदकनेकी बात तो दूर रही धातुओं और पत्थरोंका यह 'रस' प्रवाही रूपमें भी नहीं है। ऊपरका भारी दबाव उसे बहने तक नहीं देता। इससे वह प्लास्टिक स्थितिमें ही है। यदि हम पृथ्वीके केन्द्रकी ओर जाएँ तो आधे रास्तेमें ही प्रति वर्ग इंचपर ऊपरके स्तरोंका दबाव २ ००,००,००० पाउंड होता है। केन्द्रमें तो दुगुनेसे भी अधिक—प्रति वर्ग इंचपर ४६५ ००,००० पाउंड। इस प्रकार पृथ्वीके गर्भमें गरमी और दबावके बीच संग्राम चलता रहता है। गरमीसे पदार्थ फूलता है और ऊपरके दबावसे दबता है। पृथ्वी फट नहीं जाती इसका मुख्य कारण यही है कि इन परस्पर विरोधी शक्तियोंसे संतुलन बना रहता है।

पृथ्वीकी जमी हुई परतोंमें दो जातिकी चट्टानें हैं। नीचेका स्तर बसाल्ट नामकी भारी चट्टानका बना है। ज्वालामुखीके मुखमेंसे जो लावारस निकलता है वह जमकर बेसाल्ट बन जाता है। बसाल्टके ऊपर हल्के ग्रेनाइटकी चट्टानोंका स्तर है।

पृथ्वीके अन्तरको चित्ररूप और अधिक स्पष्ट करनेके लिए अद्राव्य पदार्थ युक्त पानीसे भरी बोतलके साथ उसकी तुलना करें। थोड़े समयके बाद पानीमें स्थित सबसे भारी पदार्थ नीचे बैठ जाएगा, फिर उससे कम भारवाला उसके ऊपर उससे भी कम भारी पदार्थ जमेगा। उसके ऊपर मटमैले पानीमें हल्के तरल पदार्थ तरल होंगे और सबसे ऊपर स्वच्छ पानी होगा। इसी प्रकार

जो पूरा चार मील भी नहा जब कि पथ्वीका केद्र तो चार हजार मील गहरा है। अमेरिकाने उस तल-कूपम और गहरे जाएँ तो वहा इतनी अधिक गरमी है कि लोहेका मोना वरमा भी पिघल जाए। तात्पय यह है कि दो मील गहरी खान और लगभग चार मील गहरे तल-कूपसे अधिक गहराईपर हम निर्जीव साधनको भी नही भेज सकते।

दुनियाके सबसे ठडे प्रदेश—दक्षिण ध्रुव प्रदेशम—भी खान या कुआ खादनेम इतनी ही गरमीका सामना करना पडता है। हर एक हजार फुटकी गहराइ पर ९ अश सेंटीग्रेड उष्णता बढती ह। कहा अधिक भी। दो मीलकी ही गहरी खानोम ठडी हवा न भेजी जाए ता खानम काम करने वाले मनुष्य गरमासे झुलसकर मर जाएँ। ता उधर पानीको उबालनके लिए आवश्यक १०० अश सेंटीग्रेड गरमीवाली चट्टानें आनेमे कितनी देर लगेगी? ससारम अनेक स्थलापर गरम पानीके झरन, फुहारे और भापके फुहारे निकलत है। इनसे पता चलता है कि लावारमके ऊपरकी कितनी पतली परतपर जीवनका विकास हुआ है।

हर एक हजार फुटकी गहराइ पर ९ अश सेंटीग्रेट उष्णता बढती है तो ३० मीलस अधिक गहराईम १२०० अशसे भी अधिक उष्णता होगी। उसम ता कई प्रकारकी चट्टाने भी ठोस रूपम नही रह सकती। उससे थाडी और गहराई पर तो २००० अश सेंटीग्रेडके बराबर उष्णताम लावारस ही हा सकता है। आज भी खदकते ज्वालामुखी अपन पटम लावारसका बाहर फेंककर बताते हैं कि पथ्वीके गभम इतनी गहराई पर क्या है।

आओ, अब पथ्वीके पटम जरा झाक लें। यहा जो किरणोत्सर्गीय पदार्थोका विसजन हो रहा है (उदाहरण स्वरूप—यूरेनियमका विसजन होकर सीसा बनता है) उसकी गरमीसे पथ्वीका गभ खदक रहा है। अनुपातम सबके पतले छिलके सी पतली परत ही हमारे और इस खदकते भागके बीच है। फिर भी हमपर उस किरणोत्सर्गी उष्णताका या किसी अन्य प्रकारका असर नहा हाता यह हमारा सौभाग्य है। पथ्वीके मध्य ३०००स ६००० अश सेंटीग्रेड उष्णता होनेका अदाजा है और सबस अधिक गरमीका अदाजा १०,००० अश सेंटीग्रेडका लगाया जाता है जा सूयकी ऊपरी सतहकी गरमीके बराबर है।

जैसे ऊपर बताया है पथ्वीके केद्रम लोहकुल (लोह जाति)की धातुओका रस है। इसे जाननेके दो माग हैं। प्रथम भूकपकी लहरें पथ्वीके गभसे होकर जिस ढगसे गुजरती है, उसम कहा जा सकता है कि य लहरें कसे माध्यमसे होकर गुजरी है। धरतीम खनिज तेल है या नही यह भी इन लहराके द्वारा जाना जा सकता है। दूसरा माग है आकाशसे गिरती उल्काओका जाचनेका। किसी समय मगल और गुरुके बीच एक ग्रह था जा फटकर टुकडे-टुकडे हा गया। इन अवशेषोसे जो उल्काएँ पथ्वीपर अभी तक गिरती रहती है उन उल्काओम भी लोहा और पत्थर होता है।

अब हम पथ्वीकी ऊपरी परतकी जाच शुरू करें। ऊपरके भूकवचम मिट्टी और धल है। नीचे भाठकी बनी जलनिर्मित चट्टानें हैं। उनके नीचे लावारसके जमनसे बनी अग्निनिर्मित चट्टानें हैं। जलनिर्मितका अथ यह है कि पानी द्वारा बहकर मिट्टीके एक स्थानसे दूसरे स्थानपर पहुचनेके बहुत कालके बाद, उस परके दबावमे बनी चट्टान। जलनिर्मित और अग्निनिर्मित चट्टान मिलकर पथ्वीपर करीब चालीस मील मोटी परत बनी है। गहरे समुद्रम यह परत पतली है।

पथ्वीके अतरम सबसे नीचे, केन्द्रम सबसे भारी धातुएँ गालेके रूपम बठ गई हैं जो इतनी गरम हैं कि सफेद दिखती होगी। उनके ऊपर कम भारवाले लोहा, मेग्नशियम, सिलिकेट आदिका आवरण है जो सभवत लाल होगा। उसपर कम गरम और काले वेसाल्टका आवरण है और उसपर ग्रेनाइटका तथा इन दोनो प्रकारकी चट्टानोके घर्षणसे बनी मिट्टी रेत धूल ककड वगराका आवरण है। जो भी खनिज हम मिल पाए हैं व अधिकतर इन वेसाल्ट और ग्रेनाइटक आवरणोंम स्थित है। अल्मीनियम जैसी हलकी धातु जिसमसे निकलती है उस बाक्साइटसे लेकर सोने जसी भारी धातुए इसी जमी हुई परतम हैं। आप बसाल्टकी चट्टानें देखना चाह तो इसके लिए ज्वालामुखी पवत पर जानकी जरूरत नही। माथेरानके किसी भी पाइट पर खडे रहकर आसपास नजर डालें। आपका हर जगह जम हुए लावारसके स्तर पर जमे स्तरोकी सीढ़ीनुमा शिलाएँ दिखाई देंगी। आप गिरनार पर चढें तो आपको वेसाल्ट और ग्रेनाइटकी अनेक विशाल चट्टानें देखनेको मिलेंगी। स्फटिक अभ्रक आदि दानेदार (मणिभ) तथा हलके खनिज ग्रेनाइट होते हैं

पथ्वीके अतरम कुछ झाक लेनेके बाद चलिए अब सवारीको आगे बढते देखें। पथ्वीका ऊपरी स्तर ठडा हुआ उससे पहले हमन उस खदकते, उबलते लाल-पीले लावारस और अग्नि शिखाओके गोलेके रूपम देखा था। भाप और धुएँके बादल आकाशम उठते थे और आकाशमसे गिरती हुई उल्काएँ इस रसम गिरकर अग्निरसके फुहार उडाती थी। बादलो और भापके कारण आकाश अनेक दिनो तक ही नहा पर वर्षों तक घनघोर बना रहता था। पथ्वीका वातावरण गरमीके कारण सूज सिमक रहा था। उसकी हवाम मुख्य रूपसे अमोनिया, कार्बन डाइआक्साइड, मिथेन तथा भाप थे। जहा गरम रस ग्रेनाइटकी चट्टानोका रूप लेता वहा वे चट्टानें लावारसम तरन उतरान लगती मानो समुद्रम तरती बहती हिमशिलाएँ हो। य शिलाएँ कभी डूबती, कभी घुलकर लावारसम मिल जाती तो कभी पुन जमकर चट्टानोका रूप धारण करती थी।

कालातरम आखिर पथ्वीकी पतली सतह जम गइ। इतन पर भी कभी-कभी ऊपरी सतहको फाडकर लावारस ऊपर चढ आता फट जाता और फिर जम जाता। अन्तम बसाल्टकी बुनियादपर ग्रेनाइटकी धरतीन जड जमायी। पर वह भी क्या धरती थी? अगारेकी तरह धधकती बार-बार भूकपोकी परम्परासे कापती, जगह जगह फटती अतरम लावारस और वायुओके दबावस खडखडाती यह पृथ्वी दिनम भी सूयदवक दशन नही कर पाती थी।

सकडो, हजारो लाखो और करोडो वष बीत गए। पथ्वीमसे लावारसकी भाप निकलकर आकाशम चढ जाती है और ठडी होकर कुछ जमकर बादल बनकर बरसन लगता है। बद धाराओका रूप धारण करती है और धाराएँ मूसलाधार रूपम बरसती ह। दिन और रात सदियो तक और हजारो वर्षों तक, य बादल बरसत ही रह। घनघोर अधकारम पथ्वी चिलकती रही। परन्तु इस धधकती धरतीपर ठडी बूदें पडी नही कि छनकर आवाजके साथ पुन भाप बन जाती और आकाशम उड जाती। अधिक और अधिक बरसात बराबर पडती रही। इससे वातावरण अधिक और अधिक बाष्पमय बनता गया। बरसातके कारण धरती तो कुछ ठडी हुई परतु अब पानी छनकर भापके रूपम न बदलकर बहुत ही गरम होकर पथ्वीके निचले भागोम इकट्ठा होन लगा और खदकने लगा, उबलन लगा तथा भापका रूप धारण करन लगा। इस प्रकार समुद्रका जन्म हुआ। प्रारम्भका समुद्र इस प्रकार बहुत ही गरम था। सदियो तक इसी प्रकार चलता रहा।

पृथ्वीके भीतर गरम प्रवाहोंके ऊपर उठनेके कारण,
ऊपरी सतहके ऊपर उठनेसे पहाड़ोंका निर्माण हुआ।

पृथ्वीका स्तर बढ़ते हुए पानीकी सतहके नीचे अधिकाधिक डूबता जाता था और ठंडा होता जाता था। अंतमें सारी पृथ्वी इस नये बने समुद्रमें डूब गयी।

हमारे पुराणोंमें कथा है कि पृथ्वी जब समुद्रमें डूब गयी तो उसे बाहर निकालनेके लिए विष्णुसे प्रार्थना की गई और विष्णुने वराह (सूअर)का रूप धारण कर, अपनी नाकपर उठाकर पृथ्वीको बाहर निकाला।

पृथ्वी सचमुच समुद्रमें डूब गई थी और यदि भूकंपोंको वराहके रूपमें देखें तो यह पुराण-कथा सत्य मालूम होती है। पृथ्वीको समुद्रके तलमेंसे बाहर निकालनेवाले ये भूकंप ही थे। ये भूकंप कितने भयंकर और प्रचण्ड होंगे! पृथ्वीपर उन्होंने कितना उत्पात मचाया होगा!

यह सब होनेसे पहले एक महत्त्वकी घटना और हुई। चन्द्रके जन्मकी कहानी तो जब निकट भविष्यमें कोई अंतरिक्षयात्री चन्द्र पर उतरेगा तभी मालूम होगी। पर वर्तमान प्रचलित मत है कि जब पृथ्वी प्रवाही रसका गोला थी, उस समय भी सूर्यके गुरुत्वाकर्षणके कारण उसमें ज्वार आता था। कालान्तरमें जब यह रस जमकर गाढ़ा होने लगा और प्लास्टिक स्थितिमें आने लगा तब जिस स्थानपर सूर्य होता उस स्थानपर ज्वारके कारण रस इकट्ठा तो हो जाता, पर फिर पूरा उतर न सकता था—भाटा न हो पाता था। इस प्रकार एक समय तो वह रस इतना इकट्ठा हो गया कि पृथ्वीके भ्रमण और सूर्यके गुरुत्वाकर्षणके कारण उसका ऊपरी भाग उससे अलग होकर अंतरिक्षमें चला गया और वह चन्द्रके रूपमें पृथ्वीके आसपास घूमने लगा। ऐसा माननेवालोंकी राय है कि जहाँ आज प्रशान्त (पैसिफिक) महासागर है वहाँ वह ऊँचा हुआ होगा और चन्द्रके रूपमें

वहाँका हिस्सा अलग हो जानेपर वहाँ एक गहरा गड्ढा बना और फिर पानी भर जानेसे वह सबसे गहरा प्रशान्त सागर बना। पृथ्वीकी सतहपरका ग्रेनाइटका ही कुछ हिस्सा चन्द्रमा चला जानेके कारण प्रशान्त महासागरके तलेमें बेसाल्टके स्तर हैं।

पृथ्वीकी सवारी अब आ पहुँची। आज वह अपनी धुरीपर एक हजार मीलकी गतिसे घूम रही है—अर्थात परिभ्रमण करती है और सूर्यके आसपास प्रति सेकण्ड २० मीलकी गतिसे परिक्रमा कर रही है। सूर्यदादा अपने पुत्रों अर्थात ग्रहों, पौत्रों अर्थात उपग्रहों अथवा चन्द्र और उनसे भाग छूटनेवाले, नादान बच्चे धूमकेतुओंके बने अपने परिवारके साथ आकाशगंगा नामक तारक विश्वके केन्द्रके आसपास एक सेकण्डमें १७० मीलकी गतिसे घूम रहे हैं। यह तारकविश्व गाड़ीके पहियेकी आकृतिसे मिलता जुलता है। इसमें अरबों तारे अर्थात सूर्य हैं जिसमें हमारा सूर्य और हम उस पहियेकी धारके करीब हैं। इस सम्बन्धमें बहुत कुछ हमने ब्रह्माण्ड दर्शनमें देख लिया है।

२ : पानी और पृथ्वीके बीच युद्ध

पृथ्वीकी सारी जमीन समुद्रमें डूबी हुई हो और पानीमें एक गोलेकी भांति पृथ्वी अपनी धु
पर लट्टूकी तरह घूमती हुई सूर्यके आसपास फिरती चली जाए, यह दृश्य कैसा लगता है? समु
जन्मके बाद पृथ्वी सचमुच ऐसी ही थी परंतु जल और स्थलके बीच लगातार युद्धमें पृथ्वीने अपने
हार नहीं मानी थी। शैशवमें फुफकारती पृथ्वी बाहर आता था ज्वालामुखियोंके रूपमें अपना गाय
प्रकट करती थी और डूब जाती थी। युगों तक यह संग्राम चलता रहा और आज भी किसी रूपमें
चल रहा है। आप यह पुस्तक पढ रहे हैं इस समय भी कहीं न कहीं ज्वालामुखी समुद्रमेंसे बाह
जानेका प्रयत्न कर रहा है और समुद्र भी उसे डुबा देनेकी कोशिश कर रहा है।

हमारी पृथ्वी सूर्यमंडलमें बेजोड है। और सूर्योंके अपने ग्रह हैं या नहीं, हैं तो कैसे हैं यह हम
नहीं जानते। पर हमारे सूर्यमंडलमें किसी भी ग्रहमें अनुकूल उष्णता पानी हवा और जीवन हो
तो सिर्फ हमारी पृथ्वी पर ही है। मंगल पर कुछ अंशमें पानी और फफूंदी या काई जैसी निम्न
श्रेणीका जीवन होनेका अनुमान लगाया जाता है। उसे छोडकर और किसी ग्रहमें समुद्र तो क्या
पानी भी नहीं है और हवा भी नहीं है। शुक्र भी इसमें अपवाद नहीं। गुरु शनि वगैरा दूरके ग्रहोंमें
पानी अगर होगा भी तो वह बर्फके रूपमें होगा। इस प्रकार सूर्यकी संतानोंमें सिर्फ हमारी पृथ्वी
ही भाग्यशाली है। यह अणु विस्फोट द्वारा विनष्ट करनेके लिए नहीं पर ज्ञान और विज्ञानकी
सहायतासे मेलजोल और सहयोगसे सुख और समृद्धि पानेके लिए है।

आज भी पृथ्वीकी सतहका ७० ८ अंश यानी कि लगभग ७१ प्रतिशत सतह पानी द्वारा ढकी
हुई है। इससे एक विद्वानने तो कहा है कि पृथ्वीको सागर नाम देना चाहिए।
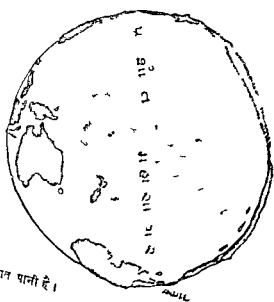
पृथ्वीकी सतहपर ७० ८ प्रतिशत पानी है।

किरणोत्सर्गी काल मापन पद्धति द्वारा पता चलता है कि हमारी पृथ्वीकी उम्र करीब साढे चार अरब वर्षोंकी होनी चाहिए। परन्तु समुद्रकी उम्र जानी नहीं जा सकती। १७वी शताब्दीमें एक आयरिश धर्मगुरु जेम्स उशरने बाइबिलके आधार पर बताया है कि पृथ्वीका जन्म ई० सन् पूर्व ४००४ वर्ष अक्टूबरकी २२ तारीख शनिवारकी सुबह साढे आठ बजे हुआ था। विज्ञान तो ऐसा निश्चित निर्णय आज भी नहीं दे सका है। हमारे समुद्रों और महासागरोंके आकार जो आज निश्चित है वैसे भूतकालमें न थे। यद्यपि एक मत तो ऐसा भी है कि आज प्रधान महासागरों और प्रधान महाद्वीपोंके जो आकार है, भूतकालमें वे इनसे बहुत जुदा न थे। इसी मतके अनुसार प्रशान्त महासागरकी जगहसे निकल कर आकाशमें दूर चले जानेवाले लौंदेसे चन्द्र बना, इस दलीलको चन्द्रकी विशिष्ट घनतासे समर्थन मिलता है। पृथ्वीकी विशिष्ट घनता ५.५ है जब कि चन्द्रकी घनता ३.३ है। पृथ्वीके जिस स्तरसे चन्द्र बना वह हल्के ग्रेनाइटका बना था और उसमें बेसाल्ट तो नाममात्रका ही गया था। पृथ्वीके अन्तरमें जो भारी रस है वह नहीं गया। इससे चन्द्रकी विशिष्ट घनता पृथ्वीकी घनतासे कम है।

जेम्स उशर
(१५८१-१६५६)

इस मान्यताके अनुसार पृथ्वी परसे चन्द्रका हिस्सा बाहर चला गया तब पृथ्वीके कायामें जो गड्ढा बना उसका असर दूसरी जगहों पर भी हुआ। कहीं पृथ्वीकी सतह धस गई तो कहीं फट गई। पृथ्वीकी अपनी धुरी परकी गतिके कारण ये दरारें चौडी हुई और दिन रात, कदाचित हजारों वर्षों तक, गिरती हुई मूसलाधार वर्षासे ये खड्डे भरते गए और नये-नये समुद्रों तथा महासागरोंने आकार पाया। कठोर या कुडकीली धरती पर बरसता यह मूसलाधार पानी चट्टानोंको तोड फोडकर कंकर, क्षार तथा धातु वगैराको बहाकर समुद्रमें ले जाने लगा। आरम्भमें समुद्र खारा न था। हमारे पुराण भी बताते है कि तब समुद्रका पानी मीठा था। युगों तक जमीनका क्षार पानीके साथ समुद्रमें गया है। हाल ही में की गई गणनाके अनुसार समुद्रमें ३३ करोड घन मील पानी है और प्रति घन मील पानीमें लगभग साठ जातिके रासायनिक मूलतत्त्व घुले हुए है। पानी स्वयं दो तत्त्वों—आक्सीजन और हाइड्रोजनका बना हुआ है। एक घन मील पानीमें चार अरब तीन करोड सत्तर लाख टन आक्सीजन है और पचास करोड नब्बे लाख टन हाइड्रोजन है। इसमें घुले अथवा पिघले हुए कुछ ही रासायनिक संघटनोंके मूलतत्त्वोंकी बात करें तो एक घन मील पानीमें नौ करोड पचानवे लाख टन क्लोरिन वायु, चार करोड पचानवे लाख टन सोडियम, इकसठ लाख पचीस हजार टन मैगनेशियम, बयालीस लाख चालीस हजार टन कैल्शियम सत्रह लाख नब्बे हजार टन पोटेशियम, एक लाख बत्तीस हजार टन कार्बन २,३५० टन नाइट्रोजन, २३५ टन आयोडिन, ४७ टन जस्ता, ४७ टन लोहा, ४७ टन अलमीनियम, १४ टन सीसा, १४ टन कलई, १४ टन तांबा ९.४ टन मैंगेनीज, २.३ टन कोबाल्ट, २.३ टन निकल, १.४ टन चांदी, २८० पाउंड पारा ४७ पाउंड हेलियम, और ३८ पाउंड सोना है। साठ के करीब मुख्य तत्त्वोंमेंसे यहां तो कुछ ही तत्त्वोंका उल्लेख किया है और यह तो प्रति एक घन मील पानीकी ही बात हुई तो ३३ करोड घन मील पानीमें कितने होंगे? अलावा इनके, युगों तक धरतीसे बहकर आता हुआ क्षार भी समुद्रमें कम नहीं होगा। समुद्रके पानीमें औसतन साढे तीन प्रतिशत नमक है। अगर समुद्रके पानीमेंसे नमक
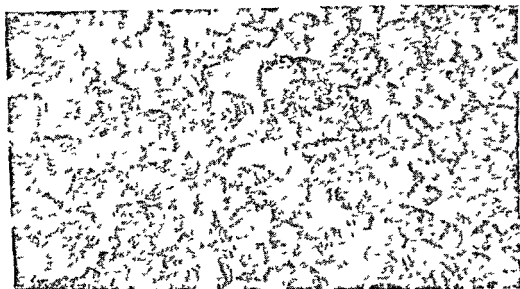
समुद्रके तलेमें—कच्ची मैंगेनीज धातुके ढोंके।

निकालकर धरती पर बिछाया जाए तो सारी पृथ्वी पर ५०० फुट माटी तह बिछायी जा सकती है।

समुद्रकी समृद्धिके बारेमें बादमें बात करेंगे। इस समय तो हम धरती और समुद्रके बीच चलते तुमुल युद्धको देखें।

प्रारंभकालकी चट्टानें तो टूट फूटकर नष्ट हो गयी होंगी। उसके बाद कितने ही भूमिखंड और टापू डूब गए होंगे, जिनके बारेमें हम नहीं जानते। पर आज तो समुद्रके बाहर जो पृथ्वी है, सिर्फ उसीके बारेमें ही कह सकते हैं कि वह कितनी पुरानी है। कनाडामें मानिटोबा प्रान्तमें दो अरब तीस करोड़ वर्ष पहले बनी चट्टानें मिली हैं। परन्तु उस समयकी पृथ्वीके नक्शेकी कल्पना कुछ नहीं हो पाती। हां, पचास से साठ करोड़ वर्ष पहलेके एशिया खंडकी झांकी हम कर सकते हैं। तब उधर एक महाखंड था, जिसके अवशेष भारतमें गोंडवाणा प्रदेशमें मिले हैं। इसीसे इस महाखंडको गोंडवाणा खंड कहते हैं। उसमें दक्षिण अमरिका, अफ्रीका, भरतखंडका दक्षिणार्ध और ऑस्ट्रेलिया समाविष्ट थे। अर्थात् इनको अलग करनेवाले एटलाण्टिक और हिंदमहासागर उस समय नहीं थे।

उस समय एशियाका अधिकांश भाग समुद्रमें डूबा हुआ था। आज जहां एशिया खंड है वहां उस समयके गोंडवाणा खंडकी भूमिका छोड़कर दो महासागर लहराते थे। हिमालय, हिंदुकुश और काराकोरमकी पर्वत-श्रेणियोंसे लेकर ठीक आल्प्स पर्वतकी श्रेणियों समेत एशिया और यूरोपकी पर्वत-श्रेणियोंकी जगह समुद्र फैला हुआ था। प्राचीनकालमें खंड किस आकार के थे यह आज हम नहीं कह सकते, क्योंकि वे खंड खंडित होकर डूब गए हैं। पर प्राचीनकालके समुद्र किस प्रकारके थे,

यह हम बता सकते हैं। क्योंकि जो समुद्र अपने स्थानोंसे हट गए हैं वे हमारे लिए निशानियाँ छोड़ गए हैं। इनसे हम उनका अता-पता लगा सकते हैं।
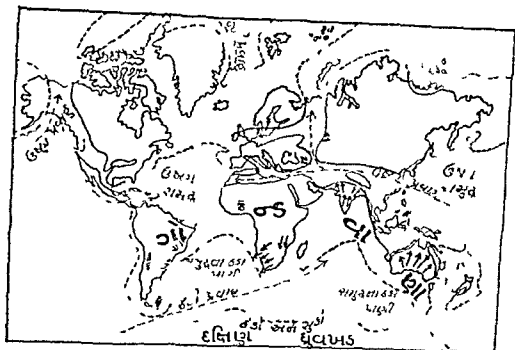
पर्मियन कालमें दक्षिण गोलार्द्धमें गोंडवाणा खंड जमीन परके शर चिह्न हिमनदोंकी दिशा सूचित करते हैं।

इस पृथ्वीका राजनीतिक और प्रजातीय इतिहास लगभग पांच हज़ारसे दस हज़ार वर्ष पहले शुरू होता है और वह पुस्तकों तथा शिलालेखोंमें लिखा हुआ है। पृथ्वीका भू-वैज्ञानिक और प्राकृतिक इतिहास तो बावन करोड़ वर्ष पहले लिखना शुरू हुआ था जो पृथ्वीकी परतोंके नीचे प्राचीन प्राणियों तथा वनस्पतियोंके अश्मीभूत अवशेषोंके रूपमें अंकित हुआ है। हिमालयमें समुद्री प्राणी तथा वनस्पतियोंके अवशेष मिलते हैं। वे बताते हैं कि यह सारा प्रदेश उस समय समुद्र तलमें था। यों भूस्तरोंके पत्तोंको जांचनेसे पता चलता है कि दो बड़े टापुओंको छोड़कर समूचे यूरोप खंडके स्थान पर समुद्र था। एशियाई रशिया तक फैला यह टापू चीनके पूर्व-पश्चिममें बिछा एक पथरीला, सँकरा भूमिखंड, इण्डोनेशियाका सम्पूर्ण भाग, दक्षिण अरब दक्षिण भारतका कुछ हिस्सा और आस्ट्रेलियाका पश्चिमी किनारा तथा आस्ट्रेलियाके पूर्वी भागको छोड़कर सारा यूरोप, एशिया, आस्ट्रेलिया और न्यूज़ीलैंड सब समुद्र तलमें थे। चीनका सँकरा पट पूर्व साइबेरिया होकर अमरिकाके पश्चिमी किनारेसे जुड़ा था। अमरिकाके पूर्व तथा पश्चिमी किनारेके बीच भी उस समय समुद्र था।

ये समुद्र बहुत गहरे नहीं थे और न ही आज समुद्रमें जितना पानी है उतना उसकी बाल्यावस्था तथा किशोरावस्थामें ही था। हजारों वर्षों तक जो पानी बरसा था वह सारा समुद्रको ही नहीं मिला था। जब उबलते रससे जमकर पृथ्वीकी ऊपरी परत बनी उस समय उसकी उष्णता ५५० से १,१०० अंश सेंटीग्रेड थी। बरसात पड़नेसे वह ठंडी हुई पर उस समय भी वह उबलते पानी जितनी अर्थात् ७०० अंश सेंटीग्रेड जितनी वह गरम थी। जैसे-जैसे अधिक बरसात हुई वैसे-वैसे धरती पर पानी बढ़ता गया और पृथ्वी तथा पानीकी उष्णता कम होती गई। जैसा कि हमने पहले देखा है उस समय इस पतली परतको भेदकर हजारों ज्वालामुखी अपनी आग लावारस, धुआं तथा भाप उगलते रहते थे। युगों तक यह भाप वातावरणमें नमीको छोड़ती रही और यही नमी बरसातके रूपमें बरसकर समुद्रके पानीमें वृद्धि करती रही। इन हजारों ज्वालामुखियोंके उत्पात पृथ्वीको गतिशील तथा परिवर्तनशील बनाए रखते थे। टापू, खंड और पर्वत श्रेणियां समुद्रमेंसे उभर कर बाहर आती थीं और फिर डूब जाती थीं। उस कालके पश्चात भी हमारा कच्छ प्रदेश तीन बार समुद्रमें विलीन हुआ तथा तीन बार फिरसे बाहर आया। जितनी बार यह समुद्रसे बाहर आया उतनी ही बार उस स्थान पर जंगल उग आया था। परन्तु फिरसे यह समुद्रमें डूबा तब भूकंपके कारण यह जंगल भूमिमें गड़ गया, जो आज भी इस स्थान पर लिग्नाइट अर्थात् कच्चे कोयलेकी परतोंके रूपमें मौजूद है।

इस पृथ्वी पर किस समय किस स्थान पर कैसा जलवायु था उसका वर्णन भी पृथ्वीकी उन परतोंमें लिखा हुआ है। दक्षिण ध्रुव प्रदेशमें आज ऐसा भयंकर शीत है कि भूमिके किनारोंको छोड़कर वहाँ जीव सृष्टि या वनस्पति सृष्टि भी नहीं है। फिर भी उसके भीतर कोयला है जो हमें बताता है कि वहां किसी जमानेमें घना जंगल रहा होगा और जहां जंगल होगा वहां जीवन भी रहा होगा ही। समुद्रमें प्रवाल द्वीप तथा चट्टानें बनानेवाले जीव उष्ण और समशीतोष्ण समुद्रोंमें ही जीवित रह सकते हैं। फिर भी ध्रुव प्रदेशोंमें इस प्रकारके जीव जब भी मिलते हैं जिनसे मालूम होता है कि उस समय उन समुद्रोंका तापमान भी ऊँचा रहा होगा। जैसे-जैसे पृथ्वीने स्वरूपमें परिवर्तन होता रहा है वैसे-वैसे उसके जलवायुमें भी परिवर्तन होता रहा है। जब पृथ्वी धधकते वायुओंका गोला थी तब सूर्यके समान गरम वायुओंका वातावरण था। जब यह उबलते रसका गोला बनी तब उस गरम भाप तथा गरम वायुओंका वातावरण मिला और जब यह भाप जमकर बादलोंके रूपमें, वाष्पोंसे भरे वातावरणके भीतर धधकती परतों और असंख्य ज्वालामुखियोंवाले लाल चिलकते गोले पर बरसने लगी तब उसके निचले हिस्सेमें उबाल दे ऐसी भापकी गरमी थी। इसके पश्चात हजारों वर्षों तक मूसलाधार वर्षा होनेके बाद पृथ्वी पर फिरसे सूर्य चमकने लगा और तब पृथ्वीका जलवायु साधारण था। इसके बाद तो तीन हिमयुग आ गए जिनमें फँसे हुए प्रदेश आजके दक्षिण ध्रुवके समान ठंडे थे।

हिमयुगके आनेके कारणोंका ठीक तरहसे पता नहीं चलता। पर एक कारण ऐसा बताया जाता है कि ज्वालामुखियोंकी प्रवृत्तियोंमें ज्वार भाटा आता रहता है। जब यह प्रवृत्ति बढ़ जाती है तब ये ज्वालामुखी वातावरणमें अत्यधिक राख उड़ाते हैं। इनसे सूर्यकी किरणें राखके कणों पर गिर कर बिखर जाती हैं। इससे सूर्यकी पर्याप्त गरमी पृथ्वीको नहीं मिलती और इससे पृथ्वीका जलवायु अत्यंत ठंडा हो जाता है।

हर युगमें समुद्रमें डूब जाना और बाहर उठ आता अमेरिका।

इसके अलावा एक कारण यह भी बताया जाता है कि उत्तर महासागरके तलेम एक ऊँची पवत श्रेणी है जो उत्तरीय महासागर और एटलाण्टिक महासागरके पानीको मिलनेसे रोकती है। पर जब बर्फ पिघलने लगती है और समुद्रकी सतह ऊँची जाती है, तब समुद्रका पानी उस पवत श्रेणीको पार कर जाता है। आज भी कुछ ऐसी ही स्थिति है। ऐसी परिस्थितिमें एटलाण्टिक पानी उत्तरीय सागरमें गिरता है और बर्फको पिघलाने लगता है।

इस प्रकार जब उत्तर महासागरकी सारी बर्फ पिघल जाती है तब हिमयुगकी पूव तयारी हो जाती है। भूमध्य रेखा पर तीव्र वाष्पी भवनसे उस समय घने बादल बनने लगते है। इससे सूर्यकी पर्याप्त गरमी पृथ्वीको नही मिलती। उसके परिणामस्वरूप पृथ्वी पर जलकी वृष्टि नही पर केवल बर्फकी वर्षा ही होती है। धीरे धीरे इस कारणसे उष्ण-कटिबंधमें बर्फकी चादर हमेशाके लिए छा जाती है।

एटलाण्टिकके गरम पानीमें ऐसे समय उत्तर ध्रुवकी तरफसे बर्फका पानी बहने लगता है जिससे सारा पानी ठण्डा होने लगता है। धीरे धीरे हर खंड पर बर्फ छाती जाती है लेकिन समुद्रकी सतह नीची होती जाती है। इसके परिणामस्वरूप उत्तर महासागरकी पवत श्रेणी अपना सिर ऊचा करती है जिससे अब उत्तरीय महासागर और एटलाण्टिकका पानी अलग हो जाता है। अब धीरे धीरे एटलाण्टिकका पानी गरम होने लगता है जब कि उत्तर महासागरका *पानी ठंडा ही बना रहता है और वहाँ बर्फ जमती* जाती है। उत्तरीय सागरमें इस प्रकार बर्फ जम जाती है तथा भूमध्य भागमें सूर्यके तापनसे बर्फ पिघल जाती है। इस प्रकार एक हिमयुग पूरा होता है।

पृथ्वीके ध्रुव जहाँ आज है वहाँ सदा नहीं रहे हैं वे भी भटकते रहे है। जिस कारणसे यह

तो कौन बताए? पर हम सब जानते हैं कि ध्रुव प्रदेशमें सूर्यकी तिरछी किरणोंके पड़नेके कारण वहां गरमी कम मिलती है। इससे वहाँ वनस्पति और गरम प्रदेशके जीव पनप नहीं सकते। फिर भी उधर प्रवालकी प्राचीन चट्टानें हैं जिनसे मालूम होता है कि किसी समय वहाँ गरम जलवायु अवश्य रहा होगा।

हिमयुगमें तो बर्फ इतनी विपुल राशिमें थी कि उसने धरतीकी आकृतिमें कई आश्चर्यजनक परिवर्तन किए। इस प्रचंड हिमराशिने अपने भार और घर्षणसे धरती पर कई घाटियाँ बना दीं और जब यह पिघलकर सरकने लगा, तब तो चट्टानों और मिट्टीकी अतुल राशियां बहा ले गयी जिससे नई जमीनका निर्माण हुआ। समुद्रमें जा गिरनेसे इन चट्टानों और मिट्टीने समुद्रको पाट दिया।

हिमयुगमें बर्फके रूपमें कितना पानी इकट्ठा हुआ होगा इसकी कल्पना करना भी मुश्किल है। आज भी दक्षिण ध्रुव प्रदेशमें इतनी बर्फ जमी है कि अगर वह पिघलकर समुद्रोंमें बहने लगे तो समुद्रकी सतह बढ़कर ऊपर आ जाए दुनिया भर के सारे बन्दरगाह तथा तटीय शहर वगैरा उसमें डूब जाएँ।

इस प्रकार जलकी जगह थल और थलकी जगह जल कर देनेमें ज्वालामुखियों और भूकम्पोंकी तरह हिमयुगने भी साथ दिया है। यों तो पृथ्वीके जन्मसे लेकर आज तक पृथ्वी पर उथल-पुथल होती ही रही है। पर ये उत्पात लगातार तथा एक सरीखे नहीं रहे हैं। बीच-बीचमें कुदरतने थोड़ा आराम भी किया है। २५ करोड़ वर्ष पहले उत्तरी अमरीकामें ज्वालामुखी फटे और परिणामस्वरूप समुद्रमेंसे उठकर एपेलेशियन पर्वत श्रेणी बाहर निकली। उस समय ज्वालामुखियोंकी संख्या और उग्रता इतनी थी कि जहां जल था वहां स्थल बना और फिर—अर्थात आजके उत्तरी अमेरिकाका रूप बनना शुरू होनेके बाद ज्वालामुखियों-की रजसे वातावरण इतना धुँधला हो गया कि धूप भी कम हो गई। उससे गरमी कम हो गई ठंड फिर से बढ़ गई और पृथ्वी पर फिरसे हिमयुगकी पुनरावृत्ति हुई। समुद्र जम गए और उस समय भारत खंडका जो दक्षिणी हिस्सा था उसपर तथा अफ्रीकामें विपुल क्षेत्र तक हिम सरिताएँ फैल गईं।

ज्वालामुखी, भूकम्प तथा हिमसरिताओंकी तरह ही धरती पर पानीके बहने तथा जमीन घुलनेसे भी पृथ्वीका स्वरूप बदलता रहा है और आज भी बदलता रहता है। प्रचंड पर्वत श्रेणियोंके जमनेके बाद वर्षा और पानीने कई नए प्रदेशोंका निर्माण किया है। नदीके पानीसे ही सिंधु नदीसे लेकर ब्रह्मपुत्र तक तथा हिमालयसे लेकर विन्ध्याचल तकके विशाल मैदान बने। उसी प्रकार जहां समुद्र लहराता था वहां मिट्टीके जमनेसे इराक और सीरिया का जन्म हुआ। कालान्तरमें ईरानकी खाड़ी भी जमीन ही बन जाएगी। बंगालकी खाड़ी में भी नदीके द्वारा लाई गई मिट्टीके जमनेसे सुन्दरबनके टापू पैदा हुए हैं। जहां कच्छका रेगिस्तान है वहां कुछ हजार वर्ष पहले समुद्र था। भूकंप द्वारा ऊँचा उठकर तथा नदियों द्वारा लाई गई मिट्टी द्वारा पटकर ही वह रेगिस्तान बन गया है।

पानी और पृथ्वीके बीच आज भी जगह जगह संग्राम चल रहा है। समुद्रके तलेमें जो दरारें होती हैं उनमें होकर पानी पृथ्वीके भीतर घुसते हुए गर्भमें जाता है और आत्यंतिक गरमी
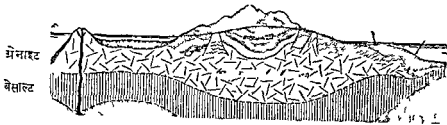
क कारण भाप बन जाता है। भापका पानीकी अपेक्षा अधिक जगह चाहिए। इससे वह पृथ्वीकी परतको फोड देती है जिससे लावारस उफन कर निकलता है। जो धडाका इस प्रकार उत्पन्न होता है उसमे भकप होता है और भकपसे समुद्रम विशेष लहरें उत्पन्न होती है। यह युद्ध दीर्घकाल तक जारी रहता है। इससे अधिकाधिक लावारस निकलता रहता है यहा तक कि वह समुद्रकी ऊपरी सतह तक आ जाता है। वहा नया ज्वालामुखी टापू बन जाता है। बरसात पवन और लहरोंके घर्षणसे फिर वह समुद्रम गक हो जाता है। कभी कभी तो वह प्रचड विस्फोटके साथ उड भी जाता है। सन १८८३म जावाके पास क्राकाटाओका ज्वालामुखी फटकर उड गया जिसका धडाका मानव स्मृतिम सबसे बडा था। इसके फलस्वरूप इतनी सारी धूल आकाशम उडी थी कि सूर्य किरणोकी गरमी पहुचनेम विघ्न होनेसे महीनो तक जलवायु पर इसका असर हुआ था। अगर एक ज्वालामुखीका विस्फोट जलवायु पर इतना असर डाल सकता है तो अनेक ज्वालामुखियोंके विस्फोट होनेसे सूर्यकी गरमी पृथ्वी पर बहुत कम पहुँच पाती है। परिणामस्वरूप वातावरणके ठडा हो जानेसे हिमयुग आनेकी सभावना रहती है। पर सभी हिमयुगोका यही कारण रहा होगा, ऐसा विश्वासके साथ नही कहा जा सकता।

पृथ्वी और समुद्रके बीच अदरकी अग्नि और ऊपरके पानीके बीच लगातार चलते सग्रामका अर्वाचीन उदाहरण क्राकाटोआ है। सुमात्रा और जावाके बीच स्थित सुदा जलडमरूमध्यम स्थित यह छोटासा टापू सर्वप्रथम १६८० ई०म फटा था। फिर समुद्रने उसे बुझा दिया था। परन्तु दो सौ वर्षो तक गरम वायुओका दबाव उसम बना रहा और अन्तम उन्हे दबाना असभव होनेपर धरती काप उठी। भूकपसे वह उछलने लगी। इस आनेवाली आफतकी सूचना उसे राक्षसने पहले ही दे दी थी जब कि सन १८८३म इसकी दरारोमसे भाप और धुआ निकलने लगा था। पृथ्वी गरम हो गयी थी। पाच महीनो तक इसने इसकी सूचना दी। उस विस्फोटकी तयारीकी उग्रता बढती गई। जो सावधान हुए उन्होने भी आनेवाले विस्फोट की ऐसी उग्र भयानकताकी कल्पना नही की होगी।

फिर ता ता० ७ अगस्तको एक भयानक विस्फोट हुआ और लगभग सारा टापू टुकडे टुकडे होकर उड गया। गरम राख धुआ, भाप और अग्निके साथ लावारसका प्रवाह पृथ्वीके अतरमसे बाहर निकल आया और आकाशम उडा। साथ ही समुद्रका पानी इसके मुहम घुस गया। प्रकृतिके दो तत्त्वोके बीच तुमुल सग्राम हुआ। विस्फोट परम्परा दो दिन

एक जमानेमे इण्डोनेशिया एक अखण्ड प्रदेश था और भरतखण्डके साथ जुडा था। भूकपसे जगह जगहकी धरती पश्चीमे धँस गयी और वहा हजारो टापू बन गए। इस रूपान्तर और उथल-पुथलमे हजारो वर्ष लग होगे।

समुद्रका तला समुद्रसे पुराना है। ज्वालामुखियोके विस्फोटके कारण वह हमेशा ऊँचा नीचा होता रहता है। ऐसा अदाज लगाया जाता है कि समुद्रके अन्दर कम-से-कम दो हजार ज्वालामुखी फटकर बाहर आनेके लिए प्रयत्न कर रहे हैं। कई बाहर आते है। कुछ निकल जाते है तो कुछको समुद्र फिरसे डुबा देता है। ऐसे अनेक ज्वालामुखियोके, समुद्रकी बडी गहराईमे होने के कारण, उनका विस्फोट बाहर दिखाई नही देता। उनकी भाप भी समुद्र की सतहसे बाहर नही आती। समुद्रके पानीके भारी दबावसे भाप और वायुएँ समुद्रमे घुल जाती हैं। इसीमे गहराईके विस्फोटके कारण लावारस मुखसे बाहर आता रहता है और उसका मुख ऊँचा उठता रहता है। वह जम जाता है और फिरसे वायुओका दबाव बढने पर और फिरसे विस्फोट होने पर लावारस पुन बाहर आता रहता है। इस प्रकार वहा ज्वालामुखी ऊँचा होता जाता है और उसका मुख जब समुद्रकी सतह से करीब पाच हजार फुट रह जाता है तभी भाप और पानी की खलबलाहटको देखा जा सकता है।

समुद्रके तलसे उठकर ज्वालामुखी टापू बाहर आता है।

जब समुद्रमे ज्वालामुखी फटता है और तलमे ही उसका लावारस जम जाता है तो उससे शकु आकारका एक टीला सा बन जाता है। उस पर कूडा कचरा मिट्टी आदि जमता जाता है, फिर ज्वालामुखी फटता है और फिर उसका मुह ऊँचा आता जाता है। इस प्रकार ऊचा होता हुआ यह शकु समुद्र के बाहर भी अपना सिर ऊचा करता है। इसके आसपास रेत जमनेसे वह एक मैदान जैसा टापू बन जाता है। कभी कभी यह शकु आकृतिका पहाड शात पडा रहता है और उसमे से लावा बाहर नही आता तो उसपर प्रवाल निर्माणकी प्रक्रिया शुरू हो जाती है और धीमे धीमे वह प्रवाल द्वीप बन जाता है, जो आकृतिसे स्पष्ट होगा।

करीब छ हजार फुट और उससे ज्यादा गहराईमे समुद्र तलमे कैसे-कैसे उत्पात होते होगे उसकी तो कल्पना ही की जा सकती है। इस भूकपसे तथा भूकप द्वारा निर्मित लहरो द्वारा ही जाना जा सकता है। समुद्रकी ऊपरी सतहसे अगर ज्वालामुखी अधिक गहराईमे न हो तो उसके विस्फोटकी चमक भी समुद्रमे देखी जा सकती है। काली राख पानीकी सतह पर तर आती है। भापके गुब्बार बाहर आते है तथा कभी-कभी सारा पानी उबलता है। परिणाम स्वरूप जलचरोके मृत देह ऊपर तैरते पाए जाते हैं।

जगतमें छोटे-बड़े मिल कर लाखों टापू ज्वालामुखीके प्रकोपके कारण बने हैं, मिटे हैं, फिर पैदा हुए हैं। अमेरिकाके बरमुडा टापू, प्रशान्त महासागरमें बिखरे पड़े हजारों छोटे-बड़े टापू और अण्डमान निकोबार टापू इसके उदाहरण हैं। मालदीव तथा लक्षद्वीप मूंगा बनानेवाले समुद्री कीड़ोंके द्वारा बनाए गए हैं परन्तु वे भी ठंडे हुए ज्वालामुखियोंके सिरपर ही हैं।

उत्तर अमेरिका—करोड़ों वर्ष पहले तब इस खण्डके बीचोंबीच समुद्र लहराता था।

सात करोड़से तेरह करोड़ वर्ष पहले विशेषकर दस करोड़ वर्ष पहले उत्तर अमेरिका पर उत्तर, दक्षिण तथा पूर्वसे समुद्र चढ़ आया था। उत्तरी ध्रुवसे लेकर मक्सिकोकी खाड़ी तक सारा भाग समुद्रमें डूब गया था। यूरोपमें ब्रिटेन तथा यूरोपके अन्य ज्यादातर भागोंपर तथा अफ्रीकामें सहारापर पानी फैल गया था। स्वीडनसे लेकर हिमालयके स्थानपर जो टेथिस समुद्र था वहां तक समुद्र जुड़ गया। कास्पियन समुद्र उसीमें समा गया था। भारतका बहुत सा हिस्सा, आस्ट्रेलिया का थोड़ा सा भाग तथा साइबेरिया तक समुद्रमें गर्क था। पृथ्वीके इतिहासमें ऐसी भयंकर उथल-पुथल और कभी नहीं हुई थी। हिमालयमें २० हजार फुटकी ऊंचाई पर समुद्री जीवोंके द्वारा बनाई गई चूनेकी चट्टानें मिली हैं, जो सिर्फ पांच करोड़ वर्ष पुरानी हैं।

कालान्तरमें ये समुद्र हटने लगे और धरतीके ऊपर उठनेसे पहाड़ोंका निर्माण होने लगा। उत्तरी अमेरिकाकी धरतीपरसे समुद्र हट गया तब केन्टुकीकी मैमथ केव (विशाल गुफा) समुद्रके तलसे बाहर आयी।

विशालता और कारीगरीकी दृष्टिसे केन्टुकीकी यह गुफा इस जगतमें एक बड़ा आश्चर्य है। उसकी छत २५० फुट ऊँची है। ५१३५४ एकड़की इस विस्तृत गुफामें विशाल खड्ड तथा गलेरियाँ भूगर्भमें मीलों तक फैली हैं। बाईस करोड़से लेकर साठ करोड़ वर्ष पहले समुद्रमें बसने वाले सूक्ष्म जीवोंने चूनेकी परतें बिछाकर इन चट्टानोंका निर्माण किया था। साठ करोड़से बारह करोड़ वर्ष पहले समुद्र यहांसे हट गया और बरसातके पानीके प्रवाहोंसे ये गुफाएँ बनीं। इतना ही नहीं, बढ़नेका यह क्रम आज भी जारी है। अभी भी उसमें नदियाँ व झरने बहते हैं। हमारी पृथ्वी कितनी परिवर्तनशील है इसका यह उदाहरण है।

जगत्का सबसे प्रख्यात जलप्रपात नायगरा भी इसी प्रकार बना। ४० करोड़से ४८ करोड़ वर्ष पहले उत्तर ध्रुव महासागरकी एक शाखा यहाँ फैल गई थी। उसके तलेमें डाले

एक जमानेमे इण्डोनेशिया एक अखंड प्रदेश था और भरतखंडके साथ जुड़ा था। भूकंपसे जगह जगहकी धरती पच्छीम धँस गया और वहाँ हजारों टापू बन गए। इस रूपान्तर आर उथल-पुथलमे हजारों वर्ष लग होंगे।

समुद्रका तल समुद्रसे पुराना है। ज्वालामुखियोंके विस्फोटके कारण यह हमेशा ऊँचा नीचा होता रहता है। ऐसा अन्दाज लगाया जाता है कि समुद्रके अन्दर कम-से-कम दो हजार ज्वालामुखी फटकर बाहर आनेके लिए प्रयत्न कर रहे हैं। कई बाहर आते हैं। कुछ टिक जाते हैं तो कुछको समुद्र फिरसे डुबो देता है। ऐसे अनेक ज्वालामुखियोंके, समुद्रकी बडी गहराइमे होने के कारण, उनका विस्फोट बाहर दिखाई नहीं देता। उनकी भाप भी समुद्र की सतहसे बाहर नही आती। समुद्रके पानीके भारी दबावसे भाप और वायुएँ समुद्रमे घुल जाती हैं। इसीसे गहराईके विस्फोटके कारण लावारस मुखसे बाहर आता रहता है और उसका मुख ऊंचा उठता रहता है। वह जम जाता है और फिरसे वायुओंका दबाव बढ़ने पर और फिरसे विस्फोट होने पर लावारस पुनः बाहर आता रहता है। इस प्रकार वहाँ ज्वालामुखी ऊंचा होता जाता है और उसका मुख जब समुद्रकी सतह से करीब पाच हजार फुट रह जाता है तभी भाप और पानी की गड़गड़ाहटको देखा जा सकता है।

जब समुद्रमे ज्वालामुखी फटता है और तलमे ही उसका लावारस जम जाता है तो उससे शंकु आकारका एक टीला-सा बन जाता है। उस पर कूड़ा कचरा मिट्टी आदि जमता जाता है फिर ज्वालामुखी फटता है और फिर उसका मुह ऊँचा आता जाता है। इस प्रकार ऊंचा होता हुआ यह शंकु समुद्र के बाहर भी अपना सिर ऊंचा करता है। इसके आसपास रेत जमनेसे वह एक मकान जैसा टापू बन जाता है। कभी कभी यह शंकु आकृतिका पहाड शांत पडा रहता है और उसमें से लावा बाहर नही आता तो उसपर पवाल निर्माणकी प्रक्रिया शुरु हो जाती है और धीमे धीमे वह प्रवाल द्वीप बन जाता है जो आकृतिसे स्पष्ट होगा।

करीब छ हजार फुट और उससे ज्यादा गहराइमे समुद्र तलमे कैसे-कैसे उत्पात होते होंगे उसकी तो कल्पना ही की जा सकती है। इसे भूकंप तथा भकंप द्वारा निर्मित लहरों द्वारा ही जाना जा सकता है। समुद्रकी ऊपरी सतहसे अगर ज्वालामुखी अधिक गहराईमे न हो तो उसके विस्फोटकी चमक भी समुद्रमे देखी जा सकती है। काली राख पानीकी सतह पर तैर आती है। भापके गुब्बार बाहर आते हैं तथा कभी-कभी सारा पानी उबलता है। परिणाम स्वरूप जलचरोंके मृत देह ऊपर तैरते पाए जाते हैं।

समुद्रके तलेसे उठकर ज्वालामुखी टापू बाहर आता है।

जगतमें छोटे-बडे मिल कर लाखों टापू ज्वालामुखीके प्रक्रमके कारण बने हैं, मिटे हैं, फिर पैदा हुए हैं। अमरिकाके बरमुडा टापू, प्रशान्त महासागरमें बिखरे पडे हजारों छोटे-बडे टापू और अंडमान निकोबार टापू इसके उदाहरण हैं। माल्दीव तथा लक्षद्वीप मूगा बनानेवाले समुद्री कीडाके द्वारा बनाए गए हैं परन्तु वे भी ठंडे हुए ज्वालामुखियोंके सिरपर ही हैं।

उत्तर अमेरिका—करोडों वर्ष पहले तक इस खंडके बीचोंबीच समुद्र लहराता था।

सात करोडसे तेरह करोड वर्ष पहले विशेषकर दस करोड वर्ष पहले उत्तर अमेरिका पर उत्तर, दक्षिण तथा पूर्वसे समुद्र चढ आया था। उत्तरी ध्रुवसे लेकर मक्सिकोकी खाडी तक सारा भाग समुद्रमें डूब गया था। यूरोपमें ब्रिटेन तथा यूरोपके अन्य ज्यादातर भागोंपर तथा अफ्रीकामें सहारापर पानी फैल गया था। स्वीडनसे रूस होकर हिमालयके स्थानपर जो टेथिस समुद्र था वहां तक समुद्र जुड गया। कास्पियन समुद्र उसीमें समा गया था। भारतवर्षका बहुत सा हिस्सा, आस्ट्रेलिया का बहुत सा भाग तथा साइबेरिया तक समुद्र में गर्क था। पृथ्वीके इतिहासमें ऐसी भयंकर उथल-पुथल और कभी नहीं हुई थी। हिमालय में २० हजार फुटकी ऊँचाई पर समुद्री जीवोंके द्वारा बनाई गई चूनेकी चट्टानें मिली है, जो सिर्फ पांच करोड वर्ष पुरानी हैं।

कालान्तरमें ये समुद्र हटने लगे और धरतीके ऊपर उठनेसे पहाडोंका निर्माण होने लगा। उत्तरी अमरिकाकी धरतीपरसे समुद्र हट गया तब केन्टुकीकी मेमथ केव (विशाल गुफा) समुद्रके तलसे बाहर आयी।

विशालता और कारीगरीकी दृष्टिसे केन्टुकीकी यह गुफा इस जगतमें एक बडा आश्चर्य है। उसकी छत २५० फुट ऊँची है। ५१३५४ एकडकी इस विस्तृत गुफामें विशाल गड्ढे तथा गैलेरियाँ भूगभमें मीलोंतक फैली है। बाईस करोडसे लेकर साठ करोड वर्ष पहले समुद्रमें बसने वाले सूक्ष्म जीवोंने चूनेकी परत बिछाकर इन चट्टानोंका निर्माण किया था। साठ करोडमें बारह करोड वर्ष पहले समुद्र वहासे हट गया और बरसातके पानीके प्रवाहो से ये गुफाएँ बनीं। इतना ही नहीं, बदलनेका यह प्रक्रम आज भी जारी है। अभी भी उसमें नदियाँ व झरने बहते हैं। हमारी पृथ्वी कितनी परिवर्तनशील है इसका यह उदाहरण है।

जगतका सबसे प्रख्यात जलप्रपात नायगरा भी इसी प्रकार बना। ४० करोडसे ४४ करोड वर्ष पहले उत्तर ध्रुव महासागरकी एक शाखा यहां फैल गई थी। उसके तलेमें डाली

एक जमानेमें इण्डोनेशिया एक अखण्ड प्रदेश था और भरतखण्डके साथ जुड़ा था। भूकम्पमें जगह जगहकी धरती पृथ्वीमें धँस गयी और वहाँ हजारों टापू बन गए। इस रूपान्तर और उथल-पुथलमें हजारों वर्ष लग होंगे।

समुद्रका तला समुद्रसे पुराना है। ज्वालामुखियोंके विस्फोटके कारण वह हमेशा ऊँचा नीचा होता रहता है। ऐसा अन्दाज लगाया जाता है कि समुद्रके अन्दर कम से कम दो हजार ज्वालामुखी फटकर बाहर आनेके लिए प्रयत्न कर रहे हैं। कई बाहर आते हैं। कुछ टिक जाते हैं तो कुछको समुद्र फिरसे डुबो देता है। ऐसे अनेक ज्वालामुखियोंके समुद्रकी बड़ी गहराईमें होनेके कारण, उनका विस्फोट बाहर दिखाई नहीं देता। उनकी भाप भी समुद्रकी सतहसे बाहर नहीं आती। समुद्रके पानीके भारी दबावसे भाप और वायुएँ समुद्रमें घुल जाती हैं। इतनी गहराईके विस्फोटके कारण लावारस मुखसे बाहर आता रहता है और उसका मुख ऊँचा उठता रहता है। वह जम जाता है और फिरसे वायुओंका दबाव बढ़ने पर और फिरसे विस्फोट होने पर लावारस पुनः बाहर आता रहता है। इस प्रकार वहाँ ज्वालामुखी ऊँचा होता जाता है और उसका मुख जब समुद्रकी सतहसे करीब पाँच हजार फुट रह जाता है तभी भाप और पानीकी खलबलाहटको देखा जा सकता है।

समुद्रके तलसे उठकर ज्वालामुखी टापू बाहर आता है।

जब समुद्रमें ज्वालामुखी फटता है और तलमें ही उसका लावारस जम जाता है तो उससे शंकु आकारका एक टीला सा बन जाता है। उस पर कूड़ा कचरा मिट्टी आदि जमता जाता है फिर ज्वालामुखी फटता है और फिर उसका मुँह ऊँचा आता जाता है। इस प्रकार ऊँचा होता हुआ यह शंकु समुद्रके बाहर भी अपना सिर ऊँचा करता है। इसके आसपास रेत जमनेसे वह एक मैदान जैसा टापू बन जाता है। कभी कभी यह शंकु आकृतिका पहाड़ शान्त पड़ा रहता है और उसमेंसे लावा बाहर नहीं आता तो उसपर प्रवाल निर्माणकी प्रक्रिया शुरू हो जाती है और धीमे धीमे वह प्रवाल द्वीप बन जाता है जो आकृतिसे स्पष्ट होगा।

करीब छः हजार फुट और उससे ज्यादा गहराईमें समुद्रतलमें कैसे कैसे उत्पात होते होंगे उसकी तो कल्पना ही की जा सकती है। इसे भूकम्पसे तथा भूकंप द्वारा निर्मित लहरों द्वारा ही जाना जा सकता है। समुद्रकी ऊपरी सतहसे अगर ज्वालामुखी अधिक गहराईमें न हो तो उसके विस्फोटकी चमक भी समुद्रमें देखी जा सकती है। काली राख पानीकी सतह पर तैर जाती है। भापके गुब्बार बाहर आते हैं तथा कभी-कभी सारा पानी उबलता है। परिणामस्वरूप जलचरोंके मृत देह ऊपर तैरते पाए जाते हैं।

जगतमें छोटे-बड़े मिलाकर लाखों टापू ज्वालामुखीके प्रक्रमके कारण बने हैं, मिटे हैं, फिर पैदा हुए हैं। अमरिकाके बरमुडा टापू प्रशान्त महासागरमें बिखरे पड़े हजारों छोटे-बड़े टापू और अंडमान निकोबार टापू इसके उदाहरण हैं। मालदीव तथा लक्षद्वीप मूंगा बनानेवाले समुद्री कीड़ों द्वारा बनाए गए हैं परन्तु वे भी ठंडे हुए ज्वालामुखियोंके सिरपर ही हैं।

उत्तर अमरिका—करोड़ों वर्ष पहले तब इस खंडके बीचोंबीच समुद्र लहराता था।

सात करोड़से तेरह करोड़ वर्ष पहले विशेषकर दस करोड़ वर्ष पहले उत्तर अमरिका पर उत्तर, दक्षिण तथा पूर्वसे समुद्र चढ़ आया था। उत्तरी ध्रुवसे लेकर मेक्सिकोकी खाड़ी तक सारा भाग समुद्रमें डूब गया था। यूरोपमें ब्रिटेन तथा यूरोपके अन्य ज्यादातर भागोंपर तथा अफ्रीकामें सहारापर पानी फैल गया था। स्वीडनसे रूस होकर हिमालयके स्थानपर जो टेथिस समुद्र था, वहां तक समुद्र जुड़ गया। कास्पियन समुद्र उसीमें समा गया था। भारतखंडका बहुत सा हिस्सा, आस्ट्रेलिया का बहुत सा भाग तथा साइबेरिया तक समुद्रमें गर्क था। पृथ्वीके इतिहासमें ऐसी भयंकर उथल-पुथल और कभी नहीं हुई थी। हिमालयमें २० हजार फुटकी ऊँचाई पर समुद्री जीवोंके द्वारा बनाई गई चूनेकी चट्टानें मिली हैं, जो सिर्फ पांच करोड़ वर्ष पुरानी हैं।

कालान्तरमें ये समुद्र हटने लगे और धरतीके ऊपर उठनेसे पहाड़ोंका निर्माण होने लगा। उत्तरी अमरिकाकी धरतीपरसे समुद्र हट गया तब केन्टुकीकी मेमथ केव (विशाल गुफा) समुद्रके तलेसे बाहर आयी।

विशालता और कारीगरीकी दृष्टिसे केन्टुकीकी यह गुफा इस जगतमें एक बड़ा आश्चर्य है। उसकी छत २५० फुट ऊँची है। ५१,३५४ एकड़की इस विस्तृत गुफामें विशाल खंड तथा गलेरियां लगभग १५० मीलतक फैली हैं। बाईस करोड़से लेकर साठ करोड़ वर्ष पहले समुद्रमें बसने वाले सूक्ष्म जीवोंने चूनेकी परत बिछाकर इन चट्टानोंका निर्माण किया था। सात करोड़से बारह करोड़ वर्ष पहले समुद्र वहांसे हट गया और बरसातके पानीके प्रवाहसे ये गुफाएं कटीं। इतना ही नहीं, कटनेका यह क्रम आज भी जारी है। अभी भी उसमें नदियां व झरने बहते हैं। हमारी पृथ्वी कितनी परिवर्तनशील है इसका यह उदाहरण है।

जगतका सबसे प्रख्यात जलप्रपात नायगरा भी इसी प्रकार बना। ४० करोड़से ४४ करोड़ वर्ष पहले उत्तर ध्रुव महासागरकी एक शाखा यहां फैल गई थी। उसके तलेमें डाग

माल्वी रास्त चट्टानें बनी। समुद्रके हट जानेपर हिमयुगकी बर्फ पिघली, तब उसका प्रवाह यहां बहने लगा। इससे समुद्रकी कीचडकी चट्टानें (shales) उस प्रवाहके साथ बहने लगीं और कालान्तरमें आजका विश्व विख्यात नाग्रगरा प्रपात बना।

आज जिनका नाम ही शेष रहा है ऐसे इन समुद्रोंने उस समयके जलवायुपर भारी असर डाला था। वे उष्ण अथवा समशीतोष्ण वातावरणको वर्तमान अति ठंडे प्रदेशोंमें पहुँचाते थे। आठ-आठ हजार फुट मोटी बर्फकी परतोंके नीचे जो ग्रीनलैण्ड दबा है वह उस समय सचमुच 'ग्रीनलैण्ड' था—हरा भरा था। आज भले ही हम यह बात हास्यास्पद मालूम होती हो पर वास्तवमें वहां उष्ण तथा समशीतोष्ण प्रदेशोंके जंगल थे। आज वे जंगल ग्रीनलैण्डके गर्भमें कच्चे कोयले (लिग्नाइट)के रूपमें दब पडे हैं।

पृथ्वीकी ऊपरी सतह अभतक अभी स्थिर नहीं हो पायी। अभी भी उसमें परिवर्तन होते ही रहते हैं। पिछली सदीमें कच्छके रेगिस्तानकी कुछ जमीन ऊपर आ गई और सिंधु की एक धारा जो उधर जाती थी उसके मार्गमें अल्लाहबंध बाँध नामक ऊंचा भूमिका निर्माण हो गया जिससे सिंधु और कच्छका संबंध कटकर वहां रेगिस्तान बन गया। गुजरातमें डुम्मसके समुद्रके किनारेपर नजर डालनेसे वहां कुछ और ही निर्माण हो रहा है, ऐसा नहीं लगता। पर जिन्होंने पचास वर्ष पहले वहां देखा था वे आज दंग तो सहज ही उस अंतरका अनुभव कर सकते हैं और बता सकते हैं कि यह किनारा समुद्रमें डूबा जा रहा है। डुम्मस का महल समुद्रमें गर्क हो रहा है। ऐसी ही स्थिति अनेक स्थानोंपर केरलमें है। हर साल नदियां करोडों टन कटावकी मिट्टीको लाकर समुद्रमें उडेलती हैं और समुद्रका तल फाडकर ज्वालामुखी अरबों टन लावा बाहर फेंकते हैं, जिनसे समुद्री पहाड और टापुओं का निर्माण होता है। ऊपरी सतहपर जरासा सिर निकालनेवाले टापू समुद्रमें न जाने कितने विस्तारमें फैले होंगे! उसकी कल्पना भी करना मुश्किल है। अमेरिकाके नजदीक ब्रिटन के टापू बरमुडाका विस्तार ऊपरसे मात्र २१ वर्गमील है और समुद्रमें उसकी राशि २५०० घनमील है। ज्वालामुखीसे बने हवाई टापुओंका विस्तार एसे तो २४०० वर्गमील है पर समुद्रके अंदर वे लाखों घनमील होंगे।

पृथ्वीपर चार हिमयुग आ चुके हैं। हम इस समय चौथे हिमयुगकी अंतिम अवस्था में हैं। अभी हिम-पट और हिम सरिताएं पिघलकर हटती चली जा रही हैं। पिछले हिमयुग में अनेक खंड हिमसे ढके थे। जब यह हिम फिर पिघल गया तब पृथ्वीपर जलके स्थान पर स्थल या स्थलके स्थानपर यदि जल हो गया तो उसमें कोई आश्चर्यकी बात नहीं है। पिछले हिमयुगको शुरू हुए दस लाख वर्षसे अधिक नहीं हुए। इस समय जो बर्फ जमी थी उसमेंसे अभी भी आधी बर्फ दक्षिण ध्रुव भागमें तथा ग्रीनलैण्डपर पडी हुई है। इस समय पृथ्वीपर औसतन समशीतोष्ण वातावरण है इसके कारण जो बर्फ शीतमें जमती है, वही ग्रीष्ममें पिघलकर समुद्रमें जाती है परन्तु शीत युगमें गरमीमें भी जलवायु ठंडा रहनेके कारण बर्फ अधिक मात्रामें पिघलती न थी। इससे हर वर्ष धरतीपर बर्फकी परतें जमती जाती थीं। परिणामस्वरूप समुद्रमें नया पानी कम आता था और अधिक पानी हिम-वर्षाके रूपमें पृथ्वीपर जमता जाता था। इससे समुद्र सूखते गए। उनकी सतह बहुत

किसी जमानेमें एशियाका साइबेरिया प्रदेश और उत्तर अमेरिकाका अलास्का प्रदेश दोनों जुड़े हुए थे तथा बेरिंग जलडमरूमध्यका अस्तित्व न था। इस जुड़ी हुई जमीनके मार्गसे मनुष्य और प्राणी अमेरिकासे एशियामें और एशियासे अमेरिकामें आते जाते थे।

नीचे गयी थी। पिछले हिमयुगके इन दस लाख वर्षोंमें ब्रिटेन यूरोपसे जमीन द्वारा जुड़ गया। इंग्लैंडकी टेम्स तथा यूरोपकी राइन नदियां जुड़ गई।

इस समय धरतीपर मानवका जन्म हो चुका था। दो लाख वर्ष पहले भारत और लंका जमीनके द्वारा जुड़ चुके थे और भारतसे लोग पैदल ही लंका जाते थे। इसी प्रकारकी एक महत्त्वकी घटना उत्तर-पूर्व एशियामें घटी। एशियाके साइबेरिया तथा अमेरिकाके अलास्काके बीचका समुद्र उतर गया और एशियासे मनुष्य तथा पशु इस मार्गसे अमेरिकामें जा बसे। आजके अमरीकी आदिम निवासी दो लाख वर्ष पहलेके एशिया खंडके निवासियोंके वंशज हैं।

उत्तरी तथा दक्षिणी अमरिकाका जुड़ाव और ढंगसे हुआ था। सात करोड़से तेरह करोड़ वर्ष पहले समुद्रका तल उठकर ऊपर आ गया जिससे यहाँ एटलांटिक तथा प्रशांत महासागर अलग हो गए। अमरिकाके दो खंड जुड़ गए तथा गल्फ स्टीम नामक प्रख्यात गरम प्रवाहका जन्म हुआ।

आजसे २०० ५०० फुट गहरे समुद्र हिमयुगमें सूखी धरतीके रूपमें थे। उस समय एशिया, चीन और कोरियाके बीच पीला समुद्र न था। बेरिंग जलडमरूमध्य न था। भरत मध्य सभानकी खाड़ी न थी। ईरानकी खाड़ी भी न थी। यूरोपमें उत्तर समुद्र तथा बाल्टिक समुद्र सूख गए थे। इण्डोनेशिया तथा फिलिपाइन्सके द्वीप जुड़े हुए थे। इटली और युगोस्लावियाके बीच एड्रियाटिक समुद्र लगभग सूखा हो गया था। जिब्राल्टरका जलडमरूमध्य सूख चुका था जिससे स्पेनसे (यूरोप) मोरक्को (अफ्रीका) तक लोग पैदल चलकर जा सकते थे।

उत्तरी भागमें जब आदिमानव हिम झंझा, हिमप्रपात और भयंकर शीतसे बचनेका प्रयत्न कर रहा था, उस समय कच्छकी खाडी, खंभातकी खाडी बंगालकी खाडी तथा अरब सागर वगैरा जैसे कुछ स्थानोंमें आदिमानव सूखी धरतीपर भटकता था। आज उधर समुद्र लहराता है।

जब पिछले हिमयुगके अंतका प्रारंभ हुआ तब बर्फ पिघलकर समुद्रमें भरने लगी, जिससे समुद्रोंकी सतह ऊँची होने लगी। यह प्रक्रम आज भी जारी है। रोमन युगके बाद समुद्रकी सतह बीस फुट ऊँची आई है ऐसा माना जाता है। इसके परिणामस्वरूप कुछ बंदर तथा इमारतें आदि समुद्रमें डूबे हुए मिलते हैं। नेपल्सकी खाडीमें इस प्रकार डूबे प्राचीन बन्दरों और इमारतोंकी खोज कर उनके नक्शे भी बनाए गए हैं।

पानीर बहावस घरी और स्तर-भगवाग धरना।

खण्ड : २

३ : पर्वत बनते हैं

जब पृथ्वीकी सतह ठंडी होकर परत जमी उस समय उबले हुए आलू या सूखते हुए चीकूके छिलकेकी सिकुड़नकी तरह पृथ्वीपर कहीं सतह बैठ गई तो कहीं ऊपर आ गया। ये घाटियाँ और पर्वत, कैसे थे, हम नहीं जानते। युगोंतक जो मूसलाधार वर्षा हुई, उसमें ये पर्वत टूट गए, घुल गए, घिस गए और पानीके साथ बहकर समुद्रमें डूब गए।

पर वह परत पतली व कच्ची थी। जगह जगहपर वायु तथा लावारस बाहर निकलनेके लिए जोर लगाते थे। इससे जगह जगह पृथ्वीकी सतह फफोलेकी तरह उठ आती और उसके मुँहसे लावारस बह निकलता। पतली परतपर के समुद्रके भारसे तला नीचे बैठ जाता जिससे किनारेका प्रदेश ऊपर उठ आता। कहीं दरार पड़ती, वहाँसे लावारस बहता और जम जाता। फिरसे लावारस बह निकलता और पिछले जमे हुए लावारसपर उसकी परत जम जाती। इस क्रियाका पुनरावर्तन होता रहता था। साढ़े बाईस करोड़से लेकर साढ़े सत्ताईस करोड़ वर्ष पहले दक्षिणी सोपान शिलाओंके नामसे प्रसिद्ध सह्याद्रि पर्वतकी चट्टान इसी तरह बनी हैं। पर यह तो बाइस करोड़से सत्ताईस करोड़ वर्ष पहलेकी 'ताजी बात' है। एक अरब वर्ष पहलेसे भी अधिक समय पहले पूर्वी कनडाका लॉरेंशियन प्रदेश इस प्रकार लावारससे बना है। आज वहाँ लॉरेंटियसकी घिसी हुई पहाड़ियोंकी श्रेणियाँ हैं वे सह्याद्रिसे अरावली तककी पर्वत श्रेणीकी अमरीकी आवृत्ति हैं।

बीस करोड़ वर्ष पहले अमेरिकामें 'एपलेशियन' पर्वत मालाओंका जन्म हुआ था। उस समय ये शिखर इतने ऊँचे रहे होंगे कि उनपर बर्फ जमी रहती होगी।

हमारी सह्याद्रि और अरावली पर्वतमालाएँ तथा गिरनार, बरडा और कच्छके भुजिया पहाड़में ऐसी चट्टानें हैं जिनका स्थान पृथ्वीकी बहुत पुरानी चट्टानोंमें है। सह्याद्रि और अरावली पर्वतमालाएँ जमी होंगी तब गगनचुंबी रही होंगी। अमरिकामें रॉकीज और एंडीज तथा यूरोपकी आल्प्स और एशियाकी हिमालय पर्वतमालाएँ अभी तो बाल्यावस्था अथवा किशोर अवस्थामें है। उनकी उम्र छः करोड़ वर्षसे अधिक नहीं।

पृथ्वी जब एकदम गोल थी, तब सारी सतहके ऊपर ग्रेनाइटका रस जमा था। भूगर्भके दबावसे ऊपर उठा ग्रेनाइटका जो पहला शिखर पृथ्वी पर बना उसे तीन अरब वर्ष हो

वेग्नरकी रायके अनुसार प्रारभकालमें एक ही खड था-- गोंडवाणा खड--और वह इस तरह अखड था।

बादमें उसमें टूट फूटका प्रारभ हुआ।

अतमें, टूटकर अलग हुए खण्ड खिसकते खिसकते इस तरह एक दूसरेसे दूर होते गए।

गए है। यह क्रम आज भी जारी है। पुराने शिखर घिसते जा रहे हैं और नये शिखर उठते आते हैं। इस हिसाबसे पर्वतोंकी अपेक्षा टेकरियोंकी उम्र अधिक होती है।

जिस प्रकार कुछ पर्वत घिसते जाते हैं उसी प्रकार कुछ पर्वत बढ़ते भी जाते हैं। पृथ्वीकी *अंदरकी शक्तियां उन्हें ऊपरको ढकेलती हैं। हालांकि यह क्रम है बहुत धीमा।* एवरेस्टकी ऊँचाई जब १८५२ इ०में नापी गई तब २९,००० फुट थी। १०२ वर्षोंके बाद १९५४ इ०में उसकी ऊँचाई २९०२८ फुट मालूम हुई है। यह थोड़ासा फर्क हिसाब करनेकी भूलसे भी हो सकता है। स्वीडन, नार्वे और फिनलैण्डके पर्वत एक सदीमें दो फुट ऊँचे उठते पाए गए हैं। ऐसा माना जाता है कि पिछले हिमयुगके पश्चात इन परसे भार हल्का हो जानेसे वे ऊपर आ रहे हैं। ग्रेनाइट पर्वतके नीचे बेसाल्टकी चट्टानें तो लावारस पर ही तरती हैं न! इन्हीं तरती चट्टानोंके बने खंड धीरे धीरे दूर खिसकते जाते हैं। वेग्नरकी रायमें अमेरिका *तथा अफ्रीका अभी भी दूर हटते जा रहे हैं।*

पहाड़ अथवा पर्वतका जन्म चार प्रकारकी क्रियाओं पर निर्भर होता है। ज्वाला*मुखी लावाको उगल उगलकर किस प्रकार पर्वत बनाते हैं यह हम देख चुके हैं। अब हम पर्वत* निर्माणके अन्य कारण भी देखें।

युगोंसे नदियां कटी मिट्टी समुद्रमें डालती आई हैं। इस कटी मिट्टीके भारसे तले की चट्टानें बैठती जाती हैं। नदी द्वारा लाई गई मिट्टीसे बनी जमीन इन धसकती हुई चट्टानों के ऊपरसे गर्क होती रहती है। यों जमी मिट्टीके बोझसे चट्टानें नीचे बैठती जाती हैं, परंतु पृथ्वीके अंदरकी शक्ति उन्हें कभी कभी फिरसे ऊपरको ढकेलती भी है। इससे

परिणामस्वरूप इस जमी मिट्टीकी सतहम तह सी पड जाती है, जो पहाडके रूपमे उठकर ऊपर आ जाती हैं। पिरिनीज पवतमे लेकर हिमालय तककी पवतमालाएँ ऐसे ही बनी हैं।

अमरिकाम मेक्सिकोकी खाडीम मिसिसिपीने मिट्टीकी ३०,००० फुट मोटी सतह बिछाई है। इसके भारसे इस खाडीका तला नीचे बैठ गया है और हजारो फुट नीचे चला गया है। इससे, सभव है कि उस खाडीके अगल-बगलमे बडी पवतमालाएँ ऊपर उठ आएँ। इस प्रकार धरतीकी सतहपर तह पदा करनेकी शक्ति भूगभम ही छिपी है।

अब पवनाके जन्मका तीसरा प्रक्रम देखें। भूगभमस कभी इतना दबाव होता है कि जहा सतह कमजोर होती है, वहा वह फट जाती है। लावा और वायुके दवावसे इस टूटे भागका कोई हिस्सा उठ आता है तो कोई नीचे चला जाता है। इसीसे टूटी हुई सतह के खड एक दूसरे पर चढ जाते हैं, कभी पृथ्वीकी सतहके समातर स्थित स्तर भी कोण बनाते टेढे मेढे रूप धारण कर लेते है। किसी समय इस विभग (स्तरभग Fault)मसे लावारस भी बहने लगता है।

ऐसी स्तरभग धरतीम भकपाकी सभावना होती है। टूटे स्तरके नीचे पर्याप्त आधार नहीं होता और उस पथ्वीके ऊपरी स्तरोका भार उठाना पडता है। टूटे स्तर अपने आपको ठीक करनेका प्रयत्न करते है। पर अस्तव्यस्त होनेसे वे ठीक नहीं हो पाते। अत उनकी हिलनेकी जरा सी कोशिश भी पथ्वीको हिला कँपा देती है। आसामम होने वाले जनक भीषण भूकपोका कारण ऐसे स्तरभग ही है। अमेरिकाका सानफ्रासिस्को जसा महानगर ऐसे स्तरभगके ऊपर बसा है जो बडी भारी भल है। सन १९०६ ई०म इन स्तराके हिलने से ही इस सारे नगरका नाश हुआ था। यह स्तरभग केलिफोर्नियासे लेकर मेक्सिको होता हुआ प्रशात महासागर तक फला हुआ है। कितनी बडी टूट फट! ढलती दीवारो सी चट्टानोकी ढलानवाले तथा खडित स्तरोवाले पहाडको देखते ही हम पहचान लेते हैं कि यह स्तर भगसे बना पहाड है। ऐसी ढलान इतनी चिकनी भी हो सकती है कि जिसपर कोई चौपाया भी नही चल सकता।

अब पवनके जन्मका चौथा प्रक्रम देख लें। कभी कभी पृथ्वीकी परत नीचस टूट जाती है पर यह टूटना इसकी ऊपरी सतह तक नहीं पहुँचता। इन निचले टूटे भागाम लावारस चढ आता है पर वह ऊपरी सतह तक नही पहुँच पाता। इससे जिधर टूट फूट खत्म हो जाती है ऐसे स्थानाम लावारस गुबद आकारमे जम जाता है और दबाव डालता है। इसके दबावसे धरतीके ऊपरी स्तर उभर आते है। अगर यह लावारस ऊपरी सतहका भेद कर ऊपर नही आ सकता तो वही ठडा होकर जम जाता है। वर्षा आदिके पानीसे जब ऊपरी सतह धुल जाती है तब यह गुबद दिखाई देता है। यह गुबद भी पानी तथा टूट फूटके कारण फिर नुकीला बन जाता है। आल्प्स पवतका मेटरहॉर्न शिखर नोकदार है पर मूल स्वरूपम वह इसी प्रकारका गुबद था। यह बफमे घिसकर नुकीला बन गया है।

छोटे बडे सभी पवत अपनी विशिष्ट आकृति रखते हैं। क्योकि उनकी कायाम कठिन

नरम, द्राव्य, अद्राव्य (जो पानीमे न घुल सके) ऐसे विविध प्रकारके पदार्थ भरे होते है। पर्वतके जन्मके साथ ही उसके टूटनेकी और घुलनेकी क्रियाएँ शुरू हो जाती हैं। इनमेसे कुछ आसानीसे घिस-घुल जाते हैं तो कुछ इस घर्षणका प्रतिकार भी करते हैं। चूना और अन्य कुछ क्षार आसानीसे पिघलकर घुल जाते हैं तो ग्रेनाइट और बेसाल्ट इसका प्रतिकार करते हैं।

अगर ऊपरी स्तरको भी भेदकर लावारस बाहर आता रहे और मुखके पास जमता जाए तो ज्वालामुखी पर्वतका जन्म होता है। एक मक्सिकन किसानके खेतमे इसी प्रकारसे बने परिक्यूटिन ज्वालामुखीकी कथा दिलचस्प है। ता० २० फरवरी १९४३ ई०की सुबह जब वह किसान अपना सपाट खेत जोत रहा था तब उसे लगा कि धरती गरम हो रही है। फिर वह कांपने लगी वहां धुआ और भाप निकलने लगी। इसे देखकर वह किसान डरकर वहांसे भाग गया।

दूसरे दिन तो गरजता और घहराता ज्वालामुखी आग और लावारस उगलने लगा। पन्द्रह दिनमे यह ४५० फुट ऊँचा हो गया और आठ महीनोंमे ९३० फुट तथा दो वर्षोंमे १०२० फुट ऊंचा हो गया। १९५३ ई०मे वह जब शान्त हो गया तब उसकी ऊँचाई १३५० फुट थी। पासके दो गावोंको इसने नष्ट कर दिया था। जिस दिन खेतमेसे धुआ निकलने लगा था और धरती कांपने लगी थी उसी समयसे ग्रामवासियोंने भागना शुरू कर दिया था। इस पर्वतने ज्वालामुखीके जन्म और विकासका अध्ययन करनेका बडा अच्छा मौका दिया। कई वैज्ञानिक इसका अध्ययन और अनुसधान करनेके लिए वहा डेरा डाले पडे रहे।

कौन सा पर्वत कब बना, इसकी कथा उसमेसे निकले जानवरों और वनस्पतियो आदिके अवशेषोमे मालूम होती है। इस प्रकार पर्वतोंके अंदर उनकी उम्रके साक्षी दबे होते हैं। पर ऐसे पर्वत जिनमे इस तरहके अवशेष नहीं मिलते, उनकी उम्र जानना काफी मुश्किल होता है। अधिक से अधिक अवशेष ५०से ६० करोड वर्ष पुराने मिले है। इनसे पुराने पर्वतोमे किसी प्राणीके अवशेष नही मिले। इस प्रकार जिस समयके अवशेष मिले है उस समयसे आज तक का इतिहास एक अखंड शृंखलाके रूपमे मिल जाता है।

पर्वतोंका कोरवा उनकी उम्रके अनुसार आगे बढता है। पतीस करोडसे लेकर चालीस करोड वर्ष पहले उत्तरी अमेरिकाके उत्तरमे एपेलेशियन पर्वतका जन्म हुआ तब समुद्रके मुख्य जीव मछलियां थी। साथ ही पानी और जमीनपर दोनो पर जी सके ऐसे उभयचर (amphibians) प्राणियोंका जन्म भी हो चुका था। जब आजसे २५ करोड वर्ष पहले दक्षिण एपेलेशियन और भारत व दक्षिणी उच्च पठारका जन्म हुआ, तब पेटसे रेंगकर चलनेवाले प्राथमिक कक्षाके निम्न श्रेणीके साप आदि प्राणियो (reptiles)का जन्म हो चुका था।

सत्ताईस करोडसे पतीस करोड वर्ष पहले जिनमेसे आजका खनिज कोयला और तेल बना है ऐसे वृक्षोसे पृथ्वी भरी पडी थी। पृथ्वीपर पहली बार पैदा हुए जंतु उनमे विचरण करते थे। आज जहां अमेरिकाके संयुक्तराष्ट्र है उसका मध्य भाग उस समय समुद्रमे डूब गया था। यहांपर शायद समुद्रका यह अंतिम आक्रमण था।

परेंगारिक्युटिरो चर्च
पीछ वायी आर नया परिक्यु
टिन ज्वालामुसी दिसायी देता है।

परिक्यटिन ज्वालामुखीका मुस

दो माल्म परिक्युटिन ज्वालामुख १०२०
फुटकी ऊँचाइ वाला पहाट वन गया।

हिमालयो नाम नगाधिराज

जहां टेथिन समुद्र घहराता था, वहा वहा विश्वके सर्वोच्च
शिखरवाली पर्वतमाला (हिमालय) ऊपर उठ आई।

हिमालयो नाम नगाधिराज

जहां टेथिस समुद्र लहराता था, वहां विश्वके सर्वोच्च शिखरवाली पर्वतमाला (हिमालय) ऊपर उठ आई।

हिमालयो नाम नगाधिराज

जहां टेथिस समुद्र लहराता था, वहां वहां विश्वके सर्वोच्च
शिखरवाली पर्वतमाला (हिमालय) ऊपर उठ आई।

टथिम समुद्र निममेंसे हिमालय पर्वतमाला ऊपर उठ आइ। नक्शेमें भारतका पूरा भू भाग समुद्रके पानीके भीतर बनाया गया है। परतु उस वक्त भी पानीके ऊपर टापूके रूपमें उसके दक्षिण भागका अस्तित्व था।

पहाडोंका अपना परिवार हाता है। हिमालयका 'कुटुम्ब सबसे बडा है। इसकी शाखाए उत्तरमें तिब्बत, चीन और मगोलिया तक पहुँची ह जिनम चीनके क्एिनलान कुनलुन और अल्ताई पवत श्रेणिया आ जाती है। पश्चिममे काराकोरम और हिंदूकुश तथा दक्षिण पूवम ब्रह्मदेशकी पवत श्रेणिया हिमालयकी ही शाखाएँ हैं। हिमालयकी यह शाखा चीनकी तरफ जाते जाते आसामके इशान कोणसे इतनी तीक्ष्णतासे दक्षिणकी तरफ ब्रह्मदेशम मोड लेती है कि उधर सिकुडन पडनेसे भूगभकी चट्टानाम भारी स्तरभग हुआ है। इसस आसामम भीषण भकप हुआ करते ह। ये ही पवतमालाएँ बर्मासे डुबकी लगाकर अडमान तथा मलाया और इण्डोनेशियाम फिरसे सिर ऊँचा करती ह। परन्तु इण्डोनेशियाम उनकी प्रवत्ति बदल जाती है। समग्र हिमालयम कहीं भी ज्वालामुखी नहीं है पर इण्डोनेशियाम असख्य ज्वालामुखी हैं जो वहाकी जमीनको बहुत उपजाऊ बनाए रखते हैं। पश्चिमम फिरसे कॉकेसस पवतमालाके रूपम ये ज्वालामुखी प्रकट होते हैं।

इस प्रकार प्रकृति आकृति तथा सौंदर्यम निराला नगाधिराज हिमालय वयम छोटा होनेपर भी जगतके पहाडोंम कई दृष्टियोंसे बेजोड है। इसीसे प्राचीन कालसे हम उसे देवभूमि मानते आए हैं।

४ : हिमयुग तथा ज्वालामुखी

हिमयुग तथा ज्वालामुखीका भी कोई संबंध होता है? इसका कोई निश्चित
नहीं मिला। पर एक मान्यता ऐसी है कि जब असंख्य ज्वालामुखी धधक रहे थे तब
वातावरणमें इतनी सारी राख धूल और धुआं फैल गया कि पृथ्वीका सारा वातावरण
भर गया। इससे पृथ्वीपर आनेवाली सूरजकी गरमी कम हो गई और इसीसे पृथ
इतनी ठंडी बन गई कि पानीके बदले हिमकी वर्षा होने लगी। पृथ्वीके विशाल खंड
बरफसे ढकने लगे और उसपर हजारों फुट मोटी तह जम गई। दूसरा मत ऐसा है
हिमयुगका संबंध सूर्यके कलंकोंके साथ है। ये कलंक विद्युत चुंबकीय प्रभावोंके सूचक हैं
तीसरा मत ऐसा है कि पृथ्वी अपनी ब्रह्माण्ड यात्राके समय ऐसी कक्षासे गुजरी कि जह
सूर्यकी पूरी गरमी नहीं मिल सकी। संभव है कि सूर्यके अन्दर असंख्य दाग बन गए हों, तब
पृथ्वीपर आवश्यक गरमी न मिली हो और तब हिमयुग आए हों।

कुछ भी हो हम तो इन हिमयुगोंका समय क्या था यही जाननेकी दिलचस्पी है।
पहला हिमयुग साठ करोड़से तीन अरब वर्ष पहलेके किसी समयमें आया था। दूसरा हिम-
युग साढ़े बाईससे सत्ताईस करोड़ वर्ष पहलेके कालमें आया था। भरतखंडके दक्षिण भागके
ऊंचे प्रदेशोंमें उस समय धरतीमें दरार पड़ी थी और उनमेंसे लावारस बह रहा था।

पिछले दस लाख वर्षोंमें चार हिमयुग आए थे। इनमेंसे पहला छः लाख वर्ष पहले दूसरा
साढ़े चार लाख वर्ष पहले तीसरा दो लाख वर्ष पहले और चौथा बीससे अस्सी हजार वर्ष पहले
आया था। और यह भी अंतिम ही था ऐसा तो कैसे कहा जा सकता है? अब भी हिमयुग
आ सकता है। एक मतके अनुसार पिछले हिमयुगका अभी अंत नहीं आया। हिमालय आल्प्स
तथा उत्तर ध्रुव प्रदेश ग्रीनलण्ड और खासकरके दक्षिण ध्रुव खंडमें समुद्रसे बादलके द्वारा
इतना पानी बरफ रूपमें अब भी पड़ा है कि समुद्रकी सतह ४०० फुट नीची हो गई है। कुछ
तो ऐसा भी मानते हैं कि समुद्रकी सतह दो से तीन हजार फुट नीची हो गई है।

उत्तर गोलार्धमें पिछले चार हिमयुगोंके तीन केन्द्र थे। एक पूर्व कनाडामें हडसनकी
खाड़ीको समा लेता था। आज भी हडसनकी इस खाड़ीमें बरफ अधिकतर समय बरफ जमा
रहती है। दूसरा केन्द्र यूरोपमें स्कॅण्डिनेवियन देश थे। ब्रिटन तथा यूरोपका समग्र उत्तरी
भाग बरफके नीचे दबा पड़ा था (उस समय ब्रिटन और यूरोपके बीच समुद्र नहीं रहा
था।)। तीसरा केन्द्र पूर्व साइबेरियामें था।

इस हिमराशिका इतना तो भार था कि उनके वजनसे पृथ्वी सकटा फूट नीचे बठ गयी। बीस हजार वर्ष पहले यह बर्फ पिघलने लगी थी और उसका अधिकांश हिस्सा अब तक पिघल चुका है। इस प्रकार वजन कम होनेपर स्कैण्डिनेवियाका कुछ हिस्सा प्रति पाच वर्षोंमें दो इंच ऊपर उठ रहा है।

इन हिमराशियोंके बोझ और विस्तारकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। कैनडामें इस हिमराशिका विस्तार लगभग पचास लाख वर्गमील था और बीचमें इसकी मोटाई आठ हजार फुट थी। मतलब यह कि यह विस्तार दक्षिण ध्रुवसे भी अधिक था।

साढे चार अरब वर्षोंकी इस पृथ्वीकी उम्रके सामने दस लाख वर्ष तो एक तिनके समान है। यह समय इतना करीबका है कि इसके कुछ चमत्कार तो हमने अपनी आखोंसे देखे है। इसका शृखलाबद्ध इतिहास इसके स्तरोंमें लिखा अथवा अंकित है। इस नवीन युगमें भांति भांतिके प्राणियोंके अश्मीभूत अवशेषोंके अलावा कुछ प्राणियोंके सपूर्ण शरीर बर्फमें से या जमी हुई धरतीमेंसे निकले हैं। साइबेरियामेंसे बीस हजार वर्ष पहलेके हाथीके शव इतनी अच्छी तथा ताजी हालतमें बर्फसे निकले थे कि उनका मांस खाया जा सकता था। इन साम्प्रतकालीन चार हिमयुगोंमें बर्फके जो ज्वार भाटे आए इनमें अनेक प्रकारके सस्तन प्राणी मर गए व निर्वश हो गए।

दो हिमयुगोंके बीचके समशीतोष्ण वातावरणमें अनेक प्राणियों और मनुष्योंने हजारों मीलकी दूरीका पार किया था व एक खंडमेंसे दूसरे खंडमें चले गए थे। उस समय अफ्रीका और यूरोप दो जगह जुडे हुए थे। एक जिब्राल्टरके पास व दूसरे ट्यूनिस, सिसिली और इटलीके मार्गसे। उस समय भूमध्यसागर दो बड़ी झीलोंके रूपमें था। इससे अफ्रीकामेंसे हाथी, घोडा, गैंडा सिंह वगैरा भांति भांतिके प्राणी इन दोनों भागों से यूरोप पहुंचे। जहा इस वक्त बेरिंगके जलडमरूमध्यमें समुद्र है, वहाँ अलास्का (अमेरिका)के साथ साइबेरिया (एशिया) जुडा था। इस भूमि मार्गसे एशियाके अनेक मनुष्य और प्राणी अमरिका पहुंचे। अमरिकाके आदिवासी इन्हीं यात्रियोंकी सतान है।

पृथ्वी तथा मानव जीवनके इतिहासमें ज्वालामुखियोंका हिस्सा बडे महत्त्वका है। अगर हम पृथ्वीकी तुलना बायलरके साथ करें तो ज्वालामुखी उस बायलरके अंदरकी अधिक इकट्ठी हुई भापको निकाल जाने देनेवाले वाल्वकी तरह है। ये वाल्व या सुरक्षा परदे न हों तो बायलर धडाकेके साथ टूट जाए। उसी प्रकार पृथ्वीके भी टुकडे-टुकडे हो जाएँ। ऐसा माना जाता है कि मंगल तथा गुरुके बीचका एक ग्रह इसी प्रकार फटकर चकनाचूर हो गया है और उसकी रज अभी भी आकाशमें घूम रही हैं।

पृथ्वीपर मानव पैदा हुआ तभीसे यह इन धधकते ज्वालामुखियोंसे प्रभावित हो उन्हें भय और प्रशसापूर्ण नेत्रोंसे देखता रहा है। फिर भी वह इन ज्वालामुखियोंकी तलहटीमें रहता भी आया है। जब ज्वालामुखी सुषुप्त हो जाते हैं, बुझ जाते हैं तब उनका रूप भूलभुलैयोंसे भरा हो जाता है। इटलीमें विसुवियस सदियों तक ठंडा रहा और उसकी ढलान तथा तलहटीमें हरियाली भी फूल फल रही थी। यही नहीं वहा तो दो सुन्दर

…मुखासे उन्कर छा गई राखके ढेरों तले दबे हुए पॉम्पी नगरके उत्खननके दरमियान मानवोंके ऐसे क‍ अवशेष पाए गए।
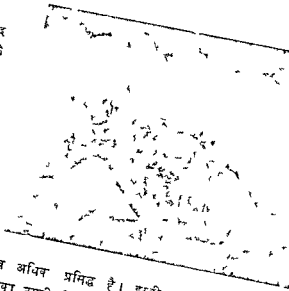
नगर भी बस थ। इनम पाम्पी बडा व अधिक प्रसिद्ध है। इस्वी सन ७९म एक दिन दोपहरको बड धमाकेव साथ विसुवियसका ऊपरी हिस्सा उड गया और उसमसे लावारस अग्निकी लपट काली राख तथा उबलत पानीक फुहारे फट निकले जो आकाशमे छूत थ। इस राख आदिके उडनसे सूय ढक गया। दिन काली रातके समान हो गया। धधक्ती काली राखक बादल इन दोनो नगरियोपर छिछ स गए जिसस घबराकर नगर निवासी हाहाकार कर भाग निकल। इनम कितन बच होग कौन बता सकता है। पर धधकती राख और दम घोटनवाली वायुओक कारण १६०० आदमी मर गए एसा अदाजा लगाया गया है। कुछ भागत हुए दब गए कुछ जिधर बठे थे वही ढेर हो गए। उनके ऊपर बीस फुट राखकी माटी तह छा गई। इस गरम तथा सूखी राखन मनुष्या तथा प्राणियोके शरीरका पानी सोख लिया। इस राखम फफूदी या सूक्ष्म जीव भी जीवत नही रह सक। इसस इन मनुष्योक शव सड बिना इसी हालतम १,९०० वष तक पडे रहे। इसी ज्वालामुखीके बादके विस्फोटके दरमियान निकली राखसे इनपर गरम राखक और स्तर जम गए।

आधुनिक कालम जब पाम्पी नगरको खादकर निकाला गया तो उन्नीस सौ वष पहले इस नगरका सान्य देखनेको मिला। वहाकी प्रजा किस प्रकार रहती थी उस नगरीका ग्रौर स्थापत्य कसा मनोहर था यह सब देखनका मिला। १९०० वष पहलका दृश्य प्रत्यक्ष हो गया—किंतु उसम कहीं भी जीवन न था। एक धनिक अपन गुलामक सिरपर धन रखकर भाग रहा था। वह धन और गुलाम साथ ही राखम दब गए। अपन सौन्दयकी निरखता और निसारता एक सुन्दरी दपणक सामन उसी हालतम मिली। रसोईघरम रसोई तथा बिना पके अड मिले। आज भी इस नगरीकी सडको परर पत्थर पत्थरपर प्राचीन रोमन रथोके पहियोका लकीरें बनी दिखती है।

विसुवियसक विस्फोटका पुनरावृत्ति वतमान समयम—१९०२म—वेस्ट इन्डीजक मार्तिनिक टापूम हुई। मन्यास गुरुप्त माउट पला नामक ज्वालामुखी ता० ८ मई १९०२ क दिन

धडाकेके साथ फटा और उसमेंसे अग्नि, राख, पत्थर, धुआं वगैरा ढेर उड़कर उन नगरोंपर गिरे। एक मिनटमें ही यह शहर नष्ट हो गया। उसके तीन हजार मनुष्य तथा सारे पशु भी मर गए।

परन्तु जहां रहनेका स्थान नहीं और खेतीके लिए ज़मीन नहीं ऐसे टापुओंपर मनुष्योंको ज्वालामुखीके पास रहना ही पड़ता है। एक तरहसे ज्वालामुखी उपयोगी भी है क्योंकि उसमेंसे निकली राख व लावारस, आदि ज़मीनको बहुत उपजाऊ बना देते है। इटलीके बढ़िया अंगूर विसुवियसकी तलहटी व ढलानपर ही होते हैं। ज्वालामुखीका विस्फोट जिस प्रकार भयप्रद होता है उसी प्रकार अनन्य कुतूहल और जिज्ञासा भी पैदा करता है। ग्रीक प्रकृति शास्त्री एरिस्टोटलकी मान्यता थी कि जिस प्रकार पृथ्वीपर हिमवर्षा होती है तथा पवनके तूफान आते है उसी प्रकार पृथ्वीके भीतर भी अग्नि तथा वायुके तूफान आते है। पाम्पीके विनाशके समय रोमन इतिहासकार और प्रकृतिशास्त्री मोटो प्लानी ता० २४ अगस्त ७९ ई० के दिन विसुवियसके विस्फोटका निकटसे अध्ययन करनेके हेतु समुद्रपरसे किनारेपर उतरकर आगे बढ़ा था। वहांपर धुआं, राख और गरम हवाभरे अंधकारमें वह घुट गया और मृत्युका वरण किया। परन्तु उसके भतीजे छोटे प्लीनी ने लिखा है कि उसके चाचा आगको बढ़ते गए व अपने निरीक्षणसे प्राप्त जानकारी अपने पीछेवालोंको सिखाते गए। अंतमें गरम हवा और घने धुएंसे घुटकर मर गए।

प्लीनीकी मृत्युके पश्चात करीब १,६०० वर्ष तक ज्वालामुखीके सम्बन्धमें अधिक जानकारी नहीं मिली पर १७-वीं सदीमें एक फ्रेंच विचारक द कार्तेने बताया कि भूगर्भमें तलके जलके उठनेसे ज्वालामुखी फटता है।

आज तो दुनियाके कई महत्त्वपूर्ण ज्वालामुखियोंके मुखके पास ही विज्ञानशास्त्री अपना प्रयोगशाला स्थापित कर अध्ययन कर रहे हैं। ये आनेवाले उपद्रवकी सूचना पहले ही दे सकते हैं। साथ ही जो शांत हो चुके हैं ऐसे कुछ ज्वालामुखियोंमें जहांतक अंदर उतरा जा सकता है और जहांतक गरमीको सहन किया जा सकता है वहांतक ये वैज्ञानिक गए है और भीतर क्या चल रहा है उसकी झांकी भी पा सके है।

मेक्सिकोके खेतमें फटे ज्वालामुखीकी बात हम कर चुके हैं। ये ज्वालामुखी पर्वत अपने उगले हुए पदार्थोंसे बने होते है। इन पर्वतोंके एकसे अधिक मुख भी हो सकते है। इन मुखोंकी दीवारें लावारसके ठंडा होकर जमनेसे बनी होनेके कारण बहुत सख्त होती है। जब लावारस शान्त हो जाता है तो ऊपरी परतें जमकर चट्टानें बन जाती है। इसके बाद वे कितने वर्ष, महीने या शताब्दियोंके बाद फटेंगे—या न भी फटें—यह कोई नहीं बता सकता। पर जब कभी इसमें हलचल पैदा हुई कि भाप, धुआं, राख और भापके रूपमें उसकी ये हलचलें देखी जा सकती हैं। विसुवियसने पाम्पी नगरको गाड़-सा दिया। इससे पहले वह कब फटा था इसका उल्लेख कहीं नहीं मिलता। पर उसके पश्चात तो इसने अनेक बार छोटे मोटे उपद्रव किए हैं। करीब अठारह बार तो इसने काफी बड़े उत्पात किए हैं। अंतिम बार १९४४ ई०में भी उसमें एक विस्फोट हुआ था। क्राकाटोआमेंसे लगभग सात क्यूबिक घनमील जितना लावा और अन्य घनपदार्थ निकल जानेसे उसके भीतर इतना विस्तृत खोखला
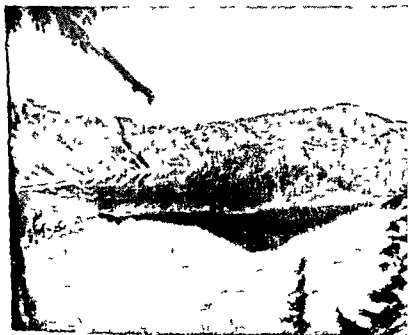
ज्वालामुखीक

ज्वालामुखके शांत हो जानेके बाद उसमें बना क्रेटर सरोवर। सरोवरमें भी फिर एक और ज्वालामुख बना था जो बादमें शांत हो गया था। तस्वीरमें वह भी दिखायी देता है।
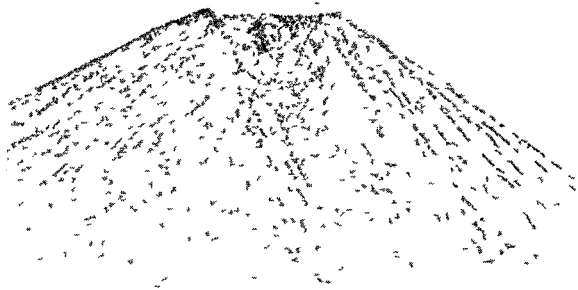
म फुजियामा   यह ज्वालामुखी जापानमे बहुत ही पवित्र माना जाता है।

र्शिण महासागरमे त्रि दकुन्हा नामक टापूमें नि कलनेम ज्वालामुखी प्रकि हुआ था। १०६१ मे पुन विस्फोट हुआ
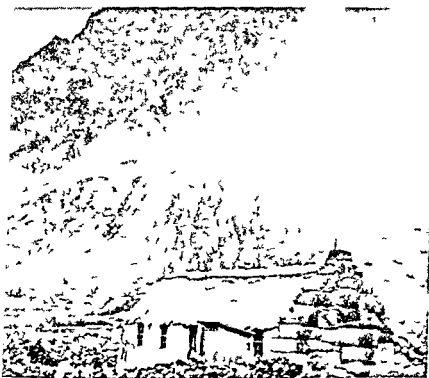
बन गया कि पहाड़की दीवार टूट गयी और सारा टापू ही समुद्रमें बैठ गया। मानव इतिहासमें सबसे अधिक नरबलि लेनेवाला तो जावाके पूर्वमें स्थित तम्बोरा नामका ज्वालामुखी है। १८५१में इसने विस्फोट किया था व ४७,००० मनुष्योंकी बलि ली थी।

दुनियामें हजारों ज्वालामुखी पर्वत हैं परन्तु सभीके मुखमें लावा नहीं है। आज केवल ५५० ज्वालामुखी धधक रहे हैं। इनमेंसे अधिकतर प्रशान्त महासागरमें तथा उसके किनारेके पहाड़ोंमें हो हैं। इनममें २८ पर्वतोंके रूपमें प्रशान्त महासागरके बीचमें ऊपर आ गए हैं। इन हवाई ज्वालामुखियोंमेंसे लावारस शान्तिसे निकलता है जो इन टापुओंके विस्तारको और भी बढ़ाता जाता है। हवाई पर्वतमालाके कई शिखर टापूके रूपमें ऊपर उठ आए हैं। इनमेंसे मुख्य टापू मौनालोआका ज्वालामुखी धधक रहा है। यह पहाड़ समुद्रके तलेसे ३०,००० फुट ऊँचा है जो एक तरहसे हमारे हिमालयकी ऊँचाईसे एक हजार फुट अधिक है।

प्रशान्त महासागरके उत्तरमें अलास्काके एल्यूशियन टापुओंमें होकर एशियाके कामचाटका द्वीपसमूह तक ज्वालामुखियोंकी एक विराट पर्वतमाला बिछी हुई है। जब १९१२में एल्यूशियन टापुओं का काटमाइ ज्वालामुखी फटा था तब उसने ७०० मीलके फासले परके कोडियाक पर राखकी एक फुट मोटी तह बिछा दी थी। आधुनिक युगके सबसे बड़े ज्वालामुखी विस्फोटमें इसकी गणना होती है। एशियाका कामचाटका प्रदेश मानो आश्चर्यका अजायबघर है। वहां १२७ ज्वालामुखी हैं। वहांसे यह पर्वतमाला क्युराइल टापुओंमें होकर जापानमें प्रवेश करती है जहां फुजियामा नामक विश्वका सुन्दरतम ज्वालामुखी है। जापानके लोग इसे पवित्र मानते हैं व इसकी यात्रा पर जाते हैं।

जापानसे इन धधकते मनकोंकी माला फिलिपाइन्समें प्रवेश करती है। वहांसे यह इन्डोनेशिया, न्यूगिनी, सालोमन और न्यूजीलैण्ड होकर दक्षिण ध्रुव प्रदेशमें रोस टापू होकर एरेबस ज्वालामुखी तक जाती है। दक्षिणमें यही पर्वतश्रेणी दक्षिण अमेरिकाके पश्चिमी किनारे पर एण्डीज पर्वतमालामें ज्वालामुखियोंके दीपस्तम्भ बनाती है। यहांका कोटोपाक्सी (काटापक्सी) ज्वालामुखी दुनियाका सबसे ऊँचा धधकता ज्वालामुखी है। इसकी ऊँचाई १९,३४४ फुट है। इसी पर्वतमालाका सानगे (Sangay) ज्वालामुखी शायद ही कभी शान्त होता होगा। यह बड़े-बड़े मकानोंके समान विशाल शिलाओंको भी प्रति घंटे हजार मीलकी गतिसे ऊँचे उछालता है।

दूसरी एक पर्वत-श्रेणी वेस्ट इण्डीजके टापुओंसे (एटलांटिक महासागरमें) शुरू होकर मध्य अमेरिका और मेक्सिकोमें होकर यूनाइटेड स्टेटसके पश्चिममें अलास्कामें जा मिलती है। तीसरी एक पर्वतमाला उत्तर एटलांटिकमें आइसलैण्डके विस्तारमें है। यह श्रेणी मध्य एटलांटिकमें गजास एसन्सन वगैरहमें होकर दक्षिण एटलांटिकके एक शान्त एकान्त टापू ट्रिस्तान द कुन्हामें प्रकट होती है। १९६१में इधर विस्फोट हुआ तब उसमें बचानेको हेतु वहांके २७० निवासियोंको एटलांटिकके दूसरे कोने पर इंग्लैंडमें लाया गया था। परन्तु इन गोरोंको भी ब्रिटिश टापुओंका आधुनिक व विज्ञान केन्द्रित जीवन पसन्द न आया। अब वे पुनः अपने एकान्त उजड़े और आधुनिक दुनियासे पिछड़े टापू पर वापस आ गए।
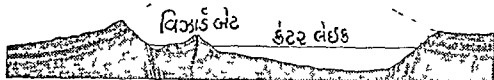
अमरिकाम क्रेटर लेक नामक एक सरोवर है जो ज्वालामुखीम बना है। ६५०० वप पहले जब यह मुख उड गया था तब इममस १७ घनमील जितना पत्थर निकल कर उड़ा था। इससे जो खोखला बना उसम उसकी दीवार धँस गइ। जब यह ठडा हो गया तब इमम सरोवर बन गया जो आज ४ हजार फुट गहरा है और ६ माल चाडा है। इस विशाल सरोवरके बीच एक टापू है जो फिरस क्रियाशील बने ज्वालामुखीने बनाया है। इस सरोवरके चारो ओर ज्वालामुखकी ऊची दीवार है।

ज्वालामुख कुएँ या बावडी जसा नही होता। हवाइ द्वीपका मौनालाओका ज्वालामखी दो मील लबा है और एक मील चौडा है। साथ ही उसके आसपास ७०० फुट ऊँची खडी दीवारें है जिनके बीच लावारसका समुद्र खदकता है। इन दीवारोकी दरारोमसे होकर जो लावारस निकलता है वह ठीक समुद्र तक जाता है। इस प्रकार समुद्रके तलेसे टापू बनना शुरु हुआ है और या वह धीरे धीरे बढता जाता है। समुद्रके तलेम उसका घिराव ७० मीलका है। पानीका ऊपरी सतह तक उसकी ऊचाई १६,००० फुट है ओर पानीकी सतहस शिखर और भी १४,००० फुट ऊचे हैं। कल्पना ता कीजिए कि पथ्वीके गभमस कितना लावारस निकला होगा और परिणामस्वरूप पेटम कितनी बडी खन्दक बनी गया होगी।

अमेरिकाम ओरोगान ईडाहो और वाशिगटनम लावारससे बना २ लाख वगमीलका एक पठार है जिस पर जगल उग आनेम वह पहचाना नही जाता। ग्रीनलड और आयसलडसे स्काटलडके उत्तरके टापुओ तक हिमालयके जन्मके युगम ६ लाख वगमीलके विस्तारमे दरार थी जिनमसे धारे धीरे लावारस निकलता रहता था। उसके ६०स लेकर १०० फुट मोटे स्तर जम गए ह। इन स्तरोकी अधिकस अधिक मोटाई १५०० फुट है। लावाका एक स्तर जम जाए और ठडा हो जाए उस पर जगल उग आए ऊपरी सतह टट फूटकर मिट्टी बन जाए बादम फिर लावारस बह निकले और यह सारा उस प्रवाह के नीचे दब जाए इस प्रकार एकके ऊपर एक स्तर जमत गए और उनके बीच मिट्टी और पड दब गए। अब खादो पर ये कच्चे कोयल (लिग्नाइट)के रूपम मिलते है।

जब लावारस ठडा होकर जम जाता है तो कीचडके सूखने पर जिस प्रकारकी दरारें पड जाती है उसी प्रकारकी दरारें इस जमे लावारसम भी हो जाती हैं। इन दरारोम

इस आकृतिमें छोटी मोटी दरारोंके कारण अफ्रीका खंड के खंडित होने का खयाल दिया गया है। भारी 'रिफ्टवेली' नामक बड़ी दरार आती है। यह दरार लाल समुद्रसे होकर इजराइलमें पहुंची है।
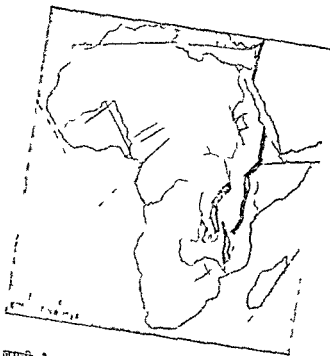
अंतर इतना ही होता है कि जब कीचड़ जमती है तो उसमें दरारें कम गहरी व टेढ़ी मेढ़ी होती हैं जबकि लावाके जमने पर उसकी दरार गहरी व ज्यादातर षट्कोण बनाती हैं। जब इन्हें खोदा जाता है तब सुंदर तराशे हुए स्तंभोंका 'स्थापत्य' हमें दिखता है। बम्बईके पास अंधेरीमें गिल्बर्ट हिल नामक टीला है जो अब कट रहा है उसमें पाए गए स्तंभ इसी प्रकारके नमूने हैं। अमरिकामें भी इस प्रकारके सुंदर नमूने मिले हैं।

अफ्रीकामें एक दरार इतनी बड़ी है कि वह अफ्रीकाके काफी बड़े हिस्सोंको दो भागोंमें बांट देती है। जिस प्रकार अफ्रीका और अरबस्तान दोनों अलग होकर उनके बीच लाल समुद्र आ गया है उसी प्रकार कालांतरमें इस दरारसे अफ्रीकाके दो टुकड़े अलग हो जानेकी संभावना भी हो सकती है। अंग्रेजीमें इसे रिफ्ट वेली कहते हैं। इस हजारों मील लम्बी और हजारों फुट गहरी दरारमें नदियां और सरोवरोंका पानी भरा है। इस स्थान पर भी लावारस दरारोंमेंसे बहा था। न्यासा, टांगानिका, विक्टोरिया आदि सरोवर भी इसी दरारमें बसे हैं।

जब ज्वालामुखीकी शक्ति खत्म होने लगती है तो धरतीमेंसे लावारसके बदले गरम पानी भाप या गंधकका अथवा बोरिक एसिडका या क्लोराइड युक्त रसायनोंका धुआं या कार्बन डाइऑक्साइड ही निकलता है। अमेरिकाकी डेथवेलीको ऐसा नाम मिला इसका कारण यह है कि वहाँ कार्बन डाइऑक्साइड निकलती है जो हवासे भारी होनेके कारण धरतीके पास ही जमा हो जाती है। इसमें जाने पर आदमी घुटकर मर जाता है।

जिस प्रकार ज्वालामुखी उपजाऊ मिट्टी देता है उसी प्रकार उपयोगी वायु और पानी भी देता है। नाइट्रोजन, हाइड्रोजन कार्बन डाइऑक्साइड और सल्फर डाइऑक्साइड आदि सारी
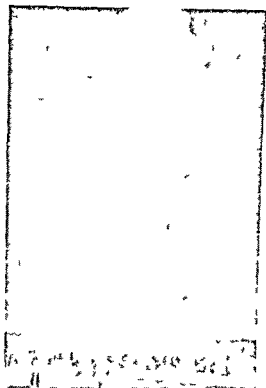
ओल्ड फेथफुल—फुहारा

१५० फुट ऊँचा उछलता पानीका फुहारा

लेनेके लिए उपयोगी नहीं हैं पर नाइट्रोजनका अन्य पदार्थोंके साथ संयोग होनेसे विविध नाइट्रेट बनते हैं और हाइड्रोजनका आक्सीजनके साथ संयोग होनेसे पानी बनता है। कार्बन डाइऑक्साइडमेंसे वनस्पति कार्बनको अलग कर हम आक्सीजन देती है। इस प्रकार अरबों वर्षोंसे वातावरणके निर्माणमें ज्वालामुखियोंका बहुत बड़ा हिस्सा है। ज्वालामुखीका काम गरम पानीके झरने भाप तथा भापके फुहारे बनानेका होता है।

गरम पानीके फुहारों के लिए अमेरिका तथा पानीके झरनों तथा भापके फुहारोंके लिए आइसलैण्ड, न्यूज़ीलैण्ड, रशियाका कामचात्का, क्यूराईल टापू तथा जापान आदि प्रसिद्ध हैं। न्यूज़ीलैण्ड तथा रशियामें तो भूगर्भसे बड़ी तेज़ीसे निकलती भाप पर नियंत्रण करके उससे बिजली पैदा की जाती है। साइबेरियाके अत्यन्त ठंडे प्रदेशोंमें इस प्रकार निकली भाप आशीर्वाद स्वरूप है। स्विट्ज़रलैण्ड तथा फ्रांसके इस प्रकारके गरम पानीके झरने अपने औषधीय गुणोंके लिए प्रसिद्ध हैं। यलोस्टोन पार्कमें ओल्ड फेथफुल नामका फुहारा प्रति ६५ मिनट पर उछलकर १५० फुट ऊँचा जाता है। यह फुहारा चार मिनट तक उड़ता रहता है। फिर धीरे धीरे कम होता जाता है। प्रतिवर्ष इसे देखने लाखों लोग आते हैं पर यह ज्वालामुखीकी ही एक प्रवृत्ति है ऐसा समझनेवाले बहुत कम होते हैं।
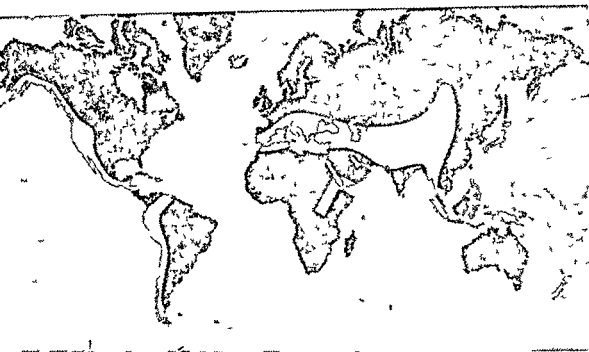
इन नक्शोंमें भूकम्प होनेकी सम्भावनावाले क्षेत्र सफेद पट्टीसे बताए गए हैं। सारा उत्तर भारत, हिमालय तथा उसमेंसे निकलनेवाली सभी पर्वतमालाओंके प्रदेशोंमें भूकम्पोंकी सम्भावना होती है।

५ : भयानक और विनाशक भूकप

भूकंप और ज्वालामुखी पर्वतोंका घना संबंध है। पृथ्वीकी सतहका जन्म हुआ तभी से भूकंपका भी जन्म हुआ है। कारण यह है कि लावारसके अंदर भरे वायुओंको बाहर निकलना है, और लावारसको भी उन वायुओंके दबावसे उबलना है, उछलना है। सतह जमनेके बाद एक और कारण भी था मिला। यह सतह नीचेके लावारस पर तरती थी। भूकंप पैदा करने वाली ये प्रक्रियाएँ आज भी कम या अधिक अंशमें जारी हैं।

जहाँ पर पृथ्वीके स्तरोंके अन्दर परस्पर स्तर-भंग हुआ हो वहाँ पर चट्टानें एक दूसरे पर खिसकती हैं। जैसे हम टेबल पर ताशके पत्ते फेंकते हैं तो वे खिसकते हैं उसी प्रकार ये चट्टान भी सरकती है। भूकंपके वक्त ऐसे स्तर-भंगमें प्रभाव होता है और टूटी-फूटी परतें पाँच-पन्द्रह मील या ज्यादा दूरी तक खिसकती हैं। इससे ऊपरी परस्पर खलबलाहट पैदा होती है। जब भारी भूकंप होता है तब बड़े भूभागमें इसका पृथ्वीकी लहरोंके रूपमें

देखा भी जा सकता है। इन स्हरोंमें बडी चट्टानें या शिलाएँ भी उछलती हैं। जिस प्रकार पानीमेंसे निकलने पर कोई कुत्ता पानीको झटकता है उसी प्रकार भूकंपके समय पहाडोंसे बडी-बडी चट्टानें, शिलाएँ वृक्ष तथा मिट्टी उडकर गिर जाती है। इससे पहाडोंको भारी नुकसान होता है।

पृथ्वी पर भूकंपके क्षेत्र दो प्रकारके है। पहले वे जो समुद्रके तलमें हैं, जहाँका तल पतला है और साथ ही वहाकी तहम स्तर भंग हुआ है। दूसरा ऊँची पर्वत श्रेणियाँ, जहाँ पर्वतोंके उठनेसे धरतीकी परतें अस्त-व्यस्त होकर एक दूसरे पर चढ गई हैं।

भूकंपका एक पट्टा इटलीसे यूगोस्लाविया ग्रीस, रूमानिया बलगेरिया, तुर्की इराक ईरान अफगानिस्तान पश्चिम पाकिस्तान, कश्मीरसे आसाम तकका हिमालयका प्रदेश हिंदुकुश काराकोरम एशियाई रशियाके दक्षिणी राज्य तिब्बत बर्मा स्याम, हिन्दचीन इन्डोनेशिया और फिलिपाइन्स तक फैला है। उत्तर प्रशान्तसागरमें जापान क्युराइल टापू और रशिया तथा अमेरिकाको जोडनेवाले एल्युशियन टापुओंमें होकर यह अमरिकाके अलास्का तक पहुँचता है। वहासे यह अमरिकाके पश्चिमी किनारे पर कैलिफोर्निया मक्सिको और मध्य अमेरिका में होकर दक्षिण अमरिकाके एण्डीज पर्वतोंको अपनेमें समा लेता है। एटलांटिक महासागर में वेस्ट इन्डीजके टापू अधिक तो और कुछ टापू कम प्रमाणमें भूकंपके विस्तारमें है।

भूकंपकी दृष्टिसे भरतवर्ष तीन हिस्से किए जा सकते है। आसामसे कच्छ तक पश्चिमी पाकिस्तान समग्र हिमालय और उसकी तलहटीका भाग जिसमें गंगा-यमुना तथा ब्रह्मपुत्रके प्रदेशोंका भी समावेश होता है ये सब अधिकतर भूकंपके क्षेत्रमें हैं। दक्षिण भारतका प्रदेश कमसे कम भूकंपके क्षेत्रमें है क्योंकि वहा लावारसकी जमी माटी ठोस परत है। उनके बीचका पट्टा साधारण भूकंपके क्षेत्रका है। दक्षिणका उच्च पठार जो लावारसके जमनेसे बना है वह दस हजार फुट मोटा है।

अब हम पृथ्वीके उस भागकी ओर बढने हे जहां सबसे अधिक भूकंप होते है। जापान और फिलिपाइन्सके पूर्व किनारेकी भूमि बिल्कुल सीधी ढलान सी होकर गहरेमें गहरे समुद्रमें चली जाती है। दुनियाके सब भूकंपोंमेसे ९० प्रतिशत भूकंप जापान, फिलिपाइन्स पश्चिम एशिया ग्रीस, यगोस्लाविया, इटली और मास्कोमें होते हैं।

अधिकतर भूकंपोंका जन्म पाच मील तककी गहराईमें होता है पर कोई ५०० मीलकी गहराईमें भी होता है। इतनी गहराई तक तो पृथ्वीकी परत है भी नही, पर किरणोत्सर्गकी गरमी बढ जानेके कारण ऐसे भूकंप होते होंगे। भूकंपके पास जो मैदान या पर्वत हैं वे सब नये है। अर्थात हमारे हिमालयकी तरह छ-सात करोड वर्ष पहलेके अथवा अमरिकाके रॉकीज पर्वतकी तरह छ करोडसे तरह करोड वर्ष पुराने हैं। भूगर्भ शास्त्रकी दृष्टिसे वे कुछ ही दृष्टांके बालक है। उनके अंदरकी चट्टान अभी तक स्थिर न हो पानेके कारण वहा भूकंप होते रहते हैं। आसाममें हिमालय उत्तर पूर्वकी ओर जाते-जाते अचानक ऐसा मोड लेता है कि उसके अंदरमें विशाल स्तर भंग होता है। आसामके भूकंपोंका यह एक खास कारण है।

जब नीचेसे आते असह्य दबावसे परतें ऊपर उठ जाती हैं, तो वे टूट फूट जाती है और ऊँची हो जाती है। कुछ टूटी फूटी परतोंका हिस्सा ऊपर उठता है तो कुछ नीचा हो जाता है।

इससे भूकंपोंका जन्म होता है। जब जब इनमें कोई परत खिसकने लगती है तब भूकंप होता है। अमरिकाके पश्चिमी किनारे परका सानफ्रांसिसकोका शहर एक स्तरभंगके विस्तार पर बना है। १९०६ ई०में वहांकी परतोंके खिसकनेसे इतना भयंकर भूकंप हुआ कि करीब सारा शहर नष्ट हो गया।

भारतके इतिहासमें शायद ही कोई बड़ा भूकंप दक्षिण भारतमें हुआ होगा। सभी बड़े भूकंप हिमालयमें अथवा सिंधु गंगा ब्रह्मपुत्रके मैदानमें हुए हैं। उत्तरी खंडके पहाड़ और मैदान अस्थिर हैं। दक्षिण भारतमें कन्याकुमारीसे लेकर मद्रास तकका पूर्वी किनारेका प्रदेश साधारण भूकंपोंका ही पात्र है।

भारतखंडमें सबसे पुरानी भूकंपकी कथा अरबके इतिहासकारोंने लिखी है। उनके अनुसार ८९३ ई०के जनमें अथवा ८९४ ई०के प्रारम्भमें दाइबुल या दाभुल नामके बन्दरगाहका विनाश हुआ था। इस भूकंपमें करीब डेढ़ लाख आदमी मर गए थे। इसके पश्चात १६वीं सदीके प्रारम्भमें ६ जुलाई १५०५के एक बड़े भूकंपका उल्लेख मुस्लिम हस्तलिखित पुस्तकमें मिलता है। अफ़गानिस्तान और भारतका सरहदवाला इस भूकंपमें एक दिनमें ३३ झटके लगे थे। इससे पहाड़ टूट गए थे, घर धराशायी हो गए थे व जानमालको भारी नुकसान हुआ था। इसके पश्चात १७वीं सदीके आरम्भमें एक भूकंपने बम्बईमें करीब दो हज़ार मानवोंकी बलि ली थी। इसी सदीके उत्तरार्धमें समाचारों नामके ३० हज़ारकी आबादीवाला सम्पूर्ण नगर पृथ्वीमें समा गया था, ऐसा उल्लेख मिलता है। करीब उसी कालमें औरंगज़ेबके समयमें बम्बईकी तरह ही सारे हिन्दुस्तानमें उथल-पुथल मच गई थी। अलावा इसके एक उल्कापात भी हुआ था। वह इतना ज़ोरदार था कि उसकी वर्षासे एक तालाब छलक गया था।

१८वीं सदीमें दिल्लीने एक बड़े भूकंपका अनुभव किया था। अनेक किले मस्जिदें और मकानोंको धराशायी करनेवाला तथा अनेक मनुष्योंका विनाश करनेवाला यह भूकंप एक महीने तक चलता रहा था।

दिल्लीकी तरह कलकत्ता और सुंदरबन भी भूकंपके शिकार हुए हैं। १७३७ ई०के अक्टूबरमें एक ऊंचा गिरजाघर अपने शिखर समेत पृथ्वीमें गायब हो गया था। तीन लाख मनुष्य मर गए। साथ ही बीस हज़ार नौकाएं भूकंपजन्य बवंडरकी शिकार हुईं। इसी समय अराकान तट प्रदेशका कुछ भाग समुद्रमें ऊपर उठ आया। समुद्रके तलेसे ४० फुट ऊपर उठी हुई चट्टानों पर सीपें चिपकी हुई पायी गयीं। इसका अर्थ यह है कि भूकंपसे समुद्रके तलेका इतना हिस्सा ऊपर उठ आया था।

इसके बाद १९वीं सदीके आरम्भमें ही उत्तर भारत पर भूकंपका एक बड़ा भारी आक्रमण हुआ। कुमायूंसे लेकर कलकत्ता तक हाहाकार मच गया। दिल्लीके कुतुबमीनारका ऊपरी भाग टूटकर नीचे आ गिरा। करीब इसी कालमें हुए १६ जून १८१९के भूकंपको गुजरात कभी भूल नहीं सकता। कच्छका मुख्य नगर भुज इसमें नष्ट हुआ और दो हज़ार मनुष्य मर गए। सिंधड़ी नामका बन्दरगाह ज़मीनमें गर्क हो गया। भूकंपसे सिंधुकी शाखा प्रवाहके आड़े अचानक एक पन्द्रह मील चौड़ी ज़मीन ऊपर उठ आयी और अल्लाहका बंध बन गया। इस भूकंपका असर सारे गुजरात पर छा गया और महाराष्ट्रमें पूना तक

पहुँच गया। अहमदाबादमें भी काफी नुकसान हुआ। इसी समय लाहौर, कश्मीर, कुमाऊँ, गढ़वाल और नेपालको भी भूकंपसे बहुत हानि सहना पड़ी।

तारीख १९ फरवरी १८४२को अफगानिस्तान और भारत भूकंपसे काँप उठे थे। उसमें जलालाबादका एक तिहाई भाग नष्ट हो गया। पेशावरमें भी जान और मालकी भारी नुकसानी हुआ। पेशावरमें कुछ गरम चश्मे ठंडे हो गए। इस भूकंपने २१६००० मील के इलाकेमें हाहाकार मचा दिया। दक्षिणका पठार जो लावारससे बना है १८४३ ई०के मार्च-अप्रैलमें जोरसे काँप उठा था। शोलापुर, करनूल और बलारी आदि शहरोंमें भयंकर नुकसान हुआ था। लगभग सवा सौ वर्षोंके पश्चात ११ दिसम्बर १९६७को पूनाके पास कोयनामें फिरसे भूकंप हुआ।

इसी सदीमें अंतमें बंगालकी खाड़ीमें जो भूकंप हुआ वह तो इतना व्यापक था कि दक्षिण भारतमें कालीकट और उटकमंड, उत्तर भारतमें आगरा और मुंगेर तथा पूर्वमें बर्मा तक उसके धक्के लगे थे। बीस लाख वर्गमील पर छाये हुए इस भूकंपसे बर्मामें कीचड़का एक 'ज्वालामुखी' फटा था।

भारतमें शायद आसाममें सबसे उग्र भूकंपोंका रहा है परन्तु भूकंप हमेशा आबादी वाले इलाकेमें ही नहीं हुआ। १२ ६-१८९७में भूकंपसे शिलांग, गौहाटी, सिल्हट तथा गोलपाड़ा आदि कई नगर धराशायी हो गए थे और बंगालमें कलकत्ता भी बचा न था। यह भूकंप जो १९ लाख मीलसे भी अधिक विस्तारमें फैला था, उसमें दो सौ मील लंबे तथा पचास मील चौड़े विस्तारके निशाल पहाड़ भी अपनी जगहसे हट गए थे। १६००से अधिक मनुष्य इसमें मर गए थे। जैसे किसी ढोल पर मटरके दाने रखकर बजायें तब दाने जैसे उछलते हैं उसी प्रकार उस भूकंपमें धरती परसे शिलाएँ उछलती थीं। खेतोंमें तथा मैदानमें धरती जगह जगह फट गई थी और उसमेंसे पानी तथा रेतके तीन चार फुट ऊँचे फुहारे फूट पड़े थे। नदी नालोंके पानीमें रुकावट हो जानेसे पानी बढ़ गया और बाढ़ आई। कई जगह पर्वत टूट गए इससे भी नदी नालोंके प्रवाह रुक गए। पर्वतोंकी ऊँचाईमें भी कुछ फर्क हो गया था। चिरापूंजीके इलाकेमें पृथ्वी एकसे लेकर पतीस फुट तक ऊँची-नीची हो गई। इस भूकंपकी लहरोंकी गति प्रतिघंटे ७२०० मीलकी थी अर्थात सेकण्डमें दो मीलकी थी और भूकंपका स्थान पाँच मीलसे भी कम गहराईमें था।

बीसवीं शताब्दीमें ही तारीख ४ अप्रैल १९०५ ई०को पंजाबमें कांगड़ा और कुल्लू भागमें (हिमालयमें) हुए भूकंपकी लहरें ज्वारकी लहरोंकी तरह उत्तरकी ओरसे आया और दक्षिणमें जाकर वहाँसे पुनः उत्तरमें आ गयी थी। इस भूकंपकी गति भी प्रति सेकण्ड १९२ (करीब दो) मीलकी थी। सोलह लाख पचीस हजार मीलके इलाकेमें फैला यह भूकंप प्रातःकाल हुआ था। इसमें बहुतसे लोग अपने घरमें और बिस्तरमें ही फँस गए थे। कांगड़ा और धर्मशाला नामक पहाड़ी नगर धराशायी हो गए थे। इस भूकंपमें २०,००० मनुष्य मर गए। विनाशका दूसरा पट मसूरी और देहरादूनके बीच था। पश्चिममें सिंध तथा अफगानिस्तान, दक्षिणमें ताप्ती नदी तथा पूर्वमें गंगाके मुहाने तक फैले इस भूकंपका विस्तार भयंकर था। उसका केन्द्र हिमालयमें—कांगड़ा-कुल्लू तथा देहरादून मसूरी

कोयना (महाराष्ट्र)मे हुए भूकम्पके बाद, कोयना नगरकी बरबादीका दृश्य (दिसम्बर, १९६७)

कोयनाका भूकम्प

लाखा वर्षोंसे दक्खनका उच्च प्रदश भूकम्पाके उपद्रवासे मुक्त रहा है। फिर भी सोमवार ता० ११ दिसम्बर, १९६७के प्रात कालसे कुछ पहले कायना नदीके बाधके पास ऐसा भूकम्प आया कि लगभग सारा कोयना नगर नष्ट हा गया। आसपासके देहातोंम अनेक घर ढह गए और करीब १७५ आदमी मर गए। इसका झटका उत्तरम सूरतसे लेकर दक्षिणम गावा तथा बैंगलोर तक लगा था। इस भूकम्पसे लोगाको मानसिक सदमा अधिक पहुँचा, क्योंकि यह प्रदश भूकम्पसे मुक्त समझा जाता था और इसी कारण सरकारने करोडा रुपय लगाकर यहाँ पर जल-विद्युत-योजना साकार की थी। अगर अब यहा और विनाशकारी भूकम्प हा और इस बार बिल्कुल बच गए बाध व बिजलीका कारखाना नष्ट हा जाएगा तो कायना व कृष्णाके तट-प्रदेशाके लाखा लोगाकी जिन्दगीके लिए बडा भारी खतरा पदा हो जाए।

कोयनाम यह कोई पहला ही भूकम्प नही है। १९६१म बाधके पीछे पानी इकट्ठा होकर शिवसागर बना तब हल्के झटके लगने शुरू हो गए थे। ता० १३ सितम्बर, १९६७के दिन पहली बार भारी झटका लगा, जिससे धरतीम दरारे पड गयी थी और इमारताको भी नुकसान पहुँचा था।

तो जिस दक्खन प्रदेशका भूकम्पोंकी दृष्टिसे सुस्थिर और सलामत समझा जाता था वहा ऐसा भूकम्प हुआ क्यों? दक्खनका उच्च प्रदेश सुस्थिर व सलामत जरूर है। परतु पश्चिमी घाटका पर्वतमालाके निर्माणके कारण किनारेका प्रदश स्तर-भग (Faults) वाला है। भारतके स्तर भगवाले प्रदेशाम यह सबस बडा समझा जाता है। इसीसे भरतखडके पश्चिमी प्रदेशकी भूमि-पट्टी समुद्रम डूब गयी है और पश्चिमी घाटकी पवतमालाका निर्माण हुआ है।

अभी अभी खभातकी खाडीम तलकी खोजके लिए भूकम्पाकी दृष्टिसे जाचकी गयी तब वहा पर कुछ स्तरभग पाय गए थे। उनमसे कुछ तो दस हजार फुटसे भी अधिक गहराईम पाये गए थे। गुजरातके तल-कूपामसे गरम पानी व भाप निकलती है। कुछ कूपाके पानीकी गरमी तो १५० सेटी० उबलते पानीकी गरमीसे डेढ़ गुनी थी। माना जाता है कि इन स्तरभगाका नीचेके लावारससे सबध होता है। लावारस पर इन चट्टानाकी परते सरकती है तब भूकम्प होता है। परन्तु ऐसा बारबार नही होता। इसीसे, हिमालयम जसे बारबार भूकम्प होते हैं वसे इधर नही होते। अलावा इसके, यहाँ पर लावाकी जमा हुयी चट्टानाकी तह भी हजारो फुट मोटी है। इससे बडे भारी भूकम्पके बावजूद भी यहाँ नुकसान अपेक्षाकृत कम होता है। उदाहरणार्थ, ता० ११ दिसम्बरका भूकम्प रिचर (Richter) नापके अनुसार ७ ५ मात्राका था। इससे पहले ता० १३ सितम्बरका हुए भूकम्पकी मात्रा ६ थी। जबकि १९३९के बिहारके भूकम्पकी मात्रा ८ २ थी और १९३५के क्वटाके भूकम्पकी मात्रा ७ थी। बिहारम १० हजारसे अधिक और क्वटाम २५ हजारसे अधिक आदमी मर गए जब कि कोयनाम सिर्फ १७५ आदमी मरे तथा बाँध और पावरहाउस बिल्कुल बच गए। इसका कारण यह है कि बिहार और बलोचिस्तानकी धरती कमजोर है जबकि दक्खनका सोपान दिलाओका प्रदश बहुत ही मजबूत चट्टानासे बना है।

योजना आयोगके भूतपूर्व सदस्य डा० ए० के० सेनने बताया है कि ताप्ती नदीके मुखके पास स्तर भगका प्रारभ होता है। दूसरे स्तरभग पर लक्षद्वीप टापू समूह है। बम्बईके वायव्य (उत्तर-पश्चिमम) और दमनके पश्चिमम भी पृथ्वीकी परत उभर आयी है। यह भी स्तरभगका ही परिणाम है। परतु चट्टानाके सरकने खिसकनेस बडा भारी भूकम्प तो शायद ही होता है।

चित्र परिचय प्रशांत महासागरके
टापुओं पर मानाक्लिओआ नामक ज्व
मुखीसे बहते लावारसका दृश्य।

आँखों देखा हाल

आधे मीलसे अधिक व्यासवाली
विशाल खदककी दीवारें काले बसा
ऊँचे ऊँचे टीलोंसे बनी थी। करीब सौ फुट
उबलते हुए बसाल्टका प्रवाही रस खदक
था। उसमेसे बाहर निकलनेका जोर ल
हुयी वायुओंके कारण मानो अग्निकी फु
उड रही थी। एक बार मैंने ऐसी २० फु
गिनी थी।

इन वायुओंके जोरके कारण पिघले
चट्टानोंके प्रवाही रसके सौ-सौ फुट ऊंचे स्त
उछलते और फिर उसीमें समा जा
ठंडा होकर जमी हुयी सतह पर लाल-पीले दि
लावारसकी परतमें कई दरार हो ज
और उनमेंसे आँखको चौंधिया देनेवा
प्रकाश फैलाता धधकता लावारस उछलत
ये दरार मिट जाती नयी दरार बन
कुछ दरारोंमे अग्नि ज्वालाएँ भी निकलत
(तीन घंटे तक) मैंने इन सबका निरी
किया। बीच बीच में लावारसकी सतह नी
उतरती जाती थी। अंतमें वह ५० फु
करीब नीचे चली गयी। हर वक्त उस
सतह खदकती उछलती अग्नि स्तंभ
उछालती और साथ ही ऐसी घहराती र
कि जिसका वर्णन करना बडा कठिन है
दूर उस ज्वालामुखी पादपके ऊपरी किना
बैठकर भी मैं तो छोटे छोटे छिद्रोंवा
दर्पनीकी आडमेंसे ही लावाकी तरफ दृ
डाल सकता था। ऐनकसे भी कुछ रक्ष
हो जाती थी।

—एच० त्यान फि

रातका दृश्य

दिनका दृश्य

इलाकेम २१से ४० मीलकी गहराइमे था। इसके परिणामस्वरूप महीना तक हल्का कपन होता रहा था जो बादम भी दो तीन वर्षो तक सकडो बार होता रहा।

ता० ८वी जुलाई १९१८ ई०का भूकप उत्तर पूव भारत तथा वर्मा पर छा गया था जिमस आसामके श्रीमगल्म चायके वगीचाका विनाश हुआ था।

इसके पश्चात छोटे वडे अनेक भूकप भारतम हुए परन्तु जिसे भुलाया नही जा सकता ऐसा एक भकप उत्तर विहारम १९३४ ई०म हुआ था जिसका उल्लेख नेहरूजीने अपनी जीवनीम भी किया है। इसम १२ हजारस भी अधिक लोग मारे गए और करोडो रुपयाका नुकसान हुआ था। मातीहारी सीतामढी और मधवनी प्रदेशकी गहराईम इसका केन्द्र था। इसकी लहरें पासाडेना (अमेरिका) लेनिनग्राड (रशिया) तथा टाकियो (जापान)के भी भूकप यत्रो पर अकित हुई थी। मातीहारी मधुवनीके जसे भयकर झटके मुगेर तथा काठ माण्डू (नेपाल)म भी लगे थे तथा वहा जान व मालकी बहुत हानि हुई थी। विहारम मुगर तथा नेपालम भटगाव धराशायी हो गए थे। गगाके प्रदेशम ११ हजार मील के इलाकेम धरती अस्त-व्यस्त हो गयी थी। इस भूकपका कारण हिमालयकी जडाम सिकुडन पड जानेस तथा टूटी परताम हुई हल्चल था। इस भूकपने देशकी समग्र प्रजा-म हाहाकार मचा दिया था।

दूसरे ही वष क्वेटाके भूकपने फिरसे हाहाकार मचाया था। इसका विस्तार और केन्द्र बहुत गहराईम न था। फिर भी मध्यरात्रिके इस भूकपने क्वटाको कब्रिस्तान बना दिया था। कुछ ही क्षणाम २५००० आदमी अपने विस्तराम मर्दे बन गए थ। आसामके उत्तर पूर्वी हिस्सेम जसे हिमालयकी पवत श्रेणिया अचानक दक्षिणको मुड जाती है वैसे हो क्वेटाके पास भी पवत श्रेणी अचानक मुड जाती है। इससे उस प्रदेशके गभमे भी परते अस्त-व्यस्त है। अत इसे भी भूकपोका प्रदेश समझना चाहिए। इसके बादके अनेक भूकपाम से मकराणके विचित्र भूकपका उल्लेख कर लेना उचित होगा। यह भकप बिलोचिस्तानके समुद्रके किनारे हुआ था। पर इससे बम्बईके किनारे कुछ मनुष्य सागरम खिच गए थे। यह ऑस्ट्रेलिया के भकप-यन्त्रो पर भी अकित हुआ था। मकराणम तो ८० फुट ऊँची लहर उठी थी। इसकी एक लहर बम्बई किनारे पहुँची तब भी उसकी ऊँचाइ छ फुटकी थी। मकराणके किनारे स कुछ मील दूर समुद्रका तला फटा उसमस कीचड उपरको उठ आयी और इसके दो टापू बन गए। मकराणके किनारे हुए इस तूफानसे जान और मालकी भारी हानि हुई।

अतम भारतम एक अत्यत उग्र भूकप १५ अगस्त १९५०के दिन (स्वतन्त्रता दिवस का) आसामम हुआ था। इस दिन लखीमपुर सादिया तथा शिवसागर और अन्य प्रदेशोम प्रकृतिने बडा भारी ताण्डव किया था। इसके पश्चात १९५६म कच्छम हुए अजारके भकप स भारी नुकसान हुआ था। कायना नगरका भूकप तो माना अभी कलकी बात है।

पृथ्वी पर होनेवाले भूकपोका अपेक्षा समद्रम होनवाले भूकप कुछ कम प्रभावशाली नही होत। परन्तु पृथ्वी परके भूकप तथा उनके विनाशकारी असर हम देख व अनुभव कर सकते है जब कि समुद्रके अतरम होनेवाले भूकपोका असर तो शायद ही महसूस होता है और वह भी किनारे परके प्रदेशाम ही।

ध्रुवप्रदेशके उत्तर महासागरमेंसे अटलाण्टिक महासागरमें दक्षिण तक और वहांसे पूर्वमें मुड़कर हिंद महासागरमें होकर प्रशांत महासागर तक चलनेवाली एक अयत लम्बी पर्वतमाला तथा एक लम्बी दरार-सी है। उत्तर ध्रुव अटलाण्टिक तथा हिंद महासागरमें होने वाले भूकंपोंका उद्भव स्थान यही दरार है। पृथ्वी माना यहां पर फटी-सी गई है, चिर गई है। भारतसे दक्षिण ध्रुव तक एक और पर्वतमाला तथा दरार है जो लम्बाईमें न सही परन्तु चौड़ाई और गहराईमें पहलीको मात करता है।

प्रशांत महासागरमें दक्षिण अमरिकाके पास उत्तर अमरिकामें अलास्काके पास, उत्तर प्रशांतमें एल्युशियन टापुओंके निकट पश्चिम प्रशांतमें जापानके और फिलिपाइन्सके पास समुद्र का तला अचानक गहराईमें सीधी दीवारकी तरह उतर जाता है। वहां अचानक पानीकी गहराई बीससे पतीस हजार फुटकी हो जाती है जहां पृथ्वीकी पर्तें शायद ही दो मीलसे अधिक मोटी होती है। यह गहरी खाई भी सागरके गर्भमें होनेवाले भूकंपोंका उद्भव स्थान होती है।

सागरमें जब भूकंप होता है तो उसके आघातसे पानीमें लहर पैदा होती हैं। मध्यसमुद्र में ये लहर शायद ही दिखाई देती है। उनका बल उनकी ऊँचाईमें नहीं बल्कि उनकी गतिमें होता है। परन्तु किनारेके पास पहुंचने पर ज्यों ज्यों पानी छिछला होता जाता है त्यों त्यों ये लहर ऊँची उठती हैं। जापानमें ऐसी लहरको त्सुनामी कहते हैं। ये लहर जब किनारेके पास पहुंचती हैं तब वहांका सारा पानी उतर जाता है जिससे जहाज़ समुद्रके तल पर खड़े हो जाते हैं। फिर त्सुनामी आती है और समुद्र की प्रचंड जलराशि किनारे पर चढ़ जाती है। बड़े-बड़े जहाजोंको ये गली पर, शहरकी सड़कों पर या मकानों पर भी चढ़ा देती हैं। मकान गोदाम आदि सब को तोड़ फोड़ कर ये लहरें जब वापस जाती हैं, तब जो भी ले जा सकती है—मनुष्य फर्निचर, मोटर नावें माल पशु आदि सबको अपने साथ बहा कर खींच ले जाती है।

महासागरमें हुए भूकम्पके कारण उत्पन्न समुद्रकी प्रचंड लहरें टापू पर छा जाती हैं। यह तस्वीर खींचने वाला खींचते ही भाग निकला था--तभी बच गया।

त्सुनामीका भीषण स्वरूप

समुद्रजन्य भूकंपोंके ऐसे विनाशकारी इतिहासका प्राचीनतम उल्लेख ई० ३५८का पाया जाता है जब भूमध्य सागर में ऐसी ही त्सुनामी लहरें अनेक टापुओं पर और अनेक देशोंके किनारे पर चढ़ गई थी। मिस्रमें अलेक्ज़ान्ड्रियाके बंदरगाह पर इन्होंने नावोंको मकानोंकी छतों पर चढ़ा दिया था और अनेक मनुष्यों और पशुओंको वहाकर ले गयी थी।

सैकड़ों वर्षों तक बड़े बड़े विद्वान भी समुद्रकी इस करतूतको समझ न सके थे। समुद्रमें तूफान न होने पर भी इतनी ऊँची लहरोंका किनारे पर आना उन्हें आश्चर्यमें डाल देता था।

हजारों मील दूर हुए भूकंपसे उठनी ये लहरें पांच सौ मीलकी रफ्तारसे दूर दूर किनारे पर कैसे पहुँच जाती थीं यह बात उस धीमी गतिवाले यातायातके जमानेमें किस तरह समझी जा सकती।

जिन लहरोंकी ऊँचाई समुद्रमें एक दो फुट होती है, किनारे तक पहुँचते पहुँचते उनकी ऊँचाई पचास फुट भी हो सकती है, क्योंकि किनारेका ऊँचा चढता ढाल उन्हें अधिक ऊँचा चढाता है। सन १९५५ ई०में जिस भूकंपने पुर्तगालकी राजधानी लिस्बनका नाश किया उस भूकंप में उत्पन्न लहरोंके कारण कादीज बंदरगाहमें पानी इतनी ऊंचाई पर पहुँचा था जो बड़े भारी ज्वारके समयकी ऊँचाईसे भी ५० फुट अधिक था। इन लहरोंको अटलांटिकसे दूसरे किनारे तक पहुँचनेमें केवल साढे नौ घंटे लगे थे। वेस्ट इण्डीज टापुओं पर चढकर इन लहरोंने भारी उपद्रव मचाया था और जान व मालकी बडी हानि की थी।

सन १८६८में अमेरिकाके किनारे पर ३,००० मीलके क्षेत्रमें भूकंप हुआ था। परिणामस्वरूप बंदरगाह और बारामस चालीस फुट गहरा पानी खिंच गया था। सारे जहाज कीचडमें जमीन पर बैठ गए। इसके पश्चात जो त्सुनामी लहरें आई उन्होंने इन जहाजोंको उठाकर जमीन पर करीब चौथाई मीलकी दूरी पर फेंक दिया।

जब समुद्र किनारेका पानी अचानक दूर चला जाए तो इसको चेतावनी समझकर हमें जल्दी ही ऊँचे स्थानों पर चढ जाना चाहिए। हवाई टापुओं पर १९४६ अप्रलमें इस प्रकार अचानक सारा पानी गायब हो गया। पर जो लोग इसको समझ न सके और कुतूहलवश उसे देखने किनारे पर इकट्ठे हो गए वे अपनी कहानी कहनेको जीवित भी न रहे। दो हजार मील दूर एल्युशियन टापुओंमें प्रशांत महासागर और उत्तर ध्रुव महासागरकी सीमा पर एक गहरी खाईमें भूकंप हुआ था तथा उससे उत्पन्न समुद्री लहर त्सुनामी यहां आन वाली थी। इसके पूर्व किनारेका सारा पानी ५०० फुट दूर चला गया और फिर कुछ ही क्षणों में भारी ज्वारमें आनेवाली लहरोंसे भी ऊंची लहर आ धमकी। ये तूफानी लहरें, घहराती, कडाकेके साथ भँवर बनाती, चढती आ रही थीं, जिनके साथ बडी बडी चट्टानें भी खिंची आ रही थीं। इससे बडे बडे मकान टूटकर बह गए। इसके पश्चात हवाई जहाजों और जल यानोंने समुद्रमें बहते छटपटाते मानव समुदायको बचानेके लिए घंटों तक भारी परिश्रम किया था।

जापान, फिलिपाइन्स और प्रशांत महासागरके किनारेवाले अनेक द्वीपसमूह सागर तले होने वाले भूकंपोंकी त्सुनामी लहरोंका अनुभव किया है और जानमालकी भारी हानि सही है। पर आज कल तो पानीमें उत्पन्न होने वाले दबावको यन्त्र द्वारा नापकर आती हुई त्सुनामी लहरोंकी सूचना पहले हीसे दी जा सकती है।

सन १७५५ ई०में लिस्बनका विनाश करनेवाला भूकंप हुआ उस समय तक भूकंपों के बारेमें मानवज्ञान नहींके बराबर था। इस भूकंपने विज्ञानशास्त्रियोंको ऐसी प्राकृतिक आफतोंके कारण व उनके असरका अभ्यास करनेका मौका व प्रेरणा दी। आज तो विश्वमें कहीं भी भूकंप हुआ कि कहाँ हुआ कितना गंभीर था उसका केन्द्र कहां था और कहां कहां इसका असर हुआ इसकी सूचना वेधशालामें लगे सिस्मोग्राफ यन्त्र दे देते हैं। आज अगर किसीने भूगर्भमें परमाणु परीक्षण किया हो तो वह भी जाना जा सकता है।
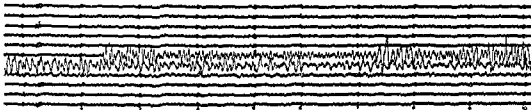
भूकम्पका आलेख—सिस्मोग्राफ

यह सब कैसे जाना जा सकता है? हमें मालूम है कि आघातसे उत्पन्न लहर विभिन्न घनतावाले पदार्थोंमेंसे विभिन्न रीतिसे गुजरती है। इसकी खोजके लिए पृथ्वीके अंदर विस्फोटके द्वारा भूकंप पैदा किया जाता है। इस भूकंपकी लहर तल और गर्भपूर्ण भागमेंसे विभिन्न ढंगसे गुजरती है। इसी प्रकार पृथ्वीकी विभिन्न प्रकारकी परतोंमेंसे तथा चट्टानोंमेंसे नीचे लावारसमेंसे, धातुरस आदिमेंसे भी ये अलग ढंगसे गुजरती है। इसके द्वारा पृथ्वीके गर्भमें क्या क्या है यह जाना जा सकता है।

युगोस्लावियाके एक वैज्ञानिक श्री मोहोरोविकिक, भूकंपकी लहरोंके जिन्दगी भरके अभ्यासके बाद इस निर्णय पर पहुँचे हैं कि भूकंपकी लहरें पैदा होनेके बाद पृथ्वीमें हर जगह पहुँच जाती हैं। ऐसी लहर दबाव लहर कहलाती है। जब पृथ्वीके अंदर अधिक या कम घनत्वके स्तर आते हैं तो उनमेंसे गुजरते समय ये लहर मुड़कर तिरछी हो जाती है। परन्तु ऐसी परतोंकी धारसे टकराने पर ये लहरें परावर्तित होकर, पृथ्वी पर दूर दूर तक पहुँच जाती हैं। ये परावर्तित लहरें उस समय दबाव लहरें न रहकर सर्पाकार बन जाती हैं जो 'एस' (S) लहरोंके नामसे पहचानी जाती है। विश्वकी भिन्न भिन्न वेधशालाओंके यंत्रोंमें ये अंकित होती हैं। इन सबका अभ्यास करके विज्ञानशास्त्री भूकंपका उद्भव कहाँ, प्रकार तथा विस्तार, सब कुछ बता सकते हैं।

प्रो० मोहोरोविकिकने देखा कि पृथ्वी पर एक तरफ हुए भूकंपकी लहर दूसरी तरफ नहीं पहुँचती परन्तु परावर्तित होकर और कहीं भी जाती है। उदाहरणके लिए—आस्ट्रेलियामें हुए भूकंपकी लहरें अगर ब्रिटेनमें नहीं पहुँचती तो इसका अर्थ यह है कि उनके बीच कोई अवरोध आया है। श्री मोहोरोविकिकके द्वारा शुरू किये कार्यको अन्य वैज्ञानिकोंने भी उठा लिया और अपनी प्रयोगशालाओंमें विविध घनतावाले पदार्थोंमेंसे लहरें गुजारकर उनकी गति दिशा आदिकी तुलना करके, वे ऐसे निष्कर्ष पर पहुँचे कि पृथ्वीके केंद्रमें लोहरस तथा निकल धातुरसका गोला है जो ऊपरके कल्पनातीत दबावके कारण घन बन गया है। इसके ऊपर पिघला हुआ रस है। उसके ऊपर लावारस है और उसके ऊपर जमी हुई पतली परत है। ये सारे रस ऊपरी अत्यधिक दबावके कारण प्रवाही की तरह न बह सकते हैं न बरत सकते हैं। परन्तु जब ज्वालामुखी फटता है तब वहाँ पर ऊपरके दबावके हट जानेसे घन रूप बना लावारस सचमुच प्रवाही बनकर बाहर बहने लगता है। प्रो० मोहोरोविकिककी शोध इतनी महत्त्वपूर्ण रही है कि पृथ्वीके अंदर कराल
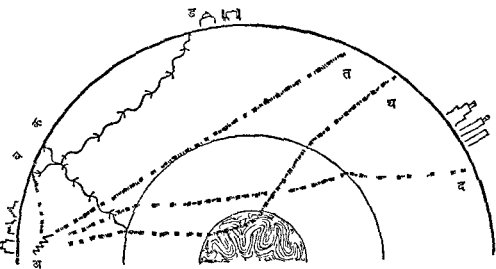
'अ' स्थान पर भूकम्प हुआ है। इसकी 'दबाव लहरें' भिन्न भिन्न घनत्ववाले माध्यमोंमें दाखिल होती हैं तब वे सतह परसे कुछ मुड़ जाती हैं पर उनके प्रकारमें कोई फर्क नहीं होता। लेकिन अधिक घनत्ववाली सतहों परसे कुछ लहरें परावर्तित होती हैं। यों परावर्तित होनेवाली लहरों को ~(एस) लहरें कहते हैं। इस आकृतिमें ऐसी एस लहर ~ऐसी रेखाओंसे बनायी गयी हैं, और उनकी दिशा सूचित करने के लिए शर चिह्न अंकित किये गए हैं। 'ब' स्थानसे परावर्तित होकर 'ट' स्थान तक पहुँचता है। दूसरी लहरें पृथ्वीके भीतरी भागसे परावर्तित होकर 'क' स्थान तक पहुँचती हैं। परावर्तित न होनेवाली लहर 'दबाव लहर' ही हैं परंतु वे भिन्न भिन्न माध्यमोंसे गुजरकर 'त', 'थ' तथा 'द' स्थानों पर पहुँचती हैं। इन लहरोंके आनेमें कितना वक्त लगा और वे किस प्रकारकी हैं इसके धरती पर भिन्न भिन्न स्थानों पर अंकित आलेखोंसे भूकम्पका केन्द्र स्थान निश्चित किया जा सकता है।

४० मीलकी गहराईमें जहाँ जमी हुई (पर गरम) परत पूरी होती है और लावारस शुरू होता है उस सीमाको उनकी स्मृतिमें मोहो नाम दिया गया है। परत और लावाके घनत्वमें अंतर होनेकी वजहसे भूकम्पजन्य आघातोंकी लहर यहाँसे परावर्तित होती है।

पृथ्वीका भीतरी हिस्सा कैसे गजबका दबाव तले होता है इसकी भी झाँकी कर लें। लावारसके आवरण (Mantle)के नीचे अर्थात् १८०० मीलकी गहराईमें प्रति वर्ग इंच पर १,६९,५०,००० पाउण्डका दबाव होता है। अलावा इसके वहाँ ३,८०० अंश सेंटीग्रेड जितनी गरमी होती है। यह गरमी इतनी अधिक है कि अगर वहाँ इतना दबाव न हो तो कोई भी धातु पिघलकर बहने लगे और कोई भी चट्टान पिघलकर वायु बन जाए। जिस प्रकार सोडा वाटर में कार्बन डाइऑक्साइड पानीमें पिघला और बंद रहता है उसी प्रकार धरतीके अंदर भी वायु इन रसोंमें पिघली और बंद रहती है। जब हम सोडाकी बोतलको खोलते हैं तो दबाव हट जानेसे सोडा वाटर ऊपर उफनने लगता है। उसी प्रकार ज्वालामुखीके खुलते

ही उसमसे प्रचड विस्फोटके माथ लावारस, वायु, भाप वगरा वाहर निक्ल जात ह और इस विस्फाटके कारण पथ्वी काप उठती है ज्वालामखी पवतका गिखर उड जाता है हजारा टन वजन की चट्टानें, पत्थर और मिट्टी आकाशम हजारा फुट ऊपर उड जाती है। हजारा हाइड्राजन वम एक माथ फाडे हा उससे भी अधिक शक्ति एक ज्वालामुखीके विस्फाट अथवा एक भूकपम हाती है।

जिस प्रकार इग्लण्डम डावरकी चाककी शिलाएँ समुद्रमसे उठकर ऊपर आई है उसी प्रकार सह्याद्रिकी कुछ चट्टान समुद्रमस ऊपर आई ह। इसके विपरीत कुछ धरती समुद्रम डूव भी गई है। ववई टापूके पूर्वीय किनारेका एक जगल समुद्रम गक हा गया है। सुदरवनके टापुआम तथा पाण्डेचरीके किनार पर धरतीम कच्चा कोयला है जिसम मालूम हाता है कि वहाकी जमीन भी जगलाके माथ ही समुद्रम समा गइ है। ववईके पासके जगल डूवनेकी घटना वहुत पुराना नहा है। समद्र तलेकी रतम, अव भी वक्षाके तन तथा जड मिलती है। अदमान द्वीपसमूह भी इतिहास कालम कुछ नाचे वठ गया है जिसके परिणाम स्वरूप वहाके पवतोकी घाटियाम समुद्र घुस आया है और वहा ऊचे किनारेवाली खाडियाँ (Fiords) वन गइ है। पोरवदरकी अस्मावती और हपकी खाडियाम इसस विपरीत ही हुआ है। वहा खाडीकी जमीन व किनारे ऊपरको आ गए है। उनम समुद्रम दूर और पानीकी सतह से काफी ऊँचाई पर भी सीप मिली ह। इसस मालूम हाता है कि यह भभाग पहले समुद्रम था। हिमालयकी पवतमालाओका प्रदश लगातार भकपोके कारण कहा ऊचा तो कही नीचा हा रहा है।

नूतनतम काल (pleistocene)हीम नही पर इतिहास कालम भी सौराष्ट्र एक टापू था तथा सिधुकी एक शाखा सौराष्ट्र और गुजरातके वीचम होकर खभातकी खाडीम गिरती था। इतिहास कालस पूव सौराष्ट्रकी भूमि आजस ५० फुट नीची था। इसका अथ यह कि उसका किनारका प्रदेश समुद्रम था। आज पोरवदरके वरडा पवतोकी तलहटीके प्रदेशसे निकलते चूनके सफेद पत्थर तथा वरडा और समुद्रके वीचके प्रदेशाम जो चूनक वने पत्थर है वे समुद्री जीवाका द्वारा वनाए गए ह। यह सारा प्रदेश समुद्रम डूवा हुआ था। आज जहा पोरवदर वसा है वहा समुद्रका तला था। सौराष्ट्रके किनारकी समुद्र पट्टीको छोडकर सौराष्ट्रका सारा भभाग लावारसके स्तरासे वना है। गुजरातके जिन मैदानी प्रदशासे तेल निकलता है वह सारा भूभाग महेसाणासे सूरत तक समद्रक तलेम था।

ये सारे परिवतन प्रचड भूकपाके विना नहा हा सकत। भारतके सवधम एक खास वात यह है कि उसने आधुनिक युग तक अनेक प्रचड भूकपाका अनुभव किया है। फिर भा हमे परशान करने के लिए एक भा ज्वालामुखी भारतकी धरती पर जीवित नही है। सुषुप्त ज्वालामुखी भी नही मिलता।

धरतीम जहा गम होनी है उसके ऊपर अगर शिलाका स्तर (Shale) हा आर गसका विसजन होने लगे तो वहा पानीके साथ उस शिलास्तरके टुकडे चूरा वगरा मिलकर कीचडके ज्वालामुखीके रूपम वाहर आता है। तलकपाको जव खोदा जाता है तव भी इसी प्रकार कीचड वाहर आती है। आसामम कई स्थला पर मले गदे पानी तथा कीचडम गसके वुलवुले वनत मिटते दीख पडते हैं। पर ये टेकडी अथवा पवत नही वन पाते। विलोचिस्तानम ऐसे ३०० फुट ऊचे कीचडके ज्वालामुखी ह। मकराणम इसी प्रकारका कीचडका ज्वालामुखी फटा था, जिसका उल्लेख हम पहले कर चुके ह।

समुद्रमे हज़ार फुटसे अधिक गहराइमे गहन अधकारमे स्वय प्रकाश करने वाले जलचर होते है। वे ऐसे मालूम होते है मानो उनमे बिजलीके दीये लगे है।
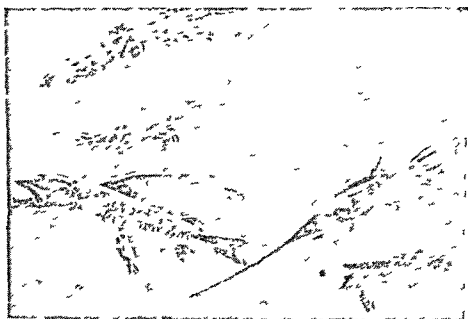
समुद्रकी जीवसृष्टि ऊपर छोटे अष्टपाद (Squid) की आखें देखिये—ये ऊची भी की जा सकती है।
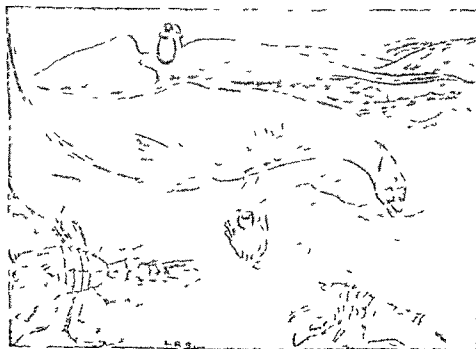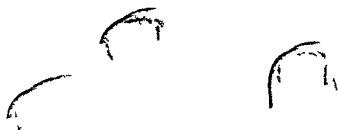
६ : ज्वार और भाटा

पर्वत और पातालकी बातें छोड़कर अब हम समुद्रकी मुलाकात करें। अरबों वर्ष पहले उसका जन्म हुआ तभीसे समुद्रमें ज्वार और भाटा आते रहते हैं। अब तो सभी जानते हैं, समुद्रके ज्वार और भाटेका मुख्य कारण चंद्रका गुरुत्वाकर्षण है। सूर्यका गुरुत्वाकर्षण भी कुछ अंशोंमें इस पर प्रभाव डालता है। सूर्यके सामने चंद्र मानो हाथीके सामने चींटी ही है शायद उससे भी छोटा। इस पर भी सूर्यकी अपेक्षा चंद्र समुद्र पर दुगुनेसे भी अधिक प्रभाव डालता है, यह जानकर जरूर आश्चर्य होगा। भौतिक विज्ञान हमें बताता है कि जैसे अंतर बढ़ता है, गुरुत्वाकर्षण कम होता जाता है। सूर्य, चंद्रकी अपेक्षा २ करोड़ ७० लाख गुना बड़ा है। फिर भी चंद्र पृथ्वीसे केवल २,२०,००० मीलके अंतर पर है जब कि सूर्य ९,३०,००,००० मील दूर है। इसीसे चंद्रका गुरुत्वाकर्षण समुद्रको अधिक खींचता है।

चंद्र रोज ५० मिनट देरसे उगता है, इसीसे ज्वार भी रोज इतने ही देरसे आता है। पृथ्वीके आसपास घूमता हुआ चंद्र जिस स्थानके ऊपर होता है वहां उस समय अधिकसे अधिक ज्वार आता है। उसी प्रकार पृथ्वीकी ठीक दूसरी तरफ भी ठीक उसी समय ऐसा ही ज्वार आता है जबकि और दोनों तरफके छोरों पर उस समय भाटा होता है। जब चंद्र तथा सूर्य एक ही दिशामें हों या आमने सामने एक सीधी रेखामें हों तब दोनोंके गुरुत्वाकर्षणके मिलनेसे बड़ा भारी ज्वार आता है। अमावस्याके दिन सूर्य और चंद्र दोनों एक ही दिशामें होते हैं, इससे पृथ्वी पर भारी ज्वार आता है। उसी प्रकार पूनमके दिन सूर्य और चंद्र भी आमने सामने होते हैं। वे दोनों समुद्रके पानी और पृथ्वीपर भी आकर्षण करते हैं। इससे समुद्र और उसके तलके बीच खाली जगह पैदा होने लगती है। अतः यहाँ अधिक पानी धँस आता है और दूसरी तरफ पानी उतरकर भाटा हो जाता है।

अमावास्या और पूनमको छोड़कर सूर्य, चंद्र और पृथ्वी एक रेखामें नहीं होते इससे ज्वार भी कम होता जाता है। सप्तमी अष्टमीके दिन सूर्य, पृथ्वी और चंद्र एक समकोण स्थितिमें होते हैं अतः चंद्र जब सिर पर आता है तब सूर्य क्षितिज पर होता है जब सूर्य सिर पर होता है, तब चंद्र क्षितिज पर दिखता है। इससे उस दिन कम ज्वार और भाटा होता है। पृथ्वीके सम्बन्धमें सूर्य और चंद्रका स्थान रोज बदलता रहनेके कारण ज्वार और भाटेकी मात्रा भी बदलती रहती है। समुद्रके तलका आकार किनारेका आकार तथा टापू भी न्यूनाधिक मात्रामें ज्वार भाटेके समय और स्वरूप पर असर डालते हैं।

सिनम सबस ऊँचा ज्वार अमेरिकाम फण्डीकी खाडीम आता है। ऊचे किनारे वाला यह भाग जो भाटेके समय बिल्कुल खाली हो जाता है, ज्वारके समय इतना तेजी से भर जाता है कि पानी लगभग ५० फुट ऊँचा चढ़ता है। प्रत्येक ज्वारम पौने चार अरब घन फुट पानी उस खाडीम भर जाता है। दुनियाम इतना ऊँचा ज्वार और कहा नही आता। इसके विपरीत बिल्कुल कम और अयन्त शात ज्वार प्रशातके ताहिती टापूम दिखता है। वहाँ ज्वार और भाटेके समयके पानीकी सतहम एक फुटका ही अतर रहता है। मध्य अमेरिकाकी पनामा नहर अटलाटिक और प्रशात महासागरको जोडती है। इसके अटलाटिक महासागर वाले किनारे पर ज्वारके वक्त केवल एक दो फुट ही पानी ऊपर चढ़ता है जबकि उधरसे सिर्फ ४० मीलकी दूरी पर पनामाके प्रशातकी तरफके भाग म ज्वारका पानी बारहस सोलह फुट ऊपर चढ़ता है।

फण्डीकी खाडीमें अचानक आनेवाला प्रचंड ज्वार
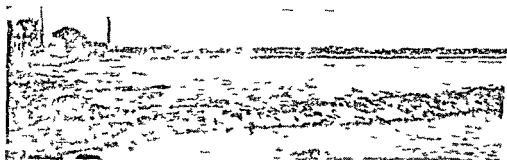
फण्डीकी खाडी और नाटुकेट टापू दोनो मेइनके उपसागरम हैं। जब फण्डीकी खाडीम अधिकम अधिक पानी ५० फुट ऊँचा चढ़ता है तब नाटुकेट टापूके किनारे पर मात्र एक दो फुट ही चढ़ता है। इसी प्रकारका बडा अतर एशियाके छोटेम सागरम ओखोत्सक समुद्रम भी दिखाई देता है। इसी तरह पास पासके किनारे पर ज्वारके समयम भी काफी बडा फर्क होता है। बम्बईके पाल्वा बदर और जुहू पर ज्वार और भाटे के समयम कुछ मिनटोका फर्क पडता है। परंतु अमेरिकाके चेसापीक सागरम तो (अधिकस अधिक) बारह घटोका फर्क भी पडता है। ऐसा भी हो सकता है कि एक ही समुद्रम एक स्थान पर बडा ज्वार हो और दूसरे स्थान पर बडा भाटा हो। यो ज्वार की ऊँचाई और समयका आधार उस समुद्र उपसमुद्र या खाडीके आकार इत्यादि उसके तलकी रचना, अवरोध करनेवाले टापू वगैरा पर होता है।

सामान्यतया ज्वारका प्रभाव खाडियो और उपसागरोम अधिक होता है। कही तो वह दीवारकी तरह चढ़ता है। कच्छकी और खभातकी खाडिया ज्वार भाटेकी दृष्टिसे अध्ययन करने योग्य है। लका और रामेश्वरके बीच पोल्कके जलडमरूमध्यम बीच बीच म पानीके अदर चट्टान है। वहा ज्वार तथा भाटेका वेग तथा भवर भी अधिक होते हैं। इस जलडमरूमध्यको कुशलतासे तैरकर पार करनेवाले भारतीय वीर तैराक श्री मिहिरसेन

इन भवरोंसे बचनेके लिए पहलेसे ही सावधान थे। फिर भी वे बहुत दूर तक इस प्रवाह में बह गए थे और अधिक समय तथा अधिक मीलों तक उन्हें तैरते रहना पड़ा था।

बगालकी खाड़ीमे कई बार ज्वारका पानी हुगली (गगा)के मुहानेसे लेकर कलकत्ता बंदरकी दिशामें दीवारकी तरह आगे बढता जाता है। इससे नाव तो क्या बडे बडे जहाजोको भी लगरमेसे उनकी जजीरोको तोडकर आगे बहाकर ले जानेकी घटनाए भी घटी है। दीवारकी तरह बढते ज्वारके इस पानीको अंग्रेजीमें टाइडल बोर (Tidal bore) कहते है। विश्वके कई स्थानो पर इस प्रकारकी दीवारके रूपमे आनेवाले ज्वार विख्यात है। दक्षिण अमरिकाकी विशाल नदी अमेजानमें ऐसा ज्वार पाच फुट ऊँची जल-दीवारके रूपमे दो सौ मील दूर तक अदर घुस जाता है। इतने अतरको पार करनेमें कई दिन लग सकते है। इससे इस नदीमें रोज ज्वारकी ऐसी चार पाच ऊँची जल-दीवारें मीलो तक ऊपरकी तरफ चली जाती है।

ज्वारकी ऐसी जल-दीवारका आधार जलमार्गके तले पर भी होता है। नदीके मुहानेके पास—जिस प्रकार हुगली नदीके मुहानेके पास है—खराब हो तो पानी सरलता से नदीमें आगे नहीं बढ सकता, वही पर इकट्ठा होने लगता है। जब पानी बढता जाता है तब ऊपर होकर दीवारके रूपमें आगे बढता है।

ज्वारकी सबसे ऊची, तेज और खतरनाक जल-दीवार चीनकी त्सियेनतांग नदीमें प्रवेश करती है। ऋतुके अनुसार उसकी ऊँचाई अधिकसे अधिक पचास फुट तक होती है और उसकी गति लगभग प्रति घटा चौदह मीलकी होती है। वे ढालू जगहके प्रपातकी तरह घहराती, झागोसे भरी, भवरें बनाती, मचलती हुई आगे धँसती चली जाती है।

कुछ स्थानो पर तो इन ऊँची जल-दीवारोंके आनेसे घटो पहले उनका घहराना सुनाई देता है।

पवनसे उत्पन्न लहरोकी दिशा और ज्वार-भाटेके प्रवाहकी दिशा जब आमने सामने होती है तब लहर और प्रवाह टकराते हैं। यह दृश्य बडा भयावना होता है। ऊपरसे शात लगनेवाले समुद्रमे जहाजोके लिए ऐसे स्थल सुरक्षित नहीं रहते। स्काटलैण्डके उत्तरमे शेटलैण्ड टापुओके दक्षिणी छोर पर इस प्रकारका उत्पात इतना भयकर होता है कि बिना स्वय देखे उसकी कल्पना करना भी मुश्किल है।

सकरे जलमार्गमेसे जब ज्वार-भाटेका पानी गुजरता है तब उसकी गति और उफान बढ जाता है। प्रशान्त महासागरके उत्तरी भागमे एल्युशियन टापुओके बीच जलडमरूमध्य मे कई बार पद्रह फुट ऊँची लहर भी उठती है और उससे कई बार जहाज परके नाविक भी बह जाते हैं। ऐसी जगह पर पानी पथरोपरसे बहकर जाती तीव्र नदीकी भाति बहता है।

ज्वार-भाटेके पानीमे जब अवरोध आते है तब उसमें जलचक्र-भवर उत्पन्न होते हैं। नदीके बाढमे चक्राकार घूमते हुए भवर दीखते हैं पर वे समुद्रके भवरके सामने तो कुछ भी नही हैं। भूमध्य सागरमे इटलीके पास मेसिना जलडमरूमध्यमे दो प्रवाह आमने-सामने टकरा जाते है। वहाँ समुद्रका पानी गहराई तक इतने जोरसे भवर बनाकर घूमता है कि तलेमे रहनेवाली मछलियाँ किनारे पर खिच आती हैं। वनस्पतिशास्त्री एसे अवसर पर

समुद्रके तलेमें रहनेवाले जलचरोंका अध्ययन करनेकी सुविधा मिलती है। इसीसे मेरिनाम ऐसे अध्ययनके लिए समुद्र जीवशास्त्रीय संस्थाएँ स्थापनाकी गयी हैं।

दुनियाका सबसे नामी प्रसिद्ध जलभवर नार्वेके पश्चिममें लोफोतेन टापुओंके बीच पैदा होता है। नार्वेजियन भाषामें (और उसीसे अंग्रेजीमें भी) उसे मेल्स्ट्रॉम (Mael strom) कहते हैं। यहाँ कई भँवर घूमते रहते हैं। उनका आकार उल्टे घड़ेका सा होता है। तलेके पास उनका व्यास कम तथा ऊपरी सतह पर चौड़ा होता है। भूलसे भी इस स्थानमें कोई जहाज फँस गया तो उसे अपनी हस्तीसे हाथ धोने पड़ते हैं।

समुद्रमें, गहरेसे गहरे पानीमें कनकन तक सूर्य, चंद्रका गुरुत्वाकर्षण पहुँचता है और उन्हें गतिमान बनाए रखता है। पानीकी इस गति और उथलपुथलके कारण लहरें हवामेंसे बराबर प्राणवायु ग्रहण करती रहती है। ज्वार भाटेसे कचराकरकट बह जाता है जिससे खाड़ी और उपसागरोंका पानी स्वच्छ बना रहता है।

ज्वार और भाटेका स्वरूप ऋतु और स्थलकी स्थिति पर निर्भर करता है। हमारे यहाँ जब बसंत ऋतुमें दक्षिणी वायु चलने लगती है और उसका वेग बढ़ता जाता है तब उसके असरसे हिन्दमहासागर अरबसागर तथा बंगालकी खाड़ीका पानी भरतखण्डके किनारा की तरफ ढकेला जाता है। इसके प्रभावसे अप्रैलसे लेकर सितम्बर तकके ज्वारमें पानी की ऊँचाई अधिक रहती है और बड़ी शक्तिशाली लहरें किनारेसे टकराकर भारी नुकसान पहुँचाती हैं। अक्टूबरसे मार्च तक अधिकतर उत्तर तथा पूर्वकी तरफसे पवनका प्रवाह होनेके कारण समुद्रका पानी किनारेकी तरफ ढकेला नहीं जाता। अतः जाड़ेके दिनोमें शांत समुद्रमें उस समय ज्वार नहीं आता।

ज्वार भाटेका स्वरूप किनारेके निकटके समुद्र तलेकी रचना पर भी निर्भर करता है। किनारेके पाससे लेकर समुद्रके अन्दर चले जाते भूभागका ढाल (Continental shelf) यदि बहुत कम हो, अर्थात किनारेके पाससे शुरू होता तला यदि सपाट है तो भाटेके समय पानी मीलों दूर चला जाता है। खंभातकी खाड़ीमें महाराष्ट्र गुजरातकी सीमाके निकट तारापुरके किनारे, डुम्मसके किनारे तथा कच्छकी खाड़ीमें कुछ स्थानों पर जब भाटा होता है तब जहाँ तक नजर पहुँचती है वहाँ तक समुद्रका तला दिखता है। समुद्र बहुत दूर चला जाता है। दूसरी तरफ पोरबंदर, वेरावल मांगरोल आदिके किनारों पर ज्वार और भाटेकी सीमाओंके बीच कुछ ही फुटका अंतर होता है।

अनेक प्रकारके जीव अपने आहार, रक्षण और प्रजननके लिए समुद्रके ज्वार भाटे पर निर्भर करते हैं। मूँगा बनानेवाले कीड़े मरता बादल (स्पंज) वगैरा जीव पेट भरनेके लिए दौड़धूप नहीं करते व एक स्थान पर पड़े रहते हैं। अगर समुद्रका पानी स्थिर हो और ज्वार भाटेके द्वारा बहता न रहे तो उनके आसपासका तरती हुई खुराक खतम हो जाए और वे मर जाएँ। बहता पानी उनके लिए नया खुराक लाता है।

समुद्रके जीव सहज प्रवृत्तिसे अपना जीवन रोज बदलते ज्वार भाटेके समयके अनुकूल बना लेते हैं। कानवोल्युटा (Convoluta) नामके छोटे चपटे कीड़े समुद्रमें होते हैं। उनके शरीरमें समुद्र की काइके कोष रहते है। ये परावलंबी बन गए हैं। ये

कीड़े न खुराक लेते हैं न खाते हैं। काईके कोश उन्हें सीधे पोषण देते हैं। इससे ऐसे कीड़ोंका पाचनतंत्र निष्क्रिय हो जाता है। पारदर्शक कीड़ेके शरीरमें काईके हरे कोश रहनेके कारण वह स्वयं भी हरा दीख पड़ता है। हरित द्रव्ययुक्त काईके कोश सूर्यका प्रकाश पानी हवाके अंदरके कार्बन डाइऑक्साइडमेंसे प्राप्त कार्बन और हरित द्रव्यसे अपनी खुराक बना लेते हैं। इससे काईके कोशोंकी सहायताके लिए यह कीड़ा ज्वार और भाटेकी सीमा पर रेतमें रहता है। जब भाटा होता है तब यह कीड़ा रेतमें ऊपर सूर्य प्रकाशमें आता है जिससे काईके कोश सूर्य प्रकाश और कार्बन डाइऑक्साइडसे अपनी खुराक बना सकें। जब ज्वारका पानी चढ़ आता है तब यह कीड़ा रेतमें गहरेमें चला जाता है जिससे लहरोंमें वह बह न जाए।

ये कीड़े प्रेरणाके आधार पर ही अपना जीवनक्रम ज्वार भाटेके अनुरूप बना लेते हैं। इनकी प्रेरणा इतनी प्रबल होती है कि अगर इस कीड़ेको मछलीघरमें भी रखें तो भी भाटेके समय वह नित्य दो बार रेतमेंसे बाहर आएगा और ज्वारके समय रेतमें गहरे उतर जाएगा, जबकि ज्वारका समय तो रोज बदलता रहता है।

खुराकके लिए समुद्री जीव ज्वार भाटेपर किस प्रकार निर्भर करते हैं यह देखनेके बाद हम अब उनके प्रजनन पर होते ज्वार भाटेके असरका एक विचित्र एवं विस्मयपूर्ण उदाहरण देखें। अधिकतर मछलियोंके अंडे मादाके शरीरमें नहीं पकते, परंतु मादा द्वारा बिना पके अण्डोंका जन्म देनेके पश्चात नर उन्हें पकाता है। ग्रुनियन (Grunion) नामक एक चित्ते भरकी चमकीली मछली ज्वार भाटेके रोजके समयको जानती है। इतना ही नहीं, तिथिके अनुसार किस दिन ज्वारका पानी किनारे पर किस ऊँचाई तक रहेगा, यह भी जानती है। इसका प्रजनन समय मार्चसे अगस्तके दरमियान होता है। अमेरिकामें कैलिफोर्नियाके किनारे पूनमकी रातको जब ज्वार अपनी पूर्ण पराकाष्ठा पर होता है तब ये मत्स्य माताएँ अंडा रखने किनारे पर आती हैं। जब भाटा शुरू होता है तब चांदनीमें चमकती ये मछलियाँ रेत पर आकर झटसे अपने अंडे रख देती हैं और दूसरी लहरके आने पर तुरंत उसमें कूदकर समुद्रमें चली जाती हैं। इस प्रकार बिना पके अंडे रेतमें रह जाते हैं। यों प्रत्येक लहरके साथ मादाएँ आते दल किनारेपर आती हैं और उतरते जाते पानीसे जागी हुई गीली रेतमें अंडे रखती जाती हैं।

मादाओंके साथ नरमत्स्य भी आते हैं। जैसे ही मादा गीली रेतमें अंडे रखती है कि तुरंत ही नर उन पर वीर्य छिड़ककर उनको फलीभूत करता है और दूसरी लहरके साथ वह भी कूदकर समुद्रमें वापिस चला जाता है।

पूनम और अमावास्याके बादके दिनोंमें ज्वार कम होता जाता है। इसलिए ये फले हुए अंडे बह नहीं जाते। वे ठीक पंद्रह दिनों तक इस भीगी रेतमें पड़े सूर्यकी गरमीसे सेये जाते हैं और दूसरे बड़े ज्वारके आने तक पक जाते हैं और उनमेंसे निकले बच्चे समुद्रमें लौटने लगते हैं।

इस उदाहरणमें अंडेके सेये जानेका समय, अंडे रखनेके दिन, अंडे देनेके लिए आवश्यक मिनट तथा उन्हें पकनेके लिए आवश्यक ज्वार भाटेका सेकंड तकका सूक्ष्मतम खयाल इन मछलियोंको होता है। समयके अलावा लहर कहाँ तक चढ़ती है और अंडे कहाँ रखने चाहिए उस स्थानका भी उन्हें अच्छा ज्ञान होता है।

कैसी अजीब बात है!

समुद्रके क्षार

समुद्रक हर घन मील पानीम निम्नलिखित मल्तत्व हात है। (Life Nature Library--The Seaके आधार पर)

आक्सिजन	४,०३,७०,००,००० टन	प्राटक्टिनियम	१४ टन
हाइड्रोजन	५०,९०,०० ००० ,,	सिलेनियम	१८ ,
क्लारिन	८ ९५,०० ०००	वनडियम	९ ४ ,
साडियम	४,९५ ०० ००० ,,	मगनिज	९ ८
मग्नेशियम	६१ २५ ००० ,	टिटिनियम	४ ७
गधक	४२,४० ०००	थारियम	३ ३
केल्शियम	१८ ८०,०००	सिजियम	२ ८
पोटाशियम	१७ ९० ०००	एटिमनी	२ ४ ,
ब्रामिन	३,०६ ००० ,,	कोबाल्ट	२ ३
कावन	१ ०२ ०००	निकल	२ ३
स्टान्शियम	३७,७००	सिरियम	१ ८
बोरान	२२ ६०० ,	यटियम	१ ४ ,,
सिलिकान	१४ १३० ,	चान्दी	१ ४
फ्लारिन	६,१२५	सथेनम	१ ८
आगन	२ ८२५ ,	क्रिप्टोन	१ ८
नाइट्राजन	२ ०५० ,	नियोन	१ ८
लिथियम	९४० ,,	बिस्मथ	१ ८८० पाउ
रुबिडियम	५६५ ,,	टगस्टन	९४०
फोस्फरस	३३० ,	जेनान	९४०
आयाडिन	२३५ ,	जर्मेनियम	५६५
बेरियम	९४ ,,	कडमियम	५१८
जस्ता	४७ ,	क्रामियम	४७० ,,
लाहा	४७	स्केन्डियम	०७७
अलमीनियम	४७ ,,	पारा	२८० ,
मालिब्डेनम	४७ ,,	गलियम	२८० ,
वरियम	२९ ,,	टेल्युरियम	०४
सीसा	१४ ,	नियोबियम	८७ ,
रागा (कल्ई)	१८ ,,	हेलियम	४७ ,
तावा	१४ ,,	साना	०८ ,
आसनिक	१४	रेडियम	०००३
		रडोन	००००००९ ,

७ : समुद्रका तांडव

समुद्र किनारे पर हलकेसे टकरा कर विलीन होती छोटी-सी लहर हो या प्रचंड विनाशके कालस्वरूप घहराती और सनसनाती भयंकर लहर हो जो किनारे पर टकरा कर विलीन होते देख कर सहज ही यह विचार आता है कि युगोंसे दिन रात इन किनारों पर टकराती ये लहरें कहांसे उत्पन्न हुई होंगी? संभव है कि वे नजदीक ही कहीं उत्पन्न हुई हों। कदाचित् हजारों मील दूर दक्षिण हिंदमहासागरमें या बिलकुल दक्षिण ध्रुवके सागरमें भी उत्पन्न हुई हों।

लहरें प्रधानतया तो पवनसे उत्पन्न होती हैं। यदि उन्हें कोई रोक-टोक न हो, कोई अड़चन न आए और हजारों मील लंबा समुद्रका खुला पट हो तो हवाकी लहरोंके प्रतिरूप समुद्रकी लहरें, हवाकी शक्तिको ग्रहण कर उसके साथ आगे बढ़ती हैं। और अगर मार्ग खुला हो, परिस्थिति अनुकूल हो, तो हजारों मील तक ये लहरें आगे बढ़ती रहती हैं। लहरोंमें पानी आगे नहीं बढ़ता, उसमें सिर्फ आंदोलन (हलचल) ही उत्पन्न होता है। हम एक रस्सीको दो खंभोंके बीचमें बांध कर अगर उसे बीचमें खींच कर छोड़ दें तो उसमें आंदोलन अथवा लहरें उत्पन्न होती हैं और आगे बढ़ती हैं पर वह रस्सी आगे नहीं बढ़ती।

हवा जैसे जैसे जोरसे बहती है वैसे ही लहरें अधिक उछलती हैं। यदि पवन लगातार सुदूर अंतर तक बराबर बहता रहे तो समुद्रकी लहरें उससे अधिक शक्ति पाकर अधिक उछलती रहती हैं। अगर तूफानी हवा छ सौसे आठ सौ मील तक बहती रही तो उससे जोरसे लहरें पचीससे तीस फुट ऊंची उछलेंगी। लहरें अधिकसे अधिक कितनी ऊंची उछल सकती हैं?

१९३३में अमेरिकाका एक युद्ध जहाज रामापो फरवरी महीनेमें मनिलासे सान दीगो जाते समय प्रशांत महासागरमें सात दिन तक भयंकर तूफानमें फंस गया था। भयंकर तूफानी हवा, हजारों मीलके लंबे चौड़े विस्तारमें बिना किसी अंतरायके बहती थी और उसकी गति बढ़ते बढ़ते ७६ मील प्रति घंटा हुई। उस समय रामापो दो लहरोंके बीच था। एक अफसरने ब्रीज (जहां खड़े रहकर कप्तान जहाजका संचालन करता है) परसे देखा कि मुस्तानकी ओरसे विशाल पर्वतके समान एक लहर ऊंची उठ रही थी, जो मुख्य मस्तूल पर बंधे निरीक्षण स्थानसे भी ऊपर उठ गई। इस लहरकी ऊंचाई करीब एक सौ बारह फुट थी। 'रामापो' जहाज उल्लिखित यह तो अपवाद रूप घटना है। सामान्य रूपसे समुद्रमें लहरोंकी अधिकसे अधिक ऊंचाई साठ फुट तक होती है।

लहर किनार पर पहुँचती हैं तब अधिक ऊँची भी हो सकती हैं। बीच समन्म लहरे खडी दीवारकी तरह आगे बढती हैं। पर जब य किनारे पर छिछले समुन्म जाती है तब समुद्रका तला इन लहरोके नीचेके छोरके लिए अवराध मा हो जाता है। पर ऊपरी छारको काई रुकावट नही हाती। इसस ये लहरे अपना सतुलन खोकर आगे की तरफ गिर पडती है। समुद्रके जिस किनारे पर ऐसी लहरें टकराती है वहा विनाशक बन जाती है। वहा ममुद्रके छिछले हो जानमे तथा भाठ रेत और किनारा हानेका वजह से य लहरें अपनी सारी शक्तिके साथ किनारे पर टकराती हैं और विलीन हो जाती है। इसीसे आधी-तूफानके वक्त जहाज मध्य समुद्रम चला जाना पसद करत है किनारे पर जानेकी हिम्मत नही करत। बीच समुद्रम यदि लहरे उछलती भी हागी ता उम जहाज को अपने ऊपर उठा ले जाएँगी और फिर जहाजको छाड कर खुद आगे निकल जाएँगी। जिससे जहाज अपने स्थान पर फिरसे आ जाएगा। य विनाशक भयानक लहर मानो जहाज को निगलने आती है एकके पीछे एक आकर, कभी आगेस ता कभी पीछेम और कभी बगलमेस आकर जहाजका लहराम केवल झुलाकर जब विना नुकसान पहुचाय आग बढ जाती हैं तब आश्चय जरूर हाता है।

दूसरे प्रकारकी लहर जहाज पर चढ आती है और अगर काई मनुष्य उसक डेक पर हो ता उसे खाच ले जाती है। ऐसे समय जहाजकी सब खिडकिया और दरवाजे

शीनलटके टापस्तम पर समुद्रके पानीका आक्रमण
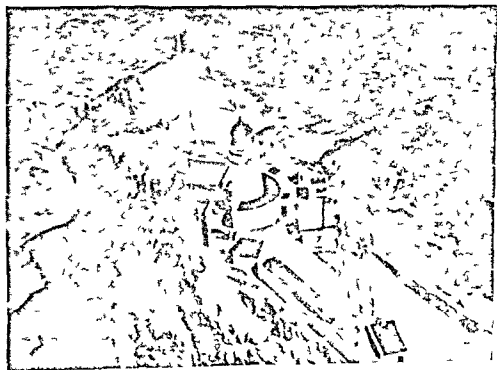
तथा तहखानेके दरवाजे खूब मजबूतीसे बंद रखे जाते हैं जिससे जहाजमें पानी न भर आए। बरसात और हवाके तूफानमें ऐसी लहरोंके सामनेकी तरफ बढ़ते जहाजके आगेकी नोकसे पानी ऊपर डेक पर चढ़ आता है और पीछेकी तरफ मुक्कानकी तरफसे उतर जाता है। संक्षेपमें वह तो मजबूत बनावटके जहाज बीच समुद्रमें आने भयंकर तूफानोंको भी पार कर जाते हैं। पर किनारेके नजदीक कोई भी जहाज अपने आपको सुरक्षित नहीं मान सकता।

ग्रेट ब्रिटेनके शेटलैण्ड और आर्कनिज टापू तथा दक्षिण अटलांटिकमें दक्षिण अमरिकाके सुदूर दक्षिण किनारेके फाकलैण्ड नामक टापू भयंकर लहरोंके ताण्डवके लिए विश्वविख्यात हैं। शायद इसीसे शेटलैण्ड और आर्कनिज टापुओंके स्काटिश नाविक और मछुए विश्वमें श्रेष्ठ और बहादुर नाविक माने जाते हैं। फोकलैण्डके समुद्रमें इतना जहाजी व्यवहार नहीं होता। तिरादेल फुएगोका किनारा शांत हो तो अपवाद माना जा सकता है। वहाँ तूफान नियमसे आता है।

शेटलैण्ड और आर्कनिज टापुओंके किनारे प्रतिवर्ष चार पाँच बार तो लहरें किनारेमें टकराकर साठ फुट ऊँची उठती ही हैं। ये लहरें टनोंके वजनकी चट्टानोंको उठाकर किनारे पर पटकती हैं। जब ये लहरें आकर टकराती हैं तो टापू पर बीस मील दूर तक इनकी आवाजें सुनाई देती हैं। वायु और लहरें ऐसा ताण्डव शुरू करती हैं कि पानी और पवन एक हो जाते हैं। ये तो चट्टान पानीमें टूट जाती हैं पर सोचिए तो ये लहरें जो विशाल चट्टानोंको भी उठाकर फेंक देती हैं इनमें कितनी शक्ति होगी। १८७२ ई०में स्कॉटलैण्डके किनारेकी सीमेंट कंक्रीटकी दीवारको तोड़कर इन लहरोंने दीवारमेंसे एक हिस्सेको—जिसका वजन आठ सौ टन था—ऊपर चढ़ा लिया था। साथ ही १३५० टनके दूसरे हिस्सेको फेंक दिया था। इस दीवारको जब फिरसे बाँधा गया और मरम्मत की गयी तब इन लहरोंने उसमेंसे एक २६०० टन भारी टुकड़ा अलग कर दिया और वे उसे अपने साथ खींच ले गईं।

हमारे यहाँ समुद्र मईसे सितंबर तक पागल-सा तूफानी बन जाता है। पर उत्तर अटलांटिकमें और यूरोपमें तूफान जाड़ेके मौसममें होते हैं जब ध्रुव प्रदेशोंमेंसे ठण्डी हवा घुस आती है। इन तूफानोंसे बचानेकी चेतावनी देनेके लिए वहाँ जगह जगह पर दीपस्तंभ बनाए गए हैं। समुद्र स्थित चट्टानें और ये दीपस्तंभ लहरोंसे अधिक उपघात हैं। लहरें चट्टानों पर चढ़कर दीपस्तंभकी दीवारोंमें टकराती हैं। शेटलैण्ड टापुओंके अन्स्ट दीपस्तंभ पर १९५ फुट ऊँची चढ़कर इन लहरोंने एक समय दीपस्तंभके ऊपरी भागमें एक दरवाजेको तोड़ डाला था।

लहरोंका पानी जब टकराकर विशाल राशिमें अचानक लौटने लगता है तब उस स्थान पर हवाका दबाव घट जाता है। इससे कभी भारी विचित्र घटनाएँ घटती हैं। ऐसी ही एक विचित्र घटना १८४०में ब्रिटेनमें एडीस्टोन दीपस्तंभ पर हुई थी। समुद्रकी भारी लहरोंसे दीपस्तंभका नीचेवाला दरवाजा न टूट जाए इससे अंदरका लोहेका बोल्ट मजबूतीसे बंद किया गया था। पर दरवाजा विरुद्ध दिशासे टूटा। उस पर एक भारी

लहर टकराकर वापस जाने लगी थी कि वहा तेजीसे शून्यावकाश पैदा हुआ और अन्दरकी हवाके दबावसे दरवाजा बाहरकी तरफ खिंचकर टूट गया।

इंग्लिश खाडी (चेनल)के विशपराक दीपस्तंभ पर ज्वारकी सतहसे १०० फुट ऊंचा एक घंटा टांगा गया था जिसकी आवाजसे सांकेतिक संदेश भेजा जा सकता था। तूफान की लहरें इतना ऊंचा भी चढकर उस घंटेको उठा ले गई। स्काटलैण्डका एक और दीपस्तंभ बलरॉक चट्टान पर ११७ फुट ऊँचा है। इस दीपस्तंभ पर एक लहर चढ गई और पानी से ८६ फुट ऊँचे पर सीढीको तोडकर उसे बहा ले गई। इन लहरोंकी विशेषता यह थी कि उसमेंसे एक लहर तो दीपस्तंभके ऊपर तक चढ गई और ऊपरसे गुजर गई।
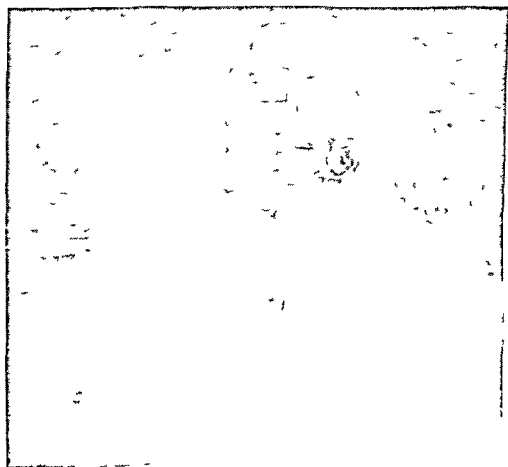
९७ फुट (करीब ३० मीटर) ऊँचे मिनोटली नामक दीपस्तंभ पर समुद्रकी प्रचंड लहरोंका आक्रमण

लहरें स्वतंत्र रूपसे ऊपर चढें और दीपस्तंभकी दीवारोंके सहारे ऊपर चढें इसमें फर्क है। स्वतंत्र रूपसे अर्थात् बिना किसी आधारके लहर इतनी ऊंची नहीं चढ सकती।

अमेरिकाम मासाचुसेट्स राज्यके पासके एक सौ चौदह फुट ऊँचे मिनोट दीपस्तम्भ
ऊपरसे भी तूफानी लहरें बार-बार गुजरती हैं।

जब ये लहरें बडी बडी शिलाओंको उठाकर फेंकती हैं तब बहुत नुकसान होता है।
ऐसी भयंकर लहरोंके द्वारा कई दीपस्तम्भोंके काच और दीप टूटनेकी घटनाएँ घटी हैं।
पेटलण्ड फर्थ (खाडी)के मुखके पास ३०० फुट ऊंची चट्टान परसे पत्थर तोडकर कई
लहरोंने कई बार इस चट्टान पर स्थित दीपस्तम्भके काच तोड डाले हैं। समुद्रका यह कैसा
पागलपन है। कैसा जुनून है।

जब तूफानी पवन लगातार समुद्रकी तरफसे जमीनकी तरफ बहता रहता है तब
अगर वहा समुद्रके नजदीककी जमीन नीची हो तो हवाके दबावसे ढकेला गया समुद्र
का पानी जमीन पर मीलों तक लहरोंके रूपमें घुस जाता है और भयंकर नुकसान करता
है। १९६०के जाडेके समयमें एक तूफानमें ऐसी घटना हुई थी जब उत्तरी समुद्रकी
तरफसे बहते वायुके प्रवाहने समुद्री लहरोंको इतना तो तेज कर दिया कि वे जर्मनी,
डेन्मार्क, हॉलैण्ड और फ्रांसके किनारों पर चढ आयीं। यह जलराशि इतनी विशाल थी
और यह इतनी ऊँची उठी कि डेन्मार्क और हालैण्डके किनारों पर मीलों तक पानी अंदर
घुस गया जिससे जान और मालको भारी नुकसान पहुँचा। हमारे यहाँ बंगालकी
खाडीमें लगभग प्रति वर्ष ऐसा तूफान आता है और उससे अधिकतर पूर्वी पाकिस्तानको
नुकसान होता है। मूसलाधार वर्षा, विनाशक झंझावात और पागलकी तरह जमीनकी
तरफ बढता समुद्र हर वर्ष हजारों लोगोंकी बलि लेता है। जानवर नावों खेतों और माल
मिल्कियतका जो नुकसान होता है वह अलग। १७३७ ई०में बंगालकी खाडीमें आए ऐसे
तूफानसे करीब ३०,००० नौकाओंका नाश हुआ था और तीन लाख मनुष्य मर गए थे।

समुद्रके तलेमें होनेवाले भूकंपोंसे उत्पन्न लहरोंका जिक्र हम कर चुके हैं। परन्
एक और प्रकारकी लहरें भी होती हैं जो समुद्रके अंदर ही अंदर गुजरती हैं। वे समुद्रके जल
घूमनेवाली पनडुब्बियोंको झकझोर देती हैं। सामान्य नियम तो यह है कि पवनकी ग
जितने मीलकी होती है उससे आधी संख्याके फुटकी ऊँचाई वाली लहरें पानीमें उत
होती है। वायुकी गति अगर ५० मील हो तो लहरकी ऊँचाई करीब २५ फुट हो
फिर भी जैसा कि हमने देखा लहरोंकी ऊँचाई पर अन्य कारणोंका भी असर होता

लहर टकराकर वापस जाने लगी थी कि वहां तजीसे [illegible] पैदा हुआ और अंदरकी हवाके दबावसे दरवाजा बाहरकी तरफ खिंचकर टूट गया।

इंग्लिश खाडी (चैनल)के बिशपराक दीपस्तंभ पर ज्वारकी सतहसे १०० फुट ऊँचा एक घंटा टांगा गया था जिसकी आवाजसे सांकेतिक संदेश भेजा जा सकता था। तूफान की लहरें इतना ऊँचा भी चढ़कर उस घंटेको उड़ा ले गई। स्काटलैण्डका एक और दीपस्तंभ बेलराक चट्टान पर ११७ फुट ऊँचा है। इस दीपस्तंभ पर एक लहर चढ़ गई और पानी से ८६ फुट ऊंचे पर सीढ़ीको तोड़कर उसे बहा ले गई। इन लहरोंकी विशेषता यह थी कि उसमेंसे एक लहर तो दीपस्तंभके ऊपर तक चढ़ गई और ऊपरसे गुजर गई।

[illegible]०७ फुट (करीब ३० मीटर) ऊँचे [illegible] दीपस्तंभ पर [illegible] लहरोंका आक्रमण

लहरें स्वतंत्र रूपसे ऊपर चढ़ें और दीपस्तंभकी दीवारोंके सहारे ऊपर चढ़े इसमें फर्क है। स्वतंत्र रूपसे अर्थात बिना किसी आधारके लहर इतनी ऊँचा नहीं चढ़ सकती।

दीपस्तभके मिनाट ऊँचे फुट चौदह सौ एक पासके राज्यके मामाचुसेट्स
...काम मामाचुसेट्स राज्यके पासके एक सौ चौदह फुट ऊँचे मिनाट दीपस्तभके
...से भी तूफानी लहरें बार-बार गुजरती है।

जब ये लहरें बडी-बडी शिलाओंको उठाकर फेंकती हैं तब बहुत नुकसान होता है।
...ी भयकर लहरोंके द्वारा कई दीपस्तभोंके काच और दीप टूटनेकी घटनाएँ घटी है।
...ल्ण्ट फथ (गाडी)के मुखके पास ३०० फुट ऊँची चट्टान परसे पत्थर ताडकर कई
...लहराने कई बार इस चट्टान पर स्थित दीपस्तभके काच ताड डाले है। समुद्रका यह कैसा
पागलपन है। कैसा जुनून है।

जब तूफानी पवन लगातार समुद्रकी तरफसे जमीनकी तरफ बहता रहता है तब
अगर वहा समुद्रके नजदीककी जमीन नीची हो तो हवाके दबावसे ढकेला गया समुद्र
का पानी जमीन पर मीलों तक लहरोंके रूपमे घुस जाता है और भयकर नुकसान करता
है। १९६०के जाडेके समयके एक तूफानमे ऐसी घटना हुई थी जब उत्तरी समुद्रकी
तरफसे बहते वायुके प्रवाहने समुद्री लहरोंको इतना तो तेज कर दिया कि वे जमनी
डेन्मार्क, हॉलैंड और फ्रान्सके किनारो पर चढ आयी। यह जलराशि इतनी विशाल थी
और यह इतनी ऊँची उठी कि डेन्मार्क और हालैंडके किनारो पर मीलों तक पानी अदर
घुस गया जिससे जान और मालका भारी नुकसान पहुँचा। हमारे यहाँ बगालकी
खाडीमे लगभग प्रति वर्ष ऐसा तूफान आता है और उससे अधिकतर पूर्वी पाकिस्तानको
नुकसान होता है। मूसलाधार वर्षा विनाशक झझावात और पागलकी तरह जमीनकी
तरफ बढता समुद्र हर वर्ष हजारो लोगोकी बलि लेता है। जानवर, नावो, खेतो और माल
मिल्कियतका जो नुकसान होता है वह अलग। १७३७ ई०मे बगालकी खाडीमे आए ऐसे
तूफानसे करीब २०,००० नावोंका नाश हुआ था और तीन लाख मनुष्य मर गए थे।

समुद्रके तलेमे होनेवाले भूकपोसे उत्पन्न लहरोका जिक्र हम कर चुके है। परन्तु
एक और प्रकारकी लहरें भी होती है, जो समुद्रके अदर ही अदर गुजरती हैं। वे समुद्रके अदर
घूमनेवाली पनडुब्बियोंको खतरा पैदा करती है। सामान्य नियम तो यह है कि पवनकी गति
जितने मीलकी होती है उससे आधी सख्याके फुटकी ऊँचाई वाली लहरें पानीमे उत्पन्न
होती है। वायुकी गति अगर ५० मील हो तो लहरकी ऊँचाई करीब २५ फुट होगी।
फिर भी जैसा कि हमने देखा लहरोंकी ऊँचाई पर अन्य कारणोका भी असर होता है।
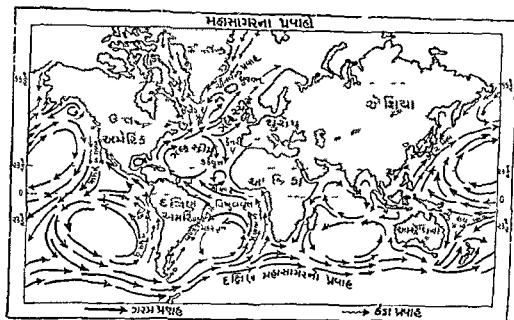
समुद्री प्रवाहोंका नक्शा। ठंडे प्रवाह टेढ़े मेढ़े शर चिह्नोंसे बताए गए हैं।

८. समुद्रके प्रवाह

करीब दो अरब वर्षोंसे पृथ्वी पर समुद्र गरज रहा है और आज वह पृथ्वीके ७१ प्रतिशत भाग पर फैला है। इस दीर्घ समयमें उसका रूप बदलता रहा है। इससे आज इस पर जो गरम तथा ठंडे प्रवाह बहते हैं वे भूतकालमें भी थे ऐसा माना नहीं जा सकता। ये प्रवाह हमारे जलवायु तथा जीवन पर भी असर करते हैं। हमारे ही नहीं अनेक जीवोंके जीवन पर सीधा असर करते हैं।

ध्रुवीय समुद्रके पानीका साधारण तापमान १ सेंटीग्रेड होता है। इससे समुद्रकी सतह का पाव दस फुट तकका या उससे भी अधिक पानी जम जाता है। पानीका सबसे अधिक तापमान इरानकी खाडीमें रहता है जो ३६ सेंटीग्रेड है। अगर समुद्रका पानी ठंडे और गरम प्रवाहोंके रूपमें बहता न रहता तो उत्तरीय ध्रुवके सागरका पानी यूरोप और अमरिका (युनाइटेड स्टेटस) तकके किनारों पर जम जाता और हिंद तथा अरब समुद्र में शायद भाप निकलती होती। ये दोनों स्थितियाँ समुद्रके जीवोंके तथा हमारे लिए भी खतरनाक सिद्ध होती।

ठंडा पानी वजनदार होता है। गरम पानी फैलकर हलका बनता है। इससे ठंडा पानी नीचेकी तरफ गरम पानीमें जाता है और गरम पानीको समग्रतया समशीतोष्ण बनाता

है। सभी समुद्रोंका पानी एक-सा गरम नहीं होता, इससे तथा हवाके प्रभावसे समुद्रका पानी वहने लगता है।

इतिहास तथा मानव जीवनकी रचनामें समुद्रके प्रवाहका काफी बड़ा हिस्सा है। लगभग छ करोड वर्ष पहले उत्तर तथा दक्षिण अमेरिकाको जोड़नेवाला मध्य अमेरिकाका पहाड़ी प्रदेश न था। तब खाड़ीका गरम प्रवाह (गल्फ स्ट्रीम) अटलांटिक महासागरमेंसे प्रशांत महासागरमें बह जाता होगा। अगर आज भी यही परिस्थिति रहती तो ब्रिटेन फ्रांस नीदरलैंड डेन्मार्क तथा नार्वेके किनारे बर्फमें ढके होते तथा यूरोपीय संस्कृतिका विकास न हो पाता। गल्फ स्ट्रीमका उष्ण प्रवाह फिनलैण्ड स्वीडन फिनलैंड और एशिया के किनारे तक नहीं पहुँच पाता। इससे जाड़ेके दिनोंमें कुछ समयके लिए अनेक बन्दरगाहोंमें बर्फ जम जाती है। आइसलैण्डके दक्षिण भागको छूकर यह प्रवाह बहता है इससे उसके दक्षिणी बंदर बर्फसे मुक्त रहते हैं जबकि इसके उत्तरके भागमें ध्रुव समुद्रकी तरफसे आता ठंडा प्रवाह उसे छूकर बहता है। इसीसे उस भागके बंदरगाह महीनों तक बर्फके कारण बन्द हो जाते हैं। यह ठंडा प्रवाह नार्वेकी तरफ भी बहता है। गल्फस्ट्रीमका प्रवाह नार्वेका रक्षण न करता तो नार्वे भी ग्रीनलैण्डकी तरह बर्फिस्तान बन जाता। गल्फस्ट्रीमके कारण ही नार्वे एक आदर्श कल्याणराज्य औद्योगिक राष्ट्र तथा प्रगतिशील देश बनकर तरक्की कर रहा है।

गल्फस्ट्रीम दुनियाका सबसे महान् समुद्री प्रवाह है। विषुवत रेखा पर और उसके उत्तरमें मेक्सिकोकी खाड़ीमें तथा केरेबियन समुद्रमें सूर्यके प्रखर तापसे गरम होकर पानी फूल कर हल्का हो जाता है और बहने लगता है। पनामाके भूडमरूमध्यके कारण प्रशांत महासागरमें न जा सकनेसे यह पानी मेक्सिकोकी खाड़ीमें घूमकर, फ्लोरिडाकी भूमिकी परिक्रमा करके, अमेरिकाके पूर्वी किनारेसे समांतर बहकर, अटलांटिकमें अनेक शाखाओं में विभाजित हो जाता है और अफ्रीकाके उत्तर-पश्चिमी हिस्सेसे लेकर यूरोप और आइसलैण्ड तथा नार्वे तक फैल जाता है। इसके उद्भव स्थानके नजदीक फ्लोरिडाके पास इसकी गहराई एक मील, चौड़ाई पचानवे मील तथा उसकी गति लगभग समुद्री तीन मील प्रति घण्टा है। यह गति इतनी तेज है कि इसके सामनेकी तरफ चलने वाले जहाजकी गति को भी यह धीमी कर देती है। यह पानी गरम होकर इतना फूलता है कि प्रशांत महासागर से अटलांटिकका सतह लगभग साढ़े सात इंच ऊँची रहती है। क्यूबाके किनारेके पास की समुद्रकी सतह अमेरिकाके किनारेकी सतहसे लगभग डेढ़ फुट ऊँची है। पृथ्वीकी सतह तो ऊँचा नीची होती ही है पर समुद्रकी सतह भी ऊँची-नीची हो, यह कैसी विचित्र बात है।

जैसे दो नदियोंका संगम होता है वैसे ही न्यूफाउण्डलैण्डके पास गल्फस्ट्रीम जहाँ पूर्वकी तरफ मुड़ता है वहाँ उत्तर ध्रुव महासागरसे निकला ठंडा लैब्रेडार प्रवाह ग्रीनलैण्ड और लैब्रडार के बीचसे आकर उससे मिलता है। मानो इस ठंडे प्रवाहकी टक्करसे ही यह गल्फस्ट्रीम पूर्वको मुड़ जाता है। इन ठंडे और गरम प्रवाहोंका यह मिलनस्थल अति सुन्दर एवं दर्शनीय है।

महासागरमें सैकड़ों मील तकका इन दो विरोधी प्रवाहोंका संगम कैसा होगा? ठंडे लैब्रेडार प्रवाहका रंग हरे बिल्लौरी काँच जैसा है और गल्फस्ट्रीमका रंग नीला आसमानी है। लगभग समकोणकी स्थितिमें परस्पर मिलते इन दोनों प्रवाहोंकी सीमा इतनी स्पष्ट

है कि किसी एक जहाजका आगेका भाग ठंडे प्रवाहमें हो तो उसका पीछेका भाग (सुक्कानका) गरम प्रवाहमें हो सकता है। साथ ही इन दो जलप्रवाहोंकी उष्णतामें भी लगभग ११ सेंटीग्रेडका फर्क होता है। ठंडे और गरम प्रवाहके मिलनेसे यहां गाढ़ा कुहरा सा जम जाता है। वातावरण धवल कुहरेसे भरा रहता है। लेब्रेडार प्रवाहमें बेफिन समुद्रमेंसे तैरते हुए बर्फके छोटे बडे शिलाखंड भी आ जाते हैं। ऐसे बर्फके एक पहाडसे टकराकर टाइटनिक जहाज हजारसे भी अधिक यात्रियोंको लेकर अमेरिकाके किनारे डूब गया था। अब गल्फ स्ट्रीमकी एक और विचित्रता देख। ठंडे लेब्रेडोरसे टकराने पर और (पृथ्वीकी पश्चिमसे पूर्व गति होनेसे) उसमें पहले भी गल्फस्ट्रीमकी एक धारा पूर्वमें पुर्तगाल और अफ्रीकाके किनारेके नजदीकसे दक्षिणमें और अंतमें फिर पश्चिमकी ओर लौटती है। इस प्रकार मध्य अटलांटिकमें इसका प्रवाह चक्रकी तरह घूमता है। इस चक्रके बीचका समुद्र स्थिर रहता है और उस पर सूर्यकी प्रखर किरणोंके पडनेसे यहांका पानी भाप बन कर उडता रहता है। उसमें मीठे पानीकी कोई नदी नहीं पहुंच सकती, उसे केवल गल्फस्ट्रीमका खारा पानी ही मिलता है। इससे वहां पानीके नमकका प्रमाण बढ़ता रहता है। पश्चिम अटलांटिकमें जब तूफान होता है तो छिछले समुद्रके तलेमें चिपकी सारगासम नामक नीले रंगकी काई वहांसे खिंचकर गल्फस्ट्रीममें बह जाती है। इसके साथ छिछले समुद्रके जीव भी उसमें खिंच जाते है। छिछले पानीके जीवोंमें गहरे पानीमें रहनेकी क्षमता नहीं होती।
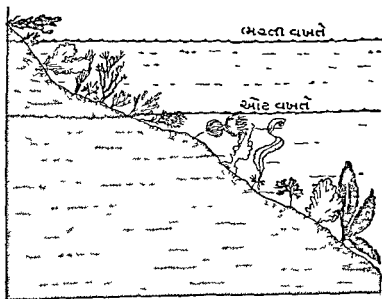
कुछ समुद्री सिवार भाटेके वक्त पानीके ऊपर दिखाई देते हैं कुछ हमेशा पानीके भीतर ही रहते हैं परंतु सिवार उगता वहीं है जहां सूर्य प्रकाश मिल सकता है।

गल्फस्ट्रीमके घूमते हुए पानीके बीचका विशाल अटलांटिक समुद्र अपनी विशिष्टता के कारण उस काईके सारगासो नामसे पहचाना जाता है। समुद्रके उस हिस्सेमें बाढ़

तथा निचले आये और लगभग छः करोड़ वर्षोंसे उड़ते जाते रहे हैं। सारगासोका समुद्र बिल्कुल स्थिर पड़ा रहता है। इसमें काई जमा होती रहती है। इसका ऊपरका पानी गरम होता है पर नीचेका पानी ठंडा और दो-तीन मील गहरा है। इसमें फ्लोरिडाकी तरहसे आये जीव पनप नहीं सके। ये गरम पानीमें ऊपर तैरती काईके सहारे रहते हैं। साथ ही परिस्थिति बदलनेके कारण उनकी शरीर रचनामें भी परिवर्तन होने लगता है। यहाँ इन जीवोंकी एक नयी दुनिया बस जाती है। जो बाद तटोंमें चिपकी रहती थी वह भी अपनेको यहाँकी स्थितिके अनुकूल बना तैरती रहकर पनपना सीख लेती है। यहाँ वायु भी शांत रहती है। पानी भी शांत रहता है। पर इस काईके अन्दर उन जीवों का तुमुल संग्राम चलता ही रहता है। फिर भी यहाँ काई शीघ्र आयु धारण करती है। माना जाता है कि यह काई इतनी पुरानी है कि कोलम्बसने जो काई देखी थी वह भी आज तक जीवित होगी। यहाँ १ करोड़ टनके लगभग काई है। जिस प्रकार ऊपरका पानी पृथ्वी पर बरसता है उसी प्रकार इस सागरमें जो प्राणी मरते हैं उनकी वर्षा गहरे ठंडे समुद्रमें नीचे होती रहती है और वे उस गहराईमें रहनेवाले विचित्र जीवोंके पोषणकी व्यवस्था हो जाती है।

पर इससे आप यह न मान लें कि इस समुद्रमें पानीके अनुपातमें काई और जीवोंका प्रमाण अधिक है। इतने बड़े समुद्रमें १ करोड़ टन काई तो नजर भी नहीं आती। समान्तरी माडीके बारेमें जैसे खयाल हैं वैसा ही खयाल पश्चिममें सारगासोकी समुद्री काईके बारेमें प्रचलित है कि इस समुद्रमें काई जहाजको जकड़ लेती है और आगे बढ़ने नहीं देती। सच्ची बात यह है कि प्राचीन कालमें पालवाले जहाज चलते थे वे हवा के रुक जानेसे अटक जाते थे। काई इसका कारण न थी।

उत्तर अटलांटिककी प्रवृत्ति जैसी ही पर उल्टी दिशामें (जैसे दर्पणमें अपना प्रतिबिंब दिखता है) दक्षिण अटलांटिकमें भी ऐसा ही प्रवाह बहता है। यहाँ गल्फस्ट्रीम की तरह ही दक्षिण विषुवद्वृत्तका प्रवाह बहता है और उसकी एक धारा उत्तर अटलांटिक की तरफ जाती है। इस प्रवाहमें प्रति सेकण्ड ६ करोड़ घनफुट पानी बहता है।

अब प्रशांत महासागरकी तरफ दृष्टि डालें। पनामाके पूर्वमें गल्फस्ट्रीम गुजरता है। पश्चिममें उत्तर विषुवद्वृत्त प्रवाह शुरू होकर प्रशांत महासागरके आरपार होकर फिलिपाइन्स टापुओं तक ९ हजार मील तक बहता रहता है। यह प्रवाह गल्फस्ट्रीमकी एशियाई आवृत्ति है। इसका कुछ जल दक्षिणकी तरफ जाकर दक्षिणी ध्रुवसागरके ठंडे प्रवाहको उत्तरमें आनेसे रोकता है तो इसका एक भाग फार्मोसा और चीनके पूर्वमें होकर जापानके दक्षिण और पूर्वी किनारेको गरमी देकर वहाँके जलवायुको समशीतोष्ण बनाए रखता है। यहाँ यह जापानी अथवा क्युरासिवो यानी गहरे नील रंगका (श्याम) प्रवाह नामसे पहचाना जाता है। जैसे न्यूफाउंडलैंड प्रवाह गल्फस्ट्रीमको पूर्वकी तरफ मोड़ देता है उसी प्रकार इस उत्तर विषुवद्वृत्तीय प्रवाहको उत्तर ध्रुव महासागरसे बेरिंग समुद्रके मार्गसे आता आयाशियो नामक ठंडा प्रवाह पूर्वकी तरफ मोड़ देता है। इन जापानी गरम प्रवाह तथा आयाशियोके ठंडे प्रवाहके मिलनेसे यहाँ भी समुद्र तूफानी हो जाता है तथा वातावरण कुहरेसे धुंधला हो जाता है। क्युराइल साइबेरिया नामवालेका

दक्षिण अमेरिका पश्चिम किनारके पा बहते हम्बोल्ट नाम ठडे प्रवाहमें अप जीवसृष्टि होता है। इ पर असख्य पक्षियोंक निर्वाह होता है ऐसे कुछ पक्षियोंक तस्वीर।

एल्युशियन और अलास्काको अति ठडा और बर्फीला बनानेवाला आयाशियोका ठडा प्रवाह, गरम क्युरोसिवा (जापानी) प्रवाहको भी ठडा कर देनेकी शक्ति रखता है। वह अमरिका के पश्चिमी किनारे पहुँचता है और वहा ग्रीष्ममे भी समशीतोष्ण जलवायु बनाए रखता है।

दक्षिण प्रशात महासागरमे अखड नही है अत उसका पट विशाल है और वहा जोरदार पवन बहते रहते है। इससे वहा एक सा अस्खलित प्रवाह होना चाहिए पर ऐसा नही है। असख्य बिखरे टापुओके कारण वहा दक्षिण विषुववृत्तीय प्रवाह भी अनेक दिशाओ मे अनेक धाराओमे बिखर जाता है। इन प्रवाहोका सपूर्ण अध्ययन भी अभी नही हुआ। केवल दक्षिण ध्रुव महासागरमेसे बहकर आता हम्बोल्ट नामक ठडा प्रवाह ही ऐसा है जिसके बारेमे हमारे पास कुछ जानकारी है। इस प्रवाहने मानव जीवन और प्रकृति पर आश्चर्यजनक प्रभाव डाला है। इस प्रकार इसका महत्व गल्फ स्ट्रीम जैसा ही है। वह दक्षिण

समुद्री पक्षियोंकी बीट उत्तम खाद होती है। इसका बड़े पैमाने पर व्यापार होता है।

ध्रुव महासागरका अति ठंडे पानीको लेकर दक्षिणी अमेरिकाके पश्चिमी किनारेके समांतर बहता है। यों तो गरम प्रदेशके महासागर भी अपनी गहराईमें खूब ठंडे होते हैं। इस गहराईसे ठंडा पानी भी ऊपर आकर इस हँम्बोल्ट अथवा पेरु प्रवाहसे मिलता है। इससे ठंडे पानीका यह प्रवाह भूमध्य तक पहुँच जाता है जिसके परिणामस्वरूप जो चमत्कार होते हैं वे दर्शनीय होते हैं।

महान वैज्ञानिक डार्विनके विशेष अध्ययनके कारण जो दुनिया भरमें मशहूर हो गए हैं वे 'गालापागास' टापू लगभग भूमध्य रेखाके पास हैं। पेंग्विन पक्षी असलमें तो दक्षिण ध्रुव प्रदेशके बरफवाले किनारेके पक्षी हैं। फिर भी यहां विषुववृत्तके पास 'गालापागास' में रहते हैं। इधर दूर आनेवाले इस हँम्बोल्ट प्रवाहके साथ इतने जीव यात्रा करते हैं कि जिनकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। इन समुद्री जीवों पर करोड़ों समुद्री पक्षियों का निर्वाह होता है। समुद्री पक्षी बड़े खाऊ होते हैं। वे खाकर समुद्रके किनारे पर बैठते हैं और वहां बीट करते हैं। जमानोंसे यह बीट इकट्ठी होती रही है जो फास्फरस और नाइट्रोजन युक्त होनेके कारण एक उत्तम खाद हो सकती है। इस बीट (गुआनो)के कारण ही गुआनो टापूके नामसे पहचाने जानेवाले इन टापुओं पर इतनी बीट जमा हुई है कि इसकी खादसे पेरु निवासी विपुल अन्न उत्पन्न करते हैं। उस खादका बड़ा व्यापार भी होता है।

जीव किस प्रकार परस्परावलंबी होते हैं इसका उत्तम उदाहरण हँम्बोल्ट प्रवाहके जीव हैं। यह प्रवाह अनेक पोषक खनिज पदार्थोंसे समृद्ध है। इन द्रव्यों पर समुद्रकी सूक्ष्म जीव सृष्टि, उस पर तरल जीव सृष्टि (plankton) फिर उस पर छोटी मछलियां, इन छोटी मछलियों पर बड़ी मछलियाँ और उन पर भी बड़े जीव अपना गुजारा करते हैं। अनेक प्रकारके पेटू पक्षी दिन रात इन मछलियों तथा अन्य जीवोंका आहार करते रहते हैं। वे सारे खनिज द्रव्य इनकी बीटके द्वारा उत्तम खाद बनकर खेतोंमें पहुंचते हैं और उस उत्तम खादके द्वारा उत्पन्न अनाजके रूपमें मानवके पेटमें जाते हैं। यों यह हँम्बोल्ट प्रवाह

पराश रूपमे मानव जीवनके लिए कितना उपयोगी है! इन पक्षियोंकी बीट्स बनी खादका दुनियामें कोई सानी नहीं।

किन्तु इस हॅम्बोल्ट प्रवाहसे कुछ नुकसान भी होता है। यह ठंडा प्रवाह है, अतः इस परसे बहने वाली हवा बरसात नहीं ला सकती। इसके परिणामस्वरूप चिली, अर्जेंटाइना वगैरा देशोंका बहुतसा हिस्सा बरसातके अभावसे रेगिस्तान बनता जा रहा है।
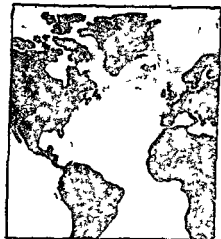
प्लेंक्टोनसे समृद्ध समुद्री क्षेत्र

इस नक्शेमें बताए गए सूक्ष्म बिंदियोंवाले क्षेत्र प्लेंक्टोन नामक सूक्ष्म जीवोंसे समृद्ध हैं। प्लेंक्टोनसे बड़े जीवोंका इन प्लेंक्टोनों पर निर्वाह होता है और इन बड़े जीवों पर, उनसे अधिक बड़े जीवोंका निर्वाह होता है।

दक्षिण अमेरिकाके पश्चिमी किनारेके काफी बड़े हिस्सेके समांतर बहनेके बाद यह ठंडा प्रवाह उत्तर पश्चिम दिशामें गालापागोस टापुओंकी तरफ मुड़ता है। यहाँ इसका ठंडा बिल्लौरी पानी विषुववृत्तके नीले गरम पानीसे मिलता है। जब ठंडे गरम पानीके दो प्रवाह मिलते हैं अथवा ऊपरका ठंडा भारी प्रवाह नीचे जाता है या नीचेसे ऊपरको आता है तब वहां बड़ी घमरौल शुरू होती है। समुद्र तूफानी व चंचल हो जाता है, कुहरा उठता है पानीमें भँवर पैदा होते हैं लहरें उछलती हैं। झाग लगता रहता है। और सबसे *बड़ी बात तो यह है कि परस्पर अनजान जीवोंके अनजान जगहमें आ जानेके कारण जीवन* संग्राम छिड़ जाता है। पक्षियों और मनुष्योंको विपुल मात्रामें मत्स्यसंपत्ति प्राप्त होती है। हमारे अरब समुद्रके ओमानके किनारे पर और सोमालियाके हाफुन अंतरीपके पास ऊपरका पानी तो गरम है पर नीचेका ठंडा पानी जब ऊपर आता है तब अपने गर्भमें से अखूट मीनसंपत्ति ऊपर ले आता है। मछलियां ही क्या उसके साथ अनेक प्रकारके जीव भी ऊपर आते हैं। तलके अनेक उपयोगी खनिजोंसे समृद्ध जो पानी ऊपर आता है वह साथ ही ऊपरी सतहकी मछलियोंके आहारके योग्य तरल जीव भी लाता है।

समुद्रमें एक दिशामें एक प्रवाह ऊपरी सतह पर बहता हो और उसके नीचे उसकी विरुद्ध दिशामें दूसरा प्रवाह बहता हो ऐसा भी कई स्थानों पर पाया जाता है। भूमध्य समुद्रमें *अधिक गरमी होती है और उसमें मिलनेवाली नदियां बहुत कम हैं।* अतः वहांका पानी सूख जाता है और उसका स्थान लेनेको जिब्राल्टरके जलडमरूमध्यसे अटलांटिकका पानी भूमध्यकी तरफ धँस जाता है। परन्तु उसके नीचे ही भूमध्य समुद्रसे अटलांटिकमें

एक उल्टा प्रवाह भी बहता है। लड़ाईके समय जर्मन पनडुब्बियाँ (सबमरीन) इस आमने सामने बहते पानीसे फायदा उठातीं और डुबकी लगाकर तथा अपनी मशीन बंद कर बहुत दूर तक बहती रहती थीं। इस प्रकार वे जिब्राल्टरमें पहरा देते ब्रिटिश जहाजोंकी नाकेबन्दीको नाकामयाब बना देती थीं। यों अनेक बार ऊपरके प्रवाहमें डुबकी लगाकर वे भूमध्य समुद्रमें दाखिल होतीं व नीचेके प्रवाहमें डुबकी लगाकर भूमध्य सागरसे फिर अटलांटिकमें चली जाती थीं।

जब जहाज पवनके सहारे चलते थे उस जमानेमें भूमध्य सागरसे अटलांटिक महासागरमें जानेके लिए अनुकूल वायु न मिलने पर, तीन मीलकी रफ्तारसे बहते इस सामनेके प्रवाहमें वे आगे नहीं बढ़ सकते थे। इससे कभी कभी तो सैकड़ों जहाजोंको महीनों तक जिब्राल्टरके किनारे भूमध्य समुद्रमें ही रुक जाना पड़ता था। उल्टी दिशामें बहता अर्थात् भूमध्यकी तरफसे अटलांटिककी तरफ बहनेवाला निचला प्रवाह तो इससे भी तेज है।

पिछले १५ वर्षोंमें समुद्रकी ऊपरी सतहके नीचे उल्टी दिशामें बहते अनेक प्रवाहोंका पता चला है जो अधिक विशाल और अधिक गतिवान हैं। यही नहीं इनके नीचे भी इनसे भी उल्टी दिशामें बहनेवाले प्रवाहोंका भी पता चला है। दक्षिण प्रशान्तमें मिले इस प्रवाहके कारण दुनियाके बड़े नक्शोंको बदलना पड़ा है। इसी प्रकार उत्तर अटलांटिकमें भी गल्फस्ट्रीमके नीचे विरुद्ध दिशामें बहता हुआ एक प्रवाह पाया गया है। इससे भी अधिक आश्चर्यकी बात तो यह है कि जिस प्रकार ऊपर आसमानमें मध्य अक्षांशोंमें पश्चिमसे पूर्वकी तरफ तेज हवा (jet stream) बहती रहती है उसी प्रकार समुद्रकी सतह पर भी पश्चिमसे पूर्वकी ओर जलप्रवाह बहता रहता है।

अब तो यह भी मालूम हुआ है कि दक्षिण ध्रुव महासागरका ठंडा पानी समुद्रके तले पर उत्तरकी तरफ और उत्तरी ध्रुव महासागरका ठंडा पानी समुद्रके तले पर दक्षिणकी तरफ धीमी पर स्थिर गतिसे बड़े पैमाने पर आगे बढ़ता रहता है। ये प्रवाह भूमध्य रेखा तक भी पहुँच जाते हैं। यों सारे समुद्रका पानी लगातार मिश्रित होता रहता है।

समुद्रमें पानीका जो लगातार मिश्रण होता रहता है उसमें अपवाद भी है। तुर्की, दक्षिण रशिया, रूमानिया और बल्गारियाके बीच स्थित काले समुद्रमें बड़ी बड़ी नदियाँ मिलती हैं। पर उसमेंसे बाहर निकलनेके लिए एक ही सकरा मार्ग है—बासफरस डार्डानेलसका जलडमरूमध्य। इससे इस काले समुद्रमें पानीका यही एक सकरा प्रवाह है। शेष समुद्र स्थिर और बंधा पड़ा है। काले समुद्रमें जीव-सृष्टि तो भरपूर है पर वह पानीकी ऊपरी सतहमें ही है जहाँ लहरोंके जरिए हवामेंसे पानीमें घुलती हुई प्राणवायु उन्हें मिलती रहती है। शेष समुद्रमें जीवसृष्टि नहीं है क्योंकि वहाँ पानीके ऊपर नीचे न मथे जानेके कारण प्राणवायु पर्याप्त मात्रामें नहीं मिलती। नीचे पानीमें प्राणवायुके बजाय हाइड्रोजन सल्फाइड जैसी जहरीली वायु भी होती है। जब ऊपरी जीव मरते हैं तो नीचे तलेमें जा गिरते हैं और मिट्टीमें दब जाते हैं। इन मरे प्राणियोंमेंसे निकला हाइड्रोजन सल्फाइड नीचेके पानीको जहरीला बना लेता है। हो सकता है कालांतरमें इन मरे प्राणियोंके दब जानेसे

वहाँ गरा और तेल भी बने। इस प्रकार नए तल क्षेत्र निर्माणका प्रक्रम आज भी जारी है। इसी प्रकार जहरीला बधा पानी नॉर्वेकी चट्टानाम कटी हुई विशाल खाडियां (fiords)म भी है।

समुद्रके गरम तथा ठडे प्रवाह दुनियाके जलवायु पर गहरा असर करते ह। पानी सूयकी गरमीका विशाल मात्राम ग्रहण कर सकता है। फिर भी यह अधिक गरम नहा हो जाता। उसी प्रकार पानी गरमीका अधिक मात्राम छाड सकता है फिर भी वह अधिक ठडा नही हा जाता। यह ता हम मालूम है कि पथ्वी पर ७१ प्रतिशत पानी है। एक घन मीटर पानी और एक घन मीटर हवाका गरम करना हा ता उनका एक अश तापमान बढानके लिए हवाकी अपक्षा पानीका तीन हजार गुना अधिक गरमी चाहिए। उसी प्रकार एक घन मीटर पानीका तापमान एक अश नीचा लानके लिए जितनी गरमी निकाल देनी पडती है उसस तीन हजार घनमीटर हवाका तापमान एक अश सेंटीग्रेड जितना बढाया जा सकता है। इसम ता खाडियाका गरम पानी हजारा मीलका प्रवास करनेके बाद भी उत्तर ध्रुव प्रदेशम स्पिटसबर्गके टापूके पश्चिमी किनाराका और रशियाके मुर्मान्स्क बदरगाहको बफसे बचाए रखता है। तब उसस आठ सौ माल दक्षिणम बाल्टिक समुद्रको ऐसी गरमी नही मिलती जिससे जाडेम वहा बदरगाहाम समुद्र जम जाता है।

गरमी कम हो ता खाडीका प्रवाह अर्थात गल्फस्टीम भी कम गरम होता है। अगर यह थाडा और गरम हो तो इसका मतलब यह है कि पश्चिमी यूरोपम जाडा जल्दी खतम होगा और आइसलण्डके समुद्रम बफस रुकावट कम होगी। या इस गरम प्रवाहका तापमान नापकर यूरोपकी आबोहवाका पूर्वानुमान किया जा सकता है।

अगर समुद्रके प्रवाहाका नियमन किया जा सक ता दुनियाके किसी भी स्थानके जलवायुका बदला अथवा अनुकूल किया जा सकता है। साइबेरिया (एशिया) और अलास्का (अमेरिका)के बीच बेरिंगके जलडमरूमध्यस उत्तर ध्रुव महासागरमसे बफके तरत पहाडाका लेकर ठडा प्रवाह उत्तर प्रशात महासागरम आता है। जिसका परिणाम यह हाता है कि जापानका उत्तरी हिस्सा तथा साइबेरियाका पूर्वी किनारा अत्यधिक ठडा हाकर बफसे ढक जाता है। और गरम जापानी (क्युरोसिवा) प्रवाह बेरिंगकी ओर नही जा सकता। अगर जा सके ता साइबेरियाके पूर्वी भाग तथा कामचाटकाको गरमी मिल सके और इससे उसके तथा दक्षिणी और पश्चिमी अलास्काके जलवायुको अनुकूल बनाया जा सके, जा आर्थिक दष्टिस बहुत ही लाभदायी हो। अब वैज्ञानिक तथा इजीनियर एक ऐसी योजनाका विचार कर रहे है कि अगर उत्तर ध्रुव महासागरके प्रवाहका बेरिंग जलडमरूमध्यके आर बाधके द्वारा रोका जाए ता गरम जापानी प्रवाहका पानी बाध तक फल जाए। फिर इस गरम पानीका अणुशक्ति द्वारा सचालित अनेक पपो द्वारा बाधके दूसरी तरफ उडेला जाए तो साइबेरिया तथा अलास्काके जमे हुए उत्तरी किनारेको बफस मुक्त किया जा सके और वहा पर बारह महीने जहाज चल सकें। आजकल यहा बफ ताडनवाले जहाज बफको हटाकर दूसरे जहाजोंके लिए माग खुला रखते ह। यह पद्धति बडी खर्चीली व धीमी है। पर बाधकी यह योजना तो अमेरिका तथा रशियाके सहयोगसे ही पूरी हो सकती है।

जैसे कभी कभी वर्षाके बादल आकर किसी दूसरी तरफ निकल जाएँ और बारिश न हो या कम

हो, उसी प्रकार समुद्रके प्रवाहोंका भी हो सकता है। दक्षिणी अमरिकाके पश्चिमी किनारे पर समा नान्तर बहता ठंडा हैम्बोल्ट या पेरू प्रवाह उस तरफ न बहे और उसके स्थान पर दक्षिण विषुवत्‌वृत्तका गरम प्रवाह वहां लग तो दुगुनी मुसीबत आ जाए। ठंडे पानीमें बसनेवाली मछलियां इस गरम प्रवाहसे मर जाएँ और उनपर निर्वाह करनेवाले अनेक पक्षियोंको भी दूसरे स्थान पर चला जाना पड़े। इसके परिणामस्वरूप उनकी बीट भी न मिले। उसी प्रकार गरम प्रवाहके असरसे चिलीमें अगर कुछ अधिक वर्षा हो जाए तो वहाँ जलप्रलय हो जाए। चिलीका जीवन व्यवहार तथा व्यवसाय अनावृष्टि तथा सूखी ऋतु पर ही निर्भर है। इस सम्बन्धमें एक रोचक बात यहाँ यह देनी चाहिए कि अगर वालपरीसमें एक साथ दो इंच पानी गिर जाए तो वहाँ जलप्रलयकी पूरी संभावना रहती है और उससे बड़ा भारी नुकसान भी हो सकता है।

प्रवाहोंकी दिशा और उनका तापमान भूतकालमें एक सा नहीं रहा है। जलवायुमें भी अनेक परिवर्तन होते रहते हैं। उत्तर यूरोपमें ऐसे जमाने भी आए हैं जब बाल्टिक समुद्र तथा उपसागरोंका पानी भी जम गया था। इससे डेनमार्क तथा स्केन्डिनेवियाके द्वीपोंके बीच जमे हुए समुद्र पर लोग तथा जानवर भी पैदल चलकर आते जाते थे। आठ हजार फुट मोटी बर्फीली जमीनसे ढके हुए आजके ग्रीनलैण्ड पर चौदहवीं शताब्दी पहले उसके नामके गुणानुसार वहाँ अनाज व फलोंकी खेती होती थी। साथ ही पशुपालनका व्यवसाय भी चलता था। आज यह सब परियोंकी कहानी सा लगता है। उत्तरी ध्रुव प्रदेशका जलवायु जब अत्यंत ठंडा और बर्फमय हो गया तो आय दक्षिणकी तरफ चले गए और भरतखण्डमें भी आ बसे। इस मान्यताको भी इस उपरकी बातसे समर्थन मिलता है। प्राचीन कालकी, नौविद्यामें कुशल महान साहसी वाइकिंग प्रजा, स्कैंडिनेविया, आइसलैण्ड, ग्रीनलैण्ड तथा अमरिकाके उत्तर-पूर्वी भागमें समुद्रों पर घूमती थी। उस समय वहाँ बर्फ नहीं थी। संभव है कि गल्फस्ट्रीमका प्रवाह उस कालमें अधिक शक्तिशाली रहा हो तथा इससे ये समुद्र बर्फसे मुक्त रहे हों। अभी भी किसी किसी वर्ष यह गरम प्रवाह उत्तरी ध्रुव प्रदेशके इन समुद्रोंको बर्फसे मुक्त रखता है। १९४०में उत्तर यूरोप तथा उत्तर एशिया (रशिया) के ध्रुवमहासागरकी ओरके किनारेको इस प्रवाहने इतना बर्फमुक्त रखा कि वहाँ उस समय भी सौ सौ जहाज चलते थे। उस समय दूसरा विश्वयुद्ध चल रहा था। इससे यह घटना अमरिका, ब्रिटेन तथा रशियाके लिए आशीर्वाद स्वरूप हो गई थी। १९४२में डिसम्बरके आठवें एक अंधेरे दिनमें भी एक जहाज ग्रीनलैण्डके पश्चिमी किनारे परके उपरनिविक बंदरगाह पर पहुँच सका था व अपना माल उतार सका था। उस दशाब्दीमें उत्तरी ध्रुव महासागरमें रशियाके विशाल टापू स्पिटसबर्गके पश्चिमी किनारेके बंदरगाह गल्फस्ट्रीमके प्रवाहके कारण तीन महीनेकी जगह सात महीने तक बर्फमुक्त रहनेसे लगे रहे थे।

पिछले चालीस वर्षोंमें ग्रीनलैण्ड पर ऐसे कभी ग्रीष्म ऋतुएं आने लगे हैं जो भूतकालमें कभी दिखाई नहीं देते थे। अर्थात ग्रीनलैण्डका जलवायु फिरसे एक बार सुधर रहा है। अब उधर जहाज भी पहलेकी अपेक्षा तीन सौ मील और उत्तरकी तरफ मछली पकड़ने जा सकते हैं। उत्तर यूरोपके इस भागमें थोड़ी गरमाहट आ रही है और जहां तहां बर्फ पिघलकर पीछे हट रहा है। यह सब गल्फस्ट्रीमके प्रवाह तथा जलवायुके तापमानमें हुई वृद्धिके कारण हो रहा है ऐसी विज्ञानशास्त्रियोंकी राय है।

९ : गहरे समुद्रमें डुबकी

पृथ्वीकी सारी विचित्र वस्तुएँ हमारे सामने कोई कुशल चितार कर नहीं गुजरता। धरतीपर जितनी विचित्र वस्तुएँ हैं उससे भी अधिक समुद्रके अन्दर पड़ी हैं। समुद्रके किनारे हम सारी जिन्दगी बिताएँ अथवा सब महासागरोंका सफर कर जाएँ तो भी समुद्रके अन्तरमें क्या छिपा है यह मालूम नहीं हो सकता। पनडुब्बे कालू (oyster) सीप (जिनसे मोती बनते हैं) तथा गहरायीकी मुरदा वस्तु प्राप्त करनेके लिए पहलेसे साठ फुट गहराईमें गोते लगाते जाते थे और दो-तीन मिनटमें ही ऊपर आ जाते थे। फिर जब डुबकी मारनेकी पोशाक बनी तब वह पहनकर अधिकसे अधिक पाँच सौ फुट नीचे जा सके। उन्हें शुद्ध हवा मिलती रहे इसके लिए ऊपरसे नलीके द्वारा प्राणवायु भेजा जाता। पर पनडुब्बोंकी यह पोशाक ऐसी थी कि जिससे वे स्वतन्त्रताके साथ इधर उधर घूम फिर नहीं सकते थे।

फिर जल फेफड़ा (acqua lung)की खोज हुई। उसमें पनडुब्बे अपनी पीठ पर प्राणवायुकी दो कोठियाँ (सिलिंडर) बाँधते, उसमेंसे साँस लेते, अपने पैरोंमें मछलीके परोंकी तरहके जूते पहनते और समुद्रमें स्वतन्त्रताके साथ घूम फिर सकते हैं। काम कर सकते हैं। फोटोग्राफ ले सकते हैं। खोज तथा निरीक्षण कर सकते हैं और साथ ही शिकार भी कर सकते हैं।

परन्तु ये जल फेफड़े पहनकर समुद्रमें फिरनेकी भी एक मर्यादा है। कोठीमेंसे प्राणवायु खतम होनेसे पहले ऊपर आ जाना पड़ता है। साथ ही ज्यों ज्यों समुद्रमें अधिक गहराईमें जाएँ त्यों त्यों शरीर पर पानीका दबाव भी बढ़ता जाता है जिससे साँसमें ली जानेवाली हवामेंसे प्राणवायुके साथ नाइट्रोजन भी खूनमें मिलता जाता है। और फिर जब जल्दी पानीमें ऊपरकी तरफ आएँ तब खूनमेंसे नाइट्रोजनके बुलबुले निकलने लगते हैं। रुधिर वाहिनियोंमें इन बुदबुदोंके बननेसे रक्ताभिसरणमें बाधा आती है। इससे असह्य पीड़ा होती है और मृत्यु भी हो सकती है। इससे जल फेफड़ा पहनकर अधिक गहराईमें जाने और जल्दीसे ऊपर आनेमें भी खतरा होता है। अलावा इसके शरीरपर पानीका दबाव सहनेकी भी कोई हद होती है। पाँच सौ फुटसे अधिक गहराईमें शायद ही कोई जा सकता है। सूर्य सिर पर चमकता हो तो भी सूर्य प्रकाश पाँच सौसे अधिक फुट गहराईमें शायद ही पहुँचता है। सूर्यके सातों रंग क्षीण होकर पानीकी गहराई बढ़नेके साथ अधिकाधिक सोख लिए जाते हैं। अत्यन्त अनुकूल परिस्थितिमें भी हजार फुटसे अधिक गहराईमें तो केवल जामुनी रंग ही पहुँच सकता है। वह भी कुछ अधिक गहराईपर सोख लिया जाता है। तीन अरब वर्षोंसे जबसे समुद्रका जन्म हुआ, समुद्रके गर्भमें तो गहरी काली रात है। और समय भी वहाँ मानो काला कलूटा बन कर थम गया है।

इतना होनेपर भी यह भयानक अन्धकार मानवकी जिज्ञासाको डरा नहीं सका। विलियम बिब और ओटिस बाटन नामक दो अमेरिकन वैज्ञानिकोंने बेथिस्फियर नामक एक गोला बनाया और उसमें बैठकर उन्होंने बरमुडा टापूके पास १९३८में तीन हजार अट्ठाईस फुट तककी गहराईमें डुबकी लगाई। १९४९में बार्टनने अकेले ही केलिफोर्नियाके पास बेथास्कोप गोलेमें बैठकर साढ़े चार हजार फुटकी गहराईमें डुबकी लगाई थी। परन्तु जैसा पहले बता चुके हैं अधिक मुश्किल व भय भी रहता है। जैसे जैसे अधिक गहराईमें जाएँ वैसे वैसे पानीका दबाव भी बढ़कर

सोनार-यंत्र समुद्र तलेका आलेख अंकित कर रहा है।

सोनार-आलेख द्वारा समुद्र तल पर पाये गए पहाड़।

सोनार आपरेटर

सोनार यंत्र
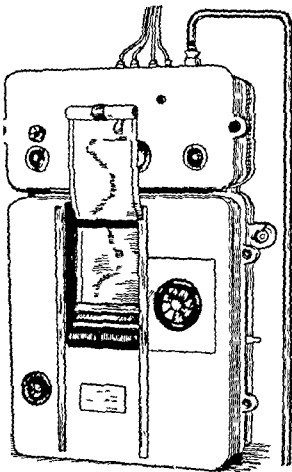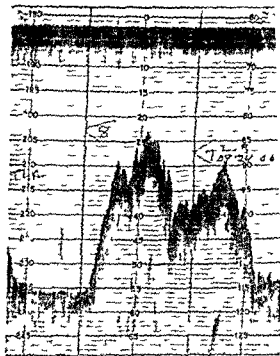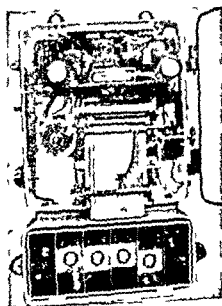
भयंकर होता जाता है। फौलादकी बनी सबमरीन भी कुछ सौ फुटकी गहराईसे अधिक नीचे नहीं जा सकती। फिर भी स्विट्जरलैण्डके विज्ञानशास्त्री आगस्त पिकार्डने ऐसा वाहन बनाया कि जो गहरेसे गहरे समुद्रमें भी डुबकी मार सके। बथिस्काफ नामसे प्रसिद्ध इस वाहनका 'त्रिस्त' नाम दिया गया। १९५३में ऑगस्त तथा उनका पुत्र जाकी पिकार्ड भूमध्यसागरमें दस हजार तीन सौ पचानवे फुटकी गहराई तक गए। तब सारा संसार चकित रह गया। परन्तु दूसरे ही वर्ष फ्रांसके जॉर्ज हुआ तथा पियरहेनरी विलमन अटलांटिकमें तेरह हजार दो सौ सत्तासी फुटकी गहराईमें जाकर नया विक्रम स्थापित किया। फिर तो अमरिका भी इस जीवटके कायेमें कूद पड़ा। उसने 'त्रिस्त' खरीद लिया और ता० २३.१.१९६० के दिन जाकी पिकार्ड और लेफ्टिनेंट डान वाल्शने उसमें बैठकर प्रशान्त महासागरमें पतीस हजार आठ सौ दो फुट पानीमें उतरकर अपने जीवटसे सारे जगतको आश्चर्यमुग्ध कर दिया।

गहरे पानीमें जानेवाले पनडुब्बी, पहले तो यह मान लिया था कि समुद्रके इतने गहरे ठंडे अन्धकारमय गर्भमें तथा इतने भारी दबावमें कोई भी जीव नहीं रह सकता। फिर भी सन १८१८ ई०में सर जान रासने उत्तर ध्रुव महासागरमेंसे छह हजार फुट की गहराईसे निकाली गई कीचड़में भी कुछ समुद्री कीड़े देखे थे। सन १८६०में सर्वेक्षण जहाज बुल्डॉगने सात हजार पाँच सौ साठ फुटकी गहराईसे वहाँके जीवोंने सन्देश भेजा कि हमारी खोजके लिए अभी
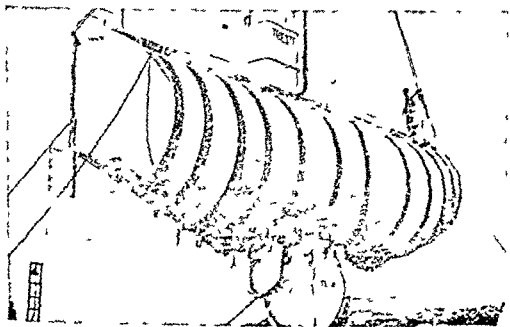
समुद्रमें अधिक गहराईमें डुबकी लगानेवाला वाहन त्रिस्त। नीचे जो गोला है उसमें आदमी बैठते हैं। ऊपर गैसोलीनसे भरा हुआ है, ऐसे वाहनको बेथिस्काफ कहते हैं। यह वाहन ३,००० फुटसे भी अधिक गहराईमें हो आया है।

तुम्हें अपने हाथ और वजन होंगे। बुल्डोगमसे सात हजार पाचसौ साठ फुट गहरे लटकाए गए रस्सेके निचले सिरपर तेरह तारा मछलिया चिपकी हुई थी।

इस आधी शताब्दीके दरमियान ब्रिटिश समुद्री जीव विज्ञानशास्त्रियोंको सागरकी गहराईकी जीवसृष्टिकी जो थोडी मिली थी उससे उत्साहित होकर समुद्रकी खोजके लिए सन १८७२में पृथ्वीकी परिक्रमाके लिए 'चेलेन्जर' नामक खास जहाज बनाया गया और खास साधनोंसे उस सुसज्जित कर १८७२में वे पृथ्वी प्रदक्षिणाके लिए रवाना हुए। जब उन्होंने ससारके गहरे समुद्रके तलसे जाल द्वारा लायी गई कीचडमें भी इतने सारे विभिन्न जीवोंको देखा तो वे स्तम्भित से रह गए।

दूसरे विश्वयुद्धमें दुश्मनकी सबमरीनोंको खोजनेके लिए जब सोनार यत्र प्रयोगमें लाए गए तब पता चला कि समुद्रकी सतह और तलेके बीच मकडीके जालमें एक विस्तृत पटलसा कुछ तरता है। सोनारके द्वारा भेजी गयी आवाजकी तरंगें तले तक पहुँचनेके बजाय उससे टकराकर वापस आती हैं। यह पटल रातको सतहके करीब आता है और दिनमें गहराईमें उतर जाता है अर्थात अधेरेमें रहना पसन्द करता है। यह सारा पटल प्लैंक्टोन नामक वनस्पति और इस तरल जीव सृष्टि पर निर्वाह करनेवाली मछलियाँके समूहसे बना है। पानीमें उतारे गए कमरेके द्वारा भी इस बातका समर्थन मिला।

जब डा० विलियम बिब अपने बेथिस्फियर नामक गोलेमें बैठकर आधे मील समुद्रमें गए तब बिजलीका प्रकाश डालनेपर पता चला कि इस अधकारमें भी मछलियाँ और छोटे अष्टपाद (squids) आदि जीव रहते हैं। इसके बाद जब पिक्कार्ड और वाल्श पतीस हजार आठसौ फुट गहरे गए तो उन्होंने देखा कि वहाँ पर भी अनेक प्रकारके जीवोंका ससार बसा हुआ है।

गहरे पानीमें भी अनेक जीव रहते हैं इसकी खोज शायद मनुष्यने नहीं की पर मनुष्यके पूर्वज ह्वेलने भी पहले शायद करोड वर्ष पहले कर ली है। एक जमानेमें ह्वेल धरतीका जानवर था जो नदियोंके मुहाने और टापुओंके पास समुद्रमें अपने चारेके लिए शिकारके लिए जाता था। यह जानवर पानीमें इतना समय बिताने लगा कि धीरे धीरे वह जलचर बन गया। उसके आगेके पैर तरनेके पख (fin) बन गए और पिछले पैर शरीरमें हड्डीके रूपमें रह गए। अभी भी मादा ह्वेलके स्तन होते हैं। वह एक प्रसवमें एक ही बच्चेको जन्म देती है और उसे स्तनपान कराके बडा करती है। ह्वेल फेफडोंसे सांस लेते हैं। फिर भी अपने शिकारके लिए वह अधिकाधिक गहरे पानीमें जाते हैं हालाकि हरएक ह्वेल अधिक गहरे पानीमें नहीं जा सकता। जो ह्वेल तरल

नील ह्वेल

लबाई ९० फुट वजन १२० टन तेल १२० बेरल वजन
लीवर १ टन जीभ ३ टन पेटके अवयव ३५ टन

जीवोपर निर्वाह करते हैं और ध्रुव महासागरमें रहते हैं उन्हें अधिक गहरे पानीमें नहीं जाना पड़ता। स्पर्म व्हेल जो कि मछलियोंके झुडोंको ही निगल जाती है उसको तो छिछले पानी में भी खुराक मिल जाती है। गहरे, अँधेरे पानीमें भी अष्टपाद (squids) मछलियाँ आदिके झुंड रहते हैं इनकी खोज तो स्पर्म व्हेलको भी है। बड़े अष्टपाद (quid) इस स्पर्म व्हेलका विशेष प्रिय भोजन है। परन्तु इस व्हेलको भी कभी-कभी महाकाय अष्टपादोंका शिकार करनेके लिए खूँखार युद्ध करना पड़ता है। स्पर्म व्हेल पचहत्तर फुट या कभी-कभी इससे भी अधिक लम्बी होती है। तो बड़े अष्टपादकी लम्बाई एक परके सिरसे दूसरे परके सिर तक पचास फुट तक होती है।

भिन्न भिन्न राष्ट्रों और महाद्वीपोंके बीच तार-व्यवहारके लिए समुद्रके तलमें तार डाले गए हैं। कभी कभी पानीके अन्दर इनके कट जानेपर या उनमें खराबी होनेपर सुधारनेके लिए उन्हें बाहर निकालना पड़ता है। एक समय करीब तीन हजार सात सौ बीस फुटकी गहराईमें इन तारोंमें अटकी मरी व्हेल मछली निकली थी। साधारणतया व्हेल तीन हजार फुटकी गहराईपर मिलती है जहाँ तीन हजार फुट गहरे पानीमें जाना स्पर्म व्हेलका नित्यक्रम है। तीन
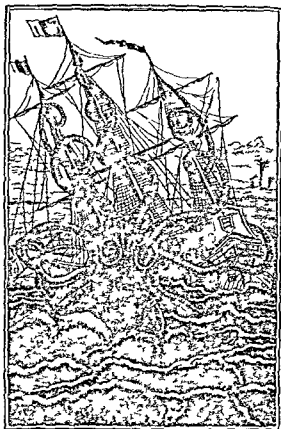
समुद्री अष्टपादके आक्रमणमें एक जहाजके काल्पनिक चित्रकी आकृति जो सेंट थामस (सेंट मालोम, फ्रांस)के देवलमें है।

हजार फुटकी गहराईपर अनेक बड़े अष्टपाद रहते हैं और ये अष्टपाद जिनपर अपना निर्वाह कर सकें ऐसे अन्य प्रकारके जीव तथा इनको भी अपना भोजन बना सकें ऐसे तीसरे प्रकारके भी जीव वहाँ रहते हैं। इस प्रकार जीवोंकी एक परम्परा इस गहराईमें रहती है।

सामान्य सबमरीन फौलादकी बनी होनेपर भी एक हजार फुटकी गहराई तक नहीं जा सकता। और जाए भी तो पानीके दबावसे टूट जाए। किंतु तीन हजार फुटकी गहराईमें जहाँ प्रति वर्ग इंच पर ग्यारह सौ पाउंडका दबाव होता है वहाँ पर भी स्पर्म व्हेल शिकारके लिए घूमता फिरता है। मनुष्य अगर सौ-दो सौ फुटकी गहराईमें जाए तो पानीके दबावके कारण उसके खूनमें इतनी सारी नाइट्रोजन वायु घुल मिल जाती है कि जब वह जल्दीसे ऊपरी सतहपर भी आ

जाए तो उसके खूनमें अलग होती हुई नाइट्रोजन वायु बुलबुले बनाकर रक्ताभिसरणमें रुकावट डालता है जिससे मनुष्यकी मृत्यु हो जाती है। अतः उसे धीरे धीरे ऊपर आनेके लिए घंटों तक पानीमें रहना पड़ता है। परंतु व्हेल सात हजार फुट गहरे पानीमें नजदीक डुबकी लगाती है और सांस लेनेके लिए तत्काल ऊपर भी आती है फिर भी उसे कुछ नहीं होता।

ऐसे पराक्रम करनेवालोंमें व्हेल अकेली ही नहीं है। सील भसके समान ही बड़ी सील मछली भी अपने शिकारके लिए गहरे अंधकारपूर्ण समुद्रमें डुबकी लगाती है। उनके पेटमेंसे ऐसी मछलियाँ मिली हैं जो छिछले समुद्रमें प्रकाशमें कभी आती ही नहीं हैं। कहनेका तात्पर्य यह कि जो जीव गहरे पानीमें रहते हैं उनके लिए दबावका प्रश्न ही पैदा नहीं होता। प्रकृतिने उनकी रग-ग्रंथियोंमें अंदरसे इतना दबाव दिया है कि बाहरसे होते दबावका उसमें संतुलन हो जाता है। व्हेल और सील डुबकी लगाकर हजार पाउंडके दबावमें जाती है व तुरंत ही सांस लेने ऊपर भी आ जाती है और तुरंत ही फिरसे हजार फुट गहरेमें डुबकी लगाती है। फिर भी उनके शरीरपर इस दबावका कोई असर नहीं होता। यह एक अजीब बात है। इसके विरुद्ध जो जीव अंधेरे गहरे पानीमें रहते हैं उन्हें अगर ऊपर लाया जाए तो दबावके घट जानेसे उनके शरीर फट जाएँगे।

व्हेल और सीलकी तरह कुछ और जीव भी ऊपर-नीचे जाते हैं फिर भी वे अपनेको अधिक अथवा कम दबावके अनुकूल बनाए रखते हैं। इनमें नन्हे झींगे और अन्य कई तरल जीव भी हैं जो रोज रातको ऊपर आते हैं और दिनमें गहरे अंधेरेमें चले जाते हैं। प्रकृतिने कई प्रकारकी मछलियोंको गहराईकी सीमामें बाँध रखा है। यदि ये तरल जीवोंका पीछा करती अपनी सीमासे ऊपर आ जाएँ तो उनकी थैलीमें भरी हवाके फूल जानेसे उन्हें फिरसे गहराईमें जाना मुश्किल हो जाए। अगर वे अपनी सामान्य गहराईमें वापस न जा सकीं तो फूली थैली इन्हें गुब्बारे (बलून)की तरह ऊपर फेंक देगी। उसमें ऊपरके दबावके हट जानेसे अंदरके दबावके कारण इनका शरीर फट जाता है। धरतीपरके सभी जीव विशेष करके निशाचर जीव केवल अपनी आँखों पर ही निर्भर नहीं रहते। साँप केंचुए जो भूगर्भमें और अंधेरी गुफाओंमें रहते हैं उनकी आँखें विचित्र होती हैं। अंधेरी रातमें जुगनू चमकते हैं और घुग्घू तथा चमगादड़ अंधेरेमें ही अपना शिकार ढूँढ लेते हैं। उसी प्रकार अंधेरे गहरे समुद्रमें रहनेवाले जीवोंको भी अपने शिकार, रक्षण तथा वंशवृद्धिके लिए प्रकृतिसे विचित्र शक्तियाँ मिली हैं। सामान्य रूपसे स्थलचर जीवोंकी तरह ही जलचर जीवोंको भी उनके आसपासके वातावरणके अनुकूल हो जानेके लिए प्रकृतिने अनुकूल रंग दिए हैं। उदाहरणके लिए सतहके नजदीक रहनेवाली मछलियाँ भी रंग बिरंगी होती हैं। परंतु जहाँ कोई भी रंग नहीं है ऐसे गहरे अंधेरे समुद्रमें काले नीले या आसमानी रंगके ही जीव मिलते हैं। ऐसे अंधकारमय वातावरणमें कुछ जीव स्वयं प्रकाशित भी होते हैं। उनके शरीरका कोई न कोई हिस्सा अथवा सारा शरीर ही प्रकाशित होता है और वे भी जुगनूकी तरह चमका करते हैं। इस प्रकाशके द्वारा ही वे अपने दोस्त और दुश्मनको पहचान सकते हैं। ऊपरी सतहके अष्टपाद काली स्याही छोड़ते हैं तो अंधेरे गहरे पानीके अष्टपाद स्वयं प्रकाशित स्याही छोड़ते हैं।

कमसे कम प्रकाशमें देखनेकी सुविधाके लिए समुद्रके अंधेरे तलमें रहनेवाली मछलियोंको बहुत बड़ी आँख दी गयी है। निशाचर घुग्घू तथा बंदर (Lemur)को उसी प्रकारकी मिली है।

पर ऐसी भी कुछ सृष्टि है जिसके आँखें ही नहीं होतीं। उन्हें आँखोंके बजाय ऐसी लम्बी स्पर्शेंद्रिय दी गयी हैं कि दूरसे ही स्पर्श करके व जीवका पहचान लेते हैं कि अपने नजदीक आनेवाला जीव दुश्मन है अपना शिकार बन सके ऐसा जीव है या अपनी ही जातिका नर अथवा मादा है।

वनानिकोंने खोज की है कि वडवागल और चमगादड उड़ते उड़ते ही अश्राव्य ध्वनिकी तरंगोंका प्रसारण करके उनकी प्रतिध्वनिसे जान लेते हैं कि उनके मार्गमें क्या है। उसीके आधारपर समुद्रशास्त्रियोंको भी विचार आया कि ऐसा भी संभव है कि गहरे अँधेरे पानीमें रहनेवाले जीव भी इसी तरह अपनी श्रवणेंद्रिय द्वारा अपने शत्रु, मित्र अथवा शिकारको पहचान लेते हैं। नए साधन गए श्रवणयंत्रोंने सिद्ध कर दिया है कि समुद्रमें अनेक प्रकारकी आवाजें होती हैं और उनकी प्रतिध्वनियाँ भी सुनाई पड़ती हैं। तो क्या जलचर भी इस प्रकार प्रतिध्वनिके द्वारा अपना आहार ढूँढ़ते होंगे? एक बड़े हौज़में सम (porpoise) नामके स्तनवाले बगैर सम्पन्न प्राणीको रखा गया और वह देखते न सके इस तरह उसमें एक मछली भी रखी गया। परंतु उस सूसने उसकी गंधसे अथवा अपनी आवाजकी लहरें भेज कर उसकी प्रतिध्वनिसे उस मछलीका उधर होना और वह कहाँ है इसका भी पता लगा लिया। इससे मालूम होता है कि गहरे समुद्रमें भी अनेक जीव अपनी आवाजकी लहरें प्रसारित करके उनकी लौटती तरंगोंसे अपने मित्र, शत्रु अथवा खुराकका पता लगा लेते होंगे।

वनस्पति चाहे धरतीके ऊपरकी हो या पानीके अंदरकी उसे सूर्यके प्रकाशके द्वारा ही अपनी खुराक बनानी पड़ती है। जब सूर्यका प्रकाश अँधेरे पानीके भीतर जा ही नहीं सकता तो वहाँ वनस्पति अपनी खुराक बनाये तो कैसे? समुद्रके अन्दर दो सौ फुट गहराईसे प्रकाशका शोषण होना शुरू होता है। सूर्यका लाल रंग यहाँ अदृश्य हो जाता है। फिर नारंगी, पीला आदि रंगोंका शोषण हो जाता है इसके पश्चात नीचे तो सिर्फ अँधेरापट ही रह जाता है जहाँ वनस्पति हो ही नहीं सकती। वहाँके जीव तो एक दूसरेका शिकार करके ही अपना पेट भरते हैं। साथ ही जब ऊपरी सतह पर जीव मर जाते हैं तो वे नीचे गहराईमें बरसने लगते हैं। गहरे जलके जीव ऊपरसे होनेवाली इस वर्षापर झपटकर उसे उदरस्थ कर लेते हैं। उसी प्रकार जब ये जीव भी मर जाते हैं तो और गहरे पानीमें बरसते हैं और तब इनके नीचेके जीव भी उन्हें पकड़कर खा लेते हैं। इस प्रकार ऊपरी सतहसे नीचे तल तक जीव मरनेपर नीचेके जीवोंकी खुराक बन जाते हैं। गहरे पानीके जो जीव निकाले गए हैं उनके भयंकर दाँत राक्षसी जबड़े गुफानुमा मुँह तथा अपनेसे भी बड़े प्राणीको निगलनेके लिए अपनेको फुलानेकी शक्तिवाले उनके शरीरोंसे सहज ही में मान हो जाता है कि ऊपरसे होती वर्षाकी छीनाझपटीमें परस्पर उनकी कैसी घमासान लड़ाई होती होगी!

सागरके अंतरमें नीरव शांति होगी, ऐसा लोग मानते हैं। परंतु श्रवण साधनोंने बताया है कि समुद्रके अंतरमें भी चाव चिंघाड़ गर्जनाएँ हुँकार निश्वास सीटियाँ, गुर्राहट खासना आदि अनेक प्रकारकी आवाजें आती रहती हैं। ये आवाजें जलचरोंकी होती हैं। समुद्रके जीव ये आवाज कोई मन बहलावके लिए नहीं करते। उनकी आवाजें खुराक और साथीको खोजनेके लिए होती हैं। इतने गहरे समुद्रमें यह आवाज और स्पर्श ही उनके जीवन व्यवहारका महत्त्वपूर्ण साधन होता है।

अब हम समुद्रके किनारे चलें। गुजरातका समुद्र किनारा लगभग समतल चौरस मैदान सा है। धीरे धीरे वह समुद्रकी तरफ ढालू होता जाता है। जाड़े के दिनोंमें रात समुद्रमें अगर भाटा हो और लहरें भी नहीं नहीं सी हों तब अगर हम पानीमें आगे बढ़ते जाएँ तो मालूम होगा कि यह चौरस मैदान धीरे धीरे ढालू होता बहुत दूर तक अंदर पानीमें चला गया है। इसमें मोटी या ज्यादातर तो बारीक रेती बिछी होती है और इसमें भी समुद्री तरंगोंकी भांति हलकी लहरियाँ सी पड जाती हैं। समुद्र किनारेसे अन्दरकी तरफ बढ़ती इस प्रकारकी समतल भूमिको 'कांधी' कहते हैं। अंग्रेज़ी में इसे कॉंटिनेंटल शेल्फ या शेल्फ (shelf) कहते हैं। कहीं कहीं तो यह 'कांधी' समुद्रमें मीलों दूर तक फैली होती है। हालांकि इसका ढाल तो आगे बढ़ने के साथ बढ़ता ही जाता है, अर्थात गहरा होता ही जाता है। परंतु साधारणतया इस 'कांधी' पर छ सौ फुटसे अधिक पानी नहीं चढ सकता। हम भारतके नक्शेमें गुजरातको देखें। भारतके कच्छ और खंभातकी खाडियोंका समुद्र ऐसी कांधीपर ही लहराता है। भारतके दक्षिणी किनारे पर रामेश्वरम और लंकाके बीच भी ऐसी 'कांधी' है। यह 'कांधी' किसी ज़मानेमें रामेश्वरम और लंकाको जोडनेवाली थी, पर अब समुद्रमें डूबी हुई भूमिका ही एक भाग है।

कांधीका आर्थिक दृष्टिसे बडा महत्व होता है। मछलियों और झींगोंके विशाल समुदाय कांधीके समुद्रमें रहते हैं। मोती देनेवाली काली सीप भी इसी स्थानपर रहती है। (न ये सीप तैरती हैं न अपने स्थानसे दूसरे स्थानपर प्रवास करती हैं)। रंग बिरंगे मूंगे कांधीके प्रकाशित समुद्रमें उगते हैं और मुरदा बादलके जंगल भी इसी कांधीमें उगते हैं। और अगर समुद्रके तलेके नीचे खनिज तेल व गैस होती है तो वह भी इसी प्रकारकी जमीनके नीचे पाए जाते हैं। हम जानते हैं कि ऐसी प्रकारकी समुद्री जमीनमें खोज करनेपर खंभातकी खाडीमें तेल मिला है। कच्छकी ऐसी भूमि पर रहनेवाली काली सीपें मोती देती हैं। इस स्थानपर भी भरपूर तेल होनेकी संभावना बताई जाती है। मद्रासके पूर्वका व लंका (सिलोन)के उत्तरी भागका कांधी क्षेत्र उत्तम प्रकारके मोतीके लिए ख्यात है। साथ ही तूतीकोरिन भी काटू पकडनेका एक मशहूर बंदरगाह है।

आर्थिक दृष्टिसे कांधीका महत्व इतना बडा है कि अंतर्राष्ट्रीय करारमें भी इस बातको स्वीकार किया गया है कि जिस देशके समुद्रमें इस प्रकारकी कांधी हो उस देशका समुद्रमें सौ मीलकी दूरी तक उसपर आर्थिक अधिकार है। ब्रिटेनमें एक खान ऐसी है जो किनारेके नीचेसे खोदकर समुद्रमें कांधीके नीचे गयी है। ऊपर समुद्र नीचे खान, व बीचमें इस प्रकारकी कांधीकी छत। समुद्री चट्टानोंमें होकर खोदी गई इस खानका अध्ययन करने वाले श्री डब्ल्यू० जे० हेंडवुडने लिखा है कि हमारे और लहराते समुद्रके बीच केवल नौ फुट मोटाईका ही छत है। इस छतपर तूफानी समुद्रकी लहरोंके साथ बडी बडी शिलाएँ लुढकती थी। कंकड और पत्थर मानो इन चट्टानोंके द्वारा पीसे जाते थे, तूफानी लहरें भयंकर गर्जना करती थी, समुद्रके पानीको बडे जुनूनसे मानो मथा जा रहा था। ये सब आवाज़ छतसे स्पष्ट सुनाई देती थी। यह गहरा कोलाहल इतना तो भयावना लगता था कि हमें विश्वास ही न हुआ कि यह केवल नौ फुटकी छत हमें रक्षण दे सकेगी। और इस कारण हम तुरंत वहाँसे भाग निकले। हमें फिरसे उधर जानेकी हिम्मत प्राप्त करनेके लिए कुछ प्रयत्न करना पडा। इसके पश्चात ही सारी खान देखनेका हम साहस कर सके।

लग। आग उनते समुद्रसे उबरने लिए मानव तो ऊपरकी तरफ चला आया पर ज्यादातर प्राणी इस बाढ़में डूब मरे। इस प्रकार यह सारा प्रदेश जीवसृष्टि और जगलोंके साथ ही समुद्रमें डूब गया।

ये आदि मानव लिखना पढना ता जानते न थे। इससे उनके जीवनकालमें उन्होंने जो देखा वह तथा उनके पूर्वजोंके बताए हुए अपने अनुभव--यह सब लिखा तो न गया, पर लोक कथाओंके रूपमें पीढी दर पीढी कहा जाता रहा। इसीसे अब भी यूरोपकी प्रजामें एक खयाल प्रचलित है कि समुद्र विशाल मानव बस्तियोंको निगल गया है। इसी प्रकारकी एक लोक कथा आटलांटिस नामके भूखडके बारेमें है जिसका वर्णन ग्रीक दार्शनिक प्लेटोने इस प्रकार किया है कि उसका तादृश चित्र हमारे समक्ष खडा हो जाता है। उनके बताए अनुसार यह आटलांटिस खड जिब्राल्टरके जलडमरूमध्यके पश्चिममें एटलांटिक महासागरमें था और उसके एक बहादुर राजाने अपनी बहादुर प्रजाके तत्पर भ्रमय समुद्रमें यूरोपको तथा अफ्रीकाके किनारोंको जीत लिया था। पर एकाएक एक ही दिनमें भकपसे वह सारा भाग समुद्रमें गर्क हो गया।

सभव है भारतके दक्षिणमें कन्याकुमारीके पास और लकाके दक्षिणमें लाखोंका बना मदान हिंद महासागरमें डूब गया है। वह भी किसी समय इसी प्रकार जीवसृष्टि और वनस्पतिसे भरा रहा होगा। परतु उसमें नमूने भी प्राप्त करना आज मुश्किल है। खोजनेके साधन भी इस मग्न जमीनमें टूट गए है जिससे कोई अवशेष नहीं मिल पाया। पर उत्तरी महासागरकी जमीन लाखों वर्षों नहीं बनी इसीसे वहाँसे अवशेष खोजकर निकाले जा सके है।

उत्तरी समुद्रका तला या ब्रिटेन फ्रांस बेल्जियम हालैण्ड आदि देशोंका आधी है। यहाका समुद्र मछलियोंसे समृद्ध है। इतना ही नहीं उसमें तेल व गैस भी खूब मिले हैं। ब्रिटिश सरकारने अपने पूर्वी किनारेपर कितने ही प्लाट बनाकर तेल कपनियोंको इसके ठेकेदारे दिये है। अभी उसमें तेलकी विपुल मात्रा होनेका सबूत नहीं मिला पर गैस खूब निकली है।

इण्डोनेशियाके द्वीप समूहोंको जोडनेवाला समुद्र भी छिछला है। और ये द्वीप तलमें इसी प्रकारकी जमीनसे परस्पर जुड़े है। सबसे विशाल आधी तो उत्तर ध्रुव महासागरका तला है। माना जाता है कि यह हिस्सा किसी दिन समुद्रके बाहर था। पिछले हिमयुगमें समुद्रकी सतह आजके समुद्रकी सतहसे ४०० फुट नीची थी।

भरतखडके दक्षिणमें कन्याकुमारीसे लेकर पश्चिमी किनारेके उत्तरी भाग कराची तक की इस बीस मील चौडी आधी पर समुद्र सिर्फ १२० फुट ही गहरा है। बम्बईसे वेरावल तककी इस आधीमें खभातकी पूरी खाडीका समावेश होता है और पोरबन्दर तथा द्वारकासे लेकर कच्छकी सारी खाडी तकका प्रदेश सिर्फ ५० फुट गहरे पानीसे भरा है। इसी प्रकार पूर्वमें ओरिसामें महानदीके मुखसे लेकर गगा तथा ब्रह्मपुत्रके मुहाने तकका सारा भाग इसी प्रकारकी छिछली विस्तृत जमीनसे बना है व समुद्रमें बहुत दूर तक फैला है जो ७५० फुट ही गहरा है।

इस आधीसे जब हम गहरे समुद्रकी तरफ आगे बढे जहा यह ढाल अचानक सीधा नीचेकी ओर बडी गहराईमें चला जाता है। कहीं तो यह आधी खड़ी दीवारकी भांति होती है। यहाका समुद्र अधिकतर तो अधकारपूर्ण ही है। यहा वनस्पति पैदा नहीं होती। यहांपर जीव एक दूसरेको मारकर ही अपना पेट पालते है। जब ज्वार आता है अथवा जब भूकप होता है तब समुद्रकी लहरें ऐसा प्रचड लावारास दबती जाती हैं। जापान फिलिपाइन्स

अटलांटिका तरह भी ऐसा ही है। उत्तर अटलांटिकमें आइसलैंडके पास शुरू हुई १०००० मील लम्बी 'अटलांटिक रीज' नामकी पर्वतश्रेणीमें कई उत्तुंग शिखर, गहरी खन्दकें तथा विशाल खाइयाँ हैं। इसके कुछ शिखर उत्तरमें एज़ोरस, दक्षिणमें त्रिस्तान द' कुन्हा नामके टापुओंके रूपमें समुद्रके ऊपर सिरको उठाते हैं। धरतीपर स्थित सबसे लम्बी एण्डीज पर्वतश्रेणीकी अपेक्षा यह अटलांटिक रीज दुगुनी चौड़ी है। इसका सबसे ऊंचा शिखर एज़ोरसमें पीको (pico) टापूके रूपमें समुद्रतलसे लगभग २७,००० फुट ऊंचा है। इसका सातसे आठ हजार फुट जितना हिस्सा पानीके बाहर रहता है। टापूको छोड़ इस पर्वत श्रेणी पर पांच हजारसे दस हजार फुट गहरा पानी है। यह पर्वतमाला ज्वालामुखीकी प्रक्रियासे बनी है। ऐसेंशन, त्रिस्तान द' कुन्हा वगैरा ज्वालामुखी टापू उसकी गवाही

अटलांटिक महासागरके तले परकी दस हजार मील लंबी पर्वतमाला—अटलांटिक रीज

देते हैं। अटलांटिकमेंसे यह पर्वत श्रेणी अफ्रीकाके दक्षिण भागका चक्कर काटकर हिंदमहासागरमें पूर्वकी तरफ बढ़ती है। अन्य किसी भी महासागरकी पर्वतश्रेणीकी इस अटलांटिक रीजसे तुलना नहीं हो सकती, परंतु चौड़ाई और गहराईमें उसे भी मात दे ऐसी एक पर्वतश्रेणी भारतके दक्षिणसे शुरू होकर हिन्दमहासागरके आरपार होकर ठीक दक्षिण ध्रुव तक चली गई है।

अटलांटिक रीज (पर्वतमाला) पृथ्वीके गर्भमें बनी इतनी लम्बी दरारका ही निशान है। यह पर्वतमाला उस दरारसे निकले लावारससे बनी है। आज भी अटलांटिकमें जो भूकंप होते हैं उनका कारण यही है।

पृथ्वी परके पहाड़ों और समुद्रके अन्तर पहाड़ोंमें सबसे बड़ा अंतर यह है कि पृथ्वीपरके शिखर हवा-पानी आदिसे इतने तो घिसते जाते हैं कि कालान्तरमें नाम मात्र ही रह जाते हैं जब कि समुद्रकी पर्वतमालाएँ अपने असली रूपमें अभी तक सुरक्षित हैं। २५ करोड़ वर्षोंसे भी अधिक पुरानी हमारी सह्याद्रि पर्वतमाला और दक्षिणके उच्च पठारके स्वरूप उसके पश्चात भूकंप वरसात गरमी ठंडी नदी-नाला वगैरासे कितने बदल गए होंगे! जबकि उसी लावारससे बना भारतके दक्षिणमें हिंदमहासागरमें डूबा उच्च प्रदेश उसी स्थितिमें सुरक्षित होगा। जब सह्याद्रि और विन्ध्याचल घिसकर नामशेष रह जाएँगे और हिमालय पर्वतमाला घिसकर जीर्ण शीर्ण हो जाएगी उस समय भी अटलांटिक पर्वतमाला और हिंदमहासागरकी यह पर्वतमाला लगभग वैसी ही रहती होगी।

खण्ड : ४

प्रशात सागर स्थित हवाई टापुआरी न
टापूके प्राकृतिक वातावरणम तन्मय इ
अलकार भी वनस्पतिक

१० : जीवनका प्रभात

हमने पृथ्वी और ममद्रके ज मकी लम्बी सवारी देखी। पहाडोके ज म और मत्युकी झन्क भी देखी। पथ्वीके ज मके अरबा वर्षोंके बाद भी यह जगत निर्जीव रहा। जरा कल्पना करें कि पथ्वीके इतन बडे हिस्सेको अपनी लहरामे आलाडित करना समुद्र घहराता हा पर उसम एक छाटेसे छोटा जीव तक न हा। धरती पर पहाड, खाइया खदके और मदान तथा गुफाएं हा पर कही भी सूक्ष्मतम जीव ता क्या घास काई या फफदी भी न हा। वसा दृश्य हागा। पथ्वी बिलकुल नग्न और वीरान। परन्तु अ तम स्थिति बदली और समुद्रम जीव पदा हुए।
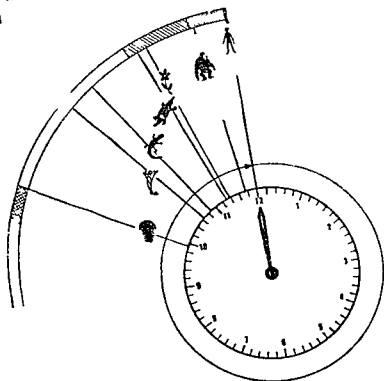
वनानिक हकीकत विनोदी ढगसे कहना चाह ता कह सकत हैं कि पृथ्वीपर जीवका ज… ब्रह्माकी घडीम रातके ना बजे हुआ और मनुष्यका जम ता रात पान बारह बजे हुआ…

जीवनका प्रभात

यह गमे ! आइए देखें। अगर पृथ्वीके जीवनकालको एक वर्ष समय लें और मान लें कि जनवरीकी पहली तारीखको पृथ्वीका जीवन शुरू हुआ तो इस नियम आठ महीने तक अर्थात अगस्तकी इक्तीस तारीख तक, पृथ्वीपर कहीं भी जीवन न था। इसके बाद दो महीने—सितम्बर, अक्तूबरमें बिल्कुल प्रायमिक दशाके, बिल्कुल क्षुद्र जीवोंका विकास हुआ जिनमें विषाणुसे लेकर जीवाणु तकके बिना अवयवके जीव थे। इसके बादके महीनोंमें कीड़े मछली पेट पर रेंगकर चलते सरीसृप आदि और पक्षी पैदा हुए। मस्तन तो बहुत बादमें—सितम्बरके दूसरे सप्ताहमें पैदा हुए। और मनुष्य ? वह तो ३१ दिसम्बरकी रातको ठीक पौने बारह बजे जन्मा। अर्थात अगर पृथ्वीके इतिहासको—जीवनका एक वर्षका मान लें तो मनुष्यका इतिहास तो मात्र पन्द्रह मिनटमें ही पूरा हो जाता है। और जबसे मनुष्यने अपना इतिहास लिखना शुरू किया, उसे तो अभी एक मिनट ही हुआ है। यह तुलना ब्रिटेनके प्रख्यात प्राणीशास्त्री, जीवशास्त्री रिचार्ड केरिंग्टनने कितने सुन्दर ढंगसे पर कितने वैज्ञानिक ढंगसे की है।

विज्ञानशास्त्रीने पृथ्वीके इतिहासको समझनेके लिए उसका केलेंडर अर्थात पंचाग भी बनाया है। जैसे वर्षका विभाजन ऋतुओं और महीनोंमें किया गया उसी प्रकार इस पंचागको युगों (eras) और कालोंमें (periods) में बांटा गया है। उत्तर अमरिकामें मानिटोबा तथा ओंटारियोमें तीन अरब वर्ष पुरानी तथा रशियामें कारेलिया द्वीप समूहोंमें उससे भी अधिक पुरानी चट्टानें मिली हैं जिनसे अब पृथ्वीकी आयु साढ़े चार अरब वर्षकी मानी जाती है। तीन अरबसे साढ़े चार अरब वर्षोंके इस युगको अति प्राचीन युग (archeozoic era) कहा जाता है। ऐसा माना जाता है कि तीन अरब वर्ष पहले प्रथम जीव पैदा हुआ होगा परन्तु इसका कोई सबूत नहीं मिला है।

उसके बाद दूसरा युग—जीवनारंभका युग आता है (proterozoic era) जो साठ करोड़से तीन सौ करोड़ वर्ष (तीन अरब) पहले रहा था। यह युग पृथ्वीपर जीव सृष्टियोंके विनाशका एवं पृथ्वीपर बनी अनेक घटनाओंका युग था। माना जाता है कि अस्थिहीन जीव इसी युगमें पैदा हुए थे।

इसके बादका युग आदि जीवयुग (paleozoic era) के नामसे पहचाना जाता है, जो साढ़े बाइस करोड़से साठ करोड़ वर्ष पहले रहा था। यह युग जीव-सृष्टिके विकासका तथा पृथ्वीपर घटी महत्त्वकी घटनाओंका युग है। इसमें इसे मुख्य छ विभागोंमें विभाजित किया गया है। इसका सबसे पुराना विभाग है पचास से साठ करोड़ वर्ष पहलेका जिसे केम्ब्रियन काल (cambrian period) कहा जाता है।

उस समय अमेरिकाके अधिकांश भाग पर समुद्र फैल गया था और पृथ्वीपर जलके स्थानपर स्थल और स्थलके स्थान पर जल जैसी अनेक घटनाएं घटित हुई थी। रीढ़ और अस्थि पंजर रहित जीवोंके जो अश्मीभूत अवशेष मिले हैं वे इसी कालमें शुरू हुए हैं।

इसके पश्चात चालीससे चवालीस करोड़ वर्ष पहलेका युग (silurian period) आता है जब उत्तर अमेरिकाका बड़ा हिस्सा दूसरे हिमयुगके बर्फके नीचे दबा हुआ था। उस समय समुद्रमें शीपपाद प्राणी (अष्टपाद वगैरा) अधिक थे। उसी समय पाठवंशा (रीढ़ और हड्डियोंवाले) प्रथम जीवोंका जन्म हो चुका था।

उसके बाद पताम करोडस चालीस करोड वर्ष पूर्वका काल डेवोनियन (devonian) काल था जबकि समुद्रमें मछलियोंका जन्म हुआ था। इतना ही नहीं उसी समय प्रथम जीव जो समुद्रसे बाहर जमीन पर भी आए और उभयचर (amphibian) अर्थात जमीन तथा समुद्र मल्लासे जी सके ऐसे जीव पैदा हुए।

इसके पश्चातका काल सत्ताइससे पतीस करोड वर्ष पुराना कर्ब प्रस्तर (carboniferous) काल है। वह हमारे लिए बहुत महत्त्वका है। मनुष्यके जन्मका तो अभी करोडो वर्षोंकी देर थी। पर उसके लिए खनिज कोयला बनना शुरू हो चुका था। और पृथ्वीपर अत्यंत घन जंगल भी उग आए थे। इन्हीमें पहली बार कीडे पैदा हुए थे तथा उभयचर जीवोंकी वृद्धि हुई थी। उस समय अमेरिकाके युनाईटेड स्टेट्सके मध्य भाग पर अंतिम बार समुद्रका पानी आया था।

इसके पश्चातका काल प्राचीन जीवांत (permian) काल कहा जाता है। यह युग साढे बाईस करोडसे साढे सत्ताइस करोड वर्ष पहलेका था। यह वह काल था जब भरतखंडके दक्षिणमें धरतीमें दरारें पडी थी और उनमेंसे बार-बार लावारस निकलकर दक्षिणके उच्च प्रदेशका निर्माण कर रहा था। उसी कालमें तीसरा हिमयुग भी आया था जो आस्ट्रेलिया और भरतखंड पर भी छा गया था। जर्मनी और पोलेंड परसे हटता हुआ समुद्र उस समय दुनियाकी सबसे बडी नमककी खान बना रहा था। उस समय पट पर रेंगनेवाले प्राणी पैदा हो चुके थे तथा जंगल शंकुद्रुम (शंकु आकारके चीड, देवदार आदिवृक्ष)से भरा था।

इस प्रकार आदि जीवों (paleozoic युग)के छ युग समाप्त होते हैं। अब हम उनसे अधिक महत्त्वके मध्य जीवन (mesozoic) युगमें आते हैं जो कि सात करोडसे लेकर साढे बाईस करोड वर्ष पहले तक था। उसको तीन कालोंमें विभाजित किया गया है। पहला काल त्रिस्तर काल (triassic period) अठारह करोडसे साढे बाईस करोड वर्ष पहले था। उस समय सरीसृप वर्ग (reptiles)के प्रारम्भ कालके महाकाय डिनासौर (dinosaur) प्राणी पृथ्वीपर घूमने फिरने लग थे। सरीसृप वर्गके कुछ जीव पृथ्वीपरसे समुद्रमें फिरसे चले गए। स्तन्य वर्गके (दूधवाले) प्रथम प्राणी भी उसी कालमें जन्मे, पर वे बहुत छोटे थे और सही मानोमें उनके स्तन भी न थे, उदाहरणार्थ प्लेटिपस और कांगारू।

इसके पश्चात साढे तेरहसे अठारह करोड वर्ष पहले जुरा (jurassic) कालमें सरीसृप वर्गमें प्रथम उडनेवाले पक्षी बने। इन पक्षियोंके शरीर पर पंख तो नहीं थे पर चमडी ही पंख थी और चोंचमें दांत थे।

उसके बाद सात करोडसे साढे तेरह करोड वर्ष पहले खडिका (cretaceous) कालमें जब उत्तर अमरिकामें रॉकीज पवनमाला तथा दक्षिण अमरिकामें पृथ्वी पर सबसे लम्बी एंडीज पवनमाला और उन दोनोंको जोडनेवाली पनामाका भूडमरूमध्य समुद्रमेंसे बाहर आया तब यूरोपका अधिकांश भाग और उत्तर अमरिकाका आधा भाग समुद्रमें डूब गया था। इंग्लंडकी चाक (chalk) अथवा चूनेके बने प्रसिद्ध करार समुद्री जीवोंके द्वारा बन रहे थे उस समय पृथ्वी पर पेटके बल चलनेवाले सरीसृप जीवोंका ही साम्राज्य था। परन्तु उस समय महाकाय दिनासौर प्राणियोंका विनाश हो रहा था। इस समय पंखवाले अनेक सरीसृप हवामें उड भी रहे थे।

अब मध्यजीवन (mesozoic) युगके तीन कालोंको पूरा करके हम मध्योत्तर जीव युग (cenozoic era) में प्रवेश करते हैं। इसके दो काल हैं। पहला ततीय काल (tertiary period) जो एक करोडसे सात करोड वर्ष पूर्व था, जिसमें हिमालय, आल्प्स काकेशस, पिरनीज और एपेनाइन्स आदि पर्वतमालाओंका सर्जन हुआ। उसी समय यूरोपमें विसुवियस और एटना ज्वालामुखी पर्वत फटने लगे थे और नए नए ज्वालामुखी बनने लगे थे। कोलम्बियामें इसी समय दो लाख वर्गमील जमीनपर लावारस फैल गया था। दुनियामें अनेक स्थानोंपर जहां जल था वहां स्थल और जहां स्थल था वहां जल हो रहा था। जिन चूनेके पत्थरोंमें इजिप्तके पिरामिड बने हैं वे इसी जमानेमें बने थे। हो सकता है सौराष्ट्रमें बरडा पर्वतमें जो चूने और रेतके पत्थर मिलते हैं वे भी इसी युगमें बने हों। यह वह युग था जब मानवके जन्मका समय नजदीक आ रहा था और इसीसे प्रकृति उसकी सुख सुविधाओंके लिए फल, फूल दूध शहद, अनाज आदि पैदा करने लगी थी। दूध देनेवाले उच्च श्रेणीके सस्तन प्राणियोंका जन्म इसी समय हुआ था। अरबों वर्षों तक पुष्परहित प्रकृतिमें अब क्रांति पैदा हो गई थी और परिणामस्वरूप रंग बिरंगे फूल तथा सुगंधित व उत्तम फल इस कालमें पैदा होने लगे थे।

अन्तमें एक करोड वर्ष पहले शुरू हुआ नूतनतम (pleistocene) काल आता है जो आज चल रहा है। पिछला हिमयुग भी इसी कालमें आया था जिसका अब अन्त हो रहा है। जल और स्थलपर इस युगमें अनेक परिवर्तन हुए हैं। गाय घोडा भैंस हाथी ऊँट, बकरा भेड, हिरन, चमगीदड, ममं लंगूर, बन्दर और अन्तमें मनुष्य इसी युगमें पैदा हुए। साथ ही सर्वोत्तम प्रकारकी वनस्पतिका भी विकास इसी युगमें हुआ। लाखों वर्षों तक जानवरकी स्थितिमें रहकर पिछले बीस हजार वर्षोंमें मानवने प्रगतिकी है। पर असलमें तो मानवने पिछले पाँच हजार वर्षोंमें ही उन्नतिकी है। और विज्ञानके क्षेत्रमें तो अभी पिछली सदीमें ही उसकी तरक्कीका प्रारम्भ हुआ है। उसमें भी वैज्ञानिक सुख सुविधाएँ तो मानवने पिछले पचास वर्षमें ही पायी हैं। यों कहें कि ब्रह्माकी घडीके अनुसार तो मानवने वैज्ञानिक प्रगति मात्र कुछ ही सेकण्ड पहले शुरू की है।

यह तो हुआ पृथ्वीका पचांग। अब हम प्रथम जीवके प्राकट्यसे लेकर आज तककी प्रगतिकी भव्य एवं आश्चर्यजनक सवारी देखें।

आप जानते हैं कि जिस प्रकार मकान एक एक ईंटके जोडनेसे बनता है उसी प्रकार हमारा शरीर भी एक एक करके अरबों कोषोंका बना है पर कुछ जीव एककोष वाले भी होते हैं। अर्थात जीव मक्षिका (एवं वनस्पति मक्षिका भी) प्रारम्भ एककोषी जीवसे हुआ। परंतु पृथ्वीके जन्मके बाद करीब डेढ अरब वर्ष तक तो पृथ्वीपर एककोषी जीव भी नहीं था और इन एककोषी जीवोंके उत्पन्न होनेके लिए योग्य परिस्थितियाँ भी नहीं थीं।

कोष बननेके लिए मूल तत्व ऑक्सीजन कार्बन, नाइट्रोजन गंधक पोटेशियम कैल्शियम फास्फोरस आदिकी आवश्यकता होती है। जब पृथ्वी ठंडी हुई उस समय उसमेंसे कार्बन डाइ आक्साइड तो खूब निकली थी। उस समयका वातावरण उससे तथा नाइट्रोजनसे भरा था और ये रासायनिक द्रव्य पानीमें भी घुले हुए थे। पर आवश्यकता थी अनुकूल परिस्थितियोंकी जिससे कोषोंका सर्जन हो सके। इन सब रसायनोंके संयोजनसे पहला जीव कोष कैसे बना यह हम

नहीं जाना। प्रयोगशालामें अनेक प्रयत्नोंके पश्चात् भी कोई सजीव कोश उत्पन्न नहीं किया जा सका। कोश मुख्यतः प्रोटीनका बना होता है और प्रोटीन एमिनो-अम्लका बना होता है। प्रयोगशालामें एमिनो-अम्ल ही उत्पन्न हो सकता है। पर पहले जीव कोशके उत्पन्न होनेके लिए तो गरमी, सील और क्षारकी जरूरत थी। प्राचीन युगके समुद्रके पानीमें सब परिस्थितियां व इन सबका संयोग हुआ तभी तो प्रथम जीव-कोशका निर्माण हो सका, यह जीव भी अपने आपके विभाजनसे नए कोशोंका निर्माण कर सकता है अर्थात् वंशवृद्धि कर सकता है। यों तो इन रसायनोंसे हम भी कोश बना सकते हैं पर अगर उसमें जीव न हो और वह वंश-वृद्धि न कर सका तो ऐसे कोशमें और निर्जीव पदार्थमें कोई अन्तर नहीं रहता। अतः इस आदि कोशमें जीव कहांसे आया इसके विषयमें प्रयोगोंकी सिद्धिके अनुसार केवल अटकल ही लगायी जा सकती है।

सजीव सृष्टि और निर्जीव सृष्टिको जोड़नेवाली कड़ी विषाणु (virus) है। उसमें सजीव सृष्टिकी प्रकृति भी है और निर्जीव सृष्टिकी प्रकृति भी है। सर्दी, चेचक आदि जो रोग मानव और पशुओंको होते हैं उनके लिए तथा वनस्पति सृष्टिमें होनेवाले कुछ रोगोंके लिए विभिन्न विषाणु ही जिम्मेदार हैं। ऐसे ही विषाणुओंमेंसे एककोशी जीवोंकी उत्पत्ति हुई ऐसी विद्वानोंकी राय है।

सजीव सृष्टि निर्जीव सृष्टिसे दो तरह भिन्न होती है। सजीव सृष्टिको पोषण अर्थात् खुराक चाहिए और दूसरे वह वंशवृद्धि कर सकती है। कुछ आदि कोश तो मात्र लोह और गंधक जैसे खनिज पदार्थसे पोषण पाकर जीते हैं।

कालान्तरमें कुछ एककोशी जीवोंने हरे रंगका हरित द्रव्य (chlorophyll) बनाया। यह एक बड़ी क्रान्तिकारी घटना थी क्योंकि अब अनेन्द्रिय पदार्थों (तत्त्व) पर निर्भर कुछ जीव कोश सूर्य प्रकाशकी मददसे कार्बन-डाइऑक्साइडमेंसे आक्सीजनको अलग कर सकते थे तथा उस कार्बनको ग्रहण करके उस हरित द्रव्य तथा पानीसे अपनी खुराक बनाने लगे थे, यद्यपि जीवाणु और फफूंदी हरित द्रव्यवाले नहीं होते। वे अपनी खुराक भी नहीं बना सकते। इसीसे वे परोपजीवी रहे हैं। वे सेन्द्रिय पदार्थों अर्थात् अन्य जीव या वनस्पति अथवा अनेक मरे अंगोंके अवशेषको खाकर ही अपना पोषण प्राप्त करते हैं। परन्तु काई जैसी प्राथमिक श्रेणीकी वनस्पतियां तथा अनाज और फल उत्पन्न करनेवाली सभी विशेष विकसित वनस्पतियां सूर्य प्रकाशमें हरित द्रव्यकी मददसे, अलग-अलग क्षार और कार्बन डाइऑक्साइडसे भोजन बना लेता है और उनमेंसे आक्सीजन मुक्त करती है। इस प्रकार भविष्यके उच्च श्रेणीके जीवोंके लिए वातावरणमें आक्सीजनका संचार होने लगा।

पानीमें जो आदि जीवकोश थे उनमेंसे सभी हरितद्रव्य नहीं बना सके, अन्य कोश हरित द्रव्य युक्त जीवकोशोंको खाकर अपना पोषण पाने लगे। इस प्रकार आदि-जीवकोश जीवसृष्टि और वनस्पति सृष्टिके रूपमें बंट गए। जो हरित द्रव्यवाले आदि-जीवकोश थे उनमेंसे काईसे लेकर अनाज और फल देनेवाली वनस्पतियोंका विकास हुआ और जो आदिजीव हरित द्रव्यवाले नहीं थे वे हरित द्रव्यवाले जीवकोशोंको खाकर पोषण पाने लगे। उन्हींमेंसे चींटीसे लेकर हाथी और मानव तकके सभी प्राणी बने। मांसाहार करनेवाले प्राणी भी तो अंतमें वनस्पति पर ही

निर्वाह करते हैं क्योंकि जिस प्राणीका मांस खाया जाता है उस प्राणीका शरीर भी तो वनस्पतिमेंसे पोषण पाकर ही बना होता है।

कालान्तरमें इन्हीं एककोशी जीवोंका शरीर बहुकोशी बनने लगा। सामान्यतया एककोशी जीव अपने विभाजन द्वारा वंशवृद्धि करते हैं। जीव दो में विभाजित होनेपर उसमेंसे दो जीव हो जाते हैं। पर कभी किसी कारणसे एकके दो कोश होनेपर भी आपसमें विभाजन न होने पर, पहली बार द्विकोशी जीव बने तथा कालान्तरमें इन दो कोशोंमेंसे चार कोश, चारमेंसे सोलह कोश और सोलहमेंसे दो सौ छप्पन कोश हुए और ये सब कोश एक साथ रहने लगे। इस प्रकार अनेक कोशी जीवसृष्टि और अनेक कोशी वनस्पति सृष्टिका विकास होने लगा। यों अभी तो पानीमें ही रहनेवाली सजीव सृष्टिके प्राणियोंके शरीरमें प्राथमिक दशाके अवयव भी बनने लगे और वनस्पति सृष्टिकी शाखाएँ, पत्ते तथा तना वगैराका विकास हुआ। कालान्तरमें इन्हीं अनेक कोशीय जीवोंमें विशेष अवयव — पचनतंत्र, श्वसनतंत्र, प्रजननतंत्र, मलविसर्जनतंत्र आदिका विकास होने लगा। प्रारम्भमें अनेक कोशी जीवोंके ऐसे अवयव न थे। मुरदा बादल मुँह नहीं होता पर वह सारे शरीरसे अपनी खुराक पाता है और उसी प्रकार मल विसर्जन करता है। उसके गलफड़े (श्वसनतंत्र) नहीं है। वह अपने सारे शरीर द्वारा पानीमेंसे प्राणवायु पाता है। प्रारम्भमें अनेक कोशी जीवोंके प्रजननतंत्र नहीं था। वे अपने पूर्वजोंकी भाँति ही अपने शरीरके विभाजनके द्वारा वंशवृद्धि करते थे। अभी भी मुरदा बादल ऐसा ही करता है और तारा मछलीने भी अभी अपनी यह शक्ति खोयी नहीं है। उस मछलीके जितने भी टुकड़े किए जाएँ वे सब स्वतंत्र रूपसे विकसित होकर पुनः अनेक तारा मछलियाँ बन जाते हैं।

यह तो सभी मानते हैं कि बिलकुल प्राथमिक दशावाले एककोशी जीवोंमेंसे सर्वोच्च प्रकारके मानव और वृक्ष जैसी सजीव सृष्टिका विकास हुआ। यह समझा भी जा सकता है परंतु अतींद्रिय निर्जीव पदार्थोंमेंसे सजीवका सर्जन कैसे बने इसका बड़े वैज्ञानिक भी मात्र कल्पना ही कर पाते हैं। प्रथम जीवके उत्पन्न होनेके लिए अरबों वर्ष लग गए। इसका कारण यह हो सकता है कि जीवकी उत्पत्तिके लिए आवश्यक रासायनिक क्रियाके लिए क्षार आदि उस समय समुद्रमें न थे। जब जलकी अति वृष्टि शुरू हुई तो पृथ्वी परकी सतप्त चट्टानों परसे पानी बहने लगा जो नीची भूमिमें जमा होने लगा अर्थात् उससे समुद्रका जन्म हुआ। समुद्र उस समय मीठा था। कालान्तरमें जमीनका क्षार घुलकर समुद्रमें इकट्ठा होने लगा। पर साथ ही समुद्रके मीठे जलमें भी अतिवृष्टिके कारण वृद्धि हुई। इससे समुद्रमें क्षार होनेपर भी उसकी मात्रा बहुत कम रही। इसीसे प्रथम जीवकी उत्पत्तिमें इतना अधिक विलम्ब हुआ। अंतमें हवा, पानी और पृथ्वीके संयोगमें एमिनो आम्ल और प्रोटीनके बननेके लिए अनुकूल सभी परिस्थितियाँ उपस्थित हुईं। तभी इस वीरान धरती और भयंकर नाद करनेवाले धधकते ज्वालामुखियोंके सामने, पानीमें सभी अनुकूल रासायनिक द्रव्योंके मिलनेसे आदि जीवका सर्जन प्रकट हुए जो कुछ अंशमें वनस्पति थे और कुछ अंशमें प्राणी थे।

सूक्ष्म जीवाणु (becteria) वनस्पति सृष्टिके आदि पूर्वज माने जाते हैं। फिर भी वे प्राणिसृष्टिकी प्रकृतिवाले हैं। एककोशी जीवोंमें इस बैक्टेरियाका भी समावेश होता है। उनमेंसे कुछ जीवाणु तो इतने सूक्ष्म होते हैं कि सुईकी नोक पर वे तीन लाखसे भी अधिक संख्यामें
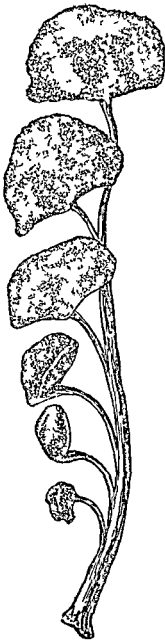
मुरदा बादल कई आकार प्रकारके होते हैं उनमेंसे एकका चित्र।

रखे जा सकते हैं। ये सभी एककोशी जीव अनुकूल परिस्थितियोंमें प्रति २० से ३० मिनटमें, स्वयं विभाजित होकर वृद्धि पाते हैं और अपनी संख्याको दुगुनी करते रहते हैं। इस तरह १५ घंटोंमें एक जीवाणुकी संख्या एक अरब जितनी हो जाती है और तीस घंटोंमें इनकी इतनी संख्या हो जाती है कि सहसा ये आगमें भी नहीं देखे जा सकते। इस प्रकार एक जीवसमूह बने जीव ८५०० घन गज जगह रोकते हैं। अथात इनसे मार्गाटीक सौ टिन्न भर जायेंगे। परन्तु सभी जीवाणु मानवके लिए उपद्रवी नहीं हैं। सौभाग्यसे उपद्रवी जीवोंकी अपेक्षा उपकारक जीवोंकी संख्या अधिक है।

जीवाणुओंके भस्मीभूत अवशेष तो रहते ही नहीं फिर भी एक अरब पूर्वकी जो चट्टानें हैं उनमें जीवाणुओंके शरीरमेंसे बचे लोह तत्त्वकी निशानियाँ मिली हैं।

जीवाणुओंका एक विकसित वर्ग अर्थात सपुच्छ या पूछवाला वर्ग भी है। उनके एक या एकसे अधिक पूछें होती हैं। प्रवाहोंमें अपनी पूछको हिलाकर ये जीव आगे चलते हैं। वनस्पति और प्राणिसृष्टिकी शृंखला रूप ऐसे कुछ सपुच्छ जीवाणु हैं जिनमें हरित द्रव्य होता है और ये अपने लिए आवश्यक पोषण स्वयं पैदा कर लेते हैं। परन्तु अँधेरेमें ये जीवाणु अन्य वनस्पति प्रकारके कोश खाकर अन्य प्राणियोंकी तरह भी अपना जीवन निर्वाह करते हैं। प्राणिसृष्टि और वनस्पति-सृष्टिको जोड़नेवाली कड़ी स्वरूप इन छोटे जीवोंसे आगे बढ़कर अब हम प्राणिसृष्टिके आदि प्राणीका परिचय करें कि जिसका नाम सभीने सुना होगा पर कद्र लोगोंने उसे देखा नहीं होगा। वह है एमीबा।

उत्क्रान्ति क्रमसे आगे बढ़कर नहानेमें इस्तेमाल होनेवाले मुरदा बादल जैसे अनेक कोषी जीवोंका उद्भव हुआ। छिछले समुद्रके तलमें उगनेवाला यह मुरदा बादल पौधे सा लगता है पर है तो वह एक प्राणी ही। उसे किसी छलनीमें घिस जानेपर जो कोशकणका मावा-सा नीचे गिरेगा उसमेंके कोशकण फिर आपसमें जुड़ जाएँगे और उनमेंसे फिरसे मुरदा बादल बन जाएगा। पुराणोंके जरासंध जैसा ही है न!

माटे पानीमें तरती एककोशी सूक्ष्म वनस्पतिसे काईसे लेकर अनेक कोषी बड़ी काईका शैवाल (काई) वर्गमें समावेश होता है। उनमें कुछ काइयोंके पौधे या बेलें तो सौ-सौ फुट लम्बी होती हैं।
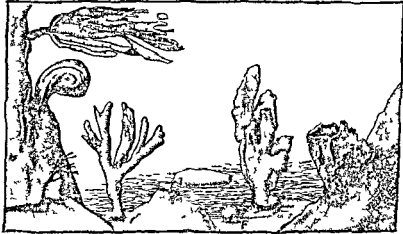
समुद्रके तले पर उगनेवाले मुरदा बादलके कुछ प्रकार

इस उत्क्रांतिके क्रमसे अमीबासे आगे बढ़कर पेरामेशियम (paramecium) जीवकाय बना। उसके शरीरमें दो हजार छोटे बारीक केश हैं जो पतवारका काम देते हैं। उनके पचनतन्त्र भी होता है। यह जीव इतना छोटा है कि इसे साधारणतया देखा या पहचाना नहीं जा सकता।

केशपाद अमीबासे अधिक विकसित है। उसके दो जीवकेन्द्र हैं। एक केन्द्रसे विभाजनके द्वारा वंशवृद्धि होती है और दूसरा छोटा जीव-केन्द्र प्रजननलिंगके प्राथमिक स्वरूप सा है। उन जीवोंमें नर मादा जैसे भिन्न प्रकार नहीं हैं। पर दो अलग वंशके केशपादजीवोंको यदि पास रखा जाए तो वे एक दूसरेके इस छोटे जीवकेन्द्रको अपने मुखसे चूसते हैं। फिर अलग होकर अपने शरीरका विभाजन कर वंशवृद्धि करने लगते हैं। इस प्रकार उत्क्रान्त जीवोंमें लिंगसे होनेवाले सृजनका यह अति प्राचीन प्राकृत रूप हो सकता है।

पचास करोड़से साठ करोड़ वर्ष पूर्वके उत्पन्न ये क्षुद्र जीव अपने विकासक्रममें प्रगति करने लगे। एककोशी जीवोंसे अनेक कोशी बने जीव विविध प्रकारके अवयवोंका भी विकास करने लगे। आज हम बिच्छू, कनखजूरे, मकड़ी, तारकमत्स्य, घोंघे या केंकड़े वगैरा जैसे प्राणी क्षुद्र-से लगते हैं। फिर भी एक छोटेसे एककोशी जीवसे प्रगति करते ये इतने बड़े सावयव जीव बने यह कम आश्चर्यकी बात नहीं है। पर इन्हें इस रूपमें आनेमें पचीस करोड़ वर्ष लगे हैं। आइए, अब हम इस पचीस करोड़ वर्ष पुरानी यात्राका दर्शन करें।

मुरदा बादलके दो और प्रकार

चालीस करोड़ पचास करोड़ वर्ष पहले छिछले समुद्रके तलेमें तारक मत्स्य अथवा तारा मछली धीरे धीरे सरकती थी। आज भी कभी किनारे पर पड़ी तारा मछली मिल जाती है। इसमें उस समयकी तारक मछली कुछ भिन्न नहीं थी। इसी प्रकार तले पर सीप शंख और मोती देनेवाली बालू सीप भी था। उस समय यह तारक मछली इन सीपों पर सवार होकर अपने जहरसे इन्हें बेहोश-सा कर उनकी सीपको खोलकर, अंदरकी उनकी मुलायम काया खा जाया करती थी। मुरदा बादलमें तारा मत्स्य तककी उत्क्रान्ति भी काफी बड़ी बढ़त थी। क्योंकि अभी भी मुरदा बादल अपना खुराक पाने के लिए अपने स्थानसे हटता नहीं। ज्वार भाटेका पानी इसके शरीरमेंसे गुजर कर इसे पोषण देता है जबकी तारा-मछली तो अपनी खुराकको खोज स्वयं सरककर कर लेती है।

समुद्रके इस प्रकाशवाले छिछले पानीमें समुद्री ककड़ी (sea cucumber), समुद्री कमल (sea lilies) आदि पटवाले प्राणी धीरे धीरे सरकते थे। उस समयके किसी भी जीवमें हड्डियां तो न थी। पर अनेक जीवोंने समुद्रके पानीमेंसे कैल्शियम फास्फोरस कार्बन सिलिकोन आदि रसायनोंकी सहायतासे (मुख्य तो कैल्शियमसे) अपने मुलायम शरीरके आसपास कड़ा कवच बनाना शुरू कर दिया था। सीप और शंख उसके उदाहरण है। उनके कवच पत्थर जैसे कड़े होते है। केकड़े और झींगेने अपने शरीरपर महीन कवच बनाया। हम ऐसा कह सकते हैं कि यह कवच उनकी चमड़ी भी है और हड्डी भी। हालांकि सही मानोंमें यह न तो चमड़ी ही है और न हड्डी ही मात्र शृंगद्रव्यसे बना एक आवरण ही है।

केम्ब्रियन कालीन समुद्री जीव सृष्टि
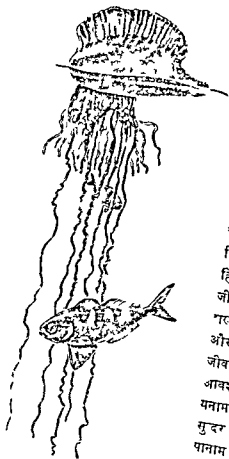
पोर्चुगीज मेन ऑफ वार

इस समुद्री जीवके तन्तु विषैले होते हैं। इनमें फँसी हुई मछलीका रस ये चूस लेते हैं परंतु कुछ मछलियाँ ऐसी भी होती हैं जो इन्हीं तन्तुओंमें आश्रय भी पाती हैं।

मूँगा बनानेवाले कीड़े अपने शरीरसे कैल्शियम निकालकर अपना आवरण बनाने लगे और तज्ञास वनवहि करने लगे। कैल्शियमवाले ये जीव मूँगेकी और चूनेकी चट्टान बनाने लगे। ब्रिटनकी इनत चट्टान और साराष्ट्र किनारे पर की चूनेके पत्थरकी खान इन्हीं बनाया है। हिमालय और राजस्थानमें भी जो चूनेके पत्थर हैं वे इन्हीं जीवोंने बनाए हैं। कच्छकी धरतीमेंसे जो सपष्टग नामक शंख मिलते हैं वे भी समुद्री जीवोंने बनाए हैं। और सीपोंसे भी धरती बनी है। इस प्रकार इन समुद्री जीवोंने नई धरती बनानेमें भी साथ दिया है। इनके लिए आवश्यक कच्चा माल इन्होंने समुद्रके जलमें घुले रसायनोंसे पाया था। मूल्यवान मोती तथा अँगूठीमें पहननेके सुंदर लाल मूँगे भी इन्हीं जलचरोंकी करामात है। ये भी पानीमें घुले रसायनोंसे ही बनते हैं।

डायाटाम नामकी एक सूक्ष्म एककोषी वनस्पतिका नयी धरतीके निर्माणमें कितना बड़ा हाथ है उसका खयाल हममेंसे बहुतोंको नहीं है। काईके वर्गकी यह सूक्ष्म वनस्पति पानीके ऊपर तैरती रहती है अथवा किसी ठोस पदार्थसे चिपकी रहती है। इसकी काया सिलिकानसे लिपटी होती है। यह जैसे-जैसे मरती जाती है तल पर बैठती जाती है जिससे चट्टानें बनती जाती हैं। कालान्तरमें जब कभी भूकम्पसे समुद्र हट जाता है तब ये सिलिकानकी चट्टानें बाहर आ जाती हैं। ये चट्टानें डायाटोमाइटके नामसे पहचानी जाती हैं। गरमी और आवाजके लिए मन्दवाहक होनेसे ये इन दोनोंसे रक्षण करती हैं।

डायाटाम नामक एक प्रकारकी सूक्ष्म वनस्पति

ऐसा माना जाता है कि सूक्ष्म जीवाणु के रूपमें आदि जीव करीब तीन अरब वर्ष पहले जन्मे थे। ६० करोड़ और ३०० करोड़ वर्षके बीच कभी बिना रीढ़ रज्जुके जीव पैदा हुए थे। ये सभी जीव पानीमें ही थे। कालान्तरमें कुछ जीव ज्वार भाटेके समय कभी किनारे पर तो कभी पानीमें रहनेका प्रयत्न करने लगे। केंकड़ेकी तरह इन जीवोंने अपने गीले गलफड़ोंकी सहायतासे हवामें रहना सीखा। बादमें धीरे धीरे इनके अन्दर फेफड़े विकसित हुए जिससे पानीमेंसे प्राणवायु लेनेके बजाय सीधे हवामेंसे ही प्राणवायु ली जाने लगी। यह एक क्रान्तिकारी विकास था। आजसे करीब ४० करोड़ वर्ष पहले इस प्रकार कुछ जीव पहली ही बार जलमेंसे किनारे पर चढ़कर रहने लगे थे। समयके बीतनेपर इन जीवोंके कदमें वृद्धि और शरीर रचनामें भी सुधार होता रहा। बिना हड्डीके केंचुएके समान शरीरवाले या सिर्फ कवचमें रक्षित मुलायम देहवाले प्राणियोंके शरीरमें धीरे धीरे अस्थि-पंजरकी रचना होने लगी। मस्तिष्कका विकास हुआ और रीढ़ रज्जुके साथ ज्ञानतंतुओंका भी विकास होने लगा। रीढ़ रज्जुके रक्षणके लिए शरीरमें हड्डियोंका ढांचा बना। यों रीढ़ रज्जुवाले जीवोंका विकास पहले तो पानी हीमें हुआ और यह भी आजसे करीब ४४ करोड़से ५० करोड़ वर्ष पहले।

अब पृथ्वीपर आश्चर्यजनक परिवर्तन होने लगे थे। जैसे प्राणियोंकी उत्तरोत्तर प्रगति हो रही थी उसी प्रकार वनस्पति सृष्टिमें भी उत्क्रांति आगे बढ़ रही थी। पहले एककोषी जीव बने फिर कई जीवोंने सूर्य प्रकाशमें हवामेंसे कार्बन डाईआक्साइड और पानीमेंसे कुछ अन्य तत्व लेकर, इन सबसे अपनी खुराक बना लेना सीख लिया। ये जीव वनस्पति-सृष्टिके रूपमें विकसित हुए। पानीकी सतहपर तैरती काई वास्तवमें एककोषी वनस्पति ही है। कई बार हम पत्थरपर चिपकी काई भी देखते हैं यह अनेक कोषी वनस्पति है। इसीसे आगे विकास पाकर हंसराजके पौधे बने, बेलें बनीं और पेड़ बने। पर इन बेलों पौधों या पेड़ोंमें फूल नहीं लगते थे। और फल ही न हों तो फल या बीज कहांसे आएँ? यह वनस्पति अपने सूक्ष्म बीजाणुओंके द्वारा फलकर विकास पाती थी।

हमारे पूर्वज जो एककोषी जीव थे, वे कालान्तरमें अनेक बहुकोषी समुद्री जीव बने फिर अनेककोषी मछली उसके पश्चात पेटके बल धरतीपर रेंगनेवाले प्राणी उसके बाद गिलहरी जैसे मस्तन प्राणी, फिर पूछवाले बन्दर और उनके बाद बिना पूछके बानर बने। जीवोंके विकासकी सवारी इस तरह आगे बढ़ी, जिसकी कहानी पृथ्वीरूपी पुस्तकके चट्टानरूपी पन्नोंमें छपी हुई है।

रीढ़ रज्जु विहीन प्राणियोंकी भांति ही रीढ़ रज्जवाले प्राणी भी पानी हीमें जन्मे और ये अन्तमें सर्वोपरि बन गए। उसके कारण जानने योग्य हैं। उनके अस्थिपंजर होनेसे वे सीधे खड़े होकर इच्छित दिशामें गतिसे दौड़ सकते थे। मस्तिष्क तथा रीढ़ रज्जुओंको हड्डियोंका रक्षण मिलनेसे सारे ज्ञानतंतु-तंत्रका विकास हुआ। इससे वे चपल और कुशल बने। उन्हें दो कान दो आंखें, दो मूत्राशय, दो फेफड़े आदि महत्त्वके अंग मिलनेसे उन्हें रोग और दुश्मनके सामने टिक रहनेकी शक्ति भी मिली। आप सीप और तारा मछलीको देखें (जो असलमें मछली नहीं हैं) और सामान्य मछलीको देखें। दोनोंके जीवन व्यवहारमें कितना भारी अंतर है! एक निराधार सुस्त प्राणी है दूसरा द्रुत गतिवाला चपल है।
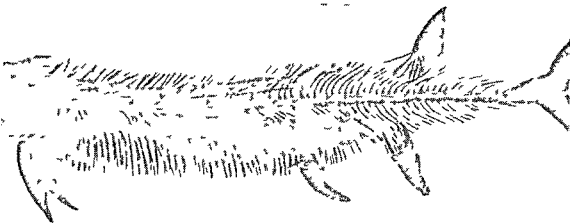
नौ करोड वर्ष पहले एक नौ फुट लम्बी मछली एक छ फुट लम्बी मछलीको निगल गई थी—वह उसके पेटमें देखी जा सकती है ये उनके अश्मीभूत अवशेष हैं।

रीढ रज्जु विहीन अधिक अच्छे जीवका मोटा अथवा पतला कवच होता है। सीप, शंख, कौडा, घोंघा आदिके कठोर कवच होता है पर उसके अन्दर तो नरम लदि जैसा ही शरीर होता है। हड्डियोंका स्थान ये कवच नहीं ले सकते।

घोंघसे अधिक विकसित जीव केंकडे तथा झींगे हैं। उनके शरीरका पदार्थ अपेक्षाकृत कठोर है और उसपर भी छिलके जैसा आवरण है। वे अच्छी तरह दौड या तैर तो सकते हैं परन्तु अस्थि-पंजरहीन जीवोंकी काफी मर्यादाएँ होती हैं। शरीर जैसे बढ़ता जाता है वैसे इनका कवच बढ़ता नहीं है। अतः बार-बार इन्हें कवच उतार फेंकना पडता है और जबतक नया कवच न आए निराधार, निश्चेष्ट पडे रहना पडता है। उन्हें चट्टानोंकी शरणमें रहना पडता है। केरलके समुद्रमें चट्टानोंपर इतनी बडी तादादमें झींगे होते हैं कि उनके शरीरका मावा डिब्बोंमें बन्द करके अमेरिका भेजा जाता है। जबकि दूसरी तरफ रीढ रज्जुवाली और अस्थि पंजरवाली मछलियाँ महासागरमें मुक्त विहार करती हैं।

कवचसे मुक्ति पाकर अस्थि पंजर व रीढ रज्जु पानेवाले प्राणी अब भाँति भाँतिके आकार ग्रहण करने लगे। या प्राणियोंकी नई-नई जातियोंका विकास हुआ। अब उनके कदको मर्यादामें बाँधकर रखनेवाला कवच न था, इससे अधिकाधिक बड़े कदवाले प्राणी भी बनने लगे। जो मछलियाँ केवल नदीमुख और खाडियोंमें ही रहती थीं वे अब बडे समुद्रों में भी फैल गई। उस समय जो महाकाय मत्स्य विकसित हुए उनके वंशज स्वरूप आज भी शार्क (sharks) तथा तवला मत्स्य (skates) वगैरा समुद्रोंमें विहार करते हैं। तवला मत्स्यके पक्षीकी तरह (हालांकि पक्षी की-सी नहीं) पंख होते हैं। चाबुक जैसी पूछ होती है और कुछ जातिकी मछलियोंके तो विद्युत अंग भी होते हैं। वह अपनी पूछरूपी चाबुकसे मारती है तो प्राणी घायल तो होता ही है अलावा

धरती पर जीवोंकी उत्क्रांति

पर दूर गई तब पृथ्वीमसे पानी चूसनेके लिए उसे जडोंकी जरूरत पड़ी, इससे उसने अपना जडोंका विकास किया और वह अधिकाधिक गहराईमें जाने लगी। साथ ही वह खुद भी बडी होने लगी। यों वनस्पतिमें विविधता आई। उसका कद बढ़ा और संख्या भी बढ़ी। वह अधिक गतिसे किनारेसे दूरकी धरतीपर आक्रमण करने लगी। जिस प्रकार विमानसे सैनिक दुश्मनोंके पीछे उतरकर नये प्रदेशोंपर कब्जा कर लेते हैं उसी प्रकार यह वनस्पति भी जब अपने लाखों बीजाणु (spores) पवनके जरिये दूर-दूर तक भेजने लगी। उनमेंसे जो अनुकूल वातावरण और अनुकूल स्थानपर उतरे वे उगने लगे शेष नष्ट हो गए। दुश्मनके प्रदेशमें उतरनेवाले सैनिकोंके पास अकेले भी टिकनेके लिए सभी साधन होते हैं उसी प्रकार यह आक्रमणकारी वनस्पति भी अपने वतन (पानी)से दूर आक्रमण करनेके बाद इस अपरिचित भूमिपर अपनेको जीवित रखनेके साधनोंका विकास करने लगी। पानीमें उगनेवाली वनस्पतिको पानी और पोषणको शरीरमें फैलाव लिए नसोंकी विशिष्ट रचना आवश्यक नहीं होती। सीधे खडे रहनेके लिए आवश्यक तने व डालियोंकी जरूरत नहीं होती, पर धरती पर पैर जमानेके बाद वनस्पतिको ऐसी अनेक वस्तुओंकी जरूरत पड़ने लगी। आजसे ३५ करोड वर्ष पहले ऐसी कुशल वनस्पतिका विकास हो चुका था। अलबत्ता वह आज की वनस्पति जैसी न थी। वास्तवमें उसमें तो अभी पत्ते भी नहीं लगे थे। उस समयके जंगल यदि देखे तो ऐसा ही लगता था जैसे वह हमारी पृथ्वी ही नहीं है। 'अंधोंमें काना राजा' वाली कहावतके अनुसार उस समय हंसराज (पौधा) जंगलका राजा था, पत्ते तो अभी सींक और चोई (Scales) जैसे थे।

इस प्रकार धीरे धीरे अधिक ऊँची और अधिक उन्नत दर्जेकी वनस्पतिका विकास होने लगा। ३०-३५ करोड वर्ष पहलेके अश्मीभूत तने भी तीन फुटके घेरवाले थे तथा ४० फुट जितने ऊंचे थे। जब इस प्रकार जंगल घने और वनस्पति अधिक ऊंची होती गई तो धरतीमें अधिक पानी और हवामें अधिक नमी रहने लगी। इससे वहां अधिक जीवोंके विकासकी सुविधा हो गई। उभयचर जीव यों तो जल तथा थल पर समान रीतिसे रहते हैं पर प्रजननके लिए उन्हें जलमें ही जाना पड़ता है। जो जल इन जंगलोंके गड्ढों या तालाबोंमें भरा रहा उनमें मेंढक पानीके कीड़े आदि उभयचर जीवोंका विकास होने लगा। मेंढकके बच्चे जब छोटे होते हैं तो उन्हें मछलीकी तरह गलफड़े होते हैं पर बड़े होनेपर उनके फेफड़े विकसित होते हैं इससे ये मेंढक नम तथा वनस्पतिवाली धरती पर विचरण करते रहते हैं पर प्रजननके लिए पानीमें जाते हैं।

धरती परके जीव मछलीमेंसे विकसित होकर आये हैं इससे उनमेंसे कुछमें मछलीकी कुछ विशेषताएँ आज तक रह गई हैं। उदाहरणके लिए पानीका सांडा, उसके पर होने पर भी—तथा सांप जिसके पर नहीं है—दोनों गति करनेके वक्त मछलीकी तरह अपनेको अंग्रेजी ~ जैसे आकारमें टेढ़ा मेढ़ा करके आगे बढ़ते हैं। सांप आकारमें ईल (eel) मछलीसे मिलते जुलते हैं। जो सांप समुद्रमें ही रहे उनके गलफड़े हैं जबकि धरतीपर अथवा मीठे पानीमें बसनेवाले सांपके फेफड़े होते हैं। पानीमें रहनेवाले सांप मगर कछुआ आदि सरीसृप जीव बहुत समय तक गहरे पानीमें डुबकी मारकर रह सकते हैं।

दुश्मनके प्रतिकूल प्रदेशमें भी जो छत्रीसैनिक अपनेको अनुकूल बना लेते हैं वे ही जी सकते हैं और जीत सकते हैं। उसी प्रकार पृथ्वी परके इस रोमांचक आक्रमणमें भी जो वनस्पति और

जीव धरतीके प्रतिकूल वातावरणमें भी उसके अनुरूप बन गये वे ही जीवित रह गये, बाकी सारे नष्ट हो गए।

इसलिये इस पथपर अनेक जीव भटक भी गए। उन्होंने हास्यास्पद कद और आकार ग्रहण किये। वे ऐसे मार्गपर गए थे जो कुछ आगे बढनेपर रुक जाता था। उनके विकासके लिए आगे मार्ग ही न था। इसमें प्रगतिके पथपर थोडी प्रगति कर वे रुक गए अथवा परिस्थितियोंके अनुरूप अपने शरीरका विकास न कर सकनेके परिणामस्वरूप अथवा प्रतिकूल परिस्थितियोंके अनुकूल होनेकी शक्ति न विकसित कर सकनेके कारण उनका नाश हुआ। एककोशी जीवमेंसे अनेक कोशी तारा मछली बनी पर उसका विकास वहीं पर रुक गया। और जीवोंने इससे कई गुना अधिक विकास किया। कुछ जीव पूछवाले बंदर बने पर उनका विकास वहीं पूरा हुआ। कुछ जीव महाकाय सरीसृप बने पर उनके शरीरों बडौल कद और आकार धारण किये थे। अगर रेलके डिब्बे जितने बडे पेटवाले डिनोसोरके जीव जितना छोटा मस्तिष्क हो तो वह इतने बडे शरीरकी देखभाल कैसे कर सके ! इस कारण उनके लिए सिर्फ एक ही मार्ग था—विनाशका।

करोडों वर्ष पहले नष्ट हुए एक महाकाय डिनोसोरका अस्थिपंजर। कदके अनुपातमें उसकी खोपडी कितनी छोटी है !

कुछ जीवोंको धरतीकी अपेक्षा पानीमें ही रहना अधिक अनुकूल लगा। इसमें लाखों या करोडों वर्षों तक जमीन पर भटकनेके पश्चात फिरसे वे समुद्रमें रहने लगे। परन्तु विकासमें तो आगे ही कूच हो सकती है पीछे हटना नहीं होता। पूंछवाला प्राणी बानर बन सकता है पर चिम्पांजी पीछे हटकर अपने पूर्वज ऊदबिलावके स्वरूपको नहीं धारण कर सकता। इससे जो प्राणी जमीन पर आकर फेफडे पा सके थे वे समुद्रमें जानेपर भी फिरसे गलफडे न पा सके। इसमें ऐसे प्राणियोंके लिए फिरसे जन्म जो उसका याद आसान काम नहीं था। उनको अपने पैर और पूंछको रूपान्तर करके गति पाने के लिए पंखोंके (fins) रूपमें करना पडा। पर सांस लेनेके लिए तो पानीके बाहर की हवा पर ही निर्भर रहना पडा।

व्हेल जैसे प्राणी कभी भी जमीन पर नहीं आते। फिर भी सांस लेनेको उन्हें भी समुद्रकी सतहसे ऊपर आना पडता है। सील और वॉलरसको आराम अथवा प्रजननके लिए किनारे पर आना पडता है। कछुआ भी अंडे देने किनारे पर तथा सांस लेनेके लिए पानीसे ऊपर आता है।

पर दूर गई तब पृथ्वीमसे पानी चूसनेके लिए उस जडाकी जरूरत पडी, इसमे उसने अपनी जडाका विकास किया और वह अधिकाधिक गहराईमे जाने लगी। साथ ही वह खुद भी बडी होने लगी। या वनस्पतिमे विविधता आई। उसका कद बढा और संख्या भी बढी। वह अधिक गतिसे किनारेसे दूरकी धरतीपर आक्रमण करने लगी। जिस प्रकार विमानमसे सैनिक दुश्मनोंके पीछे उतरकर नये प्रदेशोंपर कब्जा कर लेते हैं उसी प्रकार यह वनस्पति भी अब अपने लाखा बीजाणु (spores) पवनके जरिये दूर-दूर तक भेजने लगी। उनममे जो अनुकूल वातावरण और अनुकूल स्थानपर उतरे व उगने लगे, शेष नष्ट हो गए। दुश्मनके प्रदेशमे उतरनेवाले सैनिकोंके पास अकेले भी टिकनेके लिए सभी साधन होते हैं उसी प्रकार यह आक्रमणकारी वनस्पति भी अपने वतन (पानी) से दूर आक्रमण करनेके बाद इस अपरिचित भूमिपर अपनका जीवित रखनेके साधनोंका विकास करने लगी। पानीमे उगनेवाली वनस्पतिको पानी और पोषणको शरीरमे फैलानेके लिए खासकी विशिष्ट रचना आवश्यक नही होती। सीधे खडे रहनेके लिए आवश्यक तने व डालियोंकी जरूरत नहीं होती, पर धरती पर पर जमानेके बाद वनस्पतिको ऐसी अनेक वस्तुओंकी जरूरत पडने लगी। आजसे ३५ करोड वर्ष पहले ऐसी कुशल वनस्पतिका विकास हो चुका था। अलबत्ता वह आज की वनस्पति जैसी न थी। वास्तवमे उसमे तो अभी पत्ते भी नही लगे थे। उस समयके जंगल यदि देखें तो ऐसा ही लगता था जैसे वह हमारी पृथ्वी ही नही है। अंधोंमे काना राजा वाली कहावतके अनुसार उस समय 'हसराज' (पौधा) जंगलका राजा था, पत्ते तो अभी सीक और चोईं (Scales) जैसे थे।

इस प्रकार धीरे धीरे अधिक ऊंची और अधिक उन्नत दर्जाकी वनस्पतिका विकास होने लगा। ३०-३५ करोड वर्ष पहलेके अश्मीभूत तने भी तीन फुटके घेरवाले थे तथा ४० फुट जितने ऊंचे थे। जब इस प्रकार जंगल घने और वनस्पति अधिक ऊँची होती गई तो धरतीमे अधिक पानी और हवामे अधिक नमी रहने लगी। इससे वहाँ अधिक जीवोंके विकासकी सुविधा हो गई। उभयचर जीव या तो जल तथा थल पर समान रीतिसे रहते हैं पर प्रजननके लिए उन्हें जलमे ही जाना पडता है। जो जल इन जंगलोंके गड्ढों या तालाबोंमे भरा रहा उनमे मेढक पानीके कीडे आदि उभयचर जीवोंका विकास होने लगा। मेढकके बच्चे जब छोटे होते हैं तो उन्हें मछलीकी तरह गलफडे होते हैं पर बडे होनेपर उनके फेफडे विकसित होते है इससे ये मेढक नम तथा वनस्पतिवाली धरती पर विचरण करते रहते है पर प्रजननके लिए पानीमे जाते है।

धरती परके जीव मछलीमसे विकसित होकर आये हैं इससे उनमसे कुछमे मछलीकी कुछ विशेषताएँ आज तक रह गई है। उदाहरणके लिए पानीका साँप उसके पैर होने पर भी—तथा साप जिसके पैर नही है—होनो गति करनेके वक्त मछलीकी तरह अपनेको अंग्रेजी ~ जैसे आकारमे टेढा मेढा करके आगे बढ़ते है। साप आकारमे ईल (eel) मछलीसे मिलते-जुलते है। जो साप समुद्रमे ही रहे उनके गलफडे हैं जबकि धरतीपर अथवा मीठे पानीमे बसनेवाले सापके फेफडे होते है। पानीमे रहनेवाले साप मगर कछुआ आदि सरीसृप जीव बहुत समय तक गहरे पानीमे डुबकी मारकर रह सकते हैं।

दुश्मनके प्रतिकूल प्रदेशमे भी जो छत्रीसैनिक अपनेको अनुकूल बना लेते है वे ही जी सकते हैं और जीत सकते है। उसी प्रकार पृथ्वी परके इस रोमांचक आक्रमणमे भी जो वनस्पति और

जीव धरतीके प्रतिकूल वातावरणमें भी उसके अनुकूल बन सके वे ही जीवित रह सके, बाकी सारे नष्ट हो गए।

उत्क्रांतिके इस पथपर अनेक जीव भटक भी गए। उन्होंने हास्यास्पद कद और आकार ग्रहण किये। वे ऐसे मार्गपर गए थे जो कुछ आगे बढ़नेपर रुक जाता था। उनके विकासके लिए आगे मार्ग ही न था। इससे प्रगतिके पथपर थोड़ी प्रगति कर वे रुक गए अथवा परिस्थितियोंके अनुकूल अपने शरीरका विकास न कर सकनेके परिणामस्वरूप अथवा प्रतिकूल परिस्थितियोंके अनुकूल होनेकी शक्ति न विकसित कर सकनेके कारण उनका नाश हुआ। एककोशी जीवमेंसे अनेक कोशी तारा मछली बनी पर उसका विकास वहीं पर रुक गया। और जीवोंने इससे कई गुना अधिक विकास किया। कुछ जीव पूंछवाले बंदर बने, पर उनका विकास वहीं पूरा हुआ। कुछ जीव महाकाय सरीसृप बने, पर उनके शरीरोंने बेडौल कद और आकार धारण किये थे। अगर रेलके डिब्बे जितने बड़े पेटवाले डिनोसौरके जीव जितना छोटा मस्तिष्क हो तो वह इतने बड़े शरीरकी देखभाल कैसे कर सके! इस कारण उनके लिए सिर्फ एक ही मार्ग था—विनाशका।

करोड़ों वर्ष पहले नष्ट हुए एक महाकाय डिनोसौरका अस्थिपंजर। कदके अनुपातमें उसकी खोपड़ी कितनी छोटी है!

कुछ जीवोंको धरतीकी अपेक्षा पानीमें ही रहना अधिक अनुकूल लगा। इससे लाखों या करोड़ों वर्षों तक जमीन पर भटकनेके पश्चात फिरसे वे समुद्रमें रहने लगे। परन्तु विकासमें तो आगे ही कूच हो सकती है पीछे हटना नहीं होता। पूंछवाला प्राणी बानर बन सकता है पर चिम्पांजी पीछे हटकर अपने पूर्वज छछूंदरके स्वरूपको नहीं धारण कर सकता। इससे जो प्राणी जमीन पर जाकर फेफड़े पा सके थे वे समुद्रमें जानेपर भी फिरसे गलफड़े न पा सके। इससे ऐसे प्राणियोंके लिए फिरसे जलमें जा बसना कोई आसान काम नहीं था। उनको अपने पैर और पूंछको रूपांतर करके गति पानेके लिए परोंके (fins) रूपमें करना पड़ा। पर सांस लेनेके लिए तो पानीके बाहरकी हवा पर ही निर्भर रहना पड़ा।

व्हेल जैसे प्राणी कभी भी जमीन पर नहीं जाते। फिर भी सांस लेनेको उन्हें भी समुद्रकी सतहसे ऊपर आना पड़ता है। सील और वॉलरसको आराम अथवा प्रजननके लिए किनारे पर आना पड़ता है। कछुआ भी अंडे देने किनारे पर तथा सांस लेनेके लिए पानीसे ऊपर आता है।

सात करोडसे अठारह करोड वर्ष पहले ऐसी परिस्थिति आई थी कि रीढवाले महाकाय सरीसपोंसे लेकर बगैर रीढवाले कोमल शरीरधारी नन्हे जीवों तक अनेक प्रकारके जीव मर गए और उनके मृत शरीरोंकी तह-पर-तह बिछ गई। उनके अवशेष आज भूगर्भमें प्राप्त खनिज तेलके रूपमें मौजूद हैं।

सौसे अधिक वर्षोंसे हम धरतीमेंसे यह खनिज तेल निकाल रहे हैं और अभी तो कितना सारा उसमें भरा पडा है इसका विचार करें तो आश्चर्य होगा कि कितने सारे जीव भविष्यमें आनेवाले मानवकी प्रगतिके लिए मरकर तेल बन गए हैं। उसी तरह २७ करोडसे ३५ करोड वर्ष पहले इतने सारे जंगल जमीनमें गड गए कि वे भी मरनेके बाद अब कोयला बन गए हैं। उस समयकी वनस्पति भी आनेवाले युगके अनुकूल नहीं थी। इसमें, उसने भी मरकर नयी अधिक अच्छी, फूल-फल, शहद और अनाज देनेवाली वनस्पतिके लिए स्थान कर दिया।

पृथ्वीपर मानवके जन्मको अभी करोडों वर्षोंकी देर थी, पर सृष्टिको अपने लिए उपयोगमें लानेवाले इस सर्वश्रेष्ठ प्राणी (मनुष्य)के लिए करोडों वर्ष पहलेसे तयारियां हो रही थीं। भूमिका रची जा रही थी, मंचकी सजावट हो रही थी।

परमियन युगके सरीसृप और उभयचर जीव

माइवरियाम पाया गया १०,००
साल पहले का ममय। प्रफ
तहाके नीचे दब इस मैमथक
गव अभी तक ताजा था

खण्ड

ममा॰ा॰ ममथका पूवज

इस नक्शेमें दुनियाके उष्णप्रदेशोंके रणप्रदेश काले धब्बोंसे बताए गए हैं और समशीतोष्ण प्रदेशोंके रणप्रदेश काली रेखाओंसे बताए गए हैं।

१२ : भयकर फिर भी सुन्दर रेगिस्तान

रणप्रदेशोंका भी अपना अनोखा रूप होता है। वहां प्रकृति इतनी कठोर और क्रूर है कि उसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। फिर भी रेगिस्तानोंमें जीवसृष्टिका वास है। रेगिस्तान बड़े ही वीरान और भयंकर होते हैं। कहीं पर तो सैकड़ों मील तक वनस्पतिका एक पत्ता भी देखनेको नहीं मिलता। फिर भी अगर पानी मिल जाए या निकल आए तो यहां बहुत ही अच्छी खेती हो सकती है। यहांकी हवा और धरती इतनी सूखी है कि जल तो केवल मरीचिकाके रूपमें ही देखा जा सकता है। इन रेगिस्तानोंमें कहीं-कहीं नखलिस्तानों (Oasis)में जल और हरियाली देखनेको मिलते हैं। इतना ही नहीं, जहां पर सैकड़ों मील दूर तक बालूके सिवा कुछ भी नहीं दिखता और जहां दोपहरको ५२° सेंटीग्रेड तापमान रहता है, वहां भी धरतीके गर्भमें कहीं-कहीं पानीका भंडार भरा होता है, इसका पता चला है।

समुद्र कितना भयंकर और कितना विनाशक हो सकता है, यह हम देख चुके हैं। पर समुद्रको पार करनेकी अपेक्षा रेगिस्तानको पार करनेमें ज्यादा खतरा होता है।

जिस मनुष्यको रेगिस्तानका अनुभव नहीं है वह बिना पानी और बिना आश्रयके ऐसे रेगिस्तानमें फँस जाए तो क्या हो? रेगिस्तानके विशेषज्ञोंका कहना है कि उस मनुष्यको तुरंत तो कुछ न होगा, पर एक घंटेमें उसके शरीरसे एक लीटर पानी उसकी त्वचाके द्वारा उड़ जाएगा। इससे उसे खूब प्यास लगेगी। दोपहर ढलते तक तो उसके शरीरमेंसे आठ लीटर (१८ पाउंड) पानी उड़ जाएगा और वह बहुत कमजोर हो जाएगा। रात होने तक शायद वह मर भी जाएगा। मान लें कि उसे प्यासा रखनेके बजाय रोज चार लीटर पानी भी दिया जाए, तो भी वह यहांकी गरमीसे दो दिनमें मर जाएगा।

शरीर तो आवश्यक गरमी पैदा करता ही रहता है चाहे आप सहरामें हों या ध्रुव प्रदेशमें हों। यह गरमी उच्छ्वास, पसीना और पशाबके द्वारा निकलती रहती है। मनुष्यके शरीरकी उष्णता ३६.६ अंश से० अर्थात ९८.४ अंश फारनहाइट होती है। जब आसपासकी हवाका तापमान शरीरकी गरमीसे अधिक हो तब शरीरको अपनी अधिक गरमी वातावरणमें छोड देनी चाहिए और साथ ही बाहरकी गरमी शरीरमें न घुस पाए इसकी भी सावधानी रखनी चाहिए। शरीरका यह उष्णता नियामक यन्त्र इस संघर्षमें हार जाए तो मनुष्य गरम लू (sun stroke) लग जानेसे मर जाए। क्योंकि उसके शरीरकी उष्णता बिना किसी नियन्त्रणके बढ़ने लगेगी, यानी बुखार हो जाएगा।

गोरे मनुष्योंकी अपेक्षा काले आदमी रेगिस्तानकी गरमी अधिक सहन कर सकते है। इसका कारण यह है कि उनके शरीरकी त्वचाके नीचे स्थित घना रंग द्रव्य सूर्यके नीलातीत (पराबगनी—ultraviolet) किरणोंके सामने कुछ रक्षण देता है। जिनको गोरे वंश (काकेशियन वंश) कहा जा सकता है ऐसे लोग भी सहराके रेगिस्तानमें रहते है पर उनकी त्वचा भी काली हो गई है—हालांकि बिलकुल नीग्रो-सीदियोंकी तरह नहीं। गोरी त्वचावालोंको लू लगनेका अधिक भय रहता है। इसका एक कारण यह है कि अति गरमीसे सूक्ष्म प्रस्वेदग्रंथियोंको नुकसान पहुँचता है। ये प्रस्वेदग्रंथियां प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपसे शरीरके अंदरकी अधिक गरमी पसीनेके जरिये निकाल देती है। पसीना पेशाब उच्छ्वास आदिका उद्भव शरीरकी गरमीको संतुलन करनेवाले उष्णता नियन्त्रण तन्त्र (thermostat)की कारवाईका परिणाम है।

परंतु जिस प्रकार मैदानी प्रदेशके मनुष्य ऊंचे पहाडोंकी आबोहवाके आदी बन सकते हैं, गरम प्रदेशके मनुष्य ध्रुव एवरेस्ट और आल्प्सकी ठंडके अभ्यस्त हो जाते हैं वैसे ही ठंडे प्रदेशोंके मनुष्य रेगिस्तानकी गरमीके भी अभ्यस्त हो सकते हैं। इस गरमीके अनुकूल होनेके लिए शरीरकी प्रस्वेदग्रंथियां विशेष रूपसे विकसित होती हैं। प्रस्वेदग्रंथियां शरीरसे दिन भरमें लगभग एक लीटर पसीना निकाल देता है जिसके साथ काफी गरमी भी निकल जाती है। सूखी आबोहवामें भी पसीना तो होता है परंतु तुरन्त उड जानेसे वह दीखता नहीं। साथ ही इसके उड जानेसे शरीरको ठंडक मिलती है। शरीरकी गरमीको कम करनेमें सहायता देनेके लिए त्वचाके नीचेकी रक्तवाहिनियोंमें खून अधिक बहने लगता है। मूत्रपिंड भी इसमें सहायक होते हैं। साथ ही प्रस्वेदग्रंथियां और मूत्रपिंड पसीने और पेशाबके द्वारा शरीरसे अधिक क्षार निकल न जाएँ इसका भी नियन्त्रण करते हैं।

शरीरकी आवश्यकतासे अधिक गरमीको निकालनेके लिए अधिक पसीना और पेशाब जाना चाहिए और इसके लिए अधिक पानी पीना चाहिए। प्रयोगोंके द्वारा सिद्ध हो चुका है कि यदि पीनेके लिए पर्याप्त पानी मिल तो रेगिस्तानकी गरमी सहन की जा सकती है। यही नहीं, अधिक मेहनतका काम भी किया जा सकता है। साधारणतया प्रत्येक मनुष्यको खाने या पीनेमें कुल दो गैलन पानी मिलना चाहिए हां नहाने धानेके लिए अलग। सहरामें सडक और तेल-कुँआ पर काम करनेवाले मजदूरोंको रेगिस्तानमें भी इतना पानी रोज पहुँचाया जाता है। इससे कम पानी मिला तो मनुष्य कमजोर हो जाएगा। कच्छ और राजस्थानके रेगिस्तानमें हमारे जवानोंको तथा अन्य लोगोंको कडी मेहनत करनी पडती है और सरहदकी रक्षाके लिए

कभी लटना भी पडता है। इन दोनो स्थानोपर पानी दुर्लभ है। कच्छके रगिस्तानमे तो बिल्कुल अलभ्य ही है। वहा बहुत दूरसे पानी लाना पडता है।

कारवाँ - रगिस्तानमें

अमरीकी सनाओके विज्ञानशास्त्री इस सम्बधमे सप्रयोग अनुसधान करके ऐसे निष्कर्ष पर पहुचे है कि— रगिस्तानमे शरीर खुला भी न हो और न ही उसपर भारी या मोटे कपडे हो। ये कपडे जालीवाले हो जिनसे हवा अदर आ सके और शरीरसे निकलते पसीनेको लेकर बाहर भी आ सके।' आवश्यक प्रमाणमे पानी न मिलनेपर तथा पसीने पेशाव और उच्छवासके द्वारा अधिक पानी निकल जाने पर शरीरका तापमान नियामक तत्र खराब हो जाए तो आदमी मर भी जाता है। नमक (क्षार) खूनको पतला बनाए रखना है जिससे खून मनुष्यकी नसामे सरलतासे भ्रमण कर सके। पर पसीने व पेशावके द्वारा अधिक क्षारके निकल जानेसे खून गाढा हो जाता है और यह सरलतासे भ्रमण नही कर सकता। अलावा इसके, अधिक पसीना होनेसे रसग्रथिया सूखने लगती है। इस निजलावस्था (dehydration)से मृत्यु हो जाती है। क्षारके घट जानेसे थकान लगती है पेट पर और हाथके स्नायु अकड जाते हैं।

जो मनुष्य रगिस्तानमे रास्ता भूल गया हो उसे गरमी और थकानसे बचनेके लिए और पसीनेसे अधिक मात्रामे जाते पानीको रोकनेके लिए किसी छायावाले स्थानपर आराम करना चाहिए और रातको यात्रा करना चाहिए। अगर रात ठडी हो तो मोटे कपडे पहने जा सकते हैं जिससे ठण्डसे रक्षण तो मिलता ही है साथ ही कपडे और शरीरके बीच सीलवाली हवाके भर जानेसे पसीना भी कम होना है।

पृथ्वीपर ७१ प्रतिशत जल तथा मात्र २९ प्रतिशत ही धरती है। इस २९ प्रतिशत धरतीका नाप पाच करोड साठ लाख वर्गमील है। इसमसे १४ प्रतिशत धरती पर तो वर्षमे केवल दस इचसे भी कम पानी पडता है और अत्यधिक गरमी रहती है। यही सही अर्थमे रगिस्तान है। इसके अलावा १४ प्रतिशत भाग ऐसा है जिसमे वर्षमे १० इचसे लेकर २० इच पानी पडता है। यह अर्धरगिस्तान है। धरतीपर प्रति सात मील पर एक मील रगिस्तान है।

शरीर तो आवश्यक गरमी पैदा करता ही रहता है चाहे आप सहरामें हो या ध्रुव प्रदेशमें हो। यह गरमी उच्छ्वास, पसीना और पेशाबके द्वारा निकलती रहती है। मनुष्यके शरीरकी उष्णता ३६.६ अंश सें० अर्थात ९८.४ अंश फारनहाइट होती है। जब आसपासकी हवाका तापमान शरीरकी गरमीसे अधिक हो तब शरीरको अपनी अधिक गरमी वातावरणमें छोड़ देनी चाहिए और साथ ही बाहरकी गरमी शरीरमें न घुस पाए इसकी भी सावधानी रखनी चाहिए। शरीरका यह उष्णता नियामक यंत्र इस संघर्षमें हार जाए तो मनुष्य गरम लू (sun stroke) लग जानेसे मर जाए। क्योंकि उसके शरीरकी उष्णता बिना किसी नियंत्रणके बढ़ने लगेगी, यानी बुखार हो जाएगा।

गोरे मनुष्योंकी अपेक्षा काले आदमी रेगिस्तानकी गरमी अधिक सहन कर सकते हैं। इसका कारण यह है कि उनके शरीरकी त्वचाके नीचे स्थित घना रंग द्रव्य सूर्यके नीलातीत (परावैंगनी—ultraviolet) किरणोंके सामने कुछ रक्षण देता है। जिनको गोरे वंश (काकेशियन वंश)का कहा जा सकता है ऐसे लोग भी सहराके रेगिस्तानमें रहते हैं पर उनकी त्वचा भी काली हो गई है—हालांकि बिलकुल नाग्रो-सीनियाकी तरह नहीं। गोरी त्वचावालोंको लू लगनेका अधिक भय रहता है। इसका एक कारण यह है कि अति गरमीसे सूक्ष्म प्रस्वेदग्रंथियोंको नुकसान पहुँचता है। ये प्रस्वेदग्रंथियां प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपसे शरीरके अंदरकी अधिक गरमी पसीनेके जरिये निकाल देती है। पसीना पेशाब उच्छ्वास आदिका उद्भव शरीरकी गरमीका संतुलन करनेवाले उष्णता नियंत्रण तंत्र (thermostat)की कारवाईका परिणाम है।

परन्तु जिस प्रकार मैदानी प्रदेशके मनुष्य ऊँचे पहाड़ोंकी आबोहवाके आदी बन सकते है, गरम प्रदेशके मनुष्य ध्रुव, एवरेस्ट और आल्प्सकी ठंडके अभ्यस्त हो जाते है वैसे ही ठंडे प्रदेशोंके मनुष्य रेगिस्तानकी गरमीके भी अभ्यस्त हो सकते हैं। इस गरमीके अनुकूल होनेके लिए शरीरकी प्रस्वेदग्रंथियां विशेष रूपसे विकसित होती है। प्रस्वेदग्रंथियाँ शरीरसे दिन भरमें लगभग एक लीटर पसीना निकाल देती है जिसके साथ काफी गरमी भी निकल जाती है। सूखी आबोहवामें भी पसीना तो होता है परन्तु तुरंत उड़ जानेसे वह दीखता नहीं। साथ ही इसके उड जानेसे शरीरको ठंडक मिलती है। शरीरकी गरमीको कम करनेमें सहायता देनेके लिए त्वचाके नीचेकी रक्तवाहिनियोंमें खून अधिक बहने लगता है। मूत्रपिंड भी इसमें सहायक होते हैं। साथ ही, प्रस्वेदग्रंथियां और मूत्रपिंड पसीने और पेशाबके द्वारा शरीरसे अधिक क्षार निकल न जाएँ इसका भी नियंत्रण करते हैं।

शरीरकी आवश्यकतासे अधिक गरमीको निकालनेके लिए अधिक पसीना और पेशाब आना चाहिए और इसके लिए अधिक पानी पीना चाहिए। प्रयोगोंके द्वारा सिद्ध हो चुका है कि यदि पीनेके लिए पर्याप्त पानी मिले तो रेगिस्तानकी गरमी सहन की जा सकती है। यही नहीं, अधिक मेहनतका काम भी किया जा सकता है। साधारणतया प्रत्येक मनुष्यको खाने या पीनेमें कुल दो गैलन पानी मिलना चाहिए हां नहाने धोनेके लिए अलग। सहरामें स्थित तेल-कुँओं पर काम करनेवाले मजदूरोंको रेगिस्तानमें भी इतना पानी रोज पहुँचाया जाता है। इससे कम पानी मिले तो मनुष्य कमजोर हो जाएगा। कच्छ और राजस्थानके रेगिस्तानमें हमारे जवानोंको तथा अन्य लोगोंको कड़ी मेहनत करनी पड़ती है और सरहदकी रक्षाके लिए

कभी लउना भी पडता है। इन दोना स्थानोपर पानी दुर्लभ है। कच्छके रगिस्तानम तो बिल्कुल अलभ्य ही है। वहा बहुत दूरस पानी लाना पडता है।

कारवाँ – रगिस्तानमें

अमरीकी सनाओंने विज्ञानशास्त्री इस सम्बन्धम मप्रयोग अनुसधान करके ऐस निष्कर्ष पर पहुँच हैं कि—'रगिस्तानम शरीर खुला भी न हो और न ही उसपर भारी या मोटे कपडे हो। य कपड जालीवाले हो जिनम हवा अन्दर आ सके और शरीरसे निकलन पसीनेको लेकर बाहर भी जा सक।' आवश्यक प्रमाणम पानी न मिलनपर तथा पसीन पशाब और उच्छ्वासके द्वारा अधिक पानी निकल जान पर शरीरका तापमान नियामक तत्र खराब हो जाए ता आदमी मर भी जाता है। नमक (क्षार) खूनको पतला बनाए रखता है जिसम खून मनुष्यकी तमाम नसनलिकाओंसे भ्रमण कर सके। पर पसीन व पशाबके द्वारा अधिक क्षारके निकल जानसे खून गाढा हो जाता है और यह सरलतासे भ्रमण नहीं कर सकता। इलाजा इसके अधिक पसीना होनेसे रसग्रथियाँ सूखन लगती हैं। इस निर्जलावस्था (dehydr tion)से मृत्यु हो जाती है। क्षारके घट जानसे थकान लगती है पट पर और हाथके स्नायु अकड जाते हैं।

जो मनुष्य रगिस्तानम रास्ता भूल गया हो उस गरमी और थकानसे बचनके लिए और पसीनेस अधिक मात्राम जाते पानीको रोकनके लिए किसी छायावाले स्थानपर आराम करना चाहिए और रातको यात्रा करनी चाहिए। अगर रात ठडी हो तो मोटे कपडे पहन जा सकते हैं जिसस ठण्ड से रक्षण तो मिलता हो है साथ ही कपडे और शरीरके बीच सीलनवाली हवाके भर जानेस पसीना भी कम होता है।

पृथ्वीपर ७१ प्रतिशत जल तथा मात्र २९ प्रतिशत ही धरती है। इस २९ प्रतिशत धरतीका नाप पाँच करोड साठ लाख वर्गमील है। इसमस १४ प्रतिशत धरती पर तो वर्षम केवल दस इचस भी कम पानी पडता है और अत्यधिक गरमी रहती है। यही सही अर्थोंम रगिस्तान है। इसके अलावा १४ प्रतिशत भाग ऐसा है जिसम वर्षम १० इचस लेकर २० इच पानी पडता है। यह अर्ध रगिस्तान है। धरतीपर प्रति सात मील पर एक मील रगिस्तान है।

सहराके तेल कुँएँमें आग लगी है।
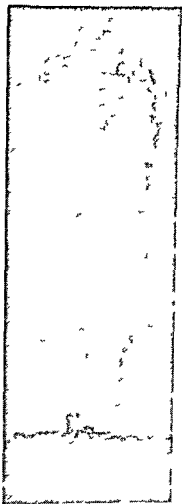
दुनियामें सबसे बड़ा और सबसे विचित्र रेगिस्तान तो सहराका है। ३२०० मील लम्बा और वह भी सिर्फ रेतका ही नहीं, उसमें ११,५०० फुटकी ऊँचाईवाले पर्वत भी हैं जिनके शिखर पर बर्फ पड़ती है। ३५ लाख वर्गमीलके पथराए विस्तारमें फैले हुए इस रणके दसवें भागमें तो सिर्फ रेतके टीले (ढूहे Sand dunes) हैं। ये टीले कभी-कभी तो ५०० ७०० फुट ऊँचे होते हैं। पर जब पवनकी दिशा बदलती है तो ये टीले भी बदल जाते हैं। आज जहां रेतका टीला है वहां कल सपाट मैदान ही रह जाएगा। अफ्रीकाके तीसरे हिस्सेमें फैले इस रेगिस्तानमें ३० लाख आदमी रहते हैं और इसमें एक सरोवर भी है।

दक्षिण सहरामें चाद या साद (Chad) नामका सरोवर है जो ऋतुके अनुसार ५से ९ हजार मीलके प्रदेशमें फैला है। इसके हरियाले नखलिस्तानमें पचास हजार आदमी बाजरे और खजूरकी खेती कर अपना गुजारा करते हैं।

अरबी भाषामें सहराका अर्थ है 'खाली भूरा प्रदेश' अर्थात् रेगिस्तान। परन्तु एक जमानेमें यह प्रदेश न तो खाली ही था और न ही भूरा था। लगभग ६० हजार वर्ष पहले यह हरा भरा था। यहीं नहीं वहां नदियां बहती थीं और जंगल भी उगते थे। मनुष्य वहां गुफाओंमें रहते थे।

यूरोपमें जब पिछले हिमयुगका अन्त आया उस समय सहरा सूखने लगा। प्राणी और मनुष्य इस समय सहराका मध्यप्रदेश छोड़कर समुद्र व नदियोंके किनारेकी ओर चले गए। आजसे लगभग दो हजार वर्ष पहले तक यहांके लोग रेगिस्तानके आक्रमणका सामना कर रहे थे। अन्तमें उन्होंने पराजय स्वीकार कर ली।

पिछले पचास हजार वर्षोंसे सहरामें विविध जातिके लोग रहते आए हैं। दक्षिण अल्जीरियामें स्थित रेतीले पत्थरोंके उच्च प्रदेशमें उस समयकी नदियोंकी काटी गुफाएं हैं। इन गुफाओंमें उस समयके लोगोंने सैकड़ों चित्र व आकृतियां बनाई थीं। इनमें प्राचीनतम कृति दस हजार वर्ष पुरानी है जिसमें जिराफ, हिरन, शुतुरमुर्ग आदि प्राणियोंके चित्र हैं। इनसे मालूम होता है कि यह प्रदेश उस समय बहुत ही हरा भरा था जिसमें ये जानवर चरते थे। छः हजार वर्ष पुराने चित्रोंसे मालूम होता है कि उस समय वहां गायें भी थीं। सहराके भूगर्भसे निकलती गैस किसी अधिक प्राचीन जमानेमें वहांके जीव समृद्ध समुद्रकी गवाही देती है।

पुराने चित्राम हाथी और जगली भसाके भी चित्र है। इन चित्राके बनानेवाले नीग्रो वशके थे। इसके पश्चात, करीब छ हजार वष पहले नील नदीके प्रदेशमसे (सूडान और दक्षिण ईजिप्ट से) लोग यहापर रहने आए। वे नीग्रो न थे, उनका व्यवसाय भेड चरानेका था। इसस भी पता चलता है कि उस जमानेम सहराम हरियाली थी।

जिस समय हेनिबालकी कार्थेजियन सेनाने उत्तर अफ्रीकासे रोम पर आक्रमण किया उस समय तक सहरा रेगिस्तान बन चुका था, परन्तु एटलास पवतमालाए अभी हरी थी जहा हाथियाका पालन हो सकता था।

पर आजके सहरामे ता हाथीकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। हा, ऊँटोका काफिला अवश्य नजर आएगा। क्योकि सैकडा वर्षोसे रेगिस्तानम ऊँटाका ही उपयोग आवागमनके साधनके रूपम होता रहा है।

आजके इजीनियर अपने नय साधना और प्रयत्नासे सहराके रेगिस्तानको हरे भरे खेताम बदलनके स्वप्न देखत है। इसके लिए भगीरथ परिश्रम करना पडेगा। हरमन अजर नामक एक इजीनियरने एस एक प्रयत्नकी रूपरेखा दी है जिसम उन्होने बताया है कि स्टेनली पवतके पास ही कागोके प्रवाहको माडकर उसे अटलाटिकम जानसे रोका जाए और उसके द्वारा इकट्ठी की गई जलराशिस यहाँ कागोका एक विशाल सरोवर बनाया जाए। बादम कागोकी एक शाखाको माडकर शोरी नदी तक ले जाना चाहिए जिसस इन दोना नदियाकी पानी शाद सरोवरम इकट्ठा हो। इसके पश्चात इस शाद सरोवरसे अलग-अलग नहराके द्वारा इक्कीस लाख वग किलोमीटर भूमिको पानी पहुँचाना चाहिए। इस प्रकारकी एक बडी नहर तो नील नदीकी छोटी आवृत्ति ही बन जाएगी (आकृतिमे उस 'नई नील क' नामसे बताया गया है)। इस प्रकार सहराके रेगिस्तानका

सहराको मरुस्थल बनानेका योजना

आगे बढ़नेसे रोका जा सकता है। इतना ही नहीं, वहाँ खेती होगी और उसस, जो प्रदेश आज अग्निकी तरह जल रहा है वह सौराष्ट्रकी तरह हरा भरा हो जाएगा।

प्रकृतिके कोप और मनुष्यके विवेकहीन बर्तावके कारण बने रेगिस्तानोमे हमारे थर पारकरके रणप्रदेशका समावेश हो जाता है (सिंधके रेगिस्तानको पारकर कहा जाता है)। इसके पश्चिमम, पाकिस्तानम सिंधु और पूवम राजस्थानकी अरावली पवतमालाके दरमियानका यह रेगिस्तान २ ३०,००० वगमील्म फैला है। चार-पाँच हजार वष पहले यह प्रदेश हरा भरा था। उसम नदियाँ बहती थी उसम अनेक नगर थे। वहाँ वर्षा भी अच्छी होती थी। धीरे धीरे सिंधु नदी पश्चिमकी तरफ हटती गई। सतलज नदी, जो यहाँसे बहती थी मुडकर चिनाबम और चिनाब धीरे धीरे सिंधुम मिल गइ। इसस कच्छका उत्तरी और अरावलीका पश्चिमी प्रदेश सूखा

हो गया। आज इसमें लूणी नदीके सिवा अन्य कोई नदी नहीं है। और यह लूणी भी धीरे धीरे क्षीण होती जा रही है। सिंधुकी जो शाखाएँ सिंधमें होकर कच्छके रगिस्तानमें ही नहीं पर खंभातकी खाडी तक पानी ले जाती थी वे आज लुप्त हो गई हैं। उनमेसे नाला (नारा) आदिके सूखे पट अब भी दीखते हैं। यहाँ अत्यधिक संख्यामें मवेशियोंके चरने तथा यहाँ हुई कई लडाइयोंके कारण भी यह प्रदेश वीरान हो गया है। मनुष्यों और पशुओंने वनस्पतिका नाश किया। चार-पाच हजार वर्ष पहले यहाँ मोहेन जो दडो और हडप्पा जैसे सुंदर नगर थे। इन उत्खनित नगरोंमें घरोंमें मोरियाँ तथा रास्तोंपर बरसातके पानीके बह जानेके लिए बनी नालियाँ बनी थी। इससे पता चलता है कि किसी जमानेमें यहाँ अच्छी वर्षा होती थी पर आज तो सिर्फ— तहि तो दिवसा गता —कहकर अफसोस हो करना बाकी रहा है।

'थर' नामसे रेतके स्तर अथवा नदीके द्वारा लाई मिट्टीके स्तरका अर्थ सूचित होता है। परन्तु राजस्थानके 'थर' रेगिस्तानमें सिर्फ रेत ही नहीं है उसमें बीच-बीचमें दक्षिणके पठारकी भाँति चट्टानोंकी टेकरियाँ भी अपना सर ऊँचा कर लेती हैं। यह रगिस्तान हिमालयकी तरफसे ईशान (यानी उत्तर पूर्व)में नैऋत्य (यानी दक्षिण पश्चिम)की तरफ ढालू है। उसमें यह हिमालयसे कम है। यह रगिस्तान अरावली, हिमालय तथा बलोचिस्तानके पहाडोंके घुलने कटनेके द्वारा आयी मिट्टीसे बना है। पूर्वमें अरावली तथा पश्चिममें बलोचिस्तानके पहाड इसकी सीमाएँ हैं।

थर' रगिस्तानके आसमानमें बादलोंके दर्शन होना दुर्लभ है। यहाँ जाडेमें भी दोपहरको गरमी होती है तो कहीं कहीं रात्रिके समय तापमान शून्य अंश सेंटीग्रेडसे भी नीचे पहुँच जाता है। यों दिन और रात्रिके तापमानमें ७५ अंशसे और कहीं-कहीं तो उससे भी अधिक अंतर होता है। जाडेके दिनोंमें यहाँ ठंडके कारण हवाका भारी दबाव होता है। पर यही दाब गरमीमें अप्रैलसे लेकर सितम्बर तक कम हो जाता है। गरम हवा ऊपरको चढ़ता है और उसके साथ ही धूलके बवंडर पैदा करनेवाली हवा जोरसे चलता है। हवा गरम होकर हल्की बन जानेसे ऊपर जाती है और उसके स्थानपर अरब सागरकी सीलनवाली ठंडी हवा धरतीकी ओर बहने लगती है। इससे नैऋत्यकी वर्षा आती है। इस प्रकार राजस्थानका यह थर रगिस्तान भारतमें दक्षिण पश्चिमी मानसून लानेका कारण बन जाता है। ऐसा होनेपर भी राजस्थानका यह रगिस्तान स्वयं तो सूखा ही रह जाता है।

भारत और पाकिस्तानके दरमियानके सवा दो लाख वर्गमीलमेंसे लगभग ५० हजार वर्गमीलमें तो साल भरमें पूरे ५ इंच भी बरसात नहीं होती और लगभग १८०००० वर्गमील रगिस्तान तो खेतीके लिए बिल्कुल निकम्मा है। जोरसे बहते पवनके द्वारा रेतकी जो टेकरियाँ यहाँ बनती हैं उन्हें राजस्थानमें 'थर और सिंधमें भीत कहते हैं।

समुद्रके ऊपरसे आता पवन क्षार लाता है जिसके छोटे छोटे कण रगिस्तानमें पडते हैं। यहाँ वर्षाके न होनेसे यह क्षार घुलकर नदियोंके द्वारा समुद्रमें नहीं जाता। पर जो कुछ भी थोडा पानी पडता है उससे यह क्षार बहकर छोटे छोटे तालाबों और पोखरोंमें इकट्ठा होता है। इस प्रकारके खारे प्रदेशमें साभर झील भी एक है जिसका अधिकतर हिस्सा सूखा है। उसमें लगभग साढे पाँच करोड टन क्षार है। इसमेंसे नमक बनाया जाता है।

रगिस्तानाम जब बरसात होती है तो घास और छोटी खुरदरी सी वनस्पतियां उग आती हैं। इस समय अहीर लोग जहां कहीं चरान मिले अपने पशुओं—ऊँट गाय, बकरी, भेडा—वगराको चरानके लिए घूमते रहते हैं। अगर यहां ज्वार-बाजरा उगाने लायक वर्षा हुई तो ये लोग अपनेको भाग्यवान समझते हैं। नहीं तो भेड-बकरीके बालोंसे ऊनी कम्बल रस्सी झूल और चमडे आदिकी वस्तुएं बनाकर उन्हें बाजारमें बेचते हैं और उससे अनाज खरीद कर अपना निर्वाह करते हैं। इसके अलावा उन्हें अपने पशुओंका दूध तो मिल ही जाता है। इस प्रकार रगिस्तानके इन छोटे ग्रामवासियोंका निर्वाह होता है।

दुनियाके रगिस्तानोंमें कच्छके रणप्रदेशका अपना ही अनोखापन है। पिछले एक दो हजार वर्ष पहले यहाँ समुद्र था। उसके किनारे पर बन्दरगाह थे और उसमें जहाज चलते थे।

कच्छ व उसका रणप्रदेश

सिंध नदीकी एकसे अधिक शाखाएँ इस समुद्रमें आ मिलती थीं। वहांसे पानी खम्भातकी खाड़ीमें बहता था, और यों सौराष्ट्र और कच्छको उस समय दो बडे द्वीप बनाता था। आज वह पानी छिछले नल नामके सरोवरके रूपमें अवशिष्ट है।

१८वीं शताब्दीमें उत्तर-पंजाबमें इतनी भयंकर बाढ़ आई कि उसके उतर जाने पर उधर जहाँ-तहाँ रेतके द्वारा आई मिट्टीके ऊँचे टीले बन गए। इसके कारण पंजाबकी छोटी-बडी सतलज नदियोंने अपना मार्ग बदला। सिंधु नदी और पश्चिमकी तरफ खिसकती गई। इससे नाला हकड़ा और रण वगराको पानी मिलना बंद हो गया। मतलब जो राजस्थानमेंसे स्वतन्त्र रूपसे बहती थी वह भी सिंधुकी तरह पश्चिमकी तरफ खिसककर व्यास (विपाशा) नदीमें जा मिली और उस अपनेमें समाकर वह बहावपूर्वक पश्चिममें चिनाबसे मिली। अन्तमें चिनाबके द्वारा वह भी सिंधुमें मिल गई। इसके बाद सिंधुकी शाखाओंमेंसे पूरण नदीमें जाते पानीके प्रवाह पर बंध बांधकर खेतीके लिए मोड़ लिया गया। इसके बाद नालोंमेंसे सिंधु और उसकी शाखाओंका जल कच्छके बडे रणमें होकर लखपत बन्दरगाहके पास होकर कोरी खाड़ीमें गिरता था। सिंधके अमीरने शायद खुदाबाद यहके बाद इस पानीको बंध बांधकर रोकनेका प्रयत्न किया पर उसमें यथेष्ट सफलता न मिली। कच्छको तबाह करनेमें जो काम कच्छके अमीर न कर सके वह काम अन्तमें प्रकृतिने किया। ता० १६ जून १८१९के भूकम्पमें कच्छके रणमें १८ फुट ऊँचा तथा १०-१५ मील चौड़ा 'अल्लाहका बांध' बनाकर बारीके पानीको उसने कच्छके रणमें जानेसे रोक

हो गया। आज इसमें लूणी नदीके सिवा अन्य कोई नदी नहीं है। और यह लूणी भी धीरे धीरे क्षीण होती जा रही है। सिंधुकी जो शाखाएँ सिंधसे होकर कच्छके रगिस्तानमें ही नहा पर खंभातकी खाडी तक पानी ले जाती थी व आज लुप्त हो गई है। उनमेसे नाला (नारा) आदिके सूखे पट अब भी दीखते है। यहा अत्यधिक सख्यामें मवेशियोंको चराने तथा यहा हुई कई लडाइयोंके कारण भी यह प्रदेश वीरान हो गया है। मनुष्यो और पशुओने वनस्पतिका नाश किया। चार-पाच हजार वर्ष पहले यहा मोहन-जो-दडो और हडप्पा जसे सुदर नगर थे। इन उत्खनित नगरोंमें घरोंमें मोरिया तथा रास्तोंपर बरसातके पानीके बह जानेके लिए बडी नालियाँ बनी थी। इससे पता चलता है कि किसी जमानेमें यहा अच्छी वर्षा होती थी पर आज तो सिर्फ— त हि नो दिवसा गता —कहकर अफसोस ही करना बाकी रहा है।

थर नामसे रेतके स्तर अथवा नदीके द्वारा लाई मिट्टीके स्तरका अर्थ सूचित होता है। परन्तु राजस्थानके 'थर' रगिस्तानमें सिर्फ रेत ही नहीं है उसमें बीच बीचमें दक्षिणके पठारकी भाति चट्टानोंकी टेकरिया भी अपना सर ऊचा कर लेती है। यह रगिस्तान हिमालयकी तरफसे ईशान (यानी उत्तर-पूर्व)से नऋत्य (यानी दक्षिण-पश्चिम)की तरफ ढालू है। उम्रमें यह हिमालयसे कम है। यह रगिस्तान अरावली हिमालय तथा बलोचिस्तानके पहाडोंके घुलने कटनेके द्वारा आयी मिट्टीसे बना है। पूर्वमें अरावली तथा पश्चिममें बलोचिस्तानके पहाड इसकी सीमाएँ है।

थर रगिस्तानके आकाशमें बादलोंके दर्शन होना दुर्लभ है। यहा जाडेमें भी दोपहरको गरमी होती है तो वहा रही रात्रिके समय तापमान शून्य अश सटीग्रेड भी नीचे पहुच जाता है। यो दिन और रात्रिके तापमानमें २५ अशसे और कहीं-कहीं तो उससे भी अधिक अन्तर होता है। जाडेके दिनोंमें यहा ठडके कारण हवाका भारी दबाव होता है। पर यही दबाव गरमीमें अप्रलसे लेकर सितम्बर तक कम हो जाता है। गरम हवा ऊपरको चढती है और उसके साथ ही धूलके बवडर पदा करनेवाली हवा जोरसे चलती है। हवा गरम होकर हलकी बन जानेसे ऊपर जाती है और उसके स्थानपर अरब सागरकी सीलनवाली ठडी हवा धरतीकी ओर बहने लगती है। इससे नऋत्यकी वर्षा आती है। इस प्रकार राजस्थानका यह 'थर' रगिस्तान भारतमें दक्षिण-पश्चिमी मानसून लानेका कारण बन जाता है। इतना होनेपर भी राजस्थानका यह रगिस्तान स्वय तो भूखा ही रह जाता है।

भारत और पाकिस्तानके दरमियानके सवा दो लाख वर्गमीलमेंसे लगभग ५० हजार वर्गमीलमें तो साल भरमें पूरे ५ इच भी बरसात नहीं होती और लगभग १८०,००० वर्गमील रगिस्तान तो खेतीके लिए बिल्कुल निकम्मा है। जोरसे बहते पवनके द्वारा रेतकी जो टेकरिया यहा बनती हैं उन्हें राजस्थानमें थर और सिंधमें 'भीत' कहते हैं।

समुद्रके ऊपरसे आता पवन क्षार लाता है जिसके छोटे छोटे कण रगिस्तानमें पडते हैं। यहा वर्षाके न होनेसे यह क्षार घुलकर नदियोंके द्वारा समुद्रमें नहीं जाता। पर जो कुछ भी थोडा पानी पडता है उससे यह क्षार बहकर छोटे छोटे तालाबों और पोखरोंमें इकट्ठा होता है। इस प्रकारके क्षार प्रदेशोंमें साभर झील भी एक है जिसका अधिकतर हिस्सा सूखा है। उसमें लगभग साढे पाच करोड टन क्षार है। इससे नमक बनाया जाता है।

रगिस्तानाम जब बरसात होती है तो घास और छोटी खुरदरी सी वनस्पतिय आती हैं। इस समय अहीर लोग जहा कही चरान मिले अपने पशुआ—ऊँट, गाय बकरी भेड़ बगराको चरानेके लिए घूमते रहते हैं। अगर यहाँ ज्वार-बाजरा उगाने लायक वर्षा हु य लोग अपनको भाग्यवान समझते हैं। नही तो भेड-बकरीके बालासे ऊनी कम्बल, रस्सी, और चमडे आदिकी वस्तुएँ बनाकर उन्हे बाजारमे बचते हैं और उससे अनाज खरीद कर अ निर्वाह करते हैं। इसके अलावा उन्हे अपने पशुओका दूध तो मिल ही जाता है। इस प्रक रगिस्तानके इन छोटे ग्रामवासियोका निर्वाह होता है।

दुनियाके रगिस्तानाम कच्छके रणप्रदेशका अपना ही अनोखापन है। पिछले एक दो हजार वर्ष पहले यहा समुद्र था। उसके किनारे पर बन्दरगाह थे और उनमे जहाज चलते थे।

कच्छ व उसका रणप्रदेश

सिंध नदीकी एकसे अधिक शाखाएं इस समुद्रमे आ मिलती थी। बहाम पानी बरसातकी मौसम रहता था और यो सौराष्ट्र और कच्छको उस समय दो बडे द्वीप बनाता था। आज वह पानी छिछले नल नामक सरोवरके रूपमे अवशिष्ट है।

१८वी शताब्दीमे उत्तर-पजाबमे इतनी भयकर बाढ आई कि उसके उतर जाने पर इधर जहाँ-तहाँ रेतके द्वारा आई मिट्टीसे ऊँचे टीले बन गए। इसके कारण पजाबकी छोटी-बडी सरिता नदियोने अपना मार्ग बदला। सिंध नदी और पश्चिमकी तरफ खिसकती गई। इससे नाला हकरा और रण वगराको पानी मिलना बन्द हो गया। सतलज जो राजस्थानमे स्वतन्त्र रूपसे बहती थी वह भी सिधुकी तरफ पश्चिमकी तरफ खिसककर व्यास (बियास) नदीमे जा मिली और उस अपनेमे समाकर वह बहावलपुरके पश्चिममे चिनाबसे मिला। अन्तमे चिनाबके द्वारा वह भी सिंधुमे मिल गई। इसके बाद सिंधुकी शाखाओमसे पूरण नदीमे जाने वाले प्रवाह पर बंध बाधकर उसको लिया मोड लिया गया। इसके बाद नालोमसे सिंधु और उसकी शाखाओका जल कच्छके रणमे होकर लखपत बन्दरगाहके पास होकर खारी खाडीमे गिरता था। सिंधके अमीरने शासक सूबेदार युद्धके बाद इस पानीको बंध बाँधकर रोकनेका प्रयत्न किया पर उसमे यथेष्ट सफलता न मिली। कच्छको तबाह करनेमे जो काम कच्छके अमीर न कर सके वह काम अन्तमे प्रकृतिने किया। ता० १६ जून १८१९के भूकम्पमे कच्छके रणमे १८ फुट ऊँचा तथा १०१ मील चौडा अल्लाहका बाँध बनाकर खारीके पानीको उसी कच्छके रणमे जानेसे रोक

हो गया। आज इसम रुणी नदीके सिवा अन्य कोई नदी नही है। और यह लूणी भी धीरे धीरे क्षीण होती जा रही है। सिंधुकी जो शाखाएँ सिधम होकर कच्छक रेगिस्तानम ही नहा पर खभातकी खाडी तक पानी ले जाती थी वे आज लुप्त हो गई है। उनमेसे नाला (नारा) आदिके सूखे पट अब भी दीखत हैं। यहाँ अत्यधिक सख्याम मवेशियाको चरान तथा यहा हुई कई लडाइयाके कारण भी यह प्रदेश वीरान हो गया है। मनुष्यो और पशुओने वनस्पतिका नाश किया। चार पाच हजार वष पहले यहा माहन जो दडो और हडप्पा जस सुदर नगर थे। इन उन्नत नगराम घराम मोरियाँ तथा रास्तापर बरसातके पानीक बह जानेक लिए बडी नालियाँ बनी थी। इससे पता चलता है कि किसी जमानम यहाँ अच्छी वर्षा होती थी पर आज तो सिफ — तकिया मिरता गता —बहकर आसमान हो करना बाकी रहा है।

'थर' नामसे रेतक स्तर अथवा नदीके द्वारा लाई मिट्टीके स्तरका अथ सूचित होता है। परन्तु राजस्थानके 'थर' रगिस्तानम सिफ रेत ही नहा है उसम बीच बीचम दक्षिणके पठारकी भाति चट्टानाकी टेकरियाँ भी अपना सर ऊचा कर लेती हैं। यह रगिस्तान हिमालयकी तरफ्स ईशान (यानी उत्तर पूव)स नऋत्य (यानी दक्षिण पश्चिम)की तरफ ढालू है। उसम यह हिमालयस कम है। यह रगिस्तान अरावली हिमालय तथा बलोचिस्तानक पहाडोक घुलने कटनेक द्वारा आयी मिट्टीस बना है। पूवम अरावली तथा पश्चिमम बलोचिस्तानक पहाड इसकी सीमाएँ हैं।

थर' रगिस्तानके आसमानम बादलोका दशन होना दुलभ है। यहा जाडेम भी दोपहरको गरमी होती है तो कहा-कही रात्रिक समय तापमान शून्य अश सटीग्रेडस भी नीचे पहुच जाता है। यो दिन और रात्रिक तापमानम २५ अशस और कही-कही तो उसस भी अधिक अतर होता है। जाडेक दिनाम यहा ठडक कारण हवाका भारी दबाव होता है। पर यही दबाव गरमीम अप्रलसे लेकर सितम्बर तक कम हो जाता है। गरम हवा ऊपरको चलती है और उसके साथ ही धूलके ववडर पदा करनेवाला हवा जोरस चलती है। हवा गरम होकर हलकी बन जानस ऊपर जाती है और उसक स्थानपर अरब सागरसे आनेवाली ठडी हवा धरतीकी ओर बहने लगती है। इससे नऋत्यकी वर्षा आती है। इस प्रकार राजस्थानका यह थर रगिस्तान भारतम दक्षिण पश्चिमी मानसून लानका कारण बन जाता है। इतना होनेपर भी राजस्थानका यह रगिस्तान स्वय तो सूखा ही रह जाता है।

भारत और पाकिस्तानक दरमियानके सवा दो लाख वगमीलमस लगभग ५० हजार वगमीलम तो साल भरम पूरे ५ इच भी बरसात नहा होती और लगभग १८००० वगमील रगिस्तान तो खेतीके लिए बिलकुल निकम्मा है। जोरस बहते पवनक द्वारा रतकी जो टेकरियाँ यहा बनती हैं उन्हें राजस्थानम 'थर' और सिंधम भीत कहते है।

समुद्रक ऊपरस आता पवन क्षार लाता है जिसके छोटे-छोटे कण रेगिस्तानम पडत हैं। यहा वर्षाके न होनेस यह क्षार घुलकर नदियाके द्वारा समुद्रम नहा जाता। पर जो कुछ भी थोडा पानी पडता है उसम यह क्षार बहकर छोटे छोटे तालाबा और पोखराम इकट्ठा होता है। इस प्रकारके खारे प्रदेशम साभर झील भी एक है जिसका अधिकतर हिस्सा सूखा है। उसम लगभग साढे पाच करोड टन क्षार है। इसमसे नमक बनाया जाता है।

दिया। इस प्रकार सिधु तथा उसकी सभी बहनोंके पानीसे वंचित रहनेके कारण कच्छका हरा भरा प्रदेश एक शुष्क रेगिस्तान बन गया। कच्छका रण लगभग आठ हजार वर्गमीलमें फैला है। बीच-बीचमें 'अल्लाहके बांध' तथा छोटे मोटे नखलिस्तान जैसे टीले-टेकरियां भी हैं। पाकिस्तानकी स्थापना होने तक सिंध और कच्छके बीच आवागमन होता रहता था।

कच्छके रणकी भूमि थर (राजस्थान) और पारकर (सिंध)के रेगिस्तानसे भिन्न प्रकारकी है। वह क्षार, रेत व मिट्टीकी बनी है। इसका कुछ हिस्सा नमकके स्तरसे ढका है। कहीं कहीं काला क्षार भी मिलता है।

रेगिस्तानमें नखलिस्तानके सिवा और कहीं वनस्पति दुर्लभ है। जो है वह भी खारे प्रदेशकी खारी वनस्पति है। लूणा, प्राम खारी ज्वार, खारिया घास आदि निरुपयोगी वनस्पति जहां-तहां उग आती है। पर जंगली गधोंके लिए यह भी उपयोगी होती है। भारतमें यही एक प्रदेश है जहां जंगली गधे मिलते हैं। नखलिस्तानमें खडीर, पच्छम बन्नी और चोराड मुख्य हैं। ये नखलिस्तान चरागाह व पशुधनके लिए प्रसिद्ध हैं। घास चारेके लिए और पशुपालनके लिए बन्नीका नखलिस्तान जैसे बडा है वैसे प्रसिद्ध भी है। नखलिस्तानोंकी वनस्पति वीरान प्रदेशोंकी वनस्पति सी खुरदरी व कँटीली होती है। जहां रण और नखलिस्तान मिलते है ऐसी सीमा पर जंगली गधे चरनेके लिए आ जाते हैं। यह जंगली गधा गधे और टट्टूसे भी कुछ मिलता जुलता है। इससे यहां इसे घोड-खर और कच्छमें घुडखर कहते है। यह शब्द अंग्रेजी भाषामें भी प्रयुक्त होने लगा है।

शरद ऋतुमें यूरोप पश्चिम एशिया और उत्तरी एशियाके अनेक पक्षी भारतमें जाड़ा बिताने आते हैं। उस समय उनके झुंड कच्छके रण परसे गुजरते हैं। तब रण चौमासेके पानीसे भरा हो तो जलचर पक्षी यहां उतर भी जाते हैं। प्रतिवर्ष देश विदेशके लाखों सुर्खाब पक्षी (flamngoes) इस रणके छिछले खारे पानीमें कीचडके घरौंदे से घोंसले बनाकर अंडे देते हैं तथा बच्चोंका पालन करते है। गुलाबी झाईवाले सफेद रंगके ये पक्षी अपने रंग और रूपसे बडे सुन्दर लगते हैं। भरतखंडमें अन्यत्र कहां भी ये सुर्खाब प्रजनन नहीं करते। इनके अन्य प्रजनन स्थान अफगानिस्तान, इराक स्पेन और अफ्रीकामें है।

सुर्खाब अपने बच्चोंका लालन पालन कर बच्चोंको लेकर अपने वतनको चले जाते है उसके कुछ दिनों बाद ही इस स्थानका पानी सूख जाता है और धीरे धीरे धरती धधकने लगती है जिससे यहां पर क्षारकी परतें जम जाती हैं।

सूखी हवामें धूलके बवंडर बडी आंधी बन जाते हैं। किसी किसी स्थान पर तो रज इतनी बारीक होती है कि मनुष्यके चलने मात्रसे धूलके बादल उडते हैं। जहां निचाई होती है वहां पानी जमा हो जानेके कारण क्षार इकट्ठा होता है। कहीं कहीं पर सूखी ऋतु होनेपर भी क्षारवाले पानी (खारे पानी)की पोखरियां या तलैया भरी रहता हैं। यहां पर कुछ इंचसे लेकर कुछ फुट तककी मोटाईवाली क्षारकी परतें जमी होती हैं। परन्तु यह नमक साधारणतया खाने के योग्य नहीं होता क्योंकि सोडियम क्लोराइडके अलावा इसमें अन्य क्षार भी मिले रहते है।

वर्षा ऋतुमें समुद्रकी सतह चार-पांच फुट ऊँची आती है। रणकी सतह समुद्रकी सतहसे अधिक ऊँची नहीं है। रण वर्षा ऋतुमें नदियोंके पानी और बरसातके पानीसे उभरता है। इस

स्थान पर अधिक क्षार होनेके कारण यहा की जमीनका पानी भी खारा लगता है। ऐसी भी एक राय है कि रणमे समुद्रका पानी भी आता होगा।

कच्छके रणमे जब पानी भरा हो तब उसको बिना किसी रहबरकी सहायतासे पार करनेम बहुत ही खतरा होता है। जब पानी न हो, सिर्फ कीचड हो तब तो और भी अधिक खतरा होता है क्योकि गरमीसे ऊपरी सतह तो सूखी दीखती है पर उसके नीचे अन्दर चिकनी कीचड होती है। एक बार इस दल्दलम फॅस जानेपर निकल्ना असम्भव सा हो जाता है। ऐसी दगाबाज दल्दल्वाली भूमि सौराष्ट्रके घेडके रणम, भादर-आझतके सगमके पासके खारे प्रदेशम भी है।

कच्छके रणको आगे बढनेस रोका जा सकता है इतना ही नही उसे पुन खेतीके लिए उपयोगी भी बनाया जा सकता है। पर जब तक नमदाके जल्को कच्छ तक न ले जाया जा सके तब तक यह विचार केवल स्वप्न ही रहेगा। हॉलण्ड (यूरोप) देश कच्छसे अधिक बडा नही है। पर यह देश समुद्रको हटाकर, उस स्थानको मिट्टीसे पाट कर वहाँ बहुत ही अच्छी खेती करता है। वहा समुद्रमसे हजारो वगमील जमीन प्राप्त की गयी है और अब भी की जा रही है। कच्छके बडे रणकी अपेक्षा छोटे रणको उपजाऊ बनाना कम मुश्किल व सस्ता भी होगा। कच्छम जो रण बना है वह प्रकृतिका ही सजन है उसम अय रेगिस्तानाकी तरह मानवका हाथ नही है।

अब हम एशियाके रगिस्तानाकी तरफ दष्टि डालें। सिक्यािग, जो चीनके अधिकारम है उसम तक्ला मकन नामका रगिस्तान दो लाख वगमीलम फैला है जो पूवम गोबीके रगिस्तानसे जा मिल्ता है। दुनियाम सबसे ऊँचे रेतके टिब्बे ईरानके और अरबके रेगिस्तानाम है। इनम कुछ तो ७०० फ्ट्स भी अधिक ऊँचे हैं। आदि मानव जगली अवस्थासे आग बढकर खेती करने ल्गा उस विकास पथके कुछ चिह्न इस रगिस्तानम पाये गए हैं। इसस यह सिद्ध होता है कि किसी जमानेम यहा खेती हो सकती थी। यह रेगिस्तान डेढ लाख वगमीलम फला है।

इसी प्रकारका एक और रेगिस्तान एशियाके कजाकिस्तानम कस्पियन समुद्रके उत्तर और पूवम है। यह साढे छ लाख वगमील्मे फैला है। भरतखड चीन रशिया, इरान और अफगानिस्तानके प्राचीन बनजाराके माग यहासे गुजरते ह। यहा साम्राज्याका सजन हुआ है और नाश भी हुआ है। यहा मानव—मानव तथा प्रकृति—दोनो दुश्मनास ल्डता आया है।

छ हजार वष पूव कैस्पियन समुद्र लगभग सूख गया था तब इसके सूखे पटपर लोग बसत थे। बादम, चार हजार वष पहले जब आबोहवाम परिवतन हुआ तब यह कस्पियन सागर पुन जल्से भर गया और मानव बस्तिया उसम डूब गइ। आज छिछले पानीम इनके अवशेष देखे जा सकत है। एक वक्त फिरसे ऐसा आया था कि जब कस्पियनका पानी सूखने ल्गा था और बहुत-सा पानी सूख गया था। अब कैस्पियन सागरका सूखनेस रोकनेके लिए रशियाने दोन नदीको मोडकर वोल्गा नदीम मिला दिया है। इससे समुद्रम पानी बराबर बहता रहता है। यहाका रगिस्तान 'तुर्कस्तानका रेगिस्तान के नामसे पहचाना जाता है।

मध्य एशियाके रेगिस्तानाकी सहरा या राजस्थानके रगिस्तानाके साथ तुल्ना नही की जा सकती। क्योकि यहा जाडेम बफ पडती है और गरमीम चालीस सटीग्रेड तापमान भी होता है। इन दोनो आत्यतिकताओम टिकनेकी क्षमता रखनवाली थोडी-बहुत वनस्पति यहा उगती है। यहाँ घासके मदान है कही पर वन भी है और रगिस्तान भी है।

गधासे कुछ ही बड़े टट्टुओंके लिए यहींके घासके मैदान प्रसिद्ध हैं। जाड़ेमें ये टट्टू पानीकी एवजमें बर्फ खाकर काम चलाते हैं तथा ग्रीष्ममें पानीकी तलाशमें भटकते हैं। ये चार दिनसे अधिक बिना पानीके जीवित नहीं रह सकते।

बीसवीं शताब्दीके पूर्वार्धमें अधिकाधिक मंगोल गड़रिये अपनी भेड़-बकरियां चराने इस प्रदेशमें आने लगे। पिछले दस वर्षोंमें तो गोबीके रेगिस्तानमें कहीं एक भी टट्टू नहीं बचा। अब दुनियाके कुछ प्राणिसंग्रहालयोंमें जो कुछ टट्टू हैं, वही बचे हैं।

सहारा और आस्ट्रेलियाके रण प्रदेशोंसे कुछ छोटा रण अरबस्तानका है जो लगभग दस लाख वर्गमीलमें फैला है। यहांके सबसे सूखे भागमें भी सालमें पांच इंच पानी पड़ता है। इससे वह सहारा और आस्ट्रेलियाके रणों जैसा वीरान नहीं है। अरबी रणका तीसरा हिस्सा बिल्कुल रेगिस्तान है जिसमें रेतके टिब्बे ७०० फुटसे भी अधिक ऊंचाईवाले पाये जाते हैं। अरबस्तानके प्रायद्वीपमें लाल समुद्रके समानान्तर पहाड़ हैं जो दक्षिणाधमें तो १३०० फुटकी ऊंचाईवाले हैं। इससे यहां तथा दक्षिण पूर्वके मस्कतमें तो गरमीके दिनोंमें भी ठंडक रहती है। इस वक्त अरबस्तानमें ईरानकी खाड़ीके किनारे इतना सूखा रेतीला मैदानी प्रदेश है कि वहां समुद्रके पानीको गरम करके, उसकी वाष्पको पुनः ठंडा कर पीनेका पानी बनाया जाता है। साथ ही इराककी नदियोंमेंसे जहाजोंमें भरकर भी पानी लाया जाता है। कुवैतमें खनिज तेल खूब मिलता है पर धरतीमें मीठा पानी जरा भी नहीं मिलता। मीठा पानी बनानेके लिए कुवैतमें लाखों डालर खर्च करके कारखाने बनाये गए हैं।

अब हम नई दुनिया अर्थात अमरिकाके रेगिस्तानोंको देखें। नैऋत्य युनाइटेड स्टेटस और वायव्य मेक्सिकोमें पांच लाख वर्गमीलमें फैले हुए रेगिस्तानमें अमरिकाने प्रथम अणुबमके प्रयोग किये थे। उन रेगिस्तानोंमें भी टेकरियां और पहाड़ हैं।

दक्षिण अमरिकामें चिली और पेरूमें स्थित अताकामा—पेरूका रेगिस्तान है तो सबसे छोटा अर्थात १४०.००० वर्गमीलका परंतु न्यूनतम वर्षाके लिए यह प्रसिद्ध है। यहां पूरे वर्षमें आधा इंच भी पानी नहीं पड़ता। यहां वर्षों तक बरसातकी एक भी बूंद नहीं पड़ती और कभी कुछ देरके लिए अगर एकाध बदली लग भी गई तो यहां जल प्रलय हो जाता है। दक्षिण अमरिकाके पश्चिममें तथा दक्षिण पूर्वमें समुद्रके किनारे ठंडे प्रवाह बहते हैं। इससे हवामें बादल बनने योग्य गरम नमी नहीं होती। दक्षिण अमेरिकामें अताकामा और पातागोनियाके रेगिस्तानोंका कारण बरसातका अभाव है। परंतु वहां कभी-कभी बरसात पड़ता है तब दारुण नुकसान होता है। जब किसी वर्ष चिलीके किनारे ठंडे हम्बोल्ट प्रवाहके स्थानपर गरम प्रवाह बहता है तब ठंडे पानीमें रहनेकी आदी वहांकी ज्यादातर मछलियां मर जाती हैं। वहांके पक्षी भी भूखों मर जाते हैं। अलावा इसके, उस गरम प्रवाहमेंसे नमी अपनाकर पवन चिलीके रेगिस्तानमें व अन्य रेगिस्तानके प्रदेशोंमें बरसात लाता है। इसमें यहांके आदिवासियोंके मिट्टीसे बने झोंपड़े बरबाद हो जाते हैं। प्रलयकारी सी बाढ़ आती है और इतने बड़े पैमानेपर जमीन धुलती कटती है कि मिट्टीके गाढ़ प्रवाह बहने लगते हैं। जहां खेती होती है वहां फसलको भारी नुकसान होता है। उत्तर अमरिकाके रेगिस्तानके कुछ हिस्सेमें चार-पांच वर्षों तक अथवा कई दशाब्दियों तक जरा भी पानी न पड़ा हो, ऐसा भी होता है।

ढाई हजार वर्ष पहले ग्रीक तत्त्वज्ञानी प्लेटोने अफसोस किया था कि मनुष्य ज्यों ज्यों जंगल काटता जाता है त्यों-त्यों उसकी अविचारी प्रवृत्तिसे कटे हुए जंगल-प्रदेश रेगिस्तान अथवा अर्ध-रेगिस्तान बनते जाते हैं। उसकी इस चेतावनी पर किसीने ध्यान नहीं दिया। परिणामस्वरूप उसके जमानेके बाद रेगिस्तान बनते ही रहे हैं।

प्रत्येक रेगिस्तानका अपना विशेष व्यक्तित्व होता है। साथ ही रेगिस्तानके सभी प्रदेश भी एक सरीखे नहीं होते। हम सहाराकी गोबीके साथ तुलना नहीं कर सकते। गोबीमें रेणमें घास वाले प्रदेश भी हैं जिनमें मंगोल गडरिये अपने घोड़े, ऊंट, गाय और भेड़-बकरी चराते हैं। सहारामें घासवाले प्रदेशके दर्शन भी दुर्लभ हैं। मंगोल गडरिये अपने पशुओंको चराने, हांकने और इकट्ठा करनेके लिए पैदल चलना पसंद नहीं करते। वे घोड़े पर ही चलते हैं। मंगोल घुड़सवारोंने घुड़सवारीमें नाम कमाया है। चंगेजखां के घुड़सवार इतिहासमें प्रसिद्ध हो गए हैं। सहाराके तुआरेगों और सीन्यियोंसे मंगोलोंका जीवन भी अलग तरहका है। सहाराके रेगिस्तानमें कहीं भी रहा नहीं जा सकता। सिर्फ सरसब्ज नखलिस्तानोंमें ही घर बनाकर रहा जा सकता है। अरबस्तानके रेगिस्तानमें बद्दूइन अरब धूप और पवनसे रक्षण पानेके लिए ऊनके तंबू बनाते हैं। मंगोल लकड़ीके ढांचों पर ऊनके मोटे कपड़े चढ़ाकर, समेटे जा सकें ऐसे घर बनाते हैं। जब उनका काफिला आगे बढ़ता है तब वे पूरे घरको तह करके उसे ऊंटों पर लाद देते हैं। मंगोल भटकनेवाली खानाबदोश प्रजा है। जहां चारा मिलता है वहां अपने पशुओंको चराते हैं व अपना 'पोर्टेबल' घर खड़ा कर लेते हैं। उनकी मुख्य खुराक मांस और दूध है। वे दूधके कई विभिन्न व्यंजन बनाते हैं। दूधमेंसे मदिरा भी बनाते हैं, पनीर तो बनता ही है। यों मंगोल लोग खाने पानेमें सुखी हैं, जबकि सहारा और अरबस्तानके लोगोंका भोजन मांस तथा खजूर है। नखलिस्तानोंमें थोड़ी खेती होती है। जिस प्रकार मंगोल गोबीमें भटकते रहते हैं उसी प्रकार तुआरेग लोग सहारामें और बद्दूइन लोग अरबके रेगिस्तानमें भटकें तो मारे ही जाएं। उन्हें तो अपने निश्चित व्यवहार मार्गसे ही जाना पड़ता है। ये मार्ग कुछ पक्के बंधे नहीं होते। उन्हें तो जल्दी-से-जल्दी एक नखलिस्तानसे दूसरे नखलिस्तान तक पहुंच जाना चाहिए, जहां उन्हें खुराक और पानी मिल सके।

आदि मानव सब्ज प्रदेशोंका निवासी था फिर भी कुछ जातियोंके लोग रेगिस्तानसे घिर गए हैं और वहीं बस गए हैं। उनकी प्रगति भी रुक गयी है। दक्षिण अफ्रीकाके कलहरी रेगिस्तानमें रहते बुशमेन लोग तो मानो बिलकुल पत्थर-युगमें ही रहते हैं। उन्हें खेती करना, पशुपालन या कपड़े बनाना भी नहीं आता। रेगिस्तानमें खुराक दुर्लभ होती है इसलिए बालकके चार-पांच बरसका होने तक मां उसे स्तनपान कराती है। इससे बालक शरीरसे हृष्टपुष्ट होते हैं। ये लोग इतने तो पिछड़े हुए हैं कि ये जलाशयसे पानी भी पशुकी तरह झुककर होठोंसे पीते हैं। वे सिर्फ कुत्ते पालते हैं जो उन्हें शिकार करनेमें सहायता करते हैं। इस प्रकारकी जंगली जातिके लोग आस्ट्रेलियाके रेगिस्तानोंमें रहते हैं इसकी जानकारी भी अभी १९५७में एक अनुसंधान करनेवाले दलको हुयी। उनकी भाषा जानवरों-सी भारी होती है। ये जंगली लोग गतिसे भटकते हैं और जहां तक बने बिना आराम करते हैं। इससे वे नंगे शरीर भी जीवित रह सकते हैं। उन्हें अभी तक शिकारमें उपयोगी तीर-कमानकी भी खोज नहीं की है। उनके शस्त्र तो भाला,

लकड़ी और बूमरैंग है। इसी प्रकारका जीवन कलहरीके बुशमेन भी जीते हैं। उनके बच्चे भी चार पांच वर्षके होने तक स्तनपान करते हैं। परंतु अन्य वानोंमें व आस्ट्रेलियाके आदिवासियोंसे जरा आगे हैं। वे पेड़ों अथवा झाड़ झंखाड़ोंके नीचे गड्ढा बनाकर उसमें निवास करते हैं। ठंडी रातको वे उसमें तापनेके लिए अग्नि जलाते हैं और इसीके आसपास टोलीके सभी लोग रहते हैं। दिनमें तापनेकी जरूरत नहीं होती, अतः प्रत्येक मनुष्य अपना अलग गड्ढा बनाकर उसमें पत्ते आदि बिछाकर अपना नीड़ बना लेता है। खुराकके लिए शिकार करनेको सुबह जल्दी और संध्याको देरसे निकलते हैं। स्त्रियां धरतीमेंसे कंदमूल खोदकर इकट्ठा करती हैं। सूखी ऋतुमें जब इन्हें पानी नहीं मिलता उस समय ये लोग तरबूज जैसे फलोंके रसमें अपना काम चलाते हैं। कलहरी सहाराके समान नहीं है। पुरुषोंको हिरन आदिका शिकार वहां मिल जाता है।

आस्ट्रेलिया और कलहरीके आदिवासियोंके जीवन तुलना करने योग्य है। जिस हिरनको घायल किया जाता है उसका पीछा करने और उसके सुराग खोजनेमें बुशमेन बहुत होशियार होते हैं। यह हिरन किसी सूखी और पथरीली चट्टान परसे गया हो अथवा दूसरे हिरनोंके साथ जा मिला हो तो भी ये बुशमेन इस घायल हिरनका पता लगा ही लेते हैं। कहा जाता है कि यहांके बच्चे परोंके निशानसे पहचान लेते हैं कि ये उनकी मांके परोंके निशान हैं। घासमें खाद्य कंद या जड़ कहां है और बिच्छू कहां है यह भी उस बालककी आंखसे छिपा नहीं रहता।

दूसरी ओर, आस्ट्रेलियाके आदिवासी अग्नि जला सकते हैं पर बरतन बनाना नहीं जानते। वे चूहे खरगोश और कंगारूको भूनकर खाते हैं।

आस्ट्रेलियाकी कुछ जातियां जरा सुधरी हैं। ब्रिटिश जातिसे पहले वे गोरोंके सम्पर्कमें आए हैं। दूसरे विश्वयुद्धके समय आस्ट्रेलियाके रेगिस्तानमें टूट गए हवाई जहाजोंके चालकोंको खोजनेके लिए अफसर-अधिकारी इन आदिवासियोंका उपयोग करते थे। ये भटके हुए लोगोंका सुराग खोज देते थे। यही नहीं, परोंके निशानसे बता सकते थे कि भटका हुआ मनुष्य किस दिमागका होगा।

थरपारकर सहारा और गोबीके लोग मुख्य रूपसे भारवाही पशु (खास करके ऊंट) रखते हैं जिनके कारण वे दुनियाकी सभ्य जातियोंके सम्पर्कमें आते हैं। इसमें ये लोग आस्ट्रेलिया या कलहरीके आदिवासियोंके जितने पिछड़े नहीं हैं।

रणप्रदेशोंकी सुन्दरी वनस्पति अपने अन्दर पानी संचित रखनेके लिए इनमें बहुत कम पत्ते होते हैं

रेगिस्तानकी कठोर प्रकृतिका सामना करके भी जीवित रहनेवाली वनस्पति।

ास्ट्रेलियाके बिदीबु नामक जातिके आदिम निवासी इतने पिछडे हुए है कि जलाशयसे पानी भी पशुओकी तरह पीते है।

१३ : रेगिस्तानकी वनस्पति

रेगिस्तानमें वनस्पति, वहां जो कुछ भी वर्षा या ओस गिरती है उसीपर निर्भर करती है और इस वनस्पति पर ही वहांके प्राणियोंका आधार है। जब हम इस बातपर विचार करते हैं कि ये दोनों किस प्रकार कठोरतम वातावरणमें भी अपनेको अनुकूल बनाकर जीवित रहते हैं तो हमें विस्मय होता है। मिस्रमें नील नदीकी नहरोंके द्वारा सहारामें भारतमें गंगा-जमुनाकी नहरोंसे राजस्थानके थर रेगिस्तानमें, पाकिस्तानमें सिंधुकी नहरोंसे सिंधमें तथा नदी और नहरोंके सहारे तुर्कस्तानके रेगिस्तानमें खूब अच्छी खेती की जाती है। इससे पता चलता है कि रेगिस्तानकी धरती तो उपजाऊ है पर पानीकी ही कमी है।

दीमकोंका घर ऊँचा बमीठा

जब बरसात होती है तो वनस्पति अपने-अपने ढंगसे पानीका संग्रह कर लेती है। इस प्रकारका संग्रह कंदमूलके रूपमें हो अथवा थूहरकी तरह तनेमें हो। इसका लाभ जीव-सृष्टि भी उठाती है। जो पक्षी वर्षोंसे जोड़ेमें साथ रहते हों, पर खुराककी कमीके कारण अंडे न दे सकते हों वे वर्षाके आते ही समागम करते हैं। झट नीड़ बांध लेते हैं, अंडे देते हैं और उन्हें सेने लगते हैं। पक्षियोंके बच्चे बड़े खाऊ होते हैं। बरसातके समय वनस्पति और कीड़े वगैरा विपुल राशिमें पाये जाते हैं। इससे वर्षाऋतुमें पक्षियोंको अपने बच्चोंके पालनेका सुनहरा अवसर मिल जाता है। अमरिकाके रेगिस्तानमें किये गए अमरिकन प्राणि-शास्त्रियोंके निरीक्षण

स्ट्रेलियाके बिंदीबु नामक जातिके आदिम निवासी इतने पिछडे हुए हैं कि जलाशयसे पानी भी पशुओंकी तरह पीते हैं।

१३ : रेगिस्तानकी वनस्पति

रेगिस्तानमें वनस्पति, वहाँ जो कुछ भी वर्षा या ओस गिरती है उसीपर निर्भर करती है और इस वनस्पति पर ही वहाके प्राणियोंका आधार है। जब हम इस बातपर विचार करते हैं कि ये दोनों किस प्रकार कठोरतम वातावरणमें भी अपनेको अनुकूल बनाकर जीवित रहते हैं तो हमें विस्मय होता है। मिस्रमें नील नदीकी नहरोंके द्वारा सहरामें, भारतमें गंगा जमुनाकी नहरोंसे राजस्थानके थर रेगिस्तानमें, पाकिस्तानमें सिंधुकी नहरोंसे सिंधमें तथा नदी और नहरोंके सहारे तुर्कस्तानके रेगिस्तानमें खब अच्छी खेती की जाती है। इससे पता चलता है कि रेगिस्तानोंकी धरती तो उपजाऊ है पर पानीकी ही कमी है।

दीमकोंका घर ऊँचा बमीठा

जब बरसात होती है तो वनस्पति अपने-अपने ढंगसे पानीका संग्रह कर लेती है। इस प्रकारका संग्रह कंदमूलके रूपमें हो अथवा थूहरकी तरह तनेमें हो। इसका लाभ जीव-सृष्टि भी उठाती है। जो पूरी वर्षोंसे जाड़ेमें साथ रहते हों, पर खुराककी कमीके कारण अंडे न दे सकते हों वे वर्षाके आते ही समागम करते हैं। झट नीड़ बाँध लेते हैं अंडे देते हैं और उन्हें सेने लगते हैं। पक्षियोंके बच्चे बड़े भाऊ होते हैं। बरसातके समय वनस्पति और कीड़े वगैरा विपुल राशिमें पाये जाते हैं। इससे वर्षाऋतुमें पक्षियोंको अपने बच्चोंके पालनका सुनहरा अवसर मिल जाता है। अमेरिकाके रेगिस्तानमें किये गए अमेरिकन प्राणि-शास्त्रियोंके निरीक्षण

बडे ही रसप्रद हैं। १९५५-५६ में यहाँ सिर्फ ६६ अंश बरसात हुई थी। इससे लोगा पक्षियासो उस साल वहाँ नयका घाटा करना पडा। पर इससे पहले १९५३-५४ में ४ इंच ८० अंश बरसात हुई थी। इसका लाभ वहाँके पक्षियोंने ले लिया था व औसतन प्रत्येक लवा मादाने छ से अधिक बच्चे दिये थे।

रणप्रदेशके जीव जहा न वहा आश्रय खोज ही लेते हैं--यहा थूहरके खोतमें भाकता उल्लू।

यदि सचमुच यहाँका जादू देखना हो तो सूखे रणप्रदेशमें बरसातके पतन पर जाना चाहिए। सूखी लगनेवाली वनस्पति भी कितने उत्साहसे पनपनी लगती है। इसके बाद सूखी हवा और जलानेवाली धूपके आनेपर यहाकी सब वनस्पतियाँ मात्र कदमूलके रूपमें ही जमीनके अन्दर रह जाती है ऊपर तो सिर्फ थूहर ही रह जाता है। जब सन १८५९-६९ ई०के रसेम स्वेज नहर खुद रही थी उस समय वहाँ रणकी रेतमसे असख्य कन्दमूल निकले थे। बबूलकी जातिके पेडाकी जड तो जमीनके अन्दर २५ फुट गहराइमें भी मिली थी। पर यह कोई विक्रम नही है। अमरिकाके रणकी रेतमें एक वनस्पति जमीनमें १०० फुट गहराईमें अपनी जडें भेजकर जमीनके गर्भमसे पानी खीचती है। रेगिस्तानमें थूहरको छोडकर अधिकतर वनस्पति तने डाली व पत्तेके रूपमें जितनी बाहर फैलती है इसकी अपेक्षा जडके रूपमें जमीनमें नीचे अधिक बढती है। हमारे बरगद तथा पीपलकी जडें भी जमीनमें सौ फुट तक पहुँचती है। फिर भले ही बाहर दीखता पेड ठूठ हीके रूपमें हो।

रेगिस्तानमें चीटीसे लेकर ऊँट तकके प्राणी बसते हैं जिनमें पक्षी कीडे, साप, साडा, गिरगिट सियार, लोमडी, भेडिया, हिरन खरगोश, गधे आदि विभिन्न जातिके पशुओंका समावेश है। इनमसे बहुधा सभी प्राणियाको अपनी प्रवृत्तियोंको रात प्रभात अथवा सध्याके समयमें ही सीमित रखना पडता है। गरमी गरम हवा--लू तथा गरम धरतीसे उन्हे बचना पडता है।

यहाकी गरमी गरम पवन तथा धूपसे बचनेके लिए यहाके प्राणी वनस्पति हो तो उसकी छायाका सहारा लेते हैं या जमीनमें कुछ गहराईवाले स्थानमें रहते हैं। इसका कारण यह है कि धरतीकी ऊपरी सतहसे कुछ ही इच नीचे भी तापमान बहुत कम हो जाता है। ज्यादातर कीडे तो बरसातके समय अडे अथवा डिम्भ रखकर स्वय सूखी ऋतुमें मर जाते है। पर ये अडे और डिम्भ उस सूखी हवामें बिना हानिके पडे रहते है। जब पुन वर्षा होती है तब इन अडोमसे कीडे निकलते है। ये भी प्रजनन कर, अडेके रूपमें वशवृद्धि कर स्वय मर जाते है। पर चीटी चीटे व दीमक तो बारहो महीने प्रवृत्तिशील रहते है। अत वे जमीनमें गहराईमें या मिट्टीसे अपनी बाबी

वनाकर रहना पसन्द करते है। कुछ पक्षी तो काटेवाले मोटे थूहरके नरम तनेको खोदकर उसके कोटरमे रहते है। यहा उन्हे ठडक मिलती है। बडे सवेरे और शामको उन्हे कीडे मकोडे या चूहे आदि भराक रूपमे मिल ही जाते है।

विशेष आश्चर्यकी बात तो यह है कि जो अधिक गरमी सहन नही कर सकते ऐसे भी कुछ जीव रेगिस्तानोमे रहते है। कनखजूरा, बमेल (millipede) बिच्छू मकडी आदि जीव तो तपकर गरम हुई पथ्वीपर पडते ही तडफडाकर मर ही जाएँ। पर ये भी रेगिस्तानमे रहते हैं। ये सूर्यास्तसे सूर्योदयके दरमियान ही बाहर आना पसन्द करते है और दिनमे तो धरतीकी गहराईमे चले जाते है।

साप, गिरगिट मोटा आदि प्राणी ठडे रक्तवाले होते है यानी वातावरणके अनुसार इनके शरीरकी गरमी बढती घटती है। रेगिस्तानमे रहनेवाले सापके शरीरकी उष्णता ३८ अश सेंटीग्रेड तक बढे तो वह उसे बरदाश्त नही कर सकता और ४३ अश सेंटीग्रेड होनेपर तो वह मर ही जाए, जब कि रेगिस्तानकी धरतीकी ऊपरी सतहकी उष्णता तो कभी-कभी ८२ अश सेंटीग्रेड तक पहुँच जाती है। इससे सापको दिनमे भूगर्भमे या झाडियोमे छिपकर ही रहना पडता है। किसी भी सरीसृप वर्गीय जीवके शरीरकी उष्णता ८९ अश सेंटीग्रेड तक बढ जाए तो वह मर जाता है। अत ये सभी जीव पथ्वीके भीतर गहराईमे चले जाते है।

रशियन विज्ञानशास्त्रियोको अपने काराकुरमके रेगिस्तानमे प्रयोग करनेपर पता चला

रणप्रदेशकी कडी धूपसे बचनेके लिए इस मोटेने चट्टानोंके बीचकी पोली जगहमें आश्रय लिया है।

है कि दोपहरको पृथ्वीकी ऊपरी सतहसे केवल चार इंच नीचे ही १० अंश सेंटीग्रेड जितना तापमान कम हो जाता है। अमरिकाके विज्ञानशास्त्रियोंने अपने रेगिस्तानमें प्रयोग करनेपर पाया कि ऊपरी सतह पर जब ६५ अंश सेंटीग्रेड उष्णता थी तब उसके सिर्फ डेढ़ फुट नीचे बिलमें केवल १७ अंश सेंटीग्रेड तापमानका आह्लादक वातावरण था। भूगर्भमें सीलन रहनेके कारण शरीरमेंसे पानी उड़ नहीं जाता और उड़े भी तो बहुत ही कम।

समशीतोष्ण प्रदेशोंकी अपेक्षा रेगिस्तानमें रहनेवाले जीव कुछ अधिक तापमान सहनेकी विशिष्ट शक्ति रखते हैं, ऐसी बात नहीं है। पर वंश परंपरासे पाए गए संस्कारोंसे उन्होंने गरमीमें अपनी हिफाजत करना सीख लिया है। सस्तन प्राणी मात्र ४० से ४५ अंश सेंटीग्रेड तापमानमें भी मरण तुल्य हो जाते हैं व कभी-कभी मर भी जाते हैं।

पक्षी और सरीसृप वर्गके जीव पेशाब नहीं करते। इससे शरीरका इतना पानी बेकार नहीं जाता। हरे प्रदेशोंमें पक्षी और सरीसृप वर्गके प्राणी भी अपने खूनका तरल मल आदि मूत्रपिंडके द्वारा युरिक एसिडके रूपमें निकालते हैं। पक्षी भी विरक्त रूपमें इस तरल मलका त्याग करते हैं। इसीलिए पक्षी हमसे अधिक मेहनत करते हैं तो भी उन्हें बार-बार पानी नहीं पीना पड़ता। पर सस्तन प्राणियोंको पेशाब किये बगैर नहीं चलता। रेगिस्तानके प्राणियोंको भी पेशाब तो करना ही पड़ता है। फिर भी प्रकृतिने उनके शरीरमें पानी बचानेके लिए एक उपाय किया है। यहांके प्राणियोंको पेशाब कम और गाढ़ा होता है। इससे कम पानीके साथ शरीरके अधिक जहर निकल जाते हैं।

या पेशाब, लार अथवा पसीनेके द्वारा निकलने पानीकी कमी पूरा करनेके लिए प्राणियोंको पानी तो पीना ही पड़ता है। ऊंट और हिरन जैसे जुगाली करनेवाले प्राणियोंके लिए एक और मुश्किल होती है। जुगाली करनेसे अधिक गरमी उत्पन्न होती है। पेटके जिस हिस्सेमें जुगालीकी वनस्पतिके गोले से बने रहते हैं वहाँ सूक्ष्म जीवाणुओंके द्वारा उस भरी खुराकमें खमीर उठना चाहिए जिससे उसमें सड़न पैदा हो। बिना इसके सेल्युलोज युक्त भोजन कार्बोहाइड्रेटमें परिवर्तित नहीं होता और पचता नहीं। रेगिस्तानमें बेचारे ऊंट और हिरनको डालियां और सूखे कांटोंके सिवा हरा खानेको और क्या मिल सकता है? इन प्राणियोंको जुगाली तथा सड़नसे उत्पन्न गरमीको भी बाहर निकालना चाहिए।

मनुष्यके पेशाबमें घन पदार्थ आठ प्रतिशत होता है जबकि रेगिस्तानके सस्तन प्राणियोंमें इसकी मात्रा अधिक होती है अर्थात पानीका अंश कम होता है। रेगिस्तानके कंगारू चूहेके घन पदार्थकी मात्रा तीस प्रतिशत होती है।

पेशाबका आधार खुराकपर भी होता है। जो मांसाहारी हैं अथवा जो प्रोटीन युक्त पदार्थ खाते हैं उन्हें रक्तके अंदरका तरल मल अधिक मात्रामें निकालना चाहिए क्योंकि प्रोटीनमें नाइट्रोजनका प्रमाण अधिक होता है। ऐसे प्राणियोंको विशेष रूपसे अधिक पानी पीना चाहिए। रेगिस्तानके शिकारियोंको यह पानी शिकारके रक्त और रस ग्रंथियोंमेंसे मिल जाता है। दूसरी तरफ वनस्पति पर आधार रखनेवाले प्राणियोंको पानीकी कम आवश्यकता होती है क्योंकि उनकी खुराकमेंसे तरल मल कम मात्रामें निकलता है। चमगादड़ जो छोटे कीड़े खाता है उसे इन प्राणियोंके रक्त रसमेंसे पर्याप्त पानी मिल जाता है। किन्तु रेगिस्तानके चमगीदड़को सूखी हवा और गरमीके

रण पानी पीना पड़ता है। इससे जहा जलाशय होता है वहा इनके झुंड खटके होते है।
वे बीज खानेवाले चूहे बगैर पानीके दीर्घकाल तक जीवित रह सकते हैं।

रेगिस्तानमें इतनी सख्त गरमीमें भी बहुत सारा बोझ उठाकर चलनेवाला ऊँट इतनी सख्त मेहनतके बावजूद भी एक सप्ताह तक बगैर पानी व खुराकके अपना काम चला सकता है। इसका कारण यह नहीं कि उसके पेटमें पानीकी थैली है, यह खयाल गलत है। वास्तवमें वह अपनी कम ग्रंथियोंमेंसे आवश्यक जठररस खींच सकता है। दूसरी बात यह कि उसका कोहान चरबीसे भरा होता है। उसमें २० से ३० पाउंड चरबी होती है। मध्य एशियामें ऊँटोंके दो कोहान होते हैं और उसमें ५० पाउंड तक चरबी पाई जाती है। जब ऊँटको खुराक और पानी नहीं मिलता तब शक्तिके लिए इस चरबीका उपयोग होता है। चरबीमें हाइड्रोजन होता है। चरबीके उपयोगके दरमियान इस हाइड्रोजनके साथ आक्सीजनका संयोग होता है और प्रति एक पाउंड चरबीमेंसे ११ पाउंड पानी बनता है। ऑक्सीजन साँस की हवामेंसे मिलती है। विज्ञान शास्त्रियोंने इस प्रकारसे बनते पानीको 'चयापचयी पानी' (metabolic water) नाम दिया है। इस प्रकारके प्रवासके समय पसीने और पेशाबके द्वारा पानीके उत्सर्जनकी क्रिया मंद हो जाती है। इतना ही नहीं, उच्छ्वासके साथ भी पानी कम बाहर निकले इसलिए ऊँट कम हाँफता है। इससे उसके शरीरकी उष्णता ५ अंश सेंटीग्रेड तक बढ़ जाती है व उसके शरीरका वज़न २५ प्रतिशत तक कम हो जाता है। फिर भी ऊँट जीवित रह सकता है। इतना ही नहीं, ऊँट बहुत बोझा उठाकर भी सख्त मेहनत करता रहता है।

पर जब ऊँटको पानी पीनेको मिलता है तब वह ८० लिटर तक पानी पी जाता है और इससे उसका सूखा शरीर फिर ताजा हो जाता है। थोड़े दिनोंमें ही उसका कोहान भी पहलेकी तरह फिरसे भर जाता है।

रणप्रदेशके कंगारू चूहे
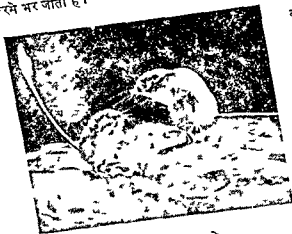
कंगारू-चूहा बीज खाता है। ये बीज सूखे होने पर भी इनमें चार प्रतिशत पानी होता है। इसके अलावा उसके शरीरमें चयापचयी पानी भी बनता है। दिनमें वह बिलमें गहराई में चला जाता है और बिलका मुं[...] भी बन्द कर लेता है जिससे बिलके अन्दरकी अपेक्षाकृत ठंडी और सील[...] वाली हवा अंदर ही रहे। [...] पेशाब और दस्तके द्वारा भी व[...] कम पानी गँवाता है। चूहेकी [...] भी सूखी जैसी ही होती है। या[...] मानोंमें भी आवश्यक पानी उसे [...] जाता है। इस प्रकार पानी पाने[...] खानेका संतुलन बना रहता है। रेगिस्तानके जीव ओस बिंदुको भी बेकार नहीं जाने देते।

रेगिस्तानकी वनस्पति

खुराककी कमी हो या आबोहवा प्रतिकूल हो तो रेगिस्तानके कुछ जीव सुषुप्तावस्थामें पड़ जाते हैं। अमरिकाके रेगिस्तानका खाऊ चूहा जब क्रियाशील होता है तब उसके शरीरका तापमान ३९ अंश तथा जब वह आराममें होता है तब ३३ अंश सेंटीग्रेड होता है। परन्तु सूखी

मौसममें जब वह सुषुप्तावस्था प्राप्त करता है तब उसके शरीरका तापमान घटकर १९से १६ अंश सेंटीग्रेड तक कम हो जाता है। अगर कृत्रिम रूपमें उसके शरीरकी उष्णता घटाकर ६ अंश सेंटीग्रेड की जाए तो वह शीतऋतुकी सुषुप्तावस्था प्राप्त करता है। उस समय शरीरकी चर्बीमेंसे पर्याप्त पोषण मिल जाता है। उसके श्वासोच्छ्वास ऐसे समय मन्द हो जाते हैं तथा हृदयकी धड़कन भी कम हो जाती है। एक धड़कनसे दूसरी धड़कनके दरमियानकी अवधि बढ़ जाती है।

पक्षी भी सुषुप्तावस्था प्राप्त हों ऐसा हमने नहीं सुना। पर अमरिकाके रेगिस्तानी प्रदेशमें—जिसे हम 'दादरथ' पक्षी कहते हैं ऐसा—पुअरविल नामका पक्षी सारा शीत-काल सुषुप्तावस्थामें बिताता है।

रेगिस्तानके कछुएके शरीरमें ऊपर तथा नीचे दोनों तरफ ढाल जैसी कड़ी चमड़ी होती है। उसके अन्य भाग पर भी मोटी भारी सी बनी चमड़ी होती है जिससे उसके अन्दरका पानी उड़ नहीं जाता। इन दो ढालोंके बीचमें उसके शरीरमें एक लीटर जितना पानी रसद्रव्यके रूपमें संग्रहीत रहता है।

रेगिस्तानके जीवोंकी जिजीविषा हैरत अंगेज होती है। फिर वह जीव अंडेके रूपमें हो डिम्भके रूपमें हो या पुख्ता हो अगर इन जीवोंमें रेगिस्तानकी भयानक कठोरताका सामना करनेकी टिकनेकी शक्ति न पाई होती तो रेगिस्तान सूना हो जाता। उत्तर अमरिकाके मोजाव रेगिस्तानमें एक बार भारी बरसात हुई। उसके मीठे पानीमें बड़ी तादादमें झींगे पैदा हुए और वे अंडे देकर मर गए।

पचीस वर्षके पश्चात् वहां फिरसे बरसात हुई। जो अंडे २५ वर्ष तक सूखे रेगिस्तानमें पड़े थे और जो सूखी कीचड़के नीचे दब पड़े थे उनमेंसे ये सुषुप्तावस्थावाले अंडे पके और उनमेंसे नये झींगे पैदा हुए। वहां तो लाखों वर्षोंसे ऐसा होता आया है।

रणप्रदेशमें भी कई तरहके प्राणी रहते हैं—उनमेंसे कुछ।

आंधीकी चौंधियान तथा त्वचाको झुलसा देनेवाली गरमीमें रेगिस्तानका मुसाफिर छायाके लिए एकाध बादलको भी तरसता है। लेकिन कुछ ऐसे भी रेगिस्तान हैं जहां वर्षों तक एक छोटी-सी रिमझिम भी नहीं होती।

वहा कभी किमी गभ दिनम आवागम वादल वाने गाजेने माथ चन आत ह माना वह
ही हो। विश्वाम न विया जा सव ऐमा दृश्य ग्गना है। मनुष्याका भूजनेवाली हवाम
ठडक आना है। मूयकी गरमीके प्रखर तापम चकाचौंध आकाशम
नयन मनाहर मघ छा जान हैं। बिजली नत्य करन लगती है
आर वाग्गम मूमलाधार वर्षा हान लगना है। यह वभव क्षणिक
तथा मयान्ति हाना है। यहा एक स्थानपर जब ऐमी अमतकी
धारा वरमती हाना है तब ऐमा भी हा सकना ह कि उसम दा
मीलकी दूरी पर ही पथ्वी धूपमे झुलमती हा। इस धधकनी
धरतीपर आरम्भकी बूंदें ता गिरत ही भाप बनकर उड जाती
हैं आर धरतीपर जहाँ-तहाँ भाप ही नजर आती ह। पर थाडी
ही दरम पथ्वी ठण्डी हा जाती है आर पानी वहने लगना है।
दमिया वर्षोंम मिलनी आर मूखकर कठार बनी धरती इस माग
नही पानी। इमम थाडे पानीस भी वहा भारी बाढ-सी आ जाती है।
इसम बहुत सारी वनस्पतिया तथा प्राणी नष्ट हा जात ह।
परन्तु इमक अनन्तर माना व्याजके माथ फिरम दुगन वेगम वहा
पर प्रकृति फूलती फलती है। निचले भागाम पानी भरकर तालाब
आर सरावर बनत है। किमी किसी तालावम दा चार वर्षोंके
लिए पर्याप्त पानी भर जाता है। धरती और तालाबम जब तक
पानी रहता है तब तकके समयम वहाके जीव और वनस्पति
उमका पूरा लाभ उठा लेते है। न जान फिर कितन वर्षोंके
बाद पुन बरमात आए। सब पट भर पानी पीत है। वनस्पतिम
थूहर अपन तनम तथा अन्य वनस्पतियाँ अपनी जडाम तथा
कदाम पाना मग्रह कर लेती है। तरबूज आर फल जमे फल
जिनम ९० ९५ प्रतिशत पानी भरा होता है अनुकूल अथान
कम वीरान प्रदेशाम पदा हा जात ह।
इम प्रकार बरमातके समय पानीका सग्रह करके फूली
फली वनस्पति वादके सूखे वर्षोंम वहाके प्राणियाके लिए आशी
वाद-स्वरूप वन जाती है।
बरमातकी झडीके पश्चात फिरसे उग्र धूप निकलनी है।
ठडा हवा फिरसे गरम हा जाती है। जमीनमम पानी भाप बनकर
उड जान लगता है। कुछ घटा अथवा कुछ दिनाम पथ्वी सूखक
तडकन लगनी है। उमम बडी-बडी दरारेंकी जाली सी पडन लग
है। मढक तथा जलचर इमसे पहले ही अन्दर रवकर कीचडम गहरा
उतर जात हैं। मन्द ग्रीष्मकी सुषुप्तावस्था प्राप्त करन ह।
परन्तु जो कुछ थाडे दिना या थाडे हफ्ताके लिए धरतीम नमी रहती है उससे फ

रणप्रदेशकी अधिकाश
काटेदार वनस्पतिया

उठाकर वनस्पति फूल फलकर रेगिस्तानको—भले ही अल्पजीवी—बगीचा बना देती है। नागफनी और अन्य थूहराम भी रंगबिरंगे फूल लगते हैं। घीकुआर और बेतकीम भी लम्बी छडी जैसे फूल निकलते हैं। जहां देखो वहा फलोमे भरा रेगिस्तान सुवासित हो जाता है। इन पर मधुमक्खियां तथा अन्य जीव घूमने लगते हैं तथा इनपर भांति भांतिके जीव तितलियां उडाते दिखाई पडते हैं।

परन्तु कुछ ही हफ्तोमें यह सब स्वप्न सा हो जाता है। यह रेगिस्तान पुन अपनी भयंकर वास्तविकता धारण करने लगता है। जहां हर जगह जल ही जल नजर आता था वहा अब केवल मृगजल ही दिखाई देता है। यो तो मृगजलका दृश्य दूरसे बड़ा ही मनमोहक लगता है, पर पास जानेपर ही मालूम होता है कि वहा तो केवल सूखी जमीन तथा कंकड-पत्थर और झाड झंखाडके सिवा और कुछ भी नहीं।

कभी-कभी मृगजलमें क्षितिजके उसपारके दृश्य भी पानीमें तरते से दीखते हैं।

मृगजलकी भांति ही कर मृगवर्षा होती है। तृष्णासे तिलमिलाते मुसाफिर बरसातमें नहाने, ठंडक पाने और ठंडा अमृत सा जल पीनेको तरसते हैं। परन्तु अफसोस! उनकी दृष्टि आकाशकी तरफ लगी ही रह जाती है। ऊँचे काले बादलोसे चढावमें वर्षा पडती जरूर है पर वर्षाकी बूंदे पृथ्वी पर नीचे आते समय जब बहुत ही गरम और सूखी हवाके स्तरोमें प्रवेश करती हैं तो वाष्प बनकर उड जाती हैं। बरसातकी बूंद प्यासी जमीन और प्याससे तिलमिलाते मुसाफिर तक भी नहीं पहुँचती।

पश्चिम एशिया और उत्तर अफ्रीकाके रेगिस्तानसे टिड्डा दल भारतकी मुलाकातको आते हैं। जिस जमानेमें अन्तरराष्ट्रीय सहयोग द्वारा टिड्डीका नाश करनेका पुरुषार्थ नहीं होता था उस जमानेमें हमारे भारतमें अकालके लिए अनावृष्टिके अलावा टिड्डी दल भी जिम्मेदार होता था। रूसके विज्ञानशास्त्री बी० पी० उवारोवने रशियाके और पश्चिम एशियाके रेगिस्तानमें टिड्डी दलकी जीवन-लीलाका अध्ययन किया था।

टिड्डी रेगिस्तानमें अपने शरीरके पिछले हिस्सेसे गड्ढा खोदकर अंडे देती है जो सूर्यके तापसे सेये जाते हैं। सभी टिड्डिया एक साथ समूहमें हरे भरे प्रदेशपर आक्रमण करें ऐसा ही नहीं है। जब तक उनकी आबादीमें अच्छी-खासी वृद्धि नहीं होती तब तक वे अलग अलग घूमती फिरती तथा चरती हैं। उस समय उनके आकार प्रकार तथा रंग भी प्रवासी टिड्डियासे भिन्न होते हैं। जब वे दूसरे प्रदेश पर आक्रमण करनेको होती हैं तब उनका आकार प्रकृति और रंग बदल जाता है। उनका शरीर लम्बा और पतला हो जाता है। रंग काला सा हो जाता है ऊपर सुंदर नारंगी या पीले रंगकी धारी पडती है। उनके पंख शरीरके प्रमाणमें अधिक लम्बे हो जाते हैं। अकेले जीने वाली टिड्डिया समूहचारी बन जाती हैं और करोडोकी तादादमें स्थलान्तर करनेके लिए चल पडती हैं। इस प्रकार एक ही टिड्डीकी दो अवस्थाएँ—आकार रंग और प्रकृतिमें—इतनी भिन्न होती हैं कि एक जमानेमें अकेले जीवन जितानेवाली तथा समूहमें आक्रमण करनेवाली टिड्डिया भिन्न भिन्न समझी जाती थी।

टिड्डीके बडे-बडे दल कुछ ही क्षणोमें हरे भरे लहलहाते खेतोको उजाड कर देते हैं। अत्यधिक खानेसे उनके शरीर पर बहुत चरबी चढ़ जाती है। वे भकभकाकर तरह खाकर खेतोको

हरियाली धरतीको उजाड प्रदेश
तान कर दते हैं। रेगिस्तानको रेगिम्नान वनाए रखनेम तथा
तानेम टिडियोका वडा भारी हाथ है।
इसी प्रकारका हिस्सा खरगोग और भेडका भी होना है। भेडे घासका जडमेमे खीच
ेती है और धरतीको नगी सी वना देती है। वकरी सभी वनस्पतियाके पत्ते खा जाती है।
आस्टेलियाका रेगिस्तान पहले आजका मा वीरान न था, उसम घास और अय वनस्पतिया उगती
थी। किसी अग्रेजने वडी मूखता की इग्लडसे दो दजन खरगोश लाकर उसने आस्टेलियाकी
खेतीवाली जमीन पर छाड दिए। वह आस्टेलियाकी धरती पर इग्लडका वातावरण निमाण करना
चाहता था।
आस्टेलियाका जलवायु इन खरगाशाको इतना अनुकूल रहा कि कल्पनातीत गतिमे इनकी
सख्या वढने लगी। तीन वर्षोम ता इन्हाने सार चरागाह साफ कर डाले। खरगोश कतरी वशके है,
अथात चूहे व साहीके रिश्तेदार हैं। वे वनस्पतिके पत्ताके अलावा उनकी छाल डालिया आदि खाकर
वनस्पतिका समूल विनाग करते हैं। आस्ट्रेलियाके ये खरगोश इस प्रदेगकी वनस्पतिका विनाग
करके आगे वढने लगे तथा अय प्रदशाको भी उजाड करन लग। प्रतिवप व औसतन ७० मील
आग वढने और साथ ही अपनी आवादीका गुणनफल कर विस्तार करत जान। चालीस वपम
ये खरगोश आस्ट्रेलियाम अरवाकी सख्याम वढ गए। ऊनके लिए आस्ट्रेलियाम भेड-पालनका
व्यवसाय भी वडे पमान पर चलता था—आज भी चलता है। पर ये खरगोश इतनी वनस्पति सफा
कर गए कि भेडाके लिए भी चारा न छाडा और उनकी सख्या घटने लगी। इससे किसान वेचार
तवाह हो गए।
रेगिस्तानम सबसे मूल्यवान वस्तु पानी है। वहाँ पर दुनियाकी सारी समद्धिसे भी एक
लोटा भर पानी अधिक मूल्यवान है। जहा पानी मिलता है वहा रेगिस्तानके पशु पक्षी इकटठे
होन हैं। तब वहा कोई शिकारी नही रहता और न कोई शिकार ही रहता है। वहा तो सभी केवल
प्यासे जीव है। वहाँ सभी अपने क्रमके अनुसार पानी पीते है।
परतु रेगिस्तानम पानी दुलभ है। और प्रकृति जिस प्रकार मगजल तथा मृगतृपा द्वार
माना क्रूर विल्ली उडाती है उसी प्रकार प्रकृति खारे पानीके तालाव वनाकर भी पशुओं
निराश करती है। पलेस्टाइनके रेगिस्तानम मत समुद्र (Dead Sea) युनाइटेड स्टेटस
(अमरिकाम) ग्रेट-साल्ट लेक और लेक बानविल तथा हमारे राजस्थानम साभर झील इ
प्रत्यक्ष दृष्टात हैं। चौमासेम सरोवरका विस्तार अधिक होता है, पर पानी गहरा
होता। यह पानी कोई पी नही सकता। कच्छम भी खारे पानीके कई तालाव (जिन्ह
कहते हैं) है।
रगिस्तान रतीका सपाट मदान ही हो यह खयाल गलत है। करमीरम हमारा ल
प्रदेश औसतन १४००० फुट ऊँचा है। उसकी नीची घाटियाको छोडकर यह भाग भी र
ही है। उसका वडा 'पागाग' सरोवर खारे पानीमे भरा है। जाडेके दिनाम यहाँ हिम
उडती है और गरमीम मिट्टीका धूल। पवत विलकुल नग हैं अर्थात उनपर जब वर्फ न
तब भी वहाँ वनस्पति नही उगती। घास और कुछ खेती निचली घाटियाम ही होती है
दर्शन भी वहाँ लगभग असभ्य है। इसस ऐसे ठडे प्रदेशम तापनके लिए तो क्या रस
रेगिस्तानकी वनस्

भी लकडी नही मिलती। यहा लकडी बडी कीमती वस्तु है। यहाके लोग कडे (उपले) जलाकर रसोई पकाते है। इससे यहा पर अनाज कपडे और पानीकी भाति उपले भी जीवनकी महत्त्वकी आवश्यकता है।

इस प्रकार हमने देखा कि दुनियाके प्रत्येक रेगिस्तानकी अपनी विशेषता है अपना अनोखा व्यक्तित्व है।

रणप्रदेशकी कुछ वनस्पतियोंकी जड़ें बडी लम्बी होती है। इससे वे यथासभव नमी प्राप्त कर लेती है।

उत्तर गोलार्ध में बर्फ़िस्तानके रणप्रदेश

१४ : अजीब बर्फ़िस्तान
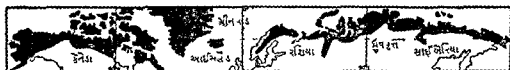
कहां रेत और पत्थरोंके रण व कहां बर्फके रण! इस पृथ्वी पर सबसे अधिक आश्चर्यजनक दृश्य कौन सा है? इसके जवाबके बारेमें दो मत नहीं होने चाहिए। उत्तर और खास करके दक्षिण ध्रुव प्रदेशकी स्पर्धामें कोई टिक नहीं सकता।

इस पृथ्वी पर गहरेसे गहरे समुद्रके तलमें जीव-सृष्टि है, गरमसे गरम रेगिस्तानके प्रदेशमें भी जीव बसते हैं, परन्तु उत्तर ध्रुव प्रदेशमें और खास करके दक्षिण ध्रुव प्रदेशमें लाखों वर्गमीलमें फैले ऐसे बर्फिस्तान हैं जहां एक भी जीव कुलबुलाता नहीं।

मनुष्य जबसे इस पृथ्वीके आकार और उसके भूगोलके बारेमें जानने लगा तबसे वह उत्तर और दक्षिण ध्रुवोंकी खोजमें जानेके लिए तरसता था। आज तो हजारों विज्ञानशास्त्री वहां जाते और आते हैं। बहुतसे तो महीनों तक वहां डेरा डालकर रहते हैं और वहांकी प्रकृतिका अध्ययन करते हैं। आज स्कैंडिनेवियन एयरलाइन्सके हवाई जहाजोंमें बैठकर अनेक यात्री उत्तर ध्रुव परसे नित्य नियमित रूपसे उड़कर जाते हैं। परन्तु इस सदीमें पियरीने उत्तरी ध्रुव तथा आमुंडसनने दक्षिण ध्रुवकी खोज की। उससे पहले सदियों तक हजारों साहसिकोंने यह सम्मान पानेके लिए, ऐसी यातनाएं सहन कीं जिनका वर्णन शब्दोंमें नहीं किया जा सकता और सैकड़ों साहसी ऐसी मौत मर गए जिसे सुनकर भी रोंगटे खड़े हो जाते हैं।

पृथ्वीके भूस्तरशास्त्रीय इतिहासमें उल्लिखित हिमयुगकी हम मात्र कल्पना ही कर सकते हैं। पर उनका साक्षात चित्र तो उत्तरमें ग्रीनलैंड तथा दक्षिणमें दक्षिण ध्रुव-खंडको देखनेपर ही समझमें आ सकता है।

दक्षिण-ध्रुव प्रदेश पर एक दर्जन जितने देशोंके विज्ञानशास्त्री वहां स्थायी डेरा डालकर वहांकी प्रकृतिका अध्ययन कर रहे हैं और साथ ही बाहरी दुनियामें सतत बेतार-व्यवहार, हवाई व्यवहार तथा जहाज-व्यवहार द्वारा संपर्क बनाए रखते हैं। वहां दुश्मन रूसी अमेरिकन भी मिल-जुलकर रहते हैं।

ध्रुव प्रदेशोंकी ठंडका कारण यह है कि वहां क्षितिज पर फिरते सूर्यकी तिरछी किरणें इतनी गरमी पैदा नहीं कर सकतीं कि बर्फ पिघल सके, फिर भले ग्रीष्ममें भी सूर्य कई दिनों सप्ताहों और महीनों तक चौबीसों घंटे प्रकाशित रहता हो। बर्फ उसकी ९०-प्रतिशत किरणोंका परावर्तन कर देती है। अलावा इसके, इन लम्बे दिनोंके बाद शीतकी लम्बी रात्रियां भी होती हैं। यदि हिमाच्छादित धरती अथवा समुद्र सूर्यकी अधिक गरमीका अवशोषण कर सकें तो बर्फ पिघल सकती है। सफेद रंग प्रकाशकी अधिकतम किरणोंका परावर्तन कर देता है। काला रंग अधिकतम किरणोंको सोख लेता है। इसीसे १९६१में रशियनोंने एनेसी नदीके मुहानेपर तैरती बर्फ शिलाओं पर काले पदार्थकी तह बिछायी थी। इससे अधिक गरमीका अवशोषण हुआ और बर्फ जल्दी ही पिघल गयी।

उत्तर ध्रुवके समग्र बर्फिस्तानको पिघलानेके लिए यह युक्ति व्यवहार्य नहीं हो सकती। पर इससे मालूम होता है कि रशियन वहां पर क्या-क्या प्रयत्न कर रहे हैं। पी० एम० बोरिसोव नामके एक रशियन इंजीनियरने एक ऐसी योजना सोची है कि साइबेरिया और अलास्काके बीच बेरिंग जलडमरूमध्यके छिछले समुद्रमें एक बांध बनाकर ध्रुव प्रदेशके ठंडे पानीका प्रशांतमें आनेसे रोका जाए जिससे साइबेरियाके पूर्वी किनारेके बंदरगाहोंको बर्फसे मुक्त रखा जा सके। फिर अणुशक्ति संचालित असंख्य बड़े पंपोंके द्वारा प्रशांत महासागरका पानी बांधके ऊपरसे उत्तर ध्रुव प्रदेशीय समुद्रमें डाला जाए जिससे वर्षमें दस मास बर्फसे घिरे रहनेवाले साइबेरियाके किनारेका प्रदेश तथा उत्तरी ध्रुव सागर जहाजरानीके लिए खुल रहें।

उत्तर ध्रुव प्रदेशमें धरती बहुत कम है और जो थोडी बहुत है वह सिर्फ टापुओंके रूपमें ही है। उस धरतीकी ऊँचाई समुद्रकी सतहसे अधिक ऊँची नहीं है। बहुत कुछ धरती तो समुद्रमें डूबी पर्वतमालाके रूपमें ही है। लोमोनोव पर्वतमाला अपने तलसे १३०० फुट ऊंचा है फिर भी वह पानीमें डूबी ही रहती है। यह पर्वतमाला उत्तर महासागरके तलेको दो भागोंमें विभाजित कर देती है।

एक विचित्रता ऐसी है कि उत्तर ध्रुव प्रदेशमें पृथ्वीकी परत औसतन ८२०० फुट नीचे बैठ गयी है और उसीमें पानीके भर जानेसे ध्रुव महासागर बना है। दूसरी तरफ दक्षिण ध्रुव प्रदेशमें पृथ्वीकी परत औसतन ६००० फुट ऊंची आ गई है। उत्तर ध्रुव महासागर एक ठिकाने पर अधिकसे अधिक १७५०० फुट गहरा है—अर्थात पृथ्वीकी परतमें इतना गहरा गड्ढा है—तो दक्षिण ध्रुव प्रदेशमें ठोस की बड़ी भारी पर्वतमाला है। साथ ही मानसेन पर्वत १९००० फुट ऊँचा है। इससे भी आश्चर्यकी बात यह है कि दक्षिण ध्रुव खंडको काटकर उत्तर ध्रुव महासागरमें रखा जाए तो बिल्कुल ठीक बैठ जाए।

दोनों ध्रुव प्रदेश आश्चर्यके धाम हैं। उत्तर ध्रुव पर यानी ९० अक्षांश पर खडे रहें तो ध्रुवका तारा हमारे देशसे उत्तर दिशामें ठीक नाककी सीधमें दीखता है, वह ध्रुव प्रदेशमें ठीक सिर पर दीखता है और सभी तारे पूर्वसे पश्चिमकी तरफ घूमनेके बजाय ध्रुवके तारेके आसपास घूमते दीखते हैं। सूर्य चंद्र भी क्षितिज पर ही घूमते हैं। इसका कारण यह है कि उत्तर ध्रुव परसे किसी तरफका देखें वहां दक्षिण दिशा ही है। वहां न तो उत्तर दिशा है और न ही पूर्व या पश्चिम दिशा। इसी प्रकार दक्षिण ध्रुव पर सब तरफ केवल उत्तर दिशा ही है।

वातावरणके आयनमडलमें कभी कभी जगमगाते ध्रुवप्रकाश या मरुज्योतिके दो प्रकार।

ध्रुव प्रदेशोंका दूसरा चमत्कार मरुज्योति अथवा ध्रुव प्रकाश है। मरुज्योतिके कारण आकाश लाल पीले हरे आदि रंगोंमें जगमगाता है। ऐसा ध्रुव प्रदेशके आकाशमें ही होता है। क्योंकि ध्रुवोंमेंसे निकलता चुम्बकीय प्रवाह यहां पर अधिकसे अधिक प्रमाणमें केन्द्रित होता है। इससे सूर्यमेंसे आते विद्युतमय अणु इसमें फंस जाते हैं जिससे वे हवामें झूलती हुई झालर जैसे प्रकाशकी किरणों जैसे फव्वारे जैसे विभिन्न आकार तथा भांति भांतिके रंग उत्पन्न कर मनोहर दृश्य उपस्थित करते हैं। ऐसा प्रकाश मरुज्योति अथवा ध्रुव तेज या ध्रुव प्रकाशके नामसे पहचाना जाता है। वास्तवमें तो यह बिजलीका तूफान है और यह तेज रोज देखनेको भी नहीं मिलता। ब्रिटेनके दक्षिणी अक्षांशोंमें मरुज्योति शायद ही दीखती है। दक्षिण ध्रुव प्रकाश भी दक्षिण अमेरिकाके दक्षिणी अक्षांशों तक देखा जा सकता है। मरुज्योति सूर्यमें होते तूफानों पर आधारित है। अतः जब हम देखना चाहें तब हमें वह देखने को नहीं मिलता।

ध्रुव प्रदेशोंका अन्य आश्चर्य वहां दीखते एकसे अधिक सूर्य तथा चन्द्र है जो वास्तवमें तो हवामें तैरते सूक्ष्म हिमकणोंमें पड़ते सूर्य चन्द्रके प्रतिबिम्ब ही होते हैं। ध्रुव प्रदेशोंके विस्मयकारक सौन्दर्यमें ये दृश्य और भी अभिवृद्धि करते हैं।

उत्तर ध्रुव प्रदेशोंसे अधिक ठंडा दक्षिण ध्रुव प्रदेश है क्योंकि वहां आठ गुनी अधिक बर्फ है। इसका कारण यह भी है कि वह पृथ्वीका एक खंड ही है जो औसतन एक मीलसे भी अधिक मोटी बर्फकी परतसे ढका है जबकि उत्तर ध्रुव पर महासागर है। समुद्रका पानी वहाँ पर हमेशा गतिशील रहता है। अर्थात वहां ठंडे और गरम पानीका हमेशा मिलावट होती रहती है हालांकि यह बहुत धीमी गतिसे होता है। सूर्यकी गरमीको ग्रहण कर लेनेके पश्चात उसे छोड़नेमें पानीको काफी समय लगता है।

ऐसे परस्पर विरोधी रूप और लक्षणोंके कारण दक्षिण ध्रुवखंड उत्तर ध्रुव प्रदेशसे हर तरह भिन्न है। दक्षिण ध्रुव प्रदेश दुनियामें सबसे अधिक ठंडा प्रदेश है। आपने पढ़ा होगा कि अधिकसे अधिक ठंडका विक्रम दक्षिण ध्रुव खंडमें रशियाकी वोस्तोक नामकी वसाहतके वैज्ञानिकोंने पाया है। यहांका तापमान शून्यसे नीचे ८८ अंश सेन्टिग्रेड तक होता है। जबकि उत्तर ध्रुव प्रदेशमें सबसे अधिक ठंड ध्रुव प्रदेशमें नहीं, पर उससे १ ०० माइल दूर साइबेरियामें वर्खोयान्स्क

नगरीमें होती है जहाँ जाडेमें तापमान शून्यसे ६७ अंश सेंटीग्रेड तकका हो जाता है। वहाँ दोनों ऋतुओंके तापमानमें १०० अंश सेंटीग्रेडका फर्क पड जाता है। कैसा आश्चर्य है।

दक्षिण ध्रुव खंड और ध्रुवीय महासागरकी मिलन रेखा, जहाँ तक बर्फकी टेकरियाँ बह कर आती हैं।

दक्षिण ध्रुवखंड पर हवा अतिशय ठंडी और सूखी होती है। इतनी सूखी कि सालभरमें मुश्किलसे पाँच इंच हिमवर्षा होती है। परन्तु हजारों वर्षोंसे यहाँ पर बर्फ जमा हुई है और वह अब धीरे धीरे पर्वतों घाटियों और मैदानों पर होकर भूमिके ऊँचे किनारों परसे हर जगह समुद्रमें सरकती जा रही है। किनारे परसे टूटकर वह बडी आवाजके साथ नीचे गिरती है। इससे दक्षिण ध्रुवके आसपास बर्फका ऊँचा विशाल कोट (परकोटा) बन गया है। नीचेके पानीकी गतिके कारण बर्फ टूटकर टेकरियोंके रूपमें अलग होकर समुद्रके प्रवाहमें तैरती रहती है। समुद्रका पानी खारा होता है। पर ये हिम-टेकरियाँ मीठे पानीकी होती है। दक्षिण ध्रुवखंडके ऊँचे किनारोंके हर तरफ सटे हुए बर्फके कगारोंमें कुछ तो १५० फुटकी ऊँचाईवाले भी होते है। इनमेंसे अलग हुई सपाट सिर (चौरस) वाली अनेक टेकरियाँ प्रशान्त अटलांटिक और हिंद महासागरमें सैकडों मील दूर तक बहती रहती है। बर्फकी जो टेकरी पानीके ऊपर सौ फुट ऊँची दीखती है वह पानीके अन्दर ८०० फुट तक डूबी रहती है। छिछले पानीमें तो वह समुद्रका तल भी घिसती जाती है।

दक्षिण ध्रुवखंडसे अलग हुआ बर्फका एक सबसे बडा पहाड २०८ मील लम्बा ६० मील चौडा अर्थात १२००० वर्गमीलके विस्तारवाला था जो ता० १२ ११ १९५६के दिन दक्षिण प्रशान्त महासागरमें तैरता दिखाई पडा था। कल्पना तो कीजिए कि उसका वह भाग जो समुद्रमें डूबा था वह कितना विशाल होगा व उसमें कितना पानी होगा।

बर्फ के तैरते पहाड़ों की जिंदगी वर्षों लम्बी होती है। उत्तर ध्रुव महासागर में आया ऐसा एक पहाड़ १९४६ में नजर आया था। उस समय से उसपर ध्यान रखा गया था। १९६६ में भी उसकी गति और दिशा पर पूरा ध्यान रखा जा रहा था। इसकी सिर्फ चौड़ाई ही २०० फुट थी।

सामान्यतया बर्फ के तैरते पहाड़ अटलांटिक में कैनेडा के पूर्वी किनारे से दक्षिण में अर्थात ४१ उत्तर अक्षांश से दक्षिण में नहीं जाते। गरम खाड़ी के गरम प्रवाह (गल्फस्ट्रीम) में वे पिघल जाते हैं। परन्तु ता० २६ १९३४ में एक पहाड़ तैरता हुआ ३० उत्तर अक्षांश तक उत्तर आया था। १८९४ के अप्रैल की ३०वीं तारीख को दक्षिण ध्रुव महासागर में आया ऐसा एक पहाड़ २६ दक्षिण अक्षांश को भी पार कर गया था।

हवा और प्रवाह के साथ आगे बढ़ते हुए बर्फ के पहाड़ का दृश्य बड़ा ही भव्य होता है। आज के राडार के युग में ये उतने खतरनाक नहीं रहे क्योंकि अँधेरी रात में भी इनकी उपस्थिति जानी जा सकती है।

बर्फ का दूसरा प्रकार बर्फ का तैरता पट है जो मीलों तक अखंड होता है अथवा छोटे-बड़े खंड रूप में होता है। समुद्र में नमक और दूसरे रसायन घुले होते हैं। अतः शून्य से नीचे २.२ अंश सेंटीग्रेड (+२८ अंश फा०) तापमान पर पानी जमने लगता है। उत्तर ध्रुव महासागर की सतह जाड़े में १,९०० से २,५०० मील के व्यास में पापड़ की तरह फूली मोटाई में जम जाती है। पानी की गति के कारण यह दक्षिण की तरफ बहती है और लहरों के कारण टूटकर इस सतह के टुकड़े एक दूसरे से टकराते हैं। कभी तो ये एक दूसरे पर चढ़ भी जाते हैं। जब बर्फ के ये खंड भीषण नाद के साथ टूटते हैं तब भी बड़े विनाशक होते हैं। भूतकाल में इन्होंने कई जहाजों और साहसिकों की बलि ली है। फिर भी आज अनेक विज्ञानशास्त्री अनुसंधान के लिए महीनों और वर्षों तक उन पर अपना डेरा डाले रहते हैं। उनके पास हेलीकाप्टर तक की सभी सुविधाएँ रहती हैं।

यहाँ के कठोरतम जीवन का आभास देनेवाले दो एक प्रसंगों का उल्लेख रसप्रद होगा। १९२१ में स्पिट्सबर्ग प्रदेश में अनुसंधान करने के लिए आक्सफोर्ड का एक दल गया था। उन्होंने वहाँ के खनिज और उत्खनन के नमूने उनपर लेबल लगाकर भेजे थे। उनके भेजे नमूने उसी हालत में सलामत आए। पर अफसोस! उनपर के लेबलों को भूखे सियार खा गए थे। खुराक की कमी के कारण वहाँ के पशु और मनुष्यों की घ्राणेंद्रिय इतनी तेज हो जाती है कि वे पाँच पाँच मील दूर से भी अपने शिकार की गंध पा लेते हैं।

दक्षिण ध्रुव प्रदेश में न तो वनस्पति है और न ही जीव जन्तु हैं। वहाँ रोगोत्पादक जन्तुओं का भी खतरा नहीं है। अगर हों भी तो उन्हें फैलानेवाले मक्खी मच्छर और चूहे भी वहाँ नहीं हैं। बिलकुल आरोग्यप्रद स्वच्छ आबोहवा है अगर वहाँ की ठंड रास आ जाए तो।

गरम रेगिस्तानों में जैसे मरीचिका के दृश्य दिखते हैं वैसे ही ध्रुव प्रदेशों के बर्फिस्तानों में भी दीखते हैं। हवा में तैरती सूक्ष्म हिमकणिकाएँ प्रकाश का परावर्तन करती हैं। अतः जहाँ जो वस्तु न हो वह भी वहाँ दीखती है। इस तरह रेगिस्तान की अपेक्षा बर्फिस्तान के मरीचिका के दृश्य अधिक विस्मयकारक होते हैं। बर्फ की छोटी कणिकाओं के अलग-अलग हवा के स्तर जो विभिन्न

घनतावाले होते हैं उनसे भी मरीचिकाके दृश्य उपस्थित होते हैं। नीचे ठंडी और घन हवा हो और ऊपर अपेक्षाकृत गरम व पतली हवा हो तो नीचेकी ठंडी परत किरणोंका वक्रीभवन करती है। इससे दूरके दृश्य पास व जुदा ही ढंगके दीखते हैं। इस प्रकार ध्रुव प्रदेश भयानक पर अनेक मनोहर आश्चर्योंसे भरा है।
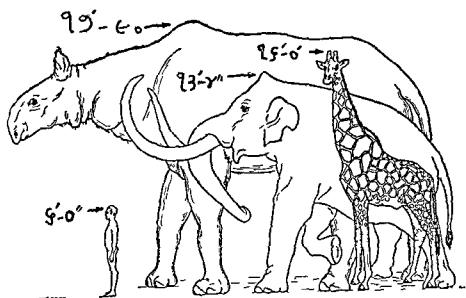
भूस्तर विज्ञानके साम्प्रत मायोसिन युगके बहुत ही ऊँचे प्राणियोंमें बलुचिथेरियमकी ऊँचाई पौने अठारह फुट यानी कि पाँच मीटर से भी कुछ अधिक थी। उसके साथ वर्तमान मानवकी ऊँचाई की तुलना कीजिए। गैंडेका यह पूर्वज अब नामशेष हो है।

क्रिस्टोफर कोलम्बस
अटलांटिक महासागर पार कर
अमेरिका पहुँचनेवाला प्रथम यात्री।

१५ : करुण मौत : भव्य विजय !

कमसे कम दो हजार वर्षोंसे मनुष्य अदम्य जिज्ञासासे प्रेरित होकर पृथ्वीके 'छोरों'की खोज कर रहा था। आजसे लगभग २,३०० वर्ष पहले यूरोपमें ग्रीक और रोमन प्रजाके सिवा कोई सुसभ्य प्रजा न थी, उस समय पाइथियस नामका एक ग्रीक साहसी नाविक उत्तरकी तरफ अपनी नावको खेता ही गया और जहाँ तक वह पहुँचा उसे अल्टिमा थुले' अर्थात 'आखिरी भूमि' नाम दिया। उसने लिखा है कि यहाँके लोग मधुमक्खियाँ पालते हैं और शहद निकालते हैं। नानसनके मतके अनुसार वह भूमि आज ट्रोंधाइम बंदरगाह है, जो नार्वेका मध्य किनारा होना चाहिए। यह स्थल वास्तवमें उत्तर ध्रुव-वृत्तसे भी करीब चार अक्षांशकी दूरी पर था, अतः वह 'अन्तिम भूमि' नहीं था।

जो वर्णन पाइथियसने किया है उससे मालूम होता है कि ये मधुमक्खी पालनेवाले लोग जंगली न थे। स्केंडीनेवियन नाविक उत्तरी ध्रुव समुद्रमें हस्तक्षेप करते रहते थे। सन् ४८४ ई० में सात ब्रेडन नार्वेका चक्कर लगाकर रशियाके उत्तरी किनारे श्वेत समुद्रमें पहुँचा था। लिखित उल्लेखोंमें ध्रुव प्रदेशकी खोजकी यह पहली यात्रा है।

ब्रिटिश नाविक
सर मार्टिन फ्रोबिशर

उत्तर ध्रुव समुद्रमें सर विलियम्स बैरेन्ट्सका काफिला। 'बैरेन्ट्स समुद्र' नाम इन्हीं की यादमें दिया गया है।

नौवी सदामे स्केन्डीनवियाके नोसमेन नाविक उत्तर ध्रुव वृत्तसे लग आइसलैंडके किनारे उतरे थे और उन्होंने वहा पर अपनी बस्तिया कायम की थी। इसी प्रकारकी एक बस्तीमसे एरिक राउड (लाल एरिक) नामके एक खूनी डाकूको जहाज लेकर भाग जाना पडा था। उसने अनेक वर्षों तक भटकनेके बाद सन ९८५ ई०के समयमे ग्रीनलैन्डकी खोज की और आइसलैंड वापस आकर उधरके लोगोको ललचाया कि यह नया खोजा हुआ प्रदेश 'हरियाला प्रदेश' (ग्रीनलैन्ड) है और बसने लायक है। इस प्रकार प्रलोभन देकर वह कई मनुष्यो और २५ जहाजोंके काफिलेको लेकर निकला। उनमेसे केवल १४ जहाज वहा पहुँचे जिनके यात्रियोने वहा अपनी बस्तिया बसायी। ग्रीनलैन्डकी ये बस्तिया वहा फूली-फली। यहाके व्यापारी यूरोपके साथ व्यापार करते थे। बादमे न जाने क्या, शायद शीतकी अधिकताके कारण इन बस्तियोका नाश हुआ।

कमसे कम चार सौ वर्षों तक नोसमेन नाविक पश्चिममे केनेडाके न्यूफाउण्डलैंड तकके किनारसे ग्रीनलैंड और आइसलैंड होकर पूर्वमे उत्तर ध्रुव महासागर स्थित (वर्तमान रशिया) नोवायाझेमल्या टापू तक अपने जहाज ले जाते थे। जब कोलम्बसने अमेरिकाकी खोज की उसके पहले सैकडो वर्ष पूर्व तक नोसमेन उत्तर अमेरिकाके उत्तर पूर्वी किनारेसे परिचित थे।

पन्द्रहवी सदीमे समुद्री मार्गोंसे नये-नये देश प्रदेश खोजनेकी जो होड पुर्तगालियो और स्पेनिशो द्वारा हुई उसका प्रभाव ब्रिटेन पर भी पडा था। चीन, भारत और इण्डोनेशियाकी खोज करते करते अगर कोलम्बसको अमेरिकाके दो महाद्वीप मिले तो अब उत्तर अमेरिकाकी उत्तरी बाजूसे उत्तर पश्चिम दिशामे एशिया पहुँचनेकी संभावना है या नही इस आशयसे सन १५७७ई०मे रानी एलिजाबेथने सर मार्टिन फ्रोबिशरके नेतृत्वमे एक काफिला भेजा। फ्रोबिशर केनेडाके उत्तरमे स्थित बेफिन टापूके दक्षिणी उपसागरसे आगे न बढ सका (अब यह उपसागर उसीके नामसे प्रसिद्ध है)। बर्फ उसके रास्तेमे बाधा बन गई। वह सुवर्ण-माक्षिक (iron pyrites)को सोना मानकर उससे ललचाया। वह खोजी न रहकर धन-लोलुप बन बैठा और जब इस सुवर्ण माक्षिकसे अपने जहाजको लादकर वापस आया तो अपनी मूर्खताके लिए हँसीका पात्र बना। उस समयसे ही सुवर्णमाक्षिक 'मूर्खोंका सोना' (fools go'd) कहलाता है।

यूरोपीय देश एशिया पहुँचनेका कम लम्बा मार्ग खोज रहे थे। पर केनेडाके उत्तरमे, उत्तरी ध्रुव प्रदेशकी बर्फने इन्हे आगे न बढने दिया। तब १८वी सदीके अंतमे केप्टन कुकने प्रशान्त महासागरमे जाकर साइबेरिया (रशिया) और अलास्का (अमेरिका)को अलग करते हुए बेरिंग जलडमरूमध्यसे होकर उत्तरी महासागरमे अपने जहाज आगे बढानेका प्रयत्न किया।

सर जम्स कुक
हवाइ टापुओंके आदिम निवासियोंसे लड़ने में वे मारे गए।

पृथ्वी प्रदक्षिणा करने वाले ब्रिटिश जहाजी सर जेम्स कुक और उनका जहाज 'रिज़ोल्यूशन'।

परंतु उसम वह असफल रहा। वीनस जानमन बेरिंग (सन १६८१से १७४१ ई०) थे तो जन्मसे डेनमार्कके निवासी, पर उन्होंने रशियाकी सेवाम अपनी सारी जिंदगी बितायी थी। ध्रुव प्रदेशकी खोजम उनके जैसा काम शायद ही किसीने किया होगा। सन १७२५ ई०म उन्होंने पदल ही रशियाके आरपार पाच हजार मीलका प्रवास किया और प्रशांत महासागरके किनारे स्थित अपने जहाज पर चढ़कर साइबेरिया और अलास्काको अलग करते हुए बेरिंग जल-डमरूमध्यको पारकर गए। इसीसे इस जलडमरूमध्यको 'बेरिंग' नाम मिला। उन्होंने अलास्काके ध्रुव प्रदेशका अनुसंधान किया जिसके परिणामस्वरूप अमेरिकी खड पर सोनेसे भरा (उससे भी अधिक बर्फसे भरा) विशाल प्रदेश रशियाको मिला। सन १८६७ ई०म अमेरिकाने रशियासे यह प्रदेश खरीदकर अपनी दूरदर्शिताका परिचय दिया। बेरिंगने अपनी दो यात्राओंके समय अलास्काम साइबेरियाके उत्तर और पूर्व किनारेसे ध्रुव समुद्रम काफी अनुसंधान किया। उन्होंने साइबेरियाके कामचाटका अंतरीपका नक्शा बनाया। सन् १७४१ ई०म तीसरी यात्राके दौरानमे उनका जहाज क्षतिग्रस्त होकर फँस गया और विटामिनयुक्त खुराकके अभावम वे स्कर्वी रोगसे मर गए। रशियाकी जितनी सेवा बेरिंगने की इतनी तो किसी रशियनने भी नहीं की होगी। बेरिंगका स्थान जगतके महान शोधकर्ताओंम है।

अठारहवीं सदीके अंतम रशियन साइबेरियाम बहुत आगे बढ़ गए थे। उन्होंने साइबेरियाके इस उत्तरी किनारेपर देखा कि इस बर्फके महासागरम जहाज नहीं चलाया जा सकता। इससे नाविक फिर कैनेडाके उत्तरम वायव्यका मार्ग खोजने निकल पड़े। ब्रिटेनके एडवर्ड पेरी सन् १८१९ ई०म लगभग आरपार निकल गए। अंतम बर्फके पहाड़ोंसे हारकर उन्होंने अपने जहाजोंको पीछेकी ओर मोड़ लिया।

इसके पश्चात ब्रिटिश सरकारने घोषणा की कि जो कोई भी नाविक वायव्यका समुद्री मार्ग खोज निकालेगा उसे बीस हजार पौण्ड इनाममे मिलेंगे और जो उत्तरम ८९ अंश तक पहुँच सकेगा उसे पाच हजार पौण्ड इनाम दिया जाएगा।

१९वीं सदीम जब इंजनवाले जहाज बने तो ब्रिटिश सरकारको लगा कि अब जरूर वायव्यका मार्ग खोजा जा सकेगा। अभी तक जो भी साहसिक अपने जहाजोंको तूफान और बर्फसे सदा ढके रहते ध्रुव समुद्रम ले जाते थे, उनके जहाज पालवाले तथा लकड़ीके बने होते

ब्रिटिश जहाजी
सर मार्टिन फ्रोबिशर

उत्तर ध्रुव समुद्रमें सर विलियम्स बैरेंट्सका काफिला। 'बैरेंट्स समुद्र' नाम इन्हीं की यादमें दिया गया है।

नौवीं सदीमें स्केंडीनेवियाके नार्समेन नाविक उत्तर ध्रुव-वृत्तसे लग आइसलैंडके किनारे उतरे थे और उन्होंने वहाँ पर अपनी बस्तियाँ कायम की थी। इसी प्रकारकी एक बस्तीमेंसे एरिक राउड (लाल एरिक) नामके एक खूनी डाकूको जहाज लेकर भाग जाना पड़ा था। उसने अनेक वर्षों तक भटकनेके बाद सन् ९८५ ई०के समयमें ग्रीनलैंडकी खोज की और आइसलैंड वापस आकर उधरके लोगोंको ललचाया कि यह नया खोजा हुआ प्रदेश 'हरियाला प्रदेश' (ग्रीनलैंड) है और बसने लायक है। इस प्रकार प्रलोभन देकर वह कई मनुष्यों और २५ जहाजोंके काफिलेको लेकर निकला। उनमेंसे केवल १४ जहाज वहाँ पहुँचे जिनके यात्रियोंने वहाँ अपनी बस्तियाँ बसायीं। ग्रीनलैंडकी ये बस्तियाँ वहाँ फूली फली। यहाँके व्यापारी यूरोपके साथ व्यापार करते थे। बादमें न जाने क्या, शायद शीतकी अधिकताके कारण इन बस्तियोंका नाश हुआ।

कमसे कम चार सौ वर्षों तक नोर्समेन नाविक पश्चिममें कैनेडाके न्यूफाउण्डलैंड तकके किनारेसे ग्रीनलैंड और आइसलैंड होकर पूर्वमें उत्तर ध्रुव महासागर स्थित (वर्तमान रशिया) नोवायाझेमल्या टापू तक अपने जहाज ले जाते थे। जब कोलम्बसने अमेरिकाकी खोज की, उसके पहले सैकड़ों वर्ष पूर्व तक नोर्समेन उत्तर अमरिकाके उत्तर पूर्वी किनारेसे परिचित थे।

पन्द्रहवीं सदीमें समुद्री मार्गोंसे नये-नये देश प्रदेश खोजनेकी जो होड़ पुर्तगालियों और स्पेनिशों द्वारा हुई उसका प्रभाव ब्रिटेन पर भी पड़ा था। चीन भारत और इण्डोनेशियाकी खोज करते-करते अगर कोलम्बसको अमेरिकाके दो महाद्वीप मिले तो अब उत्तर अमरिकाकी उत्तरी बाजूसे उत्तर-पश्चिम दिशामें एशिया पहुँचनेकी संभावना है या नहीं इस आशयसे सन १५७७ई०में रानी एलिजाबेथने सर मार्टिन फ्रोबिशरके नेतृत्वमें एक काफिला भेजा। फ्रोबिशर कैनेडाके उत्तरमें स्थित बैफिन टापूके दक्षिणी उपसागरसे आगे न बढ़ सका (अब यह उपसागर उसीके नामसे प्रसिद्ध है)। बर्फ उसके रास्तेमें बाधा बन गई। वह सुवर्ण माक्षिक (iron pyrites)को सोना मानकर उससे ललचाया। वह खोजी न रहकर धन लोलुप बन बैठा और जब इस सुवर्ण माक्षिकसे अपने जहाजको लादकर वापस आया तो अपनी मूर्खताके लिए हँसीका पात्र बना। उस समयसे ही सुवर्णमाक्षिक 'मूर्खोंका सोना' (fool's gold) कहलाता है।

यूरोपीय देश एशिया पहुँचनेका कम लम्बा मार्ग खोज रहे थे। पर कैनेडाके उत्तरमें, उत्तरी ध्रुव प्रदेशकी बर्फने इन्हें आगे न बढ़ने दिया। तब १८वीं सदीके अंतमें कैप्टन कुकने प्रशान्त महासागरमें जाकर साइबेरिया (रशिया) और अलास्का (अमरिका)को अलग करते हुए बेरिंग जलडमरूमध्यसे होकर उत्तरी महासागरमें अपने जहाज आगे बढ़ानेका प्रयत्न किया।

सर जेम्स कुक
हवाई टापुओंके आदिम निवासियोंसे लड़ने में वे मारे गए।

पृथ्वी प्रदक्षिणा करने वाले ब्रिटिश जहाजी सर जेम्स कुक और उनका जहाज 'रिवोल्यूशन'।

परन्तु उसमें वह असफल रहा। वीटस जानसन बेरिंग (सन् १६८१से १७४१ ई०) थे तो जन्मसे डेनमार्कके निवासी, पर उन्होंने रशियाकी सेवामें अपनी सारी जिन्दगी बितायी थी। ध्रुव प्रदेशोंकी खोजमें उनने जैसा काम शायद ही किसीने किया होगा। सन् १७२५ ई०में उन्होंने पैदल ही रशियाके आरपार पाँच हजार मीलका प्रवास किया और प्रशान्त महासागरके किनारे स्थित अपने जहाज पर चढ़कर साइबेरिया और अलास्काको अलग करते हुए बेरिंग जलडमरूमध्यको पारकर गए। इसीसे इस जलडमरूमध्यको 'बेरिंग' नाम मिला। उन्होंने अलास्काके ध्रुव प्रदेशका अनुसंधान किया जिसके परिणामस्वरूप अमेरिकी राइन पर सोनेसे भरा (उससे भी अधिक बर्फसे भरा) विशाल प्रदेश रशियाको मिला। सन् १८६७ ई०में अमेरिकाने रशियासे यह प्रदेश खरीदकर अपनी दूरदर्शिताका परिचय दिया। बेरिंगने अपनी दो यात्राओंके समय अलास्कासे साइबेरियाके उत्तर और पूर्व किनारेसे ध्रुव-समुद्रमें काफी अनुसंधान किया। उन्होंने साइबेरियाके कामचात्का अंतरीपका नक्शा बनाया। सन् १७४१ ई०में तीसरी यात्राके दौरानमें उनका जहाज क्षतिग्रस्त होकर फँस गया और विटामिनयुक्त खुराकके अभावमें वे स्कर्वी रोगसे मर गए। रशियाकी जितनी सेवा बेरिंगने की इतनी तो किसी रशियनने भी नहीं की होगी। बेरिंगका स्थान जगतके महान् शोधकर्ताओंमें है।

अठारहवीं सदीके अन्तमें रशियन साइबेरियामें बहुत आगे बढ़ गए थे। उन्होंने साइबेरियाके इस उत्तरी किनारेपर देखा कि इस बर्फके महासागरमें जहाज नहीं चलाया जा सकता। इससे नाविक फिर कैनेडाके उत्तरमें वायव्यका मार्ग खोजने निकल पड़े। ब्रिटेनके एडवर्ड पेरी सन् १८१९ ई०में लगभग आरपार निकल गए। अन्तमें बर्फके पहाड़ोंसे हारकर उन्होंने अपने जहाजोंको पीछेकी ओर मोड़ लिया।

इसके पश्चात् ब्रिटिश सरकारने घोषणा की कि जो कोई भी नाविक वायव्यका समुद्री मार्ग खोज निकालेगा उसे बीस हजार पौण्ड इनाममें मिलेंगे और जो उत्तरमें ८९ अंश तक पहुँच सकेगा उसे पाँच हजार पौण्ड इनाम दिया जाएगा।

१९वीं सदीमें जब इंजनवाले जहाज बने तो ब्रिटिश सरकारको लगा कि अब जरूर वायव्यका मार्ग खोजा जा सकेगा। अभी तक जो भी साहसिक अपने जहाजोंको तूफान और बर्फसे सदा दबे रहते ध्रुव-समुद्रमें ले जाते थे, उनके जहाज पालवाले तथा लकड़ीके बने होते

थे। आज जहा अद्यतन वैज्ञानिक उपकरणोसे सजे जहाज भी मुश्किलसे ही जा सकते है, वहा विकराल समुद्राम उन पुरोगामी वीरोन न जाने क्या क्या यातनाएँ भोगी होगी। उदाहरणके तौरपर विलियम बैरेटस नामका डच नाविक वायव्य मार्गसे अटलाण्टिकम होकर उत्तरी ध्रुव समुद्रके मार्गसे एशिया पहुँचनेके बजाय ठडकी अधिकताके कारण केवल ३७ वर्षकी उम्रम ही मृत्युके मुखमे चला गया। सन् १५८४ ई०म ध्रुव प्रदेशके प्रथम प्रवासके समय वह स्केडीनेविया (नार्वे, स्वीडन और फिनलैण्ड)के उत्तरम पूर्वकी ओर आगे बढा था। अब यह समुद्र इसी वीरके नामसे 'बरेटस समुद्र' कहा जाता है। वह नोवायाझेमल्या टापूके पूर्वम कारा समुद्रम पहुँचा। ध्रुव प्रदेशकी तीसरी यात्राके समय वह वायव्य मार्गसे सन १५९६ ई०म एशिया पहुँचनेके लिए निकला भी और प्रशान्त महासागरम पहुँचा भी होता पर उसने अधिक उत्तरीय मार्ग पकडा था, अत बर्फम फँस गया। ध्रुव प्रदेशम जाडा बितानेवाला यह प्रथम यूरोपीय-खोजी था। इस प्रवासके दौरान शीतके कारण उसके कुछ मल्लाह मर गए। वसन्त ऋतुम जब उसका जहाज बर्फम मुक्त हुआ, तबतक वह स्वय मर गया।

बरेटस अपने लक्ष्यको प्राप्त किये बिना ही मर गया पर जो नक्शे उसने बनाये थे व इतने स्पष्ट और सही थे कि उसके अनुगामी खोजियो के लिए वे बहुत ही उपयोगी सिद्ध हुए।

ध्रुव प्रदेशके अनुसधानम सबसे अधिक करुण घटना सर फ्रैंकलिन और उनके बहादुर नाविकोकी है। ब्रिटिश नौ विभागने एरेबस और टेरर नामके दो जहाजोको इजनम सुसज्जित कर सर फ्रैंकलिन के नेतृत्वम सन १८४४ ई०म वायव्य मार्ग खोजने भेजा। साढे तीन हजार टनके इन नन्हे जहाजोम व सभी सुविधाए थी जो पहले किसी जहाजम नही थी। उसम कुल मिलाकर १२९ नाविक थे। अत्यत उत्साह और उमगसे अग्रेज प्रजाने इन अभागे वीरोको विदा दी थी। पर इस काफिलेमसे एक भी नाविक वापस न लौट सका।

(आ) फ्रैंकलिनके साथी—चिरनिद्रामें

(अ) उत्तर ध्रुवकी खोजमें निकले ब्रिटिश खोजी सर जॉन फ्रैंकलिन

यो तो फ्रैंकलिनको अपनी पहली दो यात्राओम छ वर्षके दौरान ध्रुव प्रदेशोका काफी अनुभव प्राप्त हो चुका था। पर यहा तो अनुभवकी अपेक्षा भाग्यका ही महत्त्व अधिक था। फिर भी इस बार उनके दोनो जहाज ध्रुव प्रदेशम प्रवेश करते ही बर्फम फँस गए।

जब पानी बर्फ बन जाता है तब कुछ फूलता है व कुछ अधिक जगह घेरता है। इससे

वह जहाजोको दबाकर पीस डालता है। पहला जाडा उन्होंने इस वर्फकी कदम ही नि
और दूसरा भी उन्हें इसी प्रकार बिताना पडा। ताजी साग सब्जी और विटामिन 'सी'के अभ
उनके नाविक 'स्कर्वी' रोगसे मरने लगे। दूसरे जाडेमें स्वयं फ्रैंकलिनको भी जानसे हाथ धोने प

जब तीसरा जाडा आया तब तक उनके १२९मेंसे १०६ नाविक जीवित थे।
उनके दोनों जहाज बर्फमें दबकर पिस गए थे। खुराक खत्म हो चुकी थी और शिकारके लि
साधन भी न थे। जमे हुए समुद्रपर या हिमाच्छादित धरतीपर सफर करनेके लिए भी उनके पा
साधन-सुविधाएँ न थीं। पर अब कोई और चारा भी तो न था। इससे वे धरतीकी दिशामें च
पडे। वास्तवमें तो उन्होंने भयंकर यातनाओं और करुण मौतकी तरफ ही कदम बढाए थे।

अपने पति और उनके साथियोंकी खोजमें फ्रैंकलिनकी पत्नी अनेक दल भेजती रही
यहाँ तक कि इसीमें वह खुद तबाह हो गई। उसे अपने पतिके १९ वर्षके अनुभव ज्ञान तथा
शक्तिमें अटूट श्रद्धा थी। इसीलिए तो वह इतनी आशान्वित थी। ब्रिटिश सरकारने भी कई
दल खोजनेको भेजे। कुल ४०से अधिक दल इन्हें खोजने गए। उन्हें कई अनुभव हुए और
काफी जानकारी भी मिली। पर उन वीरोंमेंसे एक भी मनुष्य जीवित न मिला। जॉन राइ
(Rae) नामके एक खोजीको एस्किमो लोगोंसे मालूम हुआ कि कुछ गोरोंको उन्होंने छोटी
नावोंको बर्फपर खींचते देखा था। दस वर्षों तक चली इस खोजमें ध्रुव प्रदेशके सम्बन्धमें
इतनी जानकारी मिली थी, जितनी पिछले दो सौ वर्षोंमें भी नहीं मिली थी। साथ ही तीस
नाविकोंके बर्फमें जमे हुए शव भी मिले। उनके मुखपर अकल्पनीय और अवर्णनीय यातनाएँ
अंकित थीं। और शव तो न मिले पर इस करुण कथाकी सभी कड़ियाँ मिल गईं।

ध्रुव प्रदेशोंके अनुसंधानमें अखबारोंने भी किस प्रकार सहयोग दिया इसका उदाहरण
'न्यूयार्क हेरल्ड' है। अफ्रीकामें लिविंग्स्टन जा खो गए थे
उनकी खोजमें उसने स्टेनलीको भेजा था। ध्रुव प्रदेशकी
खोजके लिए इस अखबारके मालिक जेम्स गार्डन बनेटने
'जानेट' नामका जहाज तैयार किया और लेफ्टिनेंट द'लाँगकी
सरदारीमें ता० ८ ७ १८७९ को उसे सनफ्रांसिसकोसे रवाना
किया तब उसकी सफलताकी बहुत आशाएँ थीं। परन्तु
सितम्बरके प्रारम्भमें ही वह बर्फसे इतना जकड गया कि बीस
महीना तक बर्फके साथ ३०० मील तक खिंचता चला
गया। यह जहाज ऐसा बनाया गया था जो बर्फकी
टक्कर व दबावका सामना कर सके। ऐसे जहाजको भी
जब कप्तानने बर्फकी जकडमें फँसकर टूटते देखा तब उसने
इस सफेद कैदखानेसे छूटनेकी आशा भी छोड दी।

तीन नावें, छः बर्फ गाडियाँ २३ कुत्ते, ३३ आदमी
और ६० दिनों तक चले इतनी खुराक लेकर कप्तान द'
लाँग निकल पडे। परन्तु जब वे बर्फके पटपर, ग्रीष्मके
प्रतिकूल वातावरणमें भी, जी जानसे प्रयत्न कर अनेक

उत्तर ध्रुवकी खोजमें निकले
अमरीकी कप्तान द'लाँग। साइबे
रियामें इनकी करुण मृत्यु हुई।

यातनाएँ भोगकर साइबेरियाकी तरफ जा रहे थे तब बफका वह तैरता पट उनके साथियोंके साथ उन्हें तेजीसे विरुद्ध दिशामें बहाकर ले जा रहा था। इसकी जानकारीका सदमा इतना गहरा था कि वह अपने साथियोंसे यह हकीकत कहनेकी भी हिम्मत न कर सका।

बहुत लम्बी यात्रा तय करनेके पश्चात वे अन्तमें खुले समुद्रमें पहुँचे। यहाँ पर एक नाव अपनी सारी रसदके साथ डूब गई और दूसरी साइबेरियाके किनारे पहुँची। तीसरी नावमें दे'लांगने अपने साथियोंके साथ ता० १७.९.१८८१के दिन जब साइबेरियाकी लेना नदीके मुहानेमें प्रवेश किया तब केवल चार दिनकी खुराक बची थी। उनके सभी साथी हिमदंश (Frost bite)से पीडित थे। इतना होनेपर भी केप्टन सुजानसीब थे कि उनके साथियोंने अनुशासन व हिम्मत नहीं छोडी थी। फिर भी अक्टूबर तक वे जीवित न रह सके। सहायताके लिए दो आदमी आगे भेजे गए। उन्हें रशियनोंकी सहायता मिली थी। पर सहायताके लिए आए लोगोंको दे'लांग और उनके बचे दस साथियोंका कहीं पता न चला। जाडा पूरा होनेपर दे'लांगका शव मिला। सबसे बडी खोज तो उनकी १४० दिनोंके प्रवासकी डायरीकी थी जिसे उन्होंने बडे यत्नसे रखा था ताकि वह आगेके खोजियोंके लिए उपयोगी हो। इस ऐतिहासिक डायरीमें अंतिम नोट (लेखा) इतवार ता० ३० अक्टूबर १८८१का है और वह भी अत्यंत करुण— 'वाइड और गोर्ट्ज रातको चल बसे। थी कालिंग मरणासन्न हैं।"

मरणासन्न कप्तानका हाल कौन लिखता! इसके पश्चात उसपर क्या-क्या बीती और कैसी करुण मौत वह मारा गया, इसकी तो केवल कल्पना ही की जा सकती है। परंतु उसके १४० दिनके अनुभवने भविष्यके शोधकर्ताओंके मार्गमें कितना प्रकाश डाल दिया!

जब ध्रुव प्रदेशोंकी खोजके लिए अमेरिका और यूरोप अन्तराष्ट्रीय ध्रुव वर्ष मना रहे थे उसी समय एक तीसरी करुण घटना घटी। जिस वर्ष दे'लांगका अवसान हुआ उसी वर्ष १८८१में 'प्रोटियस' नामक जहाजमें अमरीकी सेनाने मेजर एडॉल्फस ग्रीली नामके अफसरके नेतृत्वमें एक काफिला उत्तर ध्रुवकी खोजमें भेजा। केनडाके मत्रसे उत्तरके टापू एलेसमियर पर जब यह काफिला पहुँचा, तब तक सभी लोग और प्रकृति—दोनों अनुकूल थे। पर बादमें उन लोगोंमें आपसमें विवाद पैदा हो गया।

एडोल्फ ग्रीली
वे ध्रुव तक पहुँच तो न पाये, पर उन्होंने नया विक्रम स्थापित किया।

तीन बहादुरोंने ८३ अक्षांशको पारकर एक नये विक्रमकी स्थापना की। इधर इस काफिलेने अनुशासनभंग तथा आपसी झगडोंमें यह विक्रम स्थापित किया था तो उधर अमरीकी सेनाने भी अव्यवस्थामें विक्रम जीता। वह इस काफिलेके लिए आवश्यक रसद भी न पहुँचा सकी। इससे ग्रीलीने अपने २५ साथियोंके साथ ता० ९.८.१८८३के दिन एक स्टीमलाँच और एक नाव लेकर वापसी सफर शुरू किया क्योंकि उनका जहाज बर्फसे क्षतिग्रस्त हो गया था। उन्होंने एक नावको उल्टी करके उसके सहारे आठ महीने काटे। जब उन्हें खानेको भी न मिला तो उन्होंने चमडेकी रस्सियाँ और चमडेके थैलोंको उबालकर खाया। एक सैनिकने खानेकी चोरी की इसमें उसे मौतकी सजा दी गई।

आखिरमें जब कुमुक आ पहुँची तब उसके नेताने इन लोगोंको एक फटे हाल तम्बूमें

नार्वेके विख्यात जहाजी नानसन फ्रिन्तोफ। उत्तर ध्रुव की खोजकी दिशामें इन्होंने कीतिमान स्थापित किया।
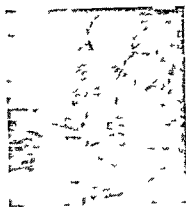
मत्युकी राह देखत पाया। उसमे मेजर ग्रीली भी थे, जिनका मस्तिष्क काम नही कर रहा था। परन्तु जब व पुन स्वस्थ हुए तब उन्होंने गौरवसे कहा 'मैंने ८३ उत्तर अक्षांशको पार करके एक नई सिद्धि पाई है।" लेफ्टिनेंट द' लाग और मेजर ग्रीलीके भाग्यकी तुलना करें तो मालूम होगा कि ग्रीली बच गए। इतना ही नहीं, उन्होंने दीर्घायु भी पायी। व मेजर जनरलके पद तक पहुँचे और सन १९३५ तक जीवित रहे।

ध्रुवपर पहुँचनेकी प्रतिष्ठा पानेको इतने साहसिक तरसते थे कि १९०८म डा० फ्रेडरिक कुक नामके एक अमरीकीन दावा किया कि उसने उत्तर ध्रुव खोज निकाला है। ध्रुव प्रदेशका काफी अनुभव रखनवाले कुकको जब ध्रुव प्रदेशके असली खोजी पियरीने ललकारा तो उसका दावा गलत निकला।

अब यह खयाल निश्चित रूपसे गलत सिद्ध हो गया था कि उत्तरी ध्रुव पर धरती है। नार्वेके डॉ० नानसनने बताया कि द लागका अनुभव सूचित करता है कि उत्तर ध्रुवके आसपास बर्फका पट है। इसस ऐसा जहाज बनाना चाहिए जो बर्फके जमनेपर बर्फमें दब-पिस जानेके बजाय ऊपर उठकर सतहपर आ जाए और उसके पश्चात बर्फके साथ साथ घिसटता रहे। साथ ही जहाजम रसद बारा इतनी मात्रामें रखी जाए कि जो वर्षों तक चल सके और बाहरी सहायताकी अपेक्षा न रखी जाए। जिस प्रकार साइबेरियाके किनारेसे लकडीके लट्ठे प्रवाहके साथ बहकर ग्रीनलैंडके किनारे पहुँचते हैं उसी प्रकार जहाज भी उत्तर ध्रुव पर क्या न पहुँचे? उसन फ्राम नामक ऐसा जहाज बनाया और उसे बर्फम छोडा। द' लागके जहाज जीनेटका कुछ टूटा भाग साइबेरियाके समुद्रमसे तीन वर्षोंके बाद ग्रीनलैंड के किनार पहुँचा था।

फ्राम नार्वेके पूर्वम होकर लगभग ७८ उत्तर अक्षांशके पास ही स्वेच्छासे बर्फम कद हो गया। पर जब नानसनको यकीन हो गया कि बर्फका पट उसे उत्तरकी तरफ नहीं खीचकर ले जा रहा है तो उसने एक नई योजना बनायी। 'फ्राम' जहाज ता० २४-६ १८९३के दिन रवाना हुआ था। अब उसे पौने दो वर्ष होने आए थे। अगर अब उत्तर ध्रुव पहुँचना है तो पैदल ही आगे कूच करना चाहिए। नानसनने अपने साथी याल्मार जोहानसन, दो बर्फ-गाडियाँ, कुत्ते और १०० दिनके लिए पर्याप्त खुराक लेकर उत्तर ध्रुवकी तरफ कदम बढाए। यह एक खतरनाक साहस था। बर्फका पट ऐसा सपाट नहा था जिसपर कुत्ता-गाडी सरक सके।

बरफकी चिकनी सतहपर बार-बार गाड़ियोंको धकेलना पड़ता था। सन् १८९५में मार्च मासमें यह यात्रा शुरू हुई थी। वे आठ अप्रैल तक ८६ उत्तर अक्षांश और १४ मिनट तक पहुँच गए और यहाँ उन्होंने एक नया कीर्तिमान स्थापित किया। पर अब गरमीके आगमनसे बरफ पिघलने लगी थी। इसके बाद पानीपर तैरते बरफपर चलकर जमीनपर पहुँच जाना जरूरी था। अतः जाड़ेका समय बितानेके लिए उन्होंने रशियाके उत्तरमें स्थित फ्रांज जोसेफ नामक टापू पर आश्रय लिया। नानसनने सिद्ध कर दिखाया कि जिस प्रकार एस्किमो लोग बिना बाह्य सहायताके आर्कटिकमें जीवित रह सकते हैं उसी प्रकार स्वावलंबन करके ही उत्तर ध्रुव प्रदेशमें भी रहा जा सकता है। दोनों वीरोंने पत्थरकी कुटियामें रहकर तथा मांस और चर्बी खाकर गुजारा करके जाड़ा पार किया। आठ महीने इस प्रकार बिताकर वे पुनः वापस चले।

नानसन ध्रुव प्रदेश तक तो न पहुँच सके पर उन्होंने ध्रुव प्रदेशका बहुमूल्य ज्ञान प्राप्त किया। उन्होंने निश्चयपूर्वक बताया कि ध्रुव प्रदेश पर समुद्र रहा है। साथ ही यह भी बताया कि जैसे-जैसे ध्रुव प्रदेशकी ओर आगे बढ़ा जाए, ध्रुव समुद्र गहरा होता जाता है। इसी समय उनका जहाज 'फ्राम' न्यू साइबेरियाके किनारेके पास होकर करीब ८६वें अक्षांश तक बरफके साथ तिरता अटलांटिक महासागरकी तरफ निकला। इस प्रकार नानसनका साहस बड़ा यशस्वी रहा। वे सबसे अधिक उत्तरमें पहुँचे। उन्होंने सबसे अधिक ज्ञान अनुभव पाया। उनका जहाज उत्तर ध्रुव महासागरके आरपार निकल गया और सबसे महत्त्वपूर्ण बात तो यह थी कि इस तीन वर्षके लम्बे अरसेमें उनका एक भी साथी मारा नहीं गया।

नानसन उत्तरी ध्रुवसे मात्र २२४ समुद्री मील दूर रहे थे। २०० वर्षोंमें इतने सारे जिज्ञासु वीरोंने अपने अनुभव, यातना और मृत्यु द्वारा भी ध्रुवका मार्ग खोज लिया था कि अब २०वीं सदीके वैज्ञानिक साधनोंके द्वारा उत्तरी ध्रुवपर पहुँचना संभव होना ही चाहिए था। यह यश पाया अमेरिकाके रॉबर्ट पियरी और उनके एक नीग्रो—नौकर—साथी मैथ्यु हेनसन और दो एस्किमोने। पियरीने अपनी सारी जिन्दगी उत्तर ध्रुव प्रदेशके अनुसंधानमें लगाई थी। ग्रीनलैंडके उत्तरमें धरती ध्रुव तक जाती होगी इस खयालको उन्होंने असत्य सिद्ध कर दिया था। इसीसे ग्रीनलैंडका उत्तरी छोर अब पियरीलैंडके नामसे पहचाना जाता है।

रॉबर्ट पियरी (१८५६—१९२०)
उत्तर ध्रुव पहुँचनेवाला
प्रथम वीर पुरुष।

१९०८में जुलाई महीनेमें पियरी 'रूजवेल्ट' नामक जहाजपर निकल पड़ा। ग्रीनलैंडके उत्तरमें कितने ही पालवाले लकड़ीके जहाज बरफमें फँसे पड़े थे और बरफके द्वारा दब पिसकर नष्ट हो गए थे। परंतु लोहेके बने इंजिनवाले जहाजसे ठीक उत्तरके एल्समियर टापूके उत्तरी छोर तक पहुँचना पियरीके लिए सरल था। अतः यहाँ पर अपना अड्डा बनाकर वह अपने छः साथी १७ एस्किमो और १३३ कुत्तोंका काफिला लेकर उत्तर ध्रुवकी तरफ बढ़ा। जैसे एवरेस्ट और अन्य शिखरोंपर चढ़नेके लिए आश्रय तथा

रसदके लिए एकके बाद दूसरी छावनी डाली जाती है, उसी प्रकार पियरीने भी किया। उसके साथी खाने-पीनेकी रसद उनम गाड़गाड़कर वापस लौटते गए। ता० १ अप्रल, १९०९के दिन ध्रुव केवल १३३ समुद्री मील दूर था तब बाकी सभी साथियोको वापस भेजकर पियरी अपने सीटी नौकर हेनसन और चार एस्किमोको लेकर तेजीसे आगे बढ़ा। वह भाग्यशाली था। इसके पूर्व उसके कई पुरोगामियोको प्रकृतिने सताकर वापस भेजा था अथवा मार डाला था। पर पियरीके भाग्यसे बहुत ही अनुकूल वातावरण था। फिर भी ता० ६ अप्रैलको सुबह १० बजे जब वह ध्रुवसे सिर्फ ३ मिनटके अन्तर पर था—अर्थात ८९ अक्षांश और ५७ मिनट पर वह पहुँचा था—तब तो वह इतना थक चुका था कि ठीक ध्रुव कहाँ है इस खोजनेकी भी उसम सामर्थ्य न थी और आगे चलना असभव हो गया था।

फिर भी, आखिरम वह ध्रुव पर पहुँचा और नाप लेकर निश्चित स्थानपर उसने ध्वज फहराया। उसने अपनी डायरीमे लिखा है कि जहा पहुँचनेके लिए पिछले तीन सौ वर्षोसे खोजी जूझ रहे हैं, तरस रहे हैं और बीस बरसोसे जहा पहुँचनेके मैं स्वय सपने देख रहा था, उस स्थान पर—उत्तर ध्रुव पर—पहुँचनेका यश आखिर आज मुझे मिला है।

बीस घटे वैज्ञानिक अनुसधानके लिए ध्रुव पर बिताकर पियरी अपने पाच साथियोके साथ वापस आया। इस प्रकार २,३०० वर्ष पहले पाइथियसने ध्रुव प्रदेशकी दिशाम पृथ्वीका सिरा खोजनेका जो प्रारम्भ किया था उसे पियरीने पूरा किया।

उत्तर ध्रुव पर ध्वज फहराते खोजी

सर जॉर्ज ह्यूबर्ट विल्किन्स

उत्तर ध्रुवके सम्बन्धम और कई साहस उल्लेखनीय हैं। १९५९ म अमरिकाकी अणुसबमरीन (पनडुब्बी) 'नॉटिलस' और बादम 'स्केट' उत्तर ध्रुव महासागरकी बर्फ परकी सतहके नीचे डुबकी मारकर तथा ध्रुव पर सर ऊँचा कर पुन डुबकी मारकर सामनेकी तरफ निकल गई थी। ऐसे साहसकी कल्पना आस्ट्रेलियाके सर ह्यूबट विल्किन्सने दशाब्दियो पहलेकी थी। १९३१म अमरिकाके पासस एक पुरानी सबमरीन लेकर उन्होंने इसका प्रयास भी किया था। उन्होंने बर्फके नीचे डुबकी भी मारी, पर खराब हवामानके कारण उनकी सबमरीनको नुकसान पहुँचा जिसमे उन्हें अपना प्रयास छोड़ देना पड़ा। फिर भी पानीकी गति और बर्फकी गतिके सम्बन्धम उन्होंने बहुत उपयोगी जानकारी प्राप्त की।

स्टीफनसन विल्हालमूर

आज स्वीडनकी एयरलाइसके यात्री-हवाई जहाज ध्रुव पर होकर उडते हैं। यह कल्पना भी इसी दूरदर्शी आस्ट्रेलियनकी थी। सन १९२८म उन्होंने अलास्कासे स्पित्जबर्ग टापू तक दो हजार मीलकी उडानकी थी और ध्रुव प्रदेशके ऊपरसे होकर यात्री हवाई जहाजोंके नियमित यातायातकी सभावनाकी जाच की थी।

विलशाल्मूर स्टीफसन नामके एक आइसलैडर अमरीकीने सन १९१८म उत्तरी ध्रुव महासागरके तरते बफ पर पहला निरीक्षण केन्द्र स्थापित किया और आठ महीनाम ४००

आमुडसनका उत्तर ध्रुव पर आक्रमण—इ० १९२५

मील्से भी अधिक अन्तर तक उस पर तैरता रहा। बाहरी सहायताके बिना एस्किमोकी तरह ध्रुव प्रदेशम स्वावलम्बी रूपसे जीनेकी जो कल्पना ग्रानसनने की थी उसको स्टीफन्सनने आगे बढाया। वह अपने दो मित्रोंके साथ सिर्फ शिकारके साधन लेकर ही पाच वर्षो तक ध्रुव प्रदेशम घूमते रहे। वे एस्किमोकी तरह जिये और उस समय तक जो टापू नही भी खोजे गए थे उनको खोजकर इन पाच वर्षोम उन्होंने उनके नक्शे बनाये। उन्होंने बताया कि ध्रुव प्रदेशके तुन्द्रा मदानोम चार करोड साभरा (साबर हिरन)को पाला जा सकता है और इस प्रकार बहुत बडे पमानेपर मासका निर्यात किया जा सकता है।

जिस प्रकार पियरीने बफकी ऊपरी सतहपर ध्रुव प्रदेशकी खोजकी जिस प्रकार 'नाटिलस'का कप्तान बफके नीचे डुबकी मारकर जमे हुए महासागरम ध्रुव पर खडा रहा उसी प्रकार 'नाटिलस'से पहले आकाशम अमेरिकाके एडमिरल बायडने विमानम (Aeroplane) और नार्वेके आमुडसनने सन् १९२६म हवाईयान (Airship) पर बैठ कर ध्रुव पर पहली उडान की। आमुन्डसनने लिंकन एल्सवर्थके साथ सन १९२५म उत्तर ध्रुव पर पहुचनेका प्रयत्न किया था। उसने एक स्थानपर अपने हवाई जहाजको उतारा भी था। पर बफम वह हवाई जहाज फँस गया। छब्बीस दिन तक वहाँ रुककर उन्होंने सिर्फ लकडीके तीन फावडो और २ पाउण्डकी कुल्हाडीसे ३०० टन बफको हटाया तब वे वापस लौटनेम सफल हुए। इसके दूसरे ही वष ध्रुव परसे उन्होंने सफलतापूवक उडान की। उत्तर तथा दक्षिण—दोनो ध्रुवोपर विमानम उडने वालोम बायड पहले थे।

१६ : विकराल खंड

पश्चात पट पर भारतसे पाँच गुना फैला भूखंड हो परन्तु उसपर एक भी मनुष्य अथवा पशु न हो तथा उसकी धरतीपर सोलह हजार फुट मोटी बर्फकी तह बिछी हो और मनुष्यको ऐसे विशाल खंडके बारेमें १९वीं सदी तक पता भी न हो, यह बड़ी विचित्रता है।

उत्तर ध्रुवकी अपेक्षा दक्षिण ध्रुव पर विजय पाना अधिक कठिन था, लगभग असंभव लगता था। फिर भी वह अपेक्षाकृत सरलतासे विजित हो गया। उसने केवल एक ही दलकी बलि ली और वह भी ध्रुव पर विजय पानेके पश्चात हो।

दक्षिण ध्रुवके सम्बन्धमें भी दो हजार वर्ष पहले प्राचीन ग्रीक लोगोंकी कल्पनाएँ थीं और उनमें वे सही भी थे। उन्होंने सोचा था कि यदि पृथ्वी गोल है तो उसके तलमें भी जमीन होनी चाहिए जिसके ऊपर यह गोला टिका रहे। उनके द्वारा कल्पित इस प्रदेशका टेरा आस्ट्रालिस इन्कोग्निटा अर्थात 'दक्षिणका अज्ञात खंड' नाम दिया गया था। परन्तु उत्तर ध्रुवमें जानेवाले पादरियोंकी भांति बादमें ग्रीक दक्षिण ध्रुवकी खोजमें न गया।

सबसे पहली पृथ्वी प्रदक्षिणा फर्डिनेन्ड मैगेलन नामक एक पुर्तगाली नाविकने की। सन् १५२० ई०में उसने दक्षिण अमेरिकाके दक्षिणमें अटलान्टिकमेंसे प्रशान्त महासागरमें प्रवेश किया। तब उसने सोचा कि उसने दक्षिणी खंड देखा है। उसपर उसने कुछ अलाव जलते देखे, इससे उसने इस प्रदेशको 'तिएरा देल फुएगो' अर्थात अग्निका खंड नाम दिया। पर यह उसकी गलतफहमी थी, क्योंकि वह तो दक्षिण अमेरिकाके दक्षिण भागसे टूटकर अलग हुआ एक द्वीप ही था। मैगेलन पृथ्वीकी प्रदक्षिणा पूरी किये बिना ही स्वयं मारा गया और उसके चार जहाजोंका भी नाश हुआ। सिर्फ एक जहाजने ही पृथ्वी प्रदक्षिणा पूरी की।

१८वीं शताब्दी नाविकोंके इतिहासमें ब्रिटेनका जेम्स कुक दक्षिण खंडकी खोजमें ७१ अक्षांश दक्षिण तक पहुँचा। पर दक्षिण ध्रुवसे १५० मीलकी दूरी पर ही बर्फसे घिरा रुक गया। वह इस निर्णय पर पहुँचा कि अब इससे और अधिक दक्षिणकी तरफ नहीं जाया जा सकता, और जानेसे कोई फायदा भी नहीं है। मैगेलन जिस प्रकार फिलिपाइन्समें मारा गया उसी प्रकार कुक हवाई टापूमें मारा गया।
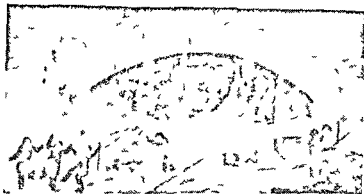
जेम्स रास
चुम्बकीय उत्तर ध्रुवकी खोज

और साल नामक सस्तन प्राणी बहुत हैं। इससे यूरोपके जहाजी लोग उनके तेल और मासके लिए शिकार करने वहा जाने लगे और अधिकाधिक दक्षिणकी तरफ उतरने लगे। इस प्रकारके एक शिकारी नेथेनियल पामरने दक्षिण अमरिका के दक्षिणी किनारे पर हान अंतरीपके दक्षिणमें जमीन देखी, पर वह दक्षिण ध्रुवखड ही है ऐसा उसे खयाल भी न आया। पामर और बेलिंग शाउसन एक ही समय दक्षिण ध्रुव महासागरमें थे। अमरिका और रशिया दोनों ऐसा दावा करते हैं कि हमारे नाविकने दक्षिण ध्रुव खडकी खोज की। आज तिएरा देल फुएगोके सामने दक्षिण ध्रुव खडका अन्तरीप जैसा प्रायद्वीप पामरके नामसे, दोनोंके बीचका समुद्री भाग बेलिंग शाउसनके नामसे तथा द्वीपसमूहके बगलका टापू ज़ार अलेक्ज़ैंडरके नामसे प्रसिद्ध है।

चुम्बकीय उत्तर ध्रुवकी खोज करनेवाले ब्रिटिश खोजी जेम्स क्लार्क रासने १८४२में ७८ दक्षिण अक्षांशको पारकर नया विक्रम स्थापित किया। वह समुद्र आज 'रास समुद्र' कहलाता है।

अब नार्वेके नाविक भी इस स्पर्धामें शामिल हुए। बोरग्रेविंक नामका जहाजी दक्षिण ध्रुव खडपर उतरा और उसने वहा पर एक जाडा भी बिताया। इस प्रकार उसने एक साथ दो विक्रमोंकी स्थापना की। जर्मन भी इस स्पर्धामें आगे आए। सन् १९०१में कमाण्डर राबर्ट स्काट 'डिस्कवरी' जहाजमें रास समुद्रके पश्चिममें घुसे और मैकमरडो उपसागरके किनारे उन्होंने जाडा बिताया। जो परम साहसी मनुष्य भविष्यमें एक बड़ी कीर्तिको पानेवाला था, उसने देखा कि उत्तर ध्रुव प्रदेशसे दक्षिण ध्रुव खडकी परिस्थिति बिल्कुल भिन्न ही है। यहा कुत्तागाडीसे भी प्रवास सम्भव नहीं, क्योंकि कुत्तोंको खिलानेके लिए और शिकार करनेके लिए यहा कोई प्राणी नहीं है। दूसरी बात यह कि यहा पृथ्वीपर विकट पहाड हैं अथाह बर्फ है और उत्तर ध्रुवसे अधिक ठड तथा अधिक तूफानी पवन है। ऐसी परिस्थितिमें मनुष्यको स्वय गाडी खीचनी पडती है और वह काम ऐसी भयकर परिस्थितियोंमें अत्यत कठिन है।

स्काटके साथ अर्नेस्ट हेनरी शेकल्टन नामका एक आयरिश था। १६ वर्षकी उम्रमें ही यह लडका साहसकी खोजमें स्काटके साथ निकल पडा था। पर बर्फगाडी खीचनेमें सहायता देनेवाले शेकल्टनको अनुपयोगी समझकर स्काटने वापस भेज दिया। रोषसे भरे शेकल्टनने सन् १९०७में खुद एक काफिला तयार किया और दक्षिणी भौगोलिक ध्रुव तथा दक्षिणी चुम्बकीय ध्रुव—दोनों ध्रुवोंकी खोजमें निकल पडा।

परन्तु शेक्लटनने एक गंभीर भूल की थी। उसने अपनी गाड़ी खींचनेके लिए माइ
न टट्टू पसन्द किये थे। पर जहां कुत्तोंको खिलानेके लिए ही शिकार न मिलता हो वहां
...ओंको खिलानेके ...ए घासका तिनका वहांसे मिलता? ...र, इन टट्टुओंमें साइबेरियाके हस्की (Husky) कुत्तोंकी अपेक्षा ठंड सहन करनेकी शक्ति भी कम थी। शेक्लटनने अक्टूबर १९०८के दिन ध्रुवकी तरफ कूच की, इससे पहले ही उसके सभी टट्टू मर चुके थे और जाते-जाते अभी तो उसे १,७३० मील तय करने थे।

इतना होनेपर भी इस बहादुर आयरिश युवकने अपनी यात्रा शुरू की। दक्षिण ध्रुव अब केवल १०० मील की ही दूरी पर था। परन्तु दुश्मनने अब उसपर उलटा वार किया। ११,६०० फुट ऊपर, शून्यसे ५६ अंश से नीचे तापमानमें वह ...व तूफानमें ८८ अंश २३ मिनट पर पहुंचा। अब तो खुराक भी खतम होने आयी। फिर भी एक बार और प्रयत्न किया और तब शेक्लटनने पराजय स्वीकार कर ली, क्योंकि ध्रुव पर पहुंचकर वापस आनेके लिए न तो खुराक ही थी न शक्ति ही। जो चार टट्टू बचे थे वे सब खानेके काम आ गए थे। उन्हें खाकर वह बीमार पड़ गया था।

पृथ्वीके उत्तर ध्रुव और दक्षिण ध्रुवके दरमियान बहता चुम्बकीय प्रवाह अवकाशमें भी बहता है। पृथ्वीके चुम्बकीय ध्रुव और भौगोलिक ध्रुव भिन्न भिन्न हैं। अखंड रेखा भौगोलिक ध्रुवोंको जोड़ती है, खंडित—बिंदियोंवाली—रेखा चुम्बकीय ध्रुवोंको जोड़ती है।

दक्षिण ध्रुव प्रदेशमें शेक्लटनका दल और उनका जहाज।

शेक्लटन भौगोलिक दक्षिण ध्रुव तक तो न पहुंच सका, पर उसके द्वारा भेजा ग...

प्रो० डेविडका दल दक्षिण चुम्बकीय ध्रुव पर पहुँच गया। दक्षिण ध्रुव सम्बन्धी तब तकके इतिहासमें उन दानोंके ये सबसे बड़े पराक्रम थे। नार्वेके आमुंडसन जब नानसनके प्रसिद्ध जहाज फ्राम पर सवार होकर उत्तर ध्रुव पर विजय पाने जा रहा था तब उसने सुना कि उत्तर ध्रुव पर तो पियरीने विजय पा ली है। इससे उसने निश्चय किया कि वह दक्षिण ध्रुव पर अवश्य ही अपने देश का झंडा फहराएगा। उसी बीच शेकलटनके पराक्रमसे उत्तेजित होकर स्काट भी दक्षिण ध्रुव पर विजय पाने निकल चुका था। दोनों जानते थे कि अब स्पर्धा होनेवाली है।

आमुंडसन सामान खींचनेके लिए कुत्ते ले गया और उसने मनुष्योंकी खुराकके लिए भी कुत्तोंके मासका उपयोग किया। जैसे जैसे खुराक कम होती गई वैसे-वैसे लौटते सफरके लिए खुराक संगृहीत रखनेको कुत्तोंका कत्ल कर उनका मास बर्फमें गाड़कर रखता गया। लौटती सफरके लिए उसने केवल १८ चुने हुए कुत्तोंको ही रखा। उच्च पहाड़ी प्रदेशमें स्थित दक्षिण ध्रुव पर वह १४-१२-१९११के दिन पहुँच गया और वहां उसने नार्वेका झंडा फहरा दिया। दक्षिण ध्रुव पर उसने बर्फकी एक ढेरी (cairn) बनाई और उसमें स्काटके लिए एक संदेश भी रखा। प्रकृतिकी कृपा और परम मानव पुरुषार्थसे उसने जगतमें उस समय तकका सबसे बड़ा पराक्रम किया था। जाते समय और लौटते समय दोनों समय प्रकृतिने उसपर कृपा की थी। उसके लिए वातावरण अनुकूल रहा था।

दूसरी ओर, सामनेकी तरफसे रास समुद्रमेंसे आते हुए कप्तान स्काटके दुर्भाग्यकी क्या बात कहें! प्रारम्भिक यात्राके लिए उसने टट्टू पसन्द करनेकी भूल की और उसे अपनी भूलका भान भी हुआ। ता० १-११-१९११के दिन स्काटने ध्रुव प्रदेशकी दिशामें कूच किया। रास समुद्र पार करनेके

नार्वेके महान खोजी रोआल्ड आमुंडसन। १९११के दिसम्बरमें दक्षिण ध्रुव पर सर्वप्रथम पहुँचे और १९२६के मईमें उन्होंने उत्तर ध्रुव परसे सर्वप्रथम उड़ान की।

दक्षिण ध्रुवपर सर्वप्रथम पहुँचनेकी स्पर्धामें हारा हुआ अंग्रेजी दल। मध्यमें आगे स्कॉट हैं। विजय प्रस्थान करनेवाले वीरोंके मुखपर कैसा उत्साह झलकता है।
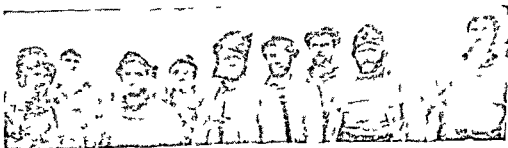
पश्चात रास वेरियर नामक जम हुए बर्फका पट आता है। इसके बान्के किनारेसे ध्रुवका अतर कमसे कम है। उसे आठ हजार फुट ऊचे पहाडी प्रदेश पर चढना था। सामनकी तरफ आमुडसनको वातावरण जितना अनुकूल रहा, उतना ही स्काटके लिए इस तरफ का वातावरण प्रतिकूल रहा। स्कॉटने इसका लेखा अपनी डायरीमे किया है।

जब ध्रुव १५० मील रह गया तब उसने बाकी आदमियोको वापस भेज दिया, सिफ विल्सन, ओटस इवान्स और बावसको लेकर वह ध्रुवकी ओर आगे बढा। ये सभी जवान थे। सबसे बडा खुद ४३ वषका और सबसे छोटा बावस २८ वषका था। स्काट हर रोज अपनी डायरीम अपनी मुसीबताका बयान लिखता था। अनुकूल वातावरणके लिए वह कितना तरसता था!

बफगाडी खीचते ये सब थककर चूर हो चुके थे और दूरीका हिसाब लगाया करते थे। जो भयकर यातनाएँ वे सहन कर रहे थे उससे भी बडा आघात उन्ह ता० १६ जनवरीके दिन लगा। जब ध्रुव केवल १८ मिनट दूर रह गया था तब बावसने दूर पर बफकी एक ढेरी देखी। पास जानेपर मालूम हुआ कि वहा नार्वेका झडा फहरा रहा है एक बफगाडी पडी है गाडियाके निशान हैं, कुत्ताके पराके निशान बफ पर उभर आये हैं, और यहा पर जो छावनी बनी थी उसके निशान भी हैं। १८ ता०को स्कॉटने आमुडसनके पत्रको खोज निकाला जिसमे लिखा था कि कृपा करके इस पत्रका हमारे (नार्वेके) राजा हाकोनको भेज दीजिएगा।

वापस आते समय ओटसको हिमदशकी पीडा होने लगी। उसके साथी बिना ओटसको लिये आगे बढना नही चाहते थे। यह देखकर ओटसने अपने मित्राकी जान बचानेके लिए स्वय आत्महत्या करनेका निश्चय किया। बाहर भयकर हिम झझावात था। उस समय हिमदशसे पीडित ओटस तबूके बाहर सनसनाते हिम झझावातमे अदृश्य हो गया। स्वच्छासे उस बफमे गडकर मर गया।

ओटसकी आत्महत्यासे भी स्कॉट और उसके साथी बच न सके। वे भी हिमदश (frost bite) से अत्यन्त पीडित थे। सुन्न पडकर सडते अगोको काट डालनेकी जरूरत थी। अब बफगाडीको खीचनेके लिए चार अपग ही बचे थे और आगकी छावनीपर पहुँचनेके लिए केवल ११ मील बाकी थे। पर वे भूख और रोगसे मर रहे थे। उस दिन स्काटने अपनी डायरीमे लिखा— अतकाल दूर नही है। कैसी करुणापूण स्थिति है। अब अधिक नही लिख सकूगा।

इसके पश्चात उन्होने कौनसी-कैसी यातनाएँ भोगी व किसकी मृत्यु कब हुई इसका कोई पता नही चलता। आठ महीनेके बाद उनके शव, पत्र तथा डायरी मिली। पचास वषके पश्चात स्काटका पुत्र पिताके द्वारा गाडी गयी खुराककी खोजमे गया। पचास वर्षों तक यह खुराक डिब्बामे भरा सुरक्षित थी और खायी जा सके, इतनी अच्छी थी। १९३५की ३ जनवरीको एल्सवथ आस्ट्रेलियासे जहाजमे दक्षिण ध्रुवके लिए रवाना हुआ। उड्डयनके लिए जहाजमे एक खास हवाई जहाज रखा गया था।

दक्षिण ध्रुवकी तरफ लिटिल अमेरिकाके पास वे फँस गए जहाँ उन्ह कुछ समयके लिए रुकना पडा। उनके वायरलेस सेटके व्यवहारके साधन बिगड गए थे। पर कोई भी सन्देश न मिलनेसे आस्ट्रेलियासे एक दल उनकी सहायताके लिए आ गया और उन्ह बचा लिया। साथमे दिये गए चित्रोसे उनकी परिस्थितिकी कल्पना की जा सकती है।

आमुडसनकी विजय और स्कॉटकी करुणापूण मृत्युके बाद, तीन शताब्दियोके बाद अमेरिकाके

एडमिरल बायडने दक्षिण ध्रुवपर एक नये युगका प्रारम्भ किया। वे विमानमें बैठकर दक्षिण ध्रुव पर गए। उनका दूसरा पराक्रम था दक्षिण ध्रुव पर जाड़ेका मौसम बितानेका। वर्षों तक उन्होंने दक्षिण ध्रुव पर अनुसंधान किया। आज उन्हींके कदमोंपर चलकर एक दर्जन देशोंके वैज्ञानिक दक्षिण ध्रुव प्रदेशके किनारेसे लेकर ध्रुव तक नियमित रूपसे अपनी छावनी बनाकर रहते हैं। यहां अमेरिका और रशियाके विज्ञानशास्त्री भी मिल-जुलकर सहयोगसे काम करते हैं। यहां पर उन्हें आधुनिकतम सभी सुविधाएं दी जाती हैं। वे पक्के वातानुकूलित गर्म मकानोंमें रहते हैं और विमानोंके द्वारा उन्हें अखबार फिल्म, पुस्तकें, साग-सब्जी, अंडे, दूध आदि सभी जरूरतकी चीजें पहुँचाई जाती हैं। अमेरिकाने बिजलीके लिए अणुशक्ति संचालित एक बिजलीघर भी बनाया है। पर प्रकृति तो वहां अभी भी वैसी ही क्रूर है।

दक्षिण ध्रुव सड़को बर्फ की ऐसी दीवारका घेरा सा घेरे हुए है। जहाजी रास की यादमें इसे 'रॉस बेरियर' कहा जाता है।
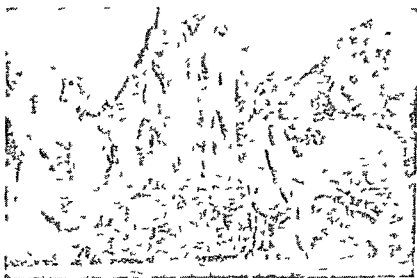
अब जिसे हम 'लिटल अमेरिका' नाम से पहचानते हैं, दक्षिण ध्रुवके उस प्रदेशमें पहुँचे लिंकन एल्सवर्थ।

हॉलिक वैन्यान—लिटल अमेरिकामें।

ज्ञाटका स्ताग दल। पराजय नथा दुगार भाव जनव ...

डायरी म (सन १९१२ ई०)

मार्च २२ २३ जपका तूफान बडा भयावना है। विल्सन और बावस निकट नही सक। कल आखिरी मौका है। जलावन नही है। खुराक सिर्फ छ पकेट बचे ह। अत समाप मालूम होता है। हमारा निश्चय है मरेंग ता कुदरती मौतम ही मरेंगे। सफलता मिल या न मिले हम छावनीकी ओर कूच करगे। रास्त होम दम तारग।

गुरुवार मार्च २९ ता० २१ स नऋत्य (दक्षिण पश्चिमम) पवनकी सरत झझा लगावर चल रहा है। जलावन सिर्फ दो कप चाय बनान जितना ही है। ता० २०का मुश्किलम दो दिन चल इतनी खुराक बची थी। हर रोज, इधरमे सिर्फ ग्यारह मील परका हमारी छावनीकी ओर जानकी तैयारियां करत हैं। परन्तु तम्बूक बाहर ववडरकी तरह चक्कर काटन पवनका ताडव चलता ही रहता है। अनुकूलता पानकी आशा आशा नही—लगता कि हम आखिर तक हिम्मत नही हारग। फिर भी हम कमजोर होत जा रहे हैं। मृत्यु अब दूर नही।

—आर० स्कॉ

बडनसीबी है। मैं और नही लिख सकता।

पुनश्च

... हमार परिवाराका देखभाल करना।

हवा और बरसातके घर्षणके कारण अब चट्टानका यह स्तंभ-सा हिस्सा ही रह गया है। चट्टानके आसपासका नरम भाग धुल घिस गया है।

बरसातका पानी चूनेसे बनी चट्टानों पर गिरता है तब उसमेंसे कुछ उनके आरपार होकर उन चट्टानोंके नीचे बनी खोहकी छतसे बूंद-बूंद कर चूने लगता है। कार्बन डाइऑक्साइडके असरसे आरपार बहते पानीमें ऐसी चट्टान घुलती रहती है। या चट्टान घुले हुए पानीकी एक एक बूंद खोहकी छत पर जमती जाती है। अगर ये नीचे भी गिरती है तो खोहकी फर्श पर जमती रहती है। इस तरह धीरे धीरे छतसे लटकते हुए स्तंभ (stalactite) से बनते है और नीचे फर्श परसे भी स्तंभ (stalagmite) से उठने लगते हैं। कालांतरमें ये दोनों मिलकर पूरा एक स्तंभ बन जाते है। ऐसे स्तंभोंको काट कर निकाल लिया जाता है और इन पर शिल्पाकृतियां तराशी जाती है। इन पर चित्रकारी भी की जाती है।
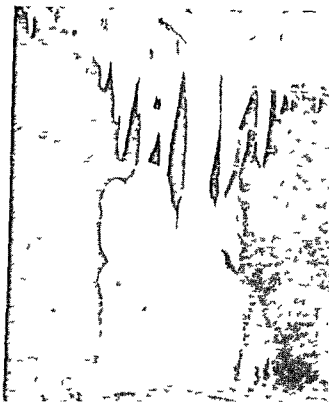
१७ : ध्रुव-प्रदेशकी सृष्टि

जब अमरिकाकी स्केट नामकी अणु पनडुब्बी (सबमरीन)ने उत्तर महासागरकी जमी या सतहके नीचे डुबकी मारी और ठीक ध्रुव पर अपना सिर ऊपर निकाल कर देखा तो उसे ध्रुव प्रदेशका एक रीछ पृथ्वीकी उस चोटीपर भटकता नजर आया। उत्तर ध्रुव प्रदेशका कोई भी हिस्सा जीवसृष्टिके बिना नहीं है जबकि दक्षिण ध्रुव पर किसी जीवके होनेकी कल्पना ही निरर्थक है सिवा इसके कि समुद्रकी मछलियां और किनारेके स्कुआ गल्ड और पेंग्विन जैसे समुद्री पक्षी। स्कुआ पक्षीकी तो बात ही निराली है वह ग्रीष्मकाल उत्तर ध्रुव पर और जाडा दक्षिण ध्रुव पर बिताता है। मनुष्यके जन्मसे पहले ही इसने उन दोनों ध्रुवोंकी खोज कर ली थी।

जो प्राणी ध्रुव प्रदेशके वातावरण और जीवनकी कठोरताके अनुकूल हो सकते हैं वे ही वहां जीवित रह सकते हैं। दुनियामें करीब दस लाख प्रकारके जीव हैं उनमेंसे केवल सवा लाख जीव ही गरम रक्तवाले हैं बाकी सारे ठंडे रक्तवाले हैं। आसपासका तापमान कितना ही गरम या ठंडा क्यों न हो, परंतु जिन जीवोंके शरीरका तापमान एक सा ही रहता है वे उष्ण रक्तवाले जीव कहलाते हैं। उदाहरणार्थ—मनुष्य, अन्य सस्तन प्राणी पक्षी वगैरा उष्ण रक्तवाले प्राणी हैं। दूसरी तरफ जिनके रक्तकी उष्णता आसपासकी उष्णताके अनुसार बढती या घटती है वे शीत रक्तवाले प्राणी कहलाते हैं। उदाहरणार्थ—सांप छिपकली गिरगिट, मगर वगैरा शीत रक्तवाले प्राणी हैं। ऐसे जीव ८ अंश सेंटीग्रेडसे नीचे तथा ४२ अंश सेंटीग्रेडसे ऊंचे तापमानमें जीवित नहीं रह सकते। ध्रुव प्रदेशमें ऐसा अनुकूल तापमान नहीं होता इससे वहां ठंडे रक्तवाले प्राणी नहीं हैं।

जो उष्ण रक्तवाले प्राणी भी ध्रुव प्रदेशके वातावरणके अनुकूल नहीं हो सकते वे वहां जी नहीं सकते। हमने देखा कि साइबेरियाके टट्टू भी वहां जीवित नहीं रह सके। फिर भी उष्ण रक्तवाले जो प्राणी यहांके वातावरणके अनुकूल हो सके हैं वे कितनी ठंडी सहन कर सकते हैं यह हम जानना चाहिए। उत्तर ध्रुव प्रदेशके सबसे उत्तरके ग्रेनिममीयर टापू पर शून्यसे नीचे गए तापमानमें भी कस्तूरी वृषभ *बर्फके नीचेसे सिवार खोदकर खाते हैं और वे* सुखी हैं। दक्षिण ध्रुव खंडमें शून्यसे ७५ अंश नीचेके तापमानमें जहां १०० मीलकी गतिसे हिमझंझावात सनसनाते हों वहां भी पेंग्विन पक्षी अपना जीवन व्यवहार जारी रखते हैं। ये दोनों

दक्षिण ध्रुवप्रदेशके विचित्र पेंग्विन पक्षी

त्तर ध्रुव प्रदेशका सफेद भालू। ऐसे भालू दक्षिण ध्रुव प्रदेशमें नहीं होते।

ध्रुव प्रदेशोंका समुद्री पक्षी स्कुआ

प्राणी उष्ण रक्तवाले है। ऐसी ठडमे शरीरकी उष्णताको बनाये रखनेके लिए इन्हे खूब खाना चाहिए तथा श्रम करके भी शरीरमे गरमी बढाते रहना चाहिए।

ध्रुव प्रदेशके पशुओंकी उनकी घनी रोमावलि तथा घने मोटे बाल ठडसे रक्षण देते है तो पक्षियोंको पख तथा पखोके नीचेके रोए रक्षण देते है। पर पक्षियोके पैर जखम खुले रहते है उनका क्या? यहा पशु और पक्षी शरीरको दो उष्णताए रखते है। शरीरकी उष्णता अधिक और पैर जो खुले रहते हैं उनकी कम।

ऐसी ठडमे भी पेंग्विन पक्षी अपने अडोको सेते है। अडोको सेनेके लिए साधारणतया ३९ अश सेंटीग्रेड तापमान चाहिए। पेंग्विन एक ही अडा देती है और नर पक्षी उसे अपने पैरो पर रखकर अपने पेटकी गरमीसे सेता है। अडेको सेनेके लिए ६३ दिनका समय लगता है। मादा अपना अडा नरको सौपकर मछली मारनेके लिए चली जाती है। नर इस अडेको सेनेमे अपने शरीरकी २५ से ४० प्रतिशत चरबी खो देता है। पेंग्विनमे इतनी सारी चरबी होती है कि उसका उपयोग जलानेके लिए भी हुआ है। पेंग्विनके पख तो नामके ही है व उसे डुबकी मारनेके लिए ही उपयोगी होते है। दक्षिण ध्रुव खण्डपर वनस्पति नही उगती जो कस्तूरी-वृषभ रेडियर या अन्य प्राणियोके जीवन निर्वाहके लिए आवश्यक होती है। दक्षिण ध्रुवका प्राणि सृष्टि उसके पानीमे ही है। यहा आखोसे दिखायी न देनेवाले जीवोसे लेकर दुनियाके सबसे बडे जीव व्हेल तक बसते हैं। इस ठडके किनारेवाले प्रदेशमे करीब बारह तरहके पक्षी जाते है। दुनियाके हर एक प्राणीके अनुपातमे नौ जतु होते है। पर ध्रुव प्रदेशमे सिर्फ ४४ जातिके जतु है। यहा सिर्फ दो तरहकी सपुष्प वनस्पतिया है। स्तन प्राणी समुद्रमे ही है। उनमे भी केवल सील और व्हेल

ही हैं। १५० टनके वजनवाले ह्वेलको रोज तीन टन खुराक चाहिए। प्रतिरूप दक्षिण ध्रुवके
महासागरमें ३५,००० ह्वेलोंका शिकार होता है।

यदि ध्रुव समुद्रके पानीमें मनुष्य गिर जाए तो ज्वकर पांच मिनटमें ही ठंडसे उसकी
मृत्यु हो जाए। ऐसी ठंडमें रक्षण पानेके लिए प्रकृतिने इन जलचरोंको चरबी या तेलकी मोटी
परत दी है। वडेल जातिकी सीलका बच्चा जब पैदा होता है तो उसका वजन ६० पाउंड होता
है पर पंद्रह दिनमें ही उसका वजन १२० पाउंड हो जाता है क्योंकि उसकी माके दूधमें ८० प्रतिशत
चरबी होती है जब कि गायके दूधमें साढ़े तीन प्रतिशत और भैंसके दूधमें सात प्रतिशत चरबी होती है।

दो फुट लम्बे रदन (दांत)वाले वालरस और शरीरको भिगोये अगर बर्फमें ठंडे समुद्रमें
पचीस मील तैरनेवाले सफेद रीछ उत्तर ध्रुवकी ही विशिष्टता हैं। जिस प्रकार पेंग्विन पक्षी
उत्तर ध्रुव प्रदेशमें नहीं होते उसी प्रकार रीछ तथा वालरस भी दक्षिण ध्रुव प्रदेशमें नहीं होते।
७०० पाउंडके वजनवाली रीछनी जाड़ेके दिनोंमें सुषुप्तावस्थामें पड़ी रहती है और तब केवल दो पाउंड
वजनके बच्चेको जन्म देती है। नर का वजन १६०० पाउंड तक होता है। जाड़ेकी लम्बी रातमें
भी नर खुराककी खोजमें भटकता रहता है। सील और वालरस उसका शिकार बनते हैं।

उत्तर ध्रुवका टुंड्रा प्रदेश जीव सृष्टि तथा वनस्पति सृष्टिमें इतना समृद्ध है कि उसके बारेमें
सुनने पर विश्वास भी नहीं होता। यहां गरमीके दिन चाहे जितने लम्बे हों, पर तापमानकी
दृष्टिसे गरमी तो शायद ही दो महीने तक रहती है। इन दो महीनोंमें विभिन्न जातिकी
वनस्पतियां खिल उठती हैं। रंगबिरंगे फूल खिलते हैं। जीव जंतु भनभनाते रहते हैं और पक्षी
कलरव करते हैं। जाड़ा आ जानेसे पहले ही वे सब प्रजोत्पत्ति कर लेते हैं।

गरमीके दिनोंमें भी यहांकी धरती कुछ इंच या कुछ फुट नीचे ठंडसे जमी ही होती है।
अतः यहां वृक्ष पैदा नहीं होते। छोटी वनस्पति ही उगती है। उसपर सांभरके झुंड चरते हैं।
टुंड्रामें कैनेडाका उत्तरी किनारा और किनारेमें उत्तरके टापू तथा नार्वे, स्वीडन और फिनलैंडके
उत्तर भाग व साइबेरियाके उत्तरी भागका समावेश होता है। दो महीने तक यह टुंड्रा प्रदे
विभिन्न जातिकी जीवसृष्टिसे गूंज उठता है। जहां देखो वहां बर्फ पिघलकर पानीके तालाब त
गड्ढे भर जाते हैं। उसमें काई तथा अन्य जातिकी वनस्पतियां उगती हैं। इसके पश्चात नौ-
मासका दीर्घ शीतकाल आता है और टुंड्रा प्रदेश सुनसान कब्रिस्तान बन जाता है। सनसनाते
झंझावातोंके अंधड़ तथा बढ़ते जाते अंधकारमें यह सारी तिलस्मी दुनिया गायब होती जाती

बर्फमें फँसा हुआ लिंकन एल्सवर्थका हवाई जहाज (१ दिसम्बर, १९३५)

दक्षिण ध्रुव प्रदेशमें जीवसृष्टि ही जब दुर्लभ है, तब मानव सृष्टि तो हो ही कहां से! सिवा उनके जो अनुसंधान करने विज्ञानशास्त्री वहां गये हों। परन्तु उत्तर ध्रुव प्रदेशमें तो अनेक जातिकी प्रजाएँ रहती हैं। उनकी संस्कृतिपर भूगोलका कैसा असर होता है यह जानना भी दिलचस्प होगा।

मानव जातिका इतिहास देखें तो मालूम होगा कि विविध प्रजाएँ और जातियां अपनी आजीविकाकी खोजमें कहांसे कहां जा बसी हैं। मध्य एशियामेंसे कुछ लोग किसी समय ईशान एशियाको पारकर उस वक्त एशिया व अमेरिकाको जोड़नेवाले बेरिंगके भूडमरूमध्य परसे अलास्कामें होकर अमेरिकाके खंडोंमें फैल गए। आज बेरिंग भूडमरूमध्य नहीं है और वह जल डमरूमध्य बन गया है। वहां जमीन नहीं है। उसी प्रकार किसी कालमें अपनी आजीविकाकी खोजमें भटकते एस्किमो लोग उत्तर केनेडामेंसे ध्रुव प्रदेशमें और कुछ अन्य लोग उत्तर एशियामेंसे ध्रुव प्रदेशमें जाकर बस गए। जैसे जैसे हिमयुगका अंत आता गया वैसे वैसे पिघलते और पीछे हटते हिमके पीछे पीछे पशु ध्रुव प्रदेशमें जाने लगे और उन पशुओंके पीछे ये प्रजाएँ भी वहां जाने लगीं।

अभी पिछली सदी तक ये लोग पत्थर युगमें ही रहते थे। एस्किमो और लाप लोगोंका जीवन-व्यवहार तथा रहन सहन छोटी छोटी बातोंमें भी इतना मिलता जुलता है कि वे किसी जमानेमें एक ही प्रजा हों ऐसा सम्भव है। मालूम होता है उनका उद्भव मध्य एशियामें हुआ था।

साइबेरियाके किनारे बसनेवाले लोग तुंगु, याकुत और सामोयेद प्रजाके नामसे पहचाने जाते हैं। भूख, थकान, ठंड और रात्रि जागरणके ये लोग इतने अभ्यस्त हो गए हैं कि शून्यसे नीचे ७४ अंश सें० तक उतरे तापमानकी भयंकर ठंडमें भी ये खुलेमें और बिना वस्त्रके ही रह सकते हैं। यद्यपि अब तो रशियाने साइबेरियामें और नार्वेने स्केन्डानेवियामें इनके जीवनमें क्रान्तिकारी परिवर्तन किया है। अब वे खानों, कारखानों, खेती, पशुपालन और मछली मारनेके व्यवसायमें लग गए हैं। रशियाके गणतंत्र राज्योंमें एक याकुत गणतंत्र राज्य भी है। उत्तर गोलार्धका सबसे ठंडा गांव वर्खोयान्स्क इसी राज्यमें है।

ध्रुव प्रदेशकी इन जातियोंने विश्वकी सभ्य जातियोंसे जहां बहुत कुछ अपना लिया है वहां कुछ दिया भी है। उदाहरणार्थ जहां बर्फ पड़ती है वहां बर्फ पर फिसलना मौसममें अधिक आवश्यकता बन गया है। बर्फ पर फिसलनेकी यह कला सभ्य जातियोंको लाप प्रजासे ही स्की (बर्फ पर फिसलनेका खेल)के रूपमें भेंट मिली है।

जो कच्चा मांस खाते थे और सारी जिन्दगी भटकते रहते थे वे अब बस्तियां बनाकर रहने लग गए हैं। अब वे पढ़ते हैं, उद्योगोंका संचालन करते हैं और नवीनतम सुख सुविधाओंसे संपन्न जीवन व्यतीत करते हैं। वे वैज्ञानिक ढंगसे रेन्डियर पालते हैं। यूरोपके लोगोंके साथ विवाह भी करते हैं। इस प्रकार उनका स्वरूप और रहन सहन बदलने लगा है। अब जब पुरुष भटकने जाते हैं तो उनके साथ बालक और स्त्रियां नहीं जातीं। लाप लोगोंसे रेन्डियरोंको अलग नहीं किया जा सकता। वे उनके जीवनके साथ ताने-बानेकी तरह गुंथ गए हैं और ये ही उन्हें कपड़ा, मांस तथा दूध देते हैं।

केनेडाके उत्तरमें एस्किमो लोग एक जमानेमें बर्फके गुम्बज जैसे छोटे घरोंमें (जिन्हें इग्लू कहते हैं) रहते थे अब यह दृश्य दुर्लभ है। उनकी आबादी करीब ५५,०००की ही है। कहां मध्य एशिया कहां साइबेरिया, कहां अलास्का, कहां उत्तर केनेडा और ग्रीनलैंड! हजारों वर्षोंमें

पहुँच गए हैं। एक ...

स्किमा लोग भटकते भटकते एक सिरेसे दूसरे सिर पर पहुँच गए हैं। एक ... महासागरसे
...कोने एक नयी ही बात कही है। उनका कहना है कि एस्किमो लोग दक्षिण प्रशान्त
...ए हैं । एस्किमो लोग भी सदियोंसे यूरोपियनोंके साथ विवाह करते आए हैं। इससे
...नका भी स्वरूप बदल रहा है। इतना होनेपर भी अभी तक वे शिकारी हैं। कोई एस्किमो
...नवान होना नहीं चाहता। हरेक एस्किमोकी तमन्ना एक अच्छा शिकारी बननेकी होती है।
...व सामूहिक जीवन और सहयोगके बिना जीवित नहीं रह सकते। इतना ही नहीं उनमें पत्नीकी
अदला-बदली भी हो सकती है।

घरमें तथा कपड़ोंमें उष्णताका प्रमाण कम सुरक्षित रखा जाए इसके वैज्ञानिक सिद्धांत
वे अनुभवसे जानते हैं। कैनडाके उत्तरमें धरतीमेंसे तेल निकलता है अतः अब अनेक एस्किमोको
तेल निकालनेके लिए बरमा चलानेकी तालीम भी दी जा रही है जिससे कि इस कठोर
वातावरणमें तालीम दिए हुए आदमी बाहरसे न लाने पड़ें।

एस्किमो शिकारीका जीवन जीते हैं। वे ध्रुव प्रदेशके मुलायम रोएंवाले प्राणियोंका
शिकार करके उनकी खाल और चमड़ा यूरोपके व्यापारियोंको देते हैं। इसके बदलेमें उन्हें जीवनकी
जरूरतकी वस्तुएँ मिल जाती हैं। यह खाल गरमी देनेके लिए बहुत कामकी होती है और
यूरोपमें इनके बने कपड़े पहनना एक फैशन भी हो गया है।

यूरोपके लोगोंके सम्पर्कमें आनेसे सुधरे हुए समाजके कुछ रोग एस्किमो लोगोंमें भी
होने लगे हैं। इन रोगोंका प्रतिकार करनेकी शक्ति इनके खूनमें नहीं है।

सैनिक सुरक्षा, उद्योग और खनिजोंकी खोजमें अमरीकी लोग अलास्कामें, कनेडियन अपने
उत्तर ध्रुव प्रदेशमें और रशियन उत्तर साइबेरियामें एक नए युग का आरम्भ कर रहे हैं। प्रकृति
भी उनके अनुकूल होती जा रही है, क्योंकि ध्रुव प्रदेशका तापमान बढ़ रहा है और बर्फ पीछे
हट रहा है। जहाँ कभी गाँव भी न थे वहाँ आज लाख आधे लाखकी आबादीके आधुनिक नगर
बस गए हैं। ममार्स्क नगरकी आबादी ढाई लाख तक पहुँच चुकी है। सोना, कोयला, तेल
बॉक्साइट, निकल तांबा आदि मूल्यवान खनिज मिलनेसे एक छोटा-सा गाँव नारिल्स्क आज
सवा लाखकी आबादीवाला आधुनिक शहर बन गया है। रशियाके ध्रुव प्रदेशमें इतना सारा
खनिज है कि इनके हिसाबसे वह सोना बच सकता है। रशियाके उज्ज्वल भविष्यका सूर्य
साइबेरियामें उग रहा है।

अभी तक हीरे और सोनेके उत्पादनमें दक्षिण अफ्रीका सर्वप्रथम था। तेलके लिए
अमेरिकाका नम्बर पहला था। अब रशियाका साइबेरिया प्रदेश एक नया कीर्तिमान स्थापित कर रहा
है। मिरनी नामका एक छोटा-सा गाँव हीरे निकलनेसे दस वर्षोंमें ही २५ हजारकी आबादी...
... शहर बन गया है। याकुत गणतंत्र राज्यमें हीरेका उत्पादन अनेक गुना बढ़ रहा है...
रशिया और कैनडाके ध्रुव प्रदेशोंमें सोनेसे भी अधिक कीमती धातु यूरेनियम और तेल ...
... जगहें नए-नए क्षेत्र खोजे जा रहे हैं। दोनों स्थानोंपर करोड़ों टन तेलके भूगर्भ भंडार ...
अमेरिकाकी जलविद्युत योजनाओंसे दुगुनी बड़ी योजनाएँ साइबेरियामें रशिया शुरू कर रहा ...
अमेरिका अलास्काके ध्रुव प्रदेशका विकास कर रहा है। ध्रुव प्रदेशोंमें रेलगाड़ियाँ चलाना मु...
है। इस कारण ये लोग दो विमानोंके द्वारा अपना काम-काज चलाते हैं।

ध्रुव समुद्राम वायव्य माग और साइवरियन किनारेव नम्मागका उपयोगी बनाने लिए कितने ही नाविका और जल्यानाका नाश हुआ था। अत्र ता बफ भजन जहाज बफ ताटते जाते हैं और व्यापारी जहाजाके लिए रास्ता साफ करते जात हैं। रशियाा अणुशक्तिमे सचालित 'लेनिन' नामका एक विशाल बफभजक जहाज बनाया है। इससे रशिया उत्तर ध्रुव महासागरम वारहमासी जहाजरानीको कितना महत्त्व दता है यह सूचित होना है। उत्तर ध्रुव महासगारम पश्चिमी सिरेके मुर्मास्कसे लेकर पूव सिरे पर बरिंग जलडमरूमध्यम होकर, पूव किनारे ब्लादि वोस्तोक बन्दरगाह तक छ हजार मीलक विस्तारम बफभजक जहाज जहाजरानीक लिए माग खुला रखते हैं।

जब रशियन और अमरिकन अणु सबमरीन उत्तर महासागरकी जमी सतहके नीचेम होकर महासागरका पार कर गयी ता अब ऐसी योजनाएँ साची जा रही हैं कि बीससे चालीस हजार टनकी विशाल व्यापारी अणु सबमरीनें तल और अन्य मामान लेकर ध्रुव मागसे चलायी जाएँ तो लन्दनसे टोकियो जानेका माग जा ११२०० मील लम्बा है घटकर ६,१०० मील रह जाए।

हमने अभी तक ध्रुव समुद्रामसे कितनी खुराक मिलनकी मभावना है इसका जिक्र नही किया। यहा समुद्र मत्स्य समद्धिसे उमड रहे है। समग्र रशियाम प्रयुक्त मत्स्य समद्धिका ⅓ से अधिक हिस्सा सिफ ममास्क बन्दरगाह पर ध्रुव समुद्रामस उतारा जाना है। अमरिकाकी अणु सबमरीन स्कट जब ध्रुव महासागरम डुबकी मारकर चलन लगी ता उसन मीला लम्बा मछलियाका थुट देखा था। ग्रीनलैण्डके पश्चिमम सागरका दुनियाम सबस अधिक समद्ध क्षेत्र है। इन उदाहरणासे पता चलता है कि उत्तर ध्रुव समुद्रम कितनी सारी मत्स्य समृद्धि है।

सस्कृतिक विकासके लिए मछली हा नही अनाज भा चाहिए। रशिया ६० उत्तर अक्षाश पर भी दस लाख एकड जमीनम खेती करता है और टुड्रा प्रदेशकी उपजाऊ व खेतीके लिए उपयोगी बनानका प्रयत्न कर रहा है। वह ऐस धान्य-बीजका विकास कर रहा है जिसकी फसल टुड्राके दो महीनेके अल्पकालीन ग्रीष्मम ही तयार हो और भरपूर भी हो।

वर्षों तक एस्किमाकी तरह ध्रुव प्रदेशाम रहनवाल स्टीफेंसनन बताया है कि टुड्राम कराडा रडियरोका दूध और मासके लिए पाला जा सकता है।

कदाचित टुड्रा प्रदेशम खेती हो सकेगी। बाकी ध्रुव प्रदेशाम खेती सभव नही। फिर भी जहा सूयके होनपर भी पूण प्रकाश नही मिलता भीषण अधड चलता है ऐस उत्तर ध्रुव प्रदेशम मानव निवास लगभग सभव बनाया जा सका है। अलबत्ता वहाका जीवन बहुत कठोर है और आबोहवा भरोसा करने याग्य नही है। इसमे विमानका उतरना भी कई बार असभव हो जाता है।

सनिक-सुरक्षा प्रवृत्तियाका भी उत्तर ध्रुव प्रदेशके विकासकी प्रगतिम काफी हिस्सा है। रशियाके राकेट अड्डे साइबेरियाके उत्तर और पूव किनारे पर फले हुए हैं। पर उनके सम्बन्धम हम अधिक नही जानते। अमरिकाके राकेट अड्डे राडार केन्द्र तथा विमानी केन्द्र उसीके बाजूम—ध्रुव प्रदेशम हैं। उदाहरणाथ वायव्य ग्रीनलैण्डम थुलका विमानी केन्द्र एक वज्ञानिक आश्चय है। बफ पर १४,००० फुट लम्बे इस विमान केन्द्र पर छ हजारसे भी अधिक
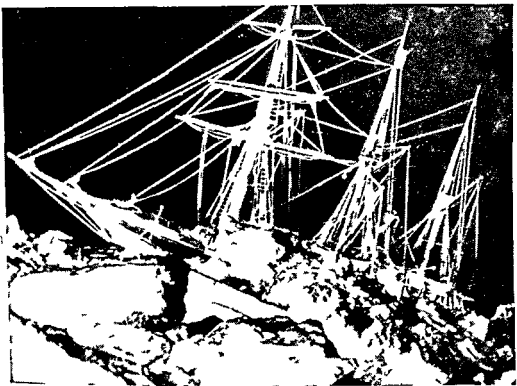
बर्फमें जकड़ कर टूटा हुआ शेकल्टनका जहाज।
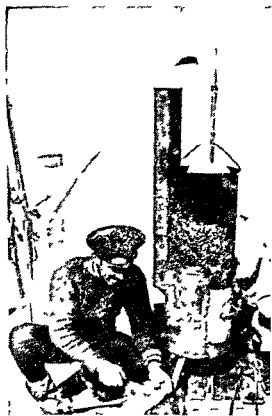
ागाहियाका वफादार साथी। इस
के कुत्ताम हिमाच्छादित पवता पर
की विशिष्ट शक्ति हाती है।

हिमालयस ऊँचे पहाा पर रमनवाल तथा हिमाच्छादित
शिखरा पर चरनेवाल ागाकी शरीर रचना विशिष्ट
प्रकारकी हाती है। हिमाच्छादित सतह पर पर टिकानक
लिए इनक पर अधिक चौड आर नम्व खरूर हात है।

करीब १९०० साल पहल विसु
विअसका विस्फाट हुआ था। इस
ज्वालामुखीस उडी राखम सारा
पाम्पी नगर दब गया था। उत्खननके
दरमियान दखी गयी उस वक्तकी
तादूरा दगाकी तसवीर बायी आर
नद्दूर दिखायी दती है और दाहिनी
तरफ अनाज पीसनकी चक्कियाँ ह।
ताक पर १९०० साल पहल रखी गयी
चीज ज्याका त्या पायी गयी है।

अमेरिकन रहते हैं। अलास्कामें और थुलेमें इनके राडार इतने बडे हैं कि उनके एंटिना ३० तल्लेवाले मकानकी ऊँचाईके बराबर है। इन महत्त्वके संरक्षण केंद्रों पर प्रतिवर्ष ५०,००० टन रसद पहुँचायी जाती है जिसके लिए विमानों और जहाजोंका आवागमन लगातार जारी रहता है। इस सदीके प्रारम्भ तक थुले तक जाना बडा भारी पराक्रम समझा जाता था। आजके इन सभी पुरुषार्थोंका श्रेय धरती, समुद्र, बर्फ और आबोहवाके विषयमें किये गए वैज्ञानिक अनुसंधानोंको है।

पूर्वमें आइसलैण्डसे पश्चिममें ग्रीनलैंड, कैनेडा और अलास्का तक तथा वहाँसे ठीक साइबेरियाकी दिशामें गए एल्युशियन टापुओं तक अमेरिकाने राडार और विमानी केंद्र तथा अणु हाइड्रोजन बम धारी स्वचालित आंतरराष्ट्रीय राकेट लगा रखे हैं। इन राडार-केंद्रोंको D E W (अर्थात् Distant Early Warning—दूरसे, पहलेसे ही आगाह करनेवाला) तंत्र कहा जाता है। ये केंद्र बनानेके लिए तीस हजार आदमी लगाए गए थे। राकेट तथा राडारसे सज्ज इस केंद्र पर राडार-यन्त्रके चार एंटिना, ३,५०० मीलकी दूरी पर क्या हो रहा है यह भी बता देते हैं। प्रत्येक एंटिनाकी चौडाई ४०० फुट है और ऊंचाई १६५ फुट है। अगर रशियासे अमेरिका पर हमला करनेके लिए राकेट छोडे जाएं तो उनके पहुँचनेसे पंद्रह मिनट पहले ही ये राडार यंत्र इसकी चेतावनी दे देंगे।

हमारे सौभाग्यसे अमेरिका, रशिया और अन्य दस देशोंने संयुक्त राष्ट्रसंघमें एक इकरारनामा किया है कि किसीको दक्षिण ध्रुव खण्डका उपयोग लडाईके लिए नहीं करना चाहिए और उस पर अपने प्रादेशिक अधिकारका दावा भी नहीं करना चाहिए। इससे दक्षिण ध्रुव खंड वैज्ञानिक अनुसंधानके लिए एक विशाल प्रयोगशाला ही बना रहेगा। वहां अणुशस्त्रोंका प्रयोग भी न करनेका समझौता हुआ है।

मालूम होता है दक्षिण ध्रुव-खंडकी धरतीमें प्रचुर मात्रामें खनिज हैं। लेकिन उस पर औसतन दो हजार फुट मोटा बर्फका स्तर है। इससे ये खनिज प्राप्त नहीं किये जा सकते। अणु हाइड्रोजन बम द्वारा इस बर्फको पिघलाया जा सकता है। पर ऐसा करनेसे समुद्रमें पानीकी सतह इतनी ऊँची हो जाएगी कि दुनियाके सभी बंदरगाह और भूमिका विशाल विस्तार समुद्रमें डूब जाएगा। किनारा परके पोरबन्दर और बम्बई जैसे शहर ही नहीं बल्कि राजकोट, अहमदाबाद और बडौदा जैसे अंदरके शहर भी पानीमें डूब जाएँ। इसका कारण यह है कि पृथ्वी पर जितनी बर्फ है उसका ९० प्रतिशतसे भी अधिक दक्षिण ध्रुव और उसके आसपास है। इसका बोझ दक्षिण ध्रुव खंडकी पृथ्वी पर इतना अधिक पडा है कि उससे धरती १,६००से ३,३०० फुट तक नीचे बैठ गयी है। रशियन वैज्ञानिकोंका तो कहना है कि प्रति वर्ष इस बर्फमें २९३ घन मीलकी वृद्धि होती रहती है। प्रतिवर्ष उसपर ६१२ घनमील हिम वर्षा होती है। पर झंझावातोंके कारण उसमेंसे आधी बर्फ समुद्रमें बह जाती है। फ्रेंच विज्ञानशास्त्री भी इस अभिप्रायका समर्थन करते हैं।

तो दक्षिण ध्रुव खंड मानवकी क्या सेवा कर सकता है? दक्षिण ध्रुव खंडके आसपासका समुद्र पुष्टिकर रसायनोंसे भरा-पूरा है और उस पर सूक्ष्म समुद्री वनस्पति तथा जीव परस्पर एक दूसरे पर निर्वाह करती है। समुद्रके प्रवाहोंका जिक्र करते वक्त हमने देखा है कि इस समुद्रसे दक्षिणी अमेरिकाके पश्चिमी किनारे हॅम्बोल्ट नामके सागर प्रवाहमें अपार जीवसृष्टि है। व्हेल अपने मुँहमें जितने बड़े सूक्ष्म प्राणी भर लेती है और दांतोंसे छानकर उसे बाहर निकाल देती है।

ऐसा करनेसे पानीकी तरल जीवसष्टि प्लैंकटन उसके मुहमें रह जाता है जो उसका आहार बनती है। यदि व्हेल जैसे महाकाय प्राणी प्लैंकटन जैसी तरल जीवसष्टिके आहारसे अपना पेट भर सकते हैं तो मनुष्य क्या न अनेक यन्त्रोंसे सजे अपने जहाजोंको ले जाकर वहांसे प्रोटीनसे भरा यह तरल आहार प्राप्त करना चाहेगा? बढ़ती हुई भूखसे मरती तथा बिना पानीके तड़पती दुनियाकी आबादीकी खुराक और पानी—दोनों आवश्यकताओंकी दक्षिण ध्रुव-खंड पूर्ति कर सकता है। अगर दक्षिण ध्रुव खंडमेंसे एक तैरते बर्फ खंडको टग-नौकाओं द्वारा बम्बईके बंदरगाहमें खींच लाया जाए तो मार्गमें ही आधा बर्फ पिघल जाए पर जो आधा बर्फ बचेगा उसके द्वारा बम्बईको पानी देनेवाले सरोवरोंको छलक जाने तक भर दिया जा सकता है। इतना ही नहीं पानी भी बहुत सस्ता पड़ेगा।

हम अपनी धरती परसे आधा किलो मिट्टी ले तो उसमें अरबोंकी संख्यामें गिने भी न जा सकें इतने जीवाणु होंगे। दक्षिण ध्रुव खंडके इतने बर्फमें औसतन एक जीवाणु निकलेगा। अतः दक्षिण ध्रुव पर उन वस्तुओंको सुरक्षित रखा जा सकता है जो सामान्यतया बिगड़ जाती हैं, जैसे खुराक, औषधियां वगैरा। शैकल्टन और स्काट की गाड़ी गयी खुराक पचास वर्षोंके बाद भी उसी हालतमें सुरक्षित रही थी।
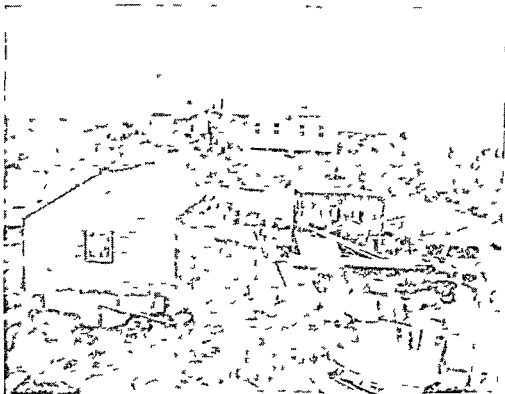
दक्षिण ध्रुवकी पैमाइशके लिए गये खोजियोंकी एक प्रारंभिक छावनी। वर्तमान छावनियां वैज्ञानिक ढंगसे लगाई जाती हैं, जिनमें तमाम सुख सुविधाओं तथा सुरक्षाकी व्यवस्था होती है।

दक्षिण ध्रुवखण्डमें आदमीका सबसे बड़ा दुश्मन वहाँकी अत्यधिक ठंडी आबोहवा है। फिर भी महीनों लम्बे जाड़ेकी रात और महीनों लम्बे दिनमें भी सनसनाकर चलता पवन और हिमझंझावातोंके अनुकूल मनुष्य उसका अभ्यस्त हो सकता है। ध्रुवप्रदेशसे सिर्फ ६०० मीलकी दूरी पर 'तिएरा देल फुएगो' टापू पर वहाँके आदिवासी अर्धनग्नावस्थामें पीढ़ियोंसे रहते आए हैं। जिस तेजीसे शरीरमेंसे शीत द्वारा गरमी उड़ जाती है उसे फिर झट पा लेनेके लिए शरीरमें अधिक दहनक्रिया होनी चाहिए। इसके लिए अधिक प्रोटीनयुक्त तथा चरबी युक्त खुराक खाना चाहिए। स्कॉट और उसके साथी ठंडसे नहीं बल्कि गरमी उत्पन्न करनेवाली खुराकके अभावमें मर गए थे। उनकी छावनीसे सिर्फ ११ मील दूर एक टन खुराक दबी पड़ी थी। अगर वे वहाँ पहुँच सके होते तो कितनी भी ठंड क्यों न हो वे मरने न पाते।

दक्षिण ध्रुवखण्डकी ठंडकी तो हम कल्पना भी नहीं कर सकते। उच्छ्वासके साथ जो नमी बाहर जाती है वह बर्फ होकर भी गिर सकती है। पेशाब किया नहीं कि तुरन्त बर्फमें बदल जाता है। एक बार प्रयोगके लिए पतीलीमेंसे उबलता हुआ पानी हवामें फेंका गया, लेकिन दूसरे ही क्षण वह पानी छर्रे सी जोरकी आवाजके साथ बर्फमें बदलकर नीचे गिरा। यहाँ अगर ठंडी धातुका स्पर्श हो जाए तो 'जल' जाए। यहाँ स्टोव या मोमबत्ती जलाना भी एक पराक्रम ही होता है।

खाना होनेपर भी अपने अपने देशके कारखानोंमें मकानोंके अलग अलग हिस्से तैयार करके यहाँ पर उनसे मकान खड़े कर दिए जाते हैं। यद्यपि ऐसी एक छावनी और उसकी सजावटके लिए हजारों टनके हिसाबसे सामग्री चाहिए जो विमानोंसे छतरीके द्वारा उतारी जाती है। यहाँके नगरोंके मकान बर्फके नीचे सुरंगोंके द्वारा जोड़ दिए गए हैं। मकानोंमें ऊष्मा भरी हवा फिरती रखी जाती है। प्रत्येक 'नगरी'में डाकघर तारघर पुस्तकालय आदि होते हैं। अब ध्रुव प्रदेशमें जानेवाले लोगोंको अपने पूर्वगामियोंकी तरह चलकर और सामानसे लदी बर्फगाड़ियोंको खींचकर हिम झंझावातोंमें चलना नहीं पड़ता। अब वे स्नो कैट (Snow cat) नामकी बंद यंत्र संचालित बर्फगाड़ियों विमानों और हेलीकॉप्टरोंमें यात्रा करते हैं। आजके ध्रुववासियोंके वैभवशाली जीवनके साथ जब हम स्कॉट, आमन्डसन शेकल्टन आदिकी तुलना करते हैं तो उनके शौर्य सहनशक्ति और अदम्य जिज्ञासाके सामने हमारा मस्तक झुक जाता है।

अगर उत्तर ध्रुव खंड प्रदेशमें समुद्री सतहकी ऊँचाई पर भी इतनी भयानक ठंड हो तो दक्षिण ध्रुवखंड पर १२,२८० फुट ऊँचे पठार पर हवा कितनी पतली और ठंडी होगी। यहाँ जब पाँच रशियन पहली बार महीनों तक रहे तो उनके शरीरका रक्तचाप घट गया था। साँस घुटनेके कारण वे शांतिसे सो नहीं सकते थे। हृदयकी धड़कन बढ़ गयी थी और शरीरका वजन तेजीसे घटने लगा था। सन १९३४में जब एडमिरल बायर्ड दक्षिण ध्रुवके पास अकेले जाड़ा बिताया था तब उसके शरीरका वजन ७० पाउंड कम हो गया था।

आजकल वैभव पूर्ण और ऊष्मा भरे वातावरणमें स्थित निवासियोंको शरीरसे इतना कष्ट नहीं उठाना पड़ता पर मानसिक असर तो बहुतोंको होता ही है। छ महीने लम्बे दिन और छ महीने लम्बी रातमें रहनेका असर शरीर और मन पर भी होता ही है। इससे विज्ञान शास्त्री सोचते हैं कि जिस प्रकार ठंडे प्रदेशोंमें काचघरोंमें गरम प्रदेशकी वनस्पति उगायी

जाती है उसी प्रकार दक्षिण ध्रुवखंड पर भी महाशय गुवदाशाली काच नगरिया बनायी जाएँ, जिससे बाहरस ठंडी हवा तथा हिम झज्ञावात अन्दर न आ सके। साथ ही अणुशक्तिसे उत्पन्न बिजलीसे इन नगरियाको उष्मापूर्ण रखा जाए। इनमे जाडेके दिनाम कृत्रिम सूर्य बनाया जाए जो दस-बारह घंटा तक धूप देता रहे। उसम बगीचा भी बनाया जा सकता है तथा शाक भाजी भी उगायी जा सकती है। उसम चहचहाते पक्षी भी छाडे जा सकते ह। छ मासके दिनाम भी घराम ता दस-बारह घंटाकी रात बनायी जा सकती है। इस प्रकार विज्ञानशास्त्री व उनके साथी अपने देशका सा वातावरण निर्माण करके अपने परिवाराको भी यहा रख सकत है। अभी तक ता उन्हे रेडियो टेलीफान द्वारा ही अपने कुटुम्बियाम बातचीत करके सन्ताप करना पडता है।

अंतराष्ट्रीय भूभौतिक वर्षके दरमियान दस हज़ार यात्री दक्षिण ध्रुव खंडकी यात्राको गए थे। इसम सूचित हाता है कि जहा भयकर बर्फम स्काटका दल ११ मील भी चलकर अपनी जिन्दगी न बचा सका वहा आज यातायात कितना सुगम हा गया है।

मनुष्य एवरेस्ट जैसे ऊँचे शिखरापर भले ही नही रह सकता परन्तु दाना ध्रुवा पर तो भीषण प्रकृतिके सामने विजय पा रहा है। बीसवी सदीके पूर्ण हानसे पहले तो सामान्य जन भी ध्रुव प्रदशाकी यात्रा कर सकेंगे।

अब इन दाना भौगोलिक ध्रुवासे विदा लेनेम पहले हम चुम्बकीय ध्रुवाका भी परिचय कर लेना चाहिए क्योकि भागालिक आर चुम्बकीय ध्रुव एक नहीं हैं। भौगोलिक उत्तर-दक्षिण ध्रुव पथ्वीकी उस धुरीके उत्तर दक्षिण सिर पर है जिस पर पथ्वी घूम रही है—जिसम दिन रात हाते रहत ह। पथ्वी स्वय एक विराट लाह चुम्बक है। लाह चुम्बकके उत्तर दक्षिण ध्रुव होत है। पथ्वीके चुम्बकीय ध्रुव खिसकत रहत हे। पथ्वीके केन्द्रम जहा धातु है वहा चुम्बकत्व उत्पन्न होता है। पथ्वी परके स्थलाका भ्रमणवग एक सरीखा नहा होता। विषुववृत्त परके स्थल प्रति घंटा १००० मीलसे भी अधिक गतिसे घूमते ह। (इसीस २५००० मीलका पथ्वीका घिराव २४ घंटाम पूरा चक्कर मार लेना है) परन्तु जसे जस उत्तर तथा दक्षिणम जाएँ वस वस स्थलाका भ्रमणवग कम होता जाता है। ध्रुवा पर ता इनकी गति लगभग शून्य हा जाती है। पथ्वी यद्यपि एक गाला है फिर भी उसकी सतहाके भिन्न भिन्न भागाकी विभिन्न गति होनेसे उसके केन्द्रम स्थित धातुरसम खलल पहुँचता है। इसस उसम बिजलीके प्रवाह उत्पन्न हाते है और इसीस उत्पन्न चुम्बकीय क्षेत्र बदलता रहता है। १९६० म उत्तर चुम्बकीय ध्रुवका स्थान ७५ उत्तर अक्षांश और १०१ पश्चिम रेखांशपर था। दक्षिण चुम्बकीय ध्रुवका स्थान ६७ दक्षिण अक्षांश और १४३ पूर्व रखांश पर था। *वास्तवम कुतुबनुमा भौगोलिक उत्तरीय ध्रुव (९० उत्तर अक्षांश) नहीं बताता,* उत्तर चुम्बकीय ध्रुवकी दिशा बताता है। अगर हम उत्तर ध्रुव पर कुतुबनुमा रख तो उसका काटा समकाण बनाकर खडा हो जाएगा। भूतकालम य दोना चुम्बकीय ध्रुव आजके ध्रुवोस भिन्न स्थान पर थे आर भविष्यम भी भिन्न *भिन्न स्थाना पर हाग। ध्रुव प्रदशाम कुतुबनुमा* सतोषप्रद रीतिस काम नहा करत। इसास आजकल विमान और जहाजाम कुतुबनुमाके बदले जाइरोस्काप नामक यन्त्र इस्तेमाल किय जात ह। जा अणु सबमरीन बिना समुद्रस बाहर निकले ही पथ्वीकी प्रदक्षिणा करता हैं व विशेष तरहके जाइरास्कापका उपयोग करती हैं।

मनुष्य कितनी तजीसे कितनी आश्चर्यजनक प्रगति कर रहा है!

: हवाका महासागर

महासागरके तलेम ही मव जीव रहते हो और तलके उपरका मारा पानी बिना जीव
वे हो तो कितना विचित्र मालूम होगा। समुद्रम तो ऐसा नही है पर हमारी पथ्वीके
-पासके वातावरणम ऐसा ही है। पथ्वीको घेरे हुए इस हवाके महासागरम तल पर
जीव-सष्टि वमती है और उपरकी हवा तो बगर जीवसष्टिके ही है।

पथ्वीका वातावरण मकडो मीलकी ऊँचाई तक फला है। परतु मनुष्य स्थायी रूपस रह
ने ऐसी हवा तो सिफ पाच हजारमीटर (सोलह हजार फुट) की ऊँचाई तक ही है। हिमालयके
एवरेस्टकी तलहटीम, रागबुक मठम तिब्बती लामा १६ हजार फुटकी ऊँचाइ पर बारहा महीन
रहते है। इससे अधिक ऊँचाइवाले किसी स्थान पर दुनियाम मानवका स्थायी निवास नही
है। पक्षी तो एवरेस्टकी ऊँचाई पर भी उडते नजर आय है। पर वह उनका स्थायी निवास
स्थान नही है। बीस हजार फुटसे अधिक ऊँचाई पर किसी भी जीवका वास नही होगा ऐसा
माना जाता है। सैकडो मीलकी ऊँचाई तक फले इस वातावरणम सिफ तीन मील ऊँचाई तककी
हवा ही जीवनके लिए पोषक हो, यह कसी विचित्रता है।

पथ्वीके यदि वातका आवरण न होता तो उसपर न जीवन होता न पानी होता
और न सहनीय तापमान होता। बिना वातावरणके आवाज भी उत्पन्न नही हो सकती और
सूयकी हानिकारक किरण पृथ्वीपर भीषण ताप बरसाती। पथ्वीपर चट्टानासे मिट्टी भी न
बनी होती। वातावरण है तो रोज बेशुमार उल्काएँ (गिरते तारे) उसम घिसकर नष्ट होती
है। वातावरण न होता तो य उल्काएँ पथ्वीपर भयकर आग बरसाती रहती। वातावरण न
होता तो चद्र और बुध पर जिस प्रकार होता है उसी प्रकार पथ्वीकी सतह पर घपका
तापमान उबलत पानी जितना होता और छायाम बफसे भी अधिक ठड होती।

या सहनीय तापमानवाली हवा और बिना पानीके जीवन सभव नही हो सकता। परन्तु
यही बात नही है। ऐसे तो मगल पर, लन्दनकी-सी खुशनुमा आबोहवा है पर हवा पर्याप्त
नही है। तब, हमारी पथ्वी पर समुद्रकी सतह पर सूखी हवाम ७८ प्रतिशत नाइट्रोजन, २१
प्रतिशत ऑक्सीजन, करीब एक प्रतिशत आरगन वायु ००१ स ४ प्रतिशत नमी और लगभग
००३ प्रतिशत कावन डाइऑक्साइड और अति अल्प मात्राम (घटत क्रमम) नियान, हीलियम,
मिथेन, क्रिप्टन नाइट्रस ऑक्साइड हाइड्रोजन, जनन, ओजोन और रडोन नामका वायुएँ है।

जीवके लिए हवाका घनत्व और उष्णताका बडा ही महत्त्व है। अगर हम हलीकाप्टरम
या वायुयानम बठकर समुद्रकी सतहस सिफ १२ हजार फुटकी ऊँचाई तक जाएँ और वहाँकी

एवरेस्ट विजयके बाद तेनसिंग और हिलारी गरम पेय पाकर ताजगी व ऊष्मा। अनुभव कर रहे हैं।

१९०० में ओरेगान (अमेरिका) में गिरी निकल-लोहकी १४ टनी उल्का।

है। १९६२में हमारे
...री हवाके अभ्यस्त न हों तो दम घुटनेसे हम बीमार भी हो सकते हैं। १९६२में हमारे
...जानोंको, चीनके आक्रमणके समय, अचानक चौदह हजार फुटकी ऊँचाई पर जाना पड़ा। इससे
...नेक जवान बीमार हो गए थे। इसका कारण यह है कि ऊँचाईवाले स्थानोंपर जानेसे हमारे
...रीर परसे अचानक हवाका दबाव घट जाता है, तापमान अचानक कम हो जाता है और प्राण
वायुका प्रमाण भी अचानक घट जाता है। परन्तु अगर हम धीरे धीरे ऊपर चढ़ें तो हमारा
शरीर इन तीनोंका अभ्यस्त होता जाता है। पर्वतारोहणके समय कुछ बहादुर २५००० फुटकी
ऊँचाई तक बिना आक्सीजनकी सहायताके चढ़ सके हैं और २९००० फुट ऊँचे एवरेस्ट पर
चढ़नेके बाद तेनसिंग थोड़े समयके लिए बिना आक्सीजनकी सहायताके अल्प आक्सीजन वाली
पतली हवामें रहा था। समुद्रकी सतह पर हमारे शरीर पर प्रतिवर्ग इंच पर साढ़े चौदह
पाउंडका दबाव होता है। एवरेस्ट पर (समुद्रकी सतहसे साढ़े पाँच मीलकी ऊँचाई पर) हवाका
दबाव पूरा पाँच पाउंड भी नहीं होता। १६,००० फुट ऊँचे रोगतंग मठमें, सबसे ऊँचे पर
मानव-बस्ती है। यहाँ स्थान तीन मीलकी ऊँचाई पर हवाका दबाव लगभग सात पाउंड है।
इससे कम दबाव और इतनी पतली हवामें मनुष्य अधिक समय तक जीवित नहीं रह सकता।
दुनियामें सबसे अधिक परिश्रम करनेवाले लोग एंडीज पर्वतमालाओंमें बोलीविया पेरू और
इक्वेडोरमें बारह हजार फुटसे भी अधिक ऊँचाई पर रहते हैं और चौदह हजार फुटकी ऊँचाई
पर स्थित खानोंमें परिश्रमपूर्ण काम करते जाते हैं। बोलीवियाकी राजधानी लापाज १२,०००
फुटकी ऊँचाई पर है। इस प्रकार मानव-बस्ती और मानव प्रवृत्तिका अंत १६००० फुटकी
ऊँचाई पर हो जाता है।

वातावरणकी समस्त हवाका अगर वजन किया जाए तो लगभग आधे वजनकी हवा
१८ हजार फुट (साढ़े तीन मील) की ऊँचाईमें ही समाई हुयी है। बाकी आधी हवा सबसे
मीलकी ऊँचाईमें फैली है। ठंड गरमी बादल, बरसात, बिजली, आंधी हिमवर्षा कुहरा ओस,
चक्रवात आँधी आदि सब लगभग एवरेस्टकी ऊँचाई तकके वातावरणमें—वास्तवमें तो उससे
भी कम बीस हजार फुटकी ऊँचाई तक ही होता है।

हवाकी प्रकृतिके अनुसार वातावरणके विभाग अथवा मंडल माने गए हैं। पहला मंडल
है अधोमंडल (troposphere)। गरम प्रदेशोंमें अधोमंडल दस मीलकी ऊँचाई तक और ध्रुवोंपर
छ मीलकी ऊँचाई तक फैला है। समशीतोष्ण प्रदेशोंमें औसतन पौने सात मीलकी ऊँचाई
तक है। अधोमंडलमें जैसे हम ऊपर चढ़ते जाते हैं तापमान घटता जाता है। समशीतोष्ण
प्रदेशोंमें समुद्रकी सतह पर तापमान पंद्रह अंश (+१५) सेंटीग्रेड हो तो ३६००० फुट अथवा
पौने सात मील पर वह शून्यसे नीचे साढ़े छप्पन अंश [−५६.५] सेंटीग्रेड तक उतर जाता है।

अधोमंडल जहाँ पूरा होता है और ऊर्ध्वमंडल (stratosphere) जहाँ शुरू होता है
दोनोंके बीचके पटको अधःस्थित पट्ट (tropopause) कहते हैं। इसके बाद ऊर्ध्वमंडल
होता है। ऊर्ध्वमंडल रज और नमी से लगभग मुक्त है। इससे पृथ्वी परसे आकाश
गहरे नीले रंगका दीखता है। अगर हम जेट विमानमें ३५००० फुटकी ऊँचाई पर प्रवास
तो ऊर्ध्वमंडलकी सीमाके पास होनेसे आकाशका सुंदर नीला रंग देख सकते हैं। ऊर्ध्व
२५०,००० फुटकी ऊँचाई तक फैला है।

ऊ॑ध्वमण्डलमें तापमान घटता नहीं है। समुद्रकी सतहसे २० मीलकी ऊँचाई तक जाने तक तापमान शून्यसे नीचे ५६.५ अंश सेंटीग्रेड ही रहता है। आश्चर्यकी बात तो यह है कि ऊर्ध्वमंडलमें ध्रुव प्रदेश परके हिमयोंकी अपेक्षा विषुववृत्त परके हिस्सेकी हवा अधिक ठंडी होती है। २३ मील ऊपर जाने पर तापमान बढ़ने लगता है। विस्मयजनक बात है कि ३० से ४० मील ऊँचे जाने पर तापमान बढ़कर शून्यसे ऊपर ७७ अंश सेंटीग्रेड हो जाता है। लगभग ५५ मीलकी ऊँचाई पर जहाँ ऊर्ध्वमंडलका अन्त आता है, तापमान पुनः अचानक घटकर शून्यसे नीचे ३३ अंश सें० हो जाता है। हिमके बादल कभी कभी ऊर्ध्वमंडलके निचले भाग तक भी पहुँच जाते हैं।
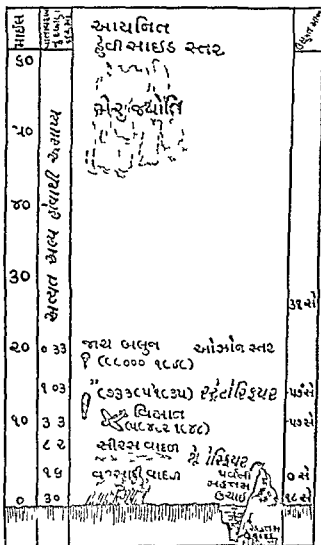
तापमानकी तो इससे भी अधिक विचित्रताएँ हैं। उदाहरणार्थ—पृथ्वीकी सतह पर ३० अंश सें० तापमान है। वहाँसे हम जैसे ऊँचे जाएँगे तापमान घटता जाएगा। एवरेस्ट जितनी ऊँचाई पर अथवा यों कहें कि ३० हजार फुटकी ऊँचाईपर तापमान शून्यसे नीचे चौवन अंश (–५४) भी हो जाता है। ३०,००० फुटसे लेकर १२०,००० फुटकी ऊँचाई तकके भागमें तापमान शून्यसे नीचे ५४ अंश सें० ही रहेगा, घटेगा नहीं। ऊपर जाने पर वह पुनः बढ़ता जाएगा। १,८०,००० फुटकी ऊँचाई पर वह बढ़कर शून्यसे ऊपर ६० अंश सें० हो जाएगा। इससे अधिक ऊँचाई पर वह फिरसे घटता जाएगा। और २,४०,००० फुटकी ऊँचाई पर शून्यके नीचे ७० अंश सें० तक घट जाएगा। फिर आगे वह पुनः बढ़ता रहेगा। तीन लाख फुटकी ऊँचाईपर तापमान शून्यसे १५ अंश सें० ऊपर होगा जो आह्लादक कहा जा सकता है। अर्थात् पृथ्वी पर जो तापमान

समुद्रकी सतहसे ६० मील (लगभग १०० किलोमीटर)की ऊँचाई तकके वातावरणका ज्ञान देनेवाला रेखांकन।

उल्काकी विशिष्ट गठन

अणुओंको विद्युत भार देकर उन्हें विद्युतमय आयनोंमें परिवर्तित कर देती है। इस प्रक्रियाके परिणामस्वरूप कई बार नव प्रदेशोंमें ध्रुवसे ३५ अंश तकके प्रदेशों परके आकाशमें मनको मुग्ध करनेवाले रंग तथा आकारमें मेरु ज्योति (aurora) दीखती है। कभी वह तेज रेखाके रूपमें तो कभी मंडपकी भालर जैसे आकारकी दीखती है। आयनमंडलमें अंतरिक्ष किरण (cosmic rays) नित्य बरसती रहती हैं और हवाके अणुओंको आयनमें बदलती रहती हैं—अर्थात विद्युतमय बना देती हैं। इसमेंसे अलग होने इलेक्ट्रान ऋण विद्युत भारवाले होते हैं। इस प्रकारकी आयनमय हवाकी तह पर तह जमा होती रहती है। अगर ये स्तर न होते तो हम क्षितिज पारके रेडियो स्टेशनोंको सुन ही न सकते क्योंकि रेडियो तरंग सीधी रेखामें ही प्रवास करती हैं। इससे वे क्षितिजके पीछे नहीं पहुंच सकता परंतु यह आयनमंडल तरंगोंको रोककर उनका परावर्तन करके, उन्हें फिर पृथ्वीकी ओर मोड़ता है।

ऊष्मंडलके ऊपर बाह्यमंडल है जिसे अंग्रेजीमें एक्सोस्फियर (exosphere) कहा जाता है। समुद्रकी सतहसे ६०० मीलकी ऊंचाई पर शुरू होनेवाला बाह्यमंडल १२०० से १९०० मीलके दरमियान पूरा होता है। यहां हवा इतनी पतली होती है कि जिस प्रकार ग्रह तथा *सूर्य आपसमें टकराते नहीं उसी प्रकार यहां हवाके अणु आपसमें टकराते नहीं हैं। यहां आयन* मंडलसे भी अधिक तापमान रहता है। यहां विश्वकिरणें अधिक उग्र रूपमें बरसती रहती हैं। परंतु रातको सूर्यकी किरण न पहुंचनेसे तापमान घटकर लगभग परम शून्य (absolute zero) अर्थात शून्यसे नीचे २७३ अंश सेंटीग्रेड तक उतर जाता है।

बाह्यमंडलके बाहर अवकाश है। उस अवकाशमें उल्काएं अथवा गिरते तारे प्रति घंटे लगभग ९० हजार मीलकी गतिमें आगे बढ़ते हैं। परन्तु अधिकतर उल्काएँ समुद्रकी सतहसे तीस मील ऊपर ही ऊर्ध्वमंडलमें घिसकर जलकर नष्ट हो जाती हैं। रोज इस प्रकार करीब करोड़ उल्काएँ गिरती हैं उनमें बहुत-सी तो दानेके बराबर ही होती है। बहुत कम उल्काएं पृथ्वीकी सतह तक पहुँच पाती है। इन उल्काओंमें अधिकतर निकल मिश्रित लोह धातु होती है। आकार प्रकार, स्वरूप, बनावट, गठन वगैरहमें हरेक उल्काका अपना अलग अनोखापन होता है।

राकेट, रॉकेट और कृत्रिम उपग्रहोंने वातावरणके ऊपरी स्तरोंका अध्ययन किया है। उनका तापमान नापा है। उसमें कुछ विचित्रताओंका भी पता चला है। पहले ऐसा माना जाता था कि ज्यों-ज्यों ऊपर जाएँ त्यों-त्यों उष्णता और हवाका दबाव घटता जाता है। लेकिन अब पता चला है कि हवाका दबाव तीन लाख फुटकी ऊँचाई तक घटता है परन्तु बादमें नहीं घटता। सूर्यमेंसे जो किरण प्रवाह, दृश्य व अदृश्य (radiation) आता है उससे कभी-कभी दबाव बढ़ भी जाता है।

वातावरणका स्वरूप देखनेके बाद अब हम आबोहवा (climate) तथा हवामान या वातमान (weather)के बारेमें देखें। आबोहवा और हवामान एक नहीं हैं। इन दोनोंमें महत्त्वका अन्तर है। आबोहवाका मतलब है पानी (आब) और हवाकी औसतन प्रकृति। उदाहरणार्थ, भारत गरम देश है। ब्रिटेन ठंडा देश है। सहारा सूखा और गरम रेगिस्तान है। अंदमानकी आबोहवा सालभरकी है। इटली समशीतोष्ण देश है। उत्तर भारत गरमीमें गरम और जाड़ेमें ठंडा रहता है। पर किसी निश्चित समय पर निश्चित स्थल पर आबोहवाकी परिस्थिति हवामान है। बम्बईमें चौमासेके एक दिनके हवामानका वर्णन इस प्रकार हो सकता है "तापमान ज्यादासे ज्यादा ३० और कमसे कम २१ अंश सेंटीग्रेड हो गया था। पवन नैऋत्यका चलता था और बीच बीचमें जोरदार हवाएँ चलती थीं जिसकी गति अधिकसे अधिक बढ़कर प्रतिघंटा ५० किलोमीटर तक पहुँच गई थी। पूरे हुए २४ घंटोंमें ६० मिलीमीटर वर्षा रेकॉर्ड की गई। हवामें नमी का प्रमाण ९० प्रतिशत था। आकाश सारा दिन बादलोंसे घिरा था ' आदि।

किसी भी प्रदेशकी आबोहवाका आधार उसके अक्षांश, धरतीकी ऊँचाई, समुद्रसे उस प्रदेशकी दूरी, पवनकी दिशा, उस प्रदेशके आसपासके पर्वत, उस प्रदेशका भौगोलिक स्थान आदि पर होता है। विषुववृत्तके दोनों तरफके प्रदेश गरम और नम आबोहवावाले होने चाहिए, परन्तु आबोहवा मात्र अक्षांश परसे ही निश्चित नहीं की जा सकती। केन्या (अफ्रीका)में किलिमांजारो पर्वतमाला विषुववृत्तसे सिर्फ ३ अक्षांश दूर है, फिर भी उसके उत्तुंग (शिखर) शिखर पर बर्फ होती है। मर्करा और चेरापूंजी एक ही अक्षांश पर है, फिर भी चेरापूंजीमें वर्षा वर्ष भरमें ५०० इंच होती है जबकि सहारामें एक इंच भी शायद ही होती है। इसका कारण उनका भौगोलिक स्थान, समुद्रसे दूरी और पवनकी दिशा है। पेरू समुद्र किनारे पर है और वहाँ १५०-२०० इंच वर्षा होती है जब कि दक्षिण अमेरिकामें महासागरके किनारे चिलीका सूखा रेगिस्तान है। उसके किनारेसे होकर समुद्रका ठंडा प्रवाह बहता है और उसमेंसे जरा भी सीलन वहाँ नहीं आती।

ऋतुएँ पृथ्वीकी धुरीके झुकाव और सूर्यके आसपास उसके परिभ्रमण पर निर्भर रहती हैं। वातावरणमें जो कुछ भी हेरफेर हम देखते हैं अथवा अनुभव करते हैं उसका कारण सूर्य है। सूर्यमेंसे जो शक्ति अवकाशमें प्रतिपल फैलती रहती है उसमेंसे दो करोड़वें भागकी शक्ति पृथ्वी पर पहुँचती है। इस शक्तिमेंसे ४३ प्रतिशत शक्ति पृथ्वीके वातावरण बर्फ हिम बादल वगैरामें टकराकर परावर्तन पाकर पुनः अवकाशमें चली जाती है। १४ प्रतिशत शक्ति गरमीके रूपमें वातावरणमें समा जाती है। बाकी ५७ प्रतिशत शक्ति धरती और पानीको तपानेमें खर्च हो जाती है। इस तरह वातावरण सूर्यकी किरणों द्वारा शायद ही गरमी पाता है। परन्तु तप हुए समुद्र और धरतीकी ऊपरी सतहके संसर्गसे वह अधिक गरम

उल्काकी विशिष्ट गठन

अणुओंको विद्युत भार देकर उन्हें विद्युतमय आयनोंमें परिवर्तित कर देती है। इस प्रक्रियाके परिणामस्वरूप कई बार ध्रुव प्रदेशोंमें ध्रुवसे ३५ अक्षांश तकके प्रदेशों परके आकाशमें मनको मुग्ध करनेवाले रंग तथा आकारमें मेरु ज्योति (aurora) दीखती है। कभी वह तेज रेखाके रूपमें तो कभी मटमैली बादल जैसे आकारकी दीखती है। आयनमंडलमें अंतरिक्ष किरणें (cosmic rays) नित्य बरसती रहती हैं और हवाके अणुओंको आयनमें बदलती रहती हैं—अर्थात् विद्युतमय बना देती है। इसमेंसे अलग होने इलेक्ट्रान ऋण विद्युत भारवाले होते हैं। इस प्रकारकी आयनमय हवाकी तह पर तह जमा होती रहती है। अगर ये स्तर न होते तो हम क्षितिज पारके रेडियो स्टेशनोंको सुन ही न सकते क्योंकि रेडियो तरंग सीधी रेखामें ही प्रवास करती हैं। इससे वे क्षितिजके पीछे नहीं पहुँच सकता परन्तु यह आयनमंडल तरंगोंको रोककर उनका परावर्तन करके उन्हें फिर पृथ्वीकी ओर मोड़ता है।

ऊष्मामंडलके ऊपर बाह्यमंडल है जिसे अंग्रेजीमें एक्सोस्फियर (exosphere) कहा जाता है। समुद्रकी सतहसे ८०० मीलकी ऊँचाई पर शुरू होनेवाला बाह्यमंडल १२०० से १९०० मीलके दरमियान पूरा होता है। यहां हवा इतनी पतली होती है कि जिस प्रकार ग्रह तथा सूर्य आपसमें टकराते नहीं उसी प्रकार यहां हवाके अणु आपसमें टकराते नहीं है। यहां आयनमंडलसे भी अधिक तापमान रहता है। यहाँ विश्वकिरण अधिक उग्र रूपमें बरसती रहती है। परन्तु रातको सूर्यकी किरणें न पहुँचनेसे तापमान घटकर लगभग परम शून्य (absolute zero) अर्थात् शून्यसे नीचे २७३ अंश सेंटीग्रेड तक उतर जाता है।

बाह्यमंडलके बाहर अवकाश है। उस अवकाशमेंसे उल्काएँ अथवा गिरते तारे प्रति घंटे लगभग ९० हजार मीलकी गतिसे आगे बढ़ते हैं। परन्तु अधिकतर उल्काएँ समुद्रकी सतहसे तीस मील ऊपर ही ऊष्मामंडलमें घिसकर, जलकर नष्ट हो जाती हैं। रोज इस प्रकार करीब करोड़ उल्काएँ गिरती हैं उनमें बहुत-सी तो दानेके बराबर ही होती हैं। बहुत कम उल्काएँ पृथ्वीकी सतह तक पहुँच पाती हैं। इन उल्काओंमें अधिकतर निकल मिश्रित लोह धातु होती है। आकार प्रकार स्वरूप बनावट गठन वगैरामें हरेक उल्काका अपना अनोखापन होता है।

रडून, गरेट और कृत्रिम उपग्रहोंने वातावरणके ऊपरी स्तरका अध्ययन किया है। उनका
...मान नहीं है। उसमें कुछ विचित्रताओंका भी पता चला है। पहले ऐसा माना जाता था कि
...ज्यों ज्यों ऊपर जाएँ त्यों-त्यों उष्णता और हवाका दबाव घटता जाता है। लेकिन अब पता चला है
...हवाका दबाव तो लगातार काफी ऊँचाई तक घटता है परन्तु बादमें नहीं घटता। सूर्यसे जो
...किरण प्रवाह दृश्य व अदृश्य (radiation) आता है उसमें कभी-कभी दबाव बढ़ भी जाता है।

वातावरणका स्वरूप देखनेके बाद अब हम आबोहवा (climate) तथा हवामान या
वातमान (weather)के फरकको देखें। आबोहवा और हवामान एक नहीं हैं। इन दोनोंमें
महत्त्वका अन्तर है। आबोहवाका मतलब है पानी (भाप) और हवाकी औसतन प्रकृति।
उदाहरणार्थ, भारत गरम देश है। ब्रिटेन ठंडा देश है। सहारा सूखा और गरम रेगिस्तान है।
अंडमानकी आबोहवा मलेरियावाली है। इटली समशीतोष्ण देश है। उत्तर भारत गरमीमें गरम
और जाड़ेमें ठंडा रहता है। पर किसी निश्चित समय पर निश्चित स्थान पर आबोहवाकी परिस्थिति
हवामान है। कलकत्तेमें चौमासेके एक दिनके हवामानका वर्णन इस प्रकार हो सकता है तापमान
बढ़कर ३० और घटकर २१ अंश सेंटीग्रेड हो गया था। पवन नैऋत्यका चलता था और बीच
बीचमें जोरदार हवाएँ चलती थीं जिसकी गति अधिकसे अधिक बढ़कर प्रतिघंटा ८० किलो
मीटर तक पहुँच गई थी। पूरे दिन २४ घंटोंमें ६० मिलीमीटर वर्षा रेकार्ड की गई। हवामें नमी
का प्रमाण ९० प्रतिशत था। आकाश सारा दिन बादलोंसे घिरा था आदि।

किसी भी प्रदेशकी आबोहवाका आधार उसके अक्षांश धरतीकी ऊँचाई, समुद्रसे उस
प्रदेशकी दूरी पवनकी दिशा, उस प्रदेशके आसपासके पर्वत, उस प्रदेशका भौगोलिक स्थान
आदि पर होता है। विषुववृत्तके दोनों तरफके प्रदेश गरम और नम आबोहवावाले होने चाहिए,
परन्तु आबोहवा मात्र अक्षांश परसे ही निश्चित नहीं की जा सकती। केन्या (अफ्रीका)में
किलिमांजारो पर्वतमाला विषुववृत्तसे सिर्फ ३ अक्षांश दूर है फिर भी उसके उत्तुंग (किबो)
शिखर पर बर्फ होती है। सहारा और चेरापूंजी एक ही अक्षांश पर है फिर भी चेरापूंजीमें वर्षा
वर्ष भरमें ५०० इंच होती है जबकि सहारामें एक इंच भी शायद ही होती है। इसका
कारण उनका भौगोलिक स्थान समुद्रसे दूरी और पवनकी दिशा है। पेरू समुद्र किनारे पर
है और वहाँ १५०-२०० इंच वर्षा होती है जब कि दक्षिण अमेरिकामें महासागरके किनारे
चिलीका सूखा रेगिस्तान है। उसके किनारेसे होकर समुद्रका ठंडा प्रवाह बहता है और उसमेंसे
जरा भी सील वहाँ नहीं आती।

ऋतुएँ पृथ्वीकी धुरीके झुकाव और सूर्यके आसपास उसके परिभ्रमण पर निर्भर रहती
हैं। वातावरणमें जो कुछ भी हेरफेर हम देखते हैं अथवा अनुभव करते हैं उसका कारण सूर्य
है। सूर्यसे जो शक्ति अवकाशमें प्रतिपल फैलती रहती है उसमेंसे दो करोड़वें भागकी शक्ति
पृथ्वी पर पहुँचती है। इस शक्तिमेंसे ४३ प्रतिशत शक्ति पृथ्वीके वातावरण बर्फ हिम,
बादल वगैरहसे टकराकर परावर्तन पाकर पुनः अवकाशमें चली जाती है। १४ प्रतिशत
शक्ति गरमीके रूप में वातावरणमें समा जाती है। बाकी ५७ प्रतिशत शक्ति धरती
और पानीको तपानेमें खर्च हो जाती है। इस तरह वातावरण सूर्यकी किरणों द्वारा शायद ही
गरमी पाता है। परन्तु तपे हुए समुद्र और धरतीकी ऊपरी सतहके संसर्गसे वह अधिक गरम

होता है। इसीमे समुद्रकी सतह पर दिनम हवा ठण्डी और रातको अधिक गरम होती है। इस प्रकार सूयकी गरमीसे तपी हुई धरती और समुद्रके पानीसे वातावरणको गरमी मिलती है। समुद्र तो वातावरणको गरमीके अलावा भाप भी देता है। इसका असर आबोहवा और हवामान पर होता है।
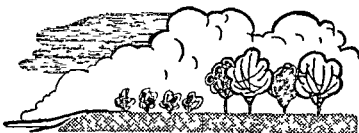
गरमीम अणुआकी गति बढ जाती है। गरम हवा हल्की होनसे ऊपर जाती है आर उसका स्थान लेने चारा तरफस ठडी हवाका प्रवाह शुरू होता है। इससे वातावरणकी हवाम मिलावट होती रहती है।

अगर आकाश सघन बादलोसे घिरा हो तो सूयकी ७५ प्रतिशत किरणोका बादल ही परावतन कर देते है। जो २५ प्रतिशत किरणे बादलाके आरपार पथ्वीकी सतह पर पहुँचती है, उनमसे पथ्वीकी सतह अपनी ऊष्माधारक शक्तिके अनुसार किरण सोख लेती है। पथ्वीकी सतह पर पहुँचती किरणामसे ७ , प्रतिशत किरणाको हिम प्रदेश परावतन करके वापस भेज देता है। इसीसे ध्रुव प्रदेशाम बफके पिघलने योग्य गरमी मिलती ही नही और इसीमे वहा हमेशा बफ रहती है। अलग-अलग प्रदेशाम सूय किरणाका तापण न्यूनाधिक मानाम होता रहता है और इसीसे अलग-अलग प्रदेशाके हवामानम तथा आबोहवाम बडा फक रहता है।

खगोलशास्त्री हमारे वातावरण पर बहुत खीझत हैं क्याकि वह उन्ह ग्रहा और ताराका निरीक्षण करनेम बाधा पहुँचाता है। परतु वायुशास्त्री उसका आभार मानते हैं क्याकि वातावरण सूयकी हानिकारक किरणा (क्ष किरण गामा किरण, अतरिक्ष किरण आदि)के सामने रक्षण देता है। साथ ही सूयकी गरमीके आधिक्यस हम बचाता है। मनुष्य सहराके रेगिस्तानम भी और दक्षिण ध्रुव खडकी ठडम भी जीवित रह सकता है क्याकि गरमी और ठडका, चद्र अथवा बुधकी गरमी और ठड जितनी बढ जानस पृथ्वी का वातावरण ही रोकता है।

आपने कच्छ राजस्थान अथवा उत्तर गुजरातम देखा होगा कि दिनम बहुत गरमी होने पर भी आकाश अगर स्वच्छ हो तो, रात ठण्डी होती है। सहरा जैसे रेगिस्तानम दोपहरको तो चलसा देनेवाली गरमी होती है पर रात तो इतनी ठडी होती है कि मन कुछ जम जाए। इसका कारण यह है कि जिस प्रकार धरती जल्दी तप जाती है उसी प्रकार जल्दी ठडी भी हो जाती है।

पृथ्वीकी सतह गरम होनेपर उसके ससगम आनवाली हवा गरम हो जाती है। गरम हवा हल्का हो जानेसे ऊपर जाती है और वहा वातावरणम दबाव कम हो जाता है। ठडे प्रदेशामे वातावरणका दबाव अधिक होता है। अत भारी दबाववाले विस्तारस कम दबाववाले विस्तारकी तरफ हवाका प्रवाह सतत बहता रहता है। पथ्वीकी धुरी अपनी भ्रमण कक्षास टेढी रहनेके परिणामस्वरूप होनवाली ऋतुआ, पथ्वीकी सतहके प्रकार आदिका भी पवनकी दिशा पर असर होता है।

भारतके पश्चिमी किनारेके जहाजी तथा अरब देशके जहाजी, भूगोल और वायुशास्त्रके ग्रंथ नहीं पढ़ते थे। फिर भी पिछले हजार वर्षोंमें उन्होंने वायुशास्त्र और भूगोलका प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त किया था। सूर्यके आसपास पृथ्वीकी प्रदक्षिणाके समय पृथ्वीकी धुरीका उत्तरार्ध सूर्यकी तरफ झुका रहता है तब उत्तरी गोलार्धमें गरमीकी ऋतु होती है और दक्षिणी गोलार्धमें शीत ऋतु होती है। उत्तरी गोलार्धमें तब अधिक गरमी विषुववृत्तके उत्तरमें पड़नेसे वहाँकी हवा फैलकर हल्की हो जाती है और ऊपर चढ़ जाती है। इसमें दक्षिणमें ठंडी भारी हवा वेगसे उसका स्थान लेनेको आ जाती है। इससे दक्षिणसे उत्तरका पवन चलने लगता है। पर पृथ्वी अपनी धुरी पर पश्चिमसे पूर्वको घूमती है इससे पवनकी दिशा उत्तरकी तरफ रहनेके बजाय उत्तर-पूर्व (ईशान) हो जाती है। इन पवनोंका फायदा उठाकर सैकड़ों वर्षोंसे नाविक अपने जहाजोंको नैऋत्यमें अफ्रीकाके पूर्वी किनारेसे ईशानसे भारतकी तरफ चलाते थे—आज भी चलाते हैं। परन्तु ये पवन व्यापारी पवन कहलाये। इन पवनोंका फायदा उठानेके लिए हजारों जहाज अफ्रीकाके अलग-अलग बन्दरगाहों पर इन पवनोंकी राह देखते रहते थे। इसी प्रकार हमारे जाड़ेमें दक्षिणी गोलार्ध सूर्यकी तरफ झुका होनेके कारण वहाँ ग्रीष्म होती है। वहाँकी हवा गरम होकर ऊपर चढ़ जाती है और उत्तरसे ठंडी भारी हवा उसका स्थान लेने वेगसे बढ़ आती है। इसीसे हमारे जाड़ेमें व्यापारी वायुका चलना विपरीत नैऋत्यसे हो जाता है और तब भारतवर्षके किनारेसे पालवाले जहाज अफ्रीका जानेको निकल पड़ते थे—आज भी जाते हैं।
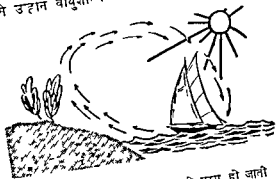
दिनमें समुद्रकी अपेक्षा धरती जल्दी गरम हो जाती है। इससे धरती परकी हवा गरम और हल्की होकर ऊपरकी ओर चढ़ जाती है और समुद्र परकी ठंडी और भारी हवा धरतीकी ओर बहती रहती है।
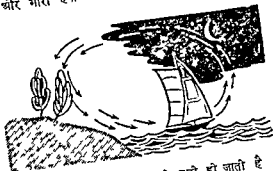
रातको धरती अपेक्षाकृत जल्दी ठंडी हो जाती है और समुद्रकी गरमी धीरे धीरे कम होती है। इससे हवा धरती परसे समुद्रकी ओर बहती रहती है।

पृथ्वी पर कुछ ऐसे भी हिस्से हैं जहाँ पवन दुर्लभ है और ऐसे भी हिस्से हैं जहाँ पवन तूफानका रूप धारण कर सनसनाता रहता है। विषुववृत्त पर जहाँ हवा तपकर सीधी ऊपर चढ़ जाती है वहाँ पवन रुक-सा जाता है। ऐसे क्षेत्रमें यदि पालवाला जहाज फँस जाए तो उसकी गति अत्यन्त धीमी हो जाती है क्योंकि पवनके बजाय उसे लहरों और प्रवाहोंसे ही खिंचना पड़ता है।

ऐसा दूसरा क्षेत्र उत्तर तथा दक्षिण गोलार्ध में ३०-३५ अक्षांश पर है। विषुवत्वृत्त पर आकाश में चढ़ी हवा यहां ठंडी व भारी होकर नीचे उतर जाती है। यहां अनुकूल पवनका भरोसा नहीं रहता। इस अक्षांशके पट्टेको अश्व अक्षांश (horse latitudes) नाम दिया गया है।

पवनकी दिशा व गति हवाके न्यूनाधिक दबाव पर आधारित है। पानी ऊँचा सतहसे नीची सतहकी तरफ बहता है तथा सतहकी ढालके अनुसार पानीके बहावकी गति होती है, उसी प्रकार अधिक दबाववाले हवाके क्षेत्रमेंसे हवा कम दबाववाले क्षेत्रकी तरफ बहती रहती है। पवनकी गति शायद एक मील प्रति घंटे तक भी हो सकता है और दो सौ मील भी हो सकती है। हवाका सबसे अधिक वेग २२५ मील प्रति घंटेके हिसाबसे ६ २८८ फुट ऊँचे वाशिंगटन पवन पर पाया गया है। ता० २४-४-१९३४के दिन अमेरिकाके न्यू हैम्पशायरमें पवनकी गति २३१ मील प्रति घंटेकी पायी गयी थी। इतने तेज पवनमें रेलें मोटरें तथा मकान भी उड़ जाते हैं।

पवनके साथ ही पवनके तूफान भी देखे गए। अलग-अलग स्थानों पर पवनके तूफानोंको हरिकेन, साइक्लोन, टॉर्नाडो, टाइफून आदि नाम दिए गए हैं। ये सब तूफान एक सरीखे भी नहीं होते। जब गरम हवा और ठंडी हवाके प्रवाह आमने सामनेसे टकराते हैं तब वहां चक्रवात (cyclone) पैदा होते हैं।

हिंद महासागरमें जो तूफान होते हैं उन्हें हरिकेन कहा जाता है। (जब ऐसे तूफानी पवनमें भी बुझ न जाए ऐसी लालटेन बनी तो वे इसीसे हरिकेन लालटेन कहलायी।) प्रशांत महासागर और उसके किनारेके प्रदेशोंमें ऐसे बवंडरको टाइफून कहा जाता है।

हरिकेन तूफान खुले महासागरमें पैदा होता है। जब यह खिसकता हुआ धरती परके आकाशमें आता है तब शांत हो जाता है। इसमें पवनकी गति १५० मील तक पहुंच जाती है। इसका व्यास ४०० मील तक हो सकता है। इतने व्यापक व्यासमें विनाशक चक्कर मारते घूमते इस पवनके केंद्र (eye)में हवा शान्त भी हो सकती है। तूफानमें केंद्रमें आकर विमान अथवा जहाज शांतिकी सांस भले ही ले ले परंतु जिस प्रकार पृथ्वीके आसपास घूमता चंद्र पृथ्वीके साथ ही आगे भी बढ़ता है, उसी प्रकार केंद्रके आसपास घूमता यह चक्र केंद्रको लेकर आगे ही बढ़ता रहता है।

दुनियामें सबसे तूफानी पवन दक्षिण ध्रुवखंडमें चलते हैं। वहां कामनवेल्थ उपसागरमें पवनकी गति प्रति घंटे २०० मील तक पहुँचती है। वहां जिस दिन तूफानी पवन न हो उस दिनको शुभ दिन माना जाता है।

वायुका सबसे बड़ा विनाशक ताण्डव वायुस्तंभ (tornado) है, जो सौभाग्यसे हमारे देशमें देखनेको नहीं मिल सकता। यह बवंडर एक ही क्षेत्रमें फैलनेके बजाय कीपके आकारका हो जाता है। नीचेसे खूब सँकरा तथा ऊपरसे खूब चौड़ा। टार्नाडोमें इतना तो बल होता है कि वह सारे घरको बसको अथवा रेलके समूचे इंजनको भी उठा ले। आकाशमें स्थित इस विराट कीपका नीचेका छोर धरती पर लहराता हुआ आगे बढ़ता है। नीचेका छोर सकरा होनेसे उसका विनाशक असर उसके पाव मील चौड़े मार्गसे अधिक व्यापक क्षेत्रमें नहीं होता। अमेरिकामें टार्नाडोको ज्येष्ठ है प्रकृतिका सबसे भयंकर व विनाशक कोप। उसके आगे बढ़नेकी गति प्रति घंटा २०से लेकर ४० मील तो होती है। पर उसके अंदर घूमती व नीचेसे ऊपर

जाती वायुकी गति ३०० मीलसे भी अधिक होती है। इसीसे वह जानो और मालको बहुत नुकसान करता है। इस कीपके अंदर हवाका दबाव अत्यन्त कम होता है। इससे जब इसका निचला छोर किसी मकानके ऊपरसे गुजरता है तब मानो कोई जोरका धडाका हुआ हो ऐसे वह मकान फट जाता है। जब मकानमें हवाका दबाव साधारण सा हो और इस कीपके अंदर मकान आ जाए तब उसके आसपास कम दबाववाली हवा लिपट जाती है। तब अंदरके दबावसे ही मकान फट जाता है।

टार्नाडोमें इस चक्राकार गति और अंदरके कम दबावके अलावा एक तीसरी विनाशक शक्ति भी होती है। वह है हवाकी नीचेसे ऊपरकी ओर गति जो प्रति घंटे सौसे दो सौ मील तक होती है। नीचेसे ऊपरकी इस गतिसे टार्नाडो मनुष्य, पशु वाहन और मकानोंको भी ऊपर उठाकर पटकता है।

कभी-कभी अखबारोंमें हम पढ़ते हैं कि अमुक जगह पर मेंढकों या मछलियोंकी वर्षा हुई। वहां मनकी तो वहां कमरी चन्दनकी वर्षा हुई। जब हवाका ऐसा जोरदार प्रवाह पृथ्वीकी सतहसे आवागमनकी तरह तजीसे चलता है तब उसमें मेंढक मछलियां या जो कुछ भी उस चक्रमें आ जाए आकाशमें चला जाता है और फिर कहीं वर्षाके साथ बरस पड़ता है। लाल मिट्टी यदि ऊपर चढ़ गई हो तो वर्षाका पानी लालिमा लिये होता है।

जब टार्नाडो सरोवर या समुद्र परसे गुजरता है तब उसकी कीपमें पानी उठ जाता है। इस जलस्तंभ (water spout)का रेखर वह आगे बढ़ता है। उसके मार्गमें अगर कहीं जहाज आ गया तो बस, उसकी खैर नहीं। आज तक जितना देखा हुआ है ऐसे इस प्रकारके जलस्तंभोंमें सहसा जिस पर विश्वास न हो ऐसा प्रचंड जलस्तंभ ता० १६ ५ १८९८ के दिन ईडन (आस्ट्रेलिया)के किनारे पर हुआ था। किनारे परसे थियोडोलाइट द्वारा उसकी ऊंचाई नापी गई तो वह समुद्रकी सतहसे ५०१४ फुटकी थी। समुद्रकी सतह पर उसका व्यास दस फुट था। टार्नाडो और जलस्तंभ नीचेसे चक्कर खाते ० पर ऊपर कीपके आकारमें फैल जाते हैं। नीचेसे जो सीलवाली हवा ऊपर चढ़ जाती है वह वहां जाकर ठंडी हो जाती है। इससे उसकी सील बादल बनकर फैल जाती है और बरस पड़ती है।

चौमासेके दिनोंमें सूरत और बम्बईसे दक्षिणमें कन्याकुमारी तक समुद्रके किनारे गर्जनाके साथ गुजरते पवनोंको बहुतोंने देखा और महसूस किया होगा। वे बरसते भी जाते हैं। इन तूफानी पवनोंको अंग्रेजीमें स्क्वाल (squall) कहते हैं। स्क्वालका अर्थ है पवनकी सनसनाहट। यह सनसनाता बरसाती पवन भी परिचय करने योग्य है। वह देखनेमें जैसा डरावना व प्रभावशाली है वैसा ही राक्षसी शक्ति भी रखता है।

यह सनसनाता बरसाती पवन क्या है इसे समझने के लिए पहले वाताग्र (fronts) क्या है यह जान लेना चाहिए। जब हवाके एक प्रवाहका तापमान और नमी दूसरे प्रवाहसे भिन्न होता है तो आमने-सामने आने पर वे प्रवाह एक दूसरेसे मिल नहीं जाते बल्कि एक दूसरेसे टकराते हैं। इस तरह आगे बढ़ते हुए वातपट्टकी अगली सतहको वाताग्र कहा जाता है। जिस वातपट्टका तापमान अपेक्षाकृत ऊँचा हो उसके वाताग्रको 'उष्णाग्र' और दूसरेको 'शीताग्र' कहा जाता है। ठंडा प्रवाह भारी व शुष्क होता है। इससे वह हलके व नम प्रवाहके नीचे घुसकर

उसे ऊपर उठा लेता है। ऐसे समय हवामान खराब हो जाता है और पवन तूफानी हो जाता है। कभी-कभी तो ठंडा प्रवाह गरम प्रवाहको पीछे धकेल देता है।

ठंडे पवनके वाताग्रसे आगे मीलों दूर, जब गरम हवाका प्रवाह उठकर ऊपर चढ़ता है तब उसमें स्थित हवाकी नमी जमकर बादल बन जाती है। साथ ही पीछेसे आते पवनका प्रवाह इतना तेज होता है कि इससे सारे बादल उमड़-घुमड़ कर मथ-से जाते हैं। उनमें बिजली व गर्जना भी होती है। कभी-कभी तो इस सनसनाते बरसाती पवनमें (स्क्वाल्स) बवंडरसे भी अधिक जोर होता है। वह साधारण विमानको चीर डाल सकता है। ऐसे तूफानके समय बैरामीटरका पारा एकदम उतर जाता है अर्थात् हवाका दबाव अचानक बहुत कम हो जाता है। पर यह धूमधाम अधिक समय तक नहीं चलती। एक जोरदार अल्पकालीन झड़ी बरसाकर तथा सनसनाते पवनसे सभीको कँपाकर व भयावने बादलोंका घटाटोप ऊपरसे गुजर जाते ही वातावरण पुनः शान्त और खुशनुमा हो जाता है।

अनुभवी किसान और नाविक विभिन्न तूफानोंके चिह्न पहलेसे पहचान लेते थे। आज तो कई मील दूरसे आते वातचक्रका स्थान तथा किस दिशामें, कितनी गतिसे वह आगे बढ़ रहा है यह सब राडार-पट पर पहले ही से देखा जा सकता है और इसकी चेतावनी भी वायरलेसके द्वारा पहुँचायी जाती है। इस चेतावनीसे जहाज तुरन्त ही ऐसे तूफानी चक्रसे दूर सुरक्षित स्थान पर चले जाते हैं। पशु चरानेवाले अपने पशुओंके रक्षणार्थ टोनाडोसे दूर सुरक्षित जगहमें चल जाते हैं।

पवनकी गतिका अन्दाजा लगानेकी एक सरल रीति बोफोर्ट मात्राके नामसे प्रसिद्ध है। इस मात्राकी तालिका परिशिष्टमें दी गई है।

बारह प्रकारकी वायुओंमेंसे बोफोर्टकी कौनसी मात्राकी वायु चलती है यह पवनका असर देखकर हम कह सकते हैं। उदाहरणार्थ गुजरातमें १से ६ बोफोर्ट मात्राके पवन सामान्य हैं—खास करके कच्छ और सौराष्ट्रके सागर किनारे पर, जबकि बम्बईमें चौमासेकी ऋतुको छोड़कर १से ४ बोफोर्ट मात्राका पवन सामान्य है। बोफोर्टकी ८से ९ मात्रावाला पवन गुजरात और बम्बईमें शायद ही कभी चलता है।

पवनका प्रचण्ड ताण्डव समुद्रके प्रचण्ड ताण्डवसे भी बढ़कर भयानक तथा विनाशक होता है। क्योंकि हम समुद्रसे दूर तो रह सकते हैं पर जहाँ झंझावात हो रहा हो वहाँसे भागकर कहीं भी नहीं जा सकते। समुद्रके तूफानकी तुलनामें पवन कुछ कम नहीं होता। (असलमें तो समुद्रको भी तूफानी बनानेवाला पवन ही है न!) १९३५में फ्लोरिडा (अमरिका) पर ऐसा झंझावात आया था कि जिसने एक पूरी रेलगाड़ीको ही पटरिया परसे उठाकर फेंक दिया था। सिर्फ इंजन ही पटरी पर चिपका रहा।

सन् १९३८में अमरिकाके पूर्व किनारे पर पवनका ऐसा तूफान (हरिकेन) हुआ था कि न्यूयार्ककी फौलाद और सीमेंट कांक्रीटकी बनी गगनचुंबी इमारतें भी हिलने लगी थीं। हजारों साधारण-से मकान जमीनदोज हो गए। बीस हजार मील लम्बे बिजलीके तार [illegible] तारको ले जानेवाले लाइट खम्भे व ठाट (ढाँचे) भी टूट गए।

सन् १९४४में अमरिकाकी नौसेनाका [illegible]

वडर (टाइफून)म फँम गया। थाडी ही दरम महाकाय युद्धपोत भी इस दुदशा...
पटसबग नामके बडे फौलादी क्रूजरके अगले सिरेके तूतक (डेक) पर एक सौ फुटकी लम्बाई
तकके लाइके ठाट तथा अय सजावट के सामानका नाश हुआ।

सन् १९२८म ग्वादालुप टापू (वेस्ट इण्डीज, अमरिका) पर आए तूफानन जो रौद्र
रूप धारण किया था, उसका वणन शब्दाम करना मुश्किल है। शामम आय तफान की भयानकता सुबह
हाने तक तो इतनी बढ़ गइ कि मकान भी उड जान लग। चक्रवातके कारण उकसाया सा
समुद्र किनारा तोडकर बाजार तक चल आया।

जसा पहले बताया गया है गाल घूमत चक्रवातके केन्द्रम 'आख' हाती है जिधर हवा
शात तथा आकाश स्वच्छ होता है। वायुका पूरा चक्राकार जम सौसे दा सौ मील प्रति घटे
तककी गतिम घूमता रहता है वसे ही कुछ मील प्रति घटेकी गतिस आग भी बढ्ता रहता है।
जब इस आग बढत चक्राकार की आंख 'ग्वादालुप' परसे गुजरी तब तूफान शान्त हुआ सा
प्रतीत हुआ तथा आकाश स्वच्छ दीख पडा। जो जीवित बच थे उन्हान छुटकारा पानेकी सास
ली। परन्तु जस ही आख आगे निकल गई कि ग्वादालुप पुन तूफानम फँस गया और फिर
रातका तूफान शान्त हो गया। लेकिन दूसर दिन जब सूरज उगा तब सारा शहर उजाड और
विनाशका एक ढेर-सा हो गया था।

१९ · पानीके विभिन्न रूप

जलको देव कहा गया है और देव विभिन्न रूप धारण कर सकते हैं, अदृश्य भी हो सकते हैं। पानीके विषयमें भी ऐसा ही है। जैसे वह हमारे शरीरमें सर्वत्र है वैसे ही हमारे आसपास भी सर्वत्र है। कहीं प्रवाही (पानी)के रूपमें है कहीं वायु (कुहरा, बादल और वाष्प)के रूपमें है तो कहीं घन रूपमें (बर्फ और हिम) है और हवामें तो हर जगह नमीके रूपमें व्याप्त ही है।

पृथ्वीकी सतह पर ७१ प्रतिशत पानी होनेकी वजहसे चौबीसों घंटे वाष्पीभवन होता रहता है और हवामें इससे बनी भापकी मिलावट होती रहती है। अतः हम सहाराके रेगिस्तानमें जाएँ या एवरेस्टकी चोटी पर जाएँ तो भी हवामें नमी तो होगी ही।—भले वह समुद्रके किनारे वाले प्रदेशोंकी अपेक्षा बहुत कम हो। हवा जैसे अधिक गरम होती जाएगी वैसे उसमें नमी भी अधिक समाती जाएगी। हवा जैसे ठंडी होती जाएगी उसमें नमी समानेकी शक्ति भी उतनी ही मात्रामें कम होती जाएगी। या, जब ऐसे वातावरणमें सीलन या नमी प्रमाणमें अधिक हो जाती है तब वह कुहरा, ओस, वर्षा या हिमवर्षाके रूपमें झड़ जाती है। निश्चित तापमान पर हवामें जितनी नमी समाई जा सके उसकी तुलनामें *हवामें जितने प्रतिशत नमी हो* उसे सापेक्ष नमी (relative humidity) कहते हैं। उदाहरणार्थ बम्बईमें जाड़ेके दिनोंमें सापेक्ष सीलन या नमी ६० प्रतिशत हो तो चौमासेमें ९० प्रतिशत और कभी कभी १०० प्रतिशत भी हो सकती है। इसका अर्थ क्या है? *मान लें कि चौमासेके एक दिन तापमान ३० अंश सेंटीग्रेड है* (गुजरातके समुद्र किनारे पर सामान्यतः इतना तापमान तो होता ही है)। अगर हवाके प्रति घनमीटरमें ३०.४ ग्राम पानीकी भाप होगी तो वह हवा नमीसे परितृप्त या संतृप्त (saturated) होगी। तात्पर्य यह कि उसमें उतने ही तापमानमें और अधिक पानी नमीके रूपमें नहीं समा सकेगा। इस प्रकारके तापमानको ओसबिंदु स्थिति या ओसांक (dew point) कहते हैं। अब मान लें कि तापमान घटकर ३० की जगह २० से० हो जाए तो उस हवामें *एक घनमीटरमें ३०.४ ग्रामके बदले सिर्फ १७.३ ग्राम पानी नमीके रूपमें समा सकेगा* अर्थात् वह उतनी नमीसे परितृप्त (saturated) हो जाएगा। इस प्रकार जब हवा ठंडी होती है तब उसमें नमीकी मात्रा घटती है पर सापेक्ष नमीकी मात्रा बढ़ती है, क्योंकि ठंडी हवा कम नमीसे ही परितृप्त हो जाती है। ० अंश सेंटीग्रेड उष्णता हो तो सौ प्रतिशत सापेक्ष नमीके लिए सिर्फ ४.८५ ग्राम पानी चाहिए। कमरेमें अगर ३० अंश सें० तापमान हो और हवा चौमासेकी या समुद्र किनारेकी नमीवाली हो तो साधारणसे कमरेमें एक लीटर अर्थात् २.२ पाउंड जितना पानी नमीके रूपमें होगा। फिर भी हमें तो इसका खयाल तक नहीं आ सकेगा।

पदार्थ मात्रके अणु सदैव गतिमान रहते हैं। घन पदार्थकी अपेक्षा प्रवाही पदार्थके अणु अधिक गतिमान होते हैं और वायुमय पदार्थमें तो उनकी गति इससे भी अधिक होती है। अगर हम किसी पदार्थको तपायें तो उसके अणु अधिक तीव्र गतिसे दौड़ने लगेंगे। पानीकी कटोरी अग्नि पर रखें कि तुरंत उसमें गति दीखने लगती है। जैसे उष्णता बढ़ती जाएगी वैसे उसकी गतिमें भी तेजी आती जाएगी और अंतमें तो अणु इतनी तीव्र गतिसे दौड़ने लगेंगे कि वे भापके रूपमें हवामें बह पड़ेंगे। जब पानी ठंडा होता है तब अणुओंकी गति कम होने लगती है और जब वह बर्फ हो जाता है तब तो उसके अणु एक दूसरेसे चिपककर स्थिरप्राय हो जाते हैं। इसीसे ध्रुव प्रदेशोंमें बर्फमें शायद ही नमीके कुछ कण वायुमें मिल पाते हैं, सिवा इसके कि पवन कुछ अणुओंको उधर खींच ले जाए। इससे ध्रुव प्रदेशोंमें बरसात नहीं होती। जो हिमवर्षा होती है वह भी दूसरे प्रदेशोंसे पवन द्वारा घसीट लायी नमीकी होती है। परन्तु उष्ण कटिबंधके समुद्रोंमें सूर्यके प्रखर तापके कारण पानीके अणु लगातार हवामें उड़ते रहते हैं और ऊपरकी ठंडी हवामें जाकर बादलके रूपमें जम जाते हैं। इससे उष्ण कटिबंधके प्रदेशोंमें वर्षा अधिक होती है।

बादल जिन सूक्ष्म जलकणोंसे बने होते हैं उनमेंसे एक जलकणका व्यास एक इंचका ढाई हजारवां भाग होता है अर्थात् ढाई हजार जलकणोंको एक सीधी पंक्तिमें रखें तो उनकी लम्बाई एक इंच होगी। बीस घनमील बादलोंमें ऐसे जलकणोंके रूपमें १५०००० टन पानी समाया होता है।

इन जलकणोंको एक मील ऊपरसे धरतीपर गिरनेमें १६ घंटे लगेंगे। पर हवा कभी भी बिलकुल स्थिर नहीं होती। अतः बादल हमेशा हवामें उड़ते रहते हैं। जब ऐसे अनेक सूक्ष्म जलकण मिलकर कमसे कम १/५०० इंच या उससे अधिक व्यासवाले जलबिन्दु बन जाएं तभी वे वर्षाके रूपमें नीचे गिर सकते हैं। बरसातके एक साधारण वजनमें बादलके दस लाखसे अधिक सूक्ष्म जलबिन्दु जितना पानी होता है। बरसातके बड़े कतरोंको भी कई बार पवन अपने साथ आगे या ऊपर खींच ले जाता है, अंतमें तो गुरुत्वाकर्षण ही बरसातकी बूंदोंको आकाशसे नीचे लाता है।

बादल सूक्ष्म जलकणोंके बजाय सूक्ष्म हिमकणोंके रूपमें भी होते हैं। आकाशमें बहुत ऊंचाई पर हम जो श्वेत बादल देखा करते हैं वे हिमकणोंके ही बने होते हैं।

पहले हम बादलोंको दो वर्गोंमें विभाजित कर दें (१) जो नमीवाली गरम हवा सीधी ऊपर जाती है और आकाशमें ऊंचे पर पहुंचकर ठंडी हो जाती है। ठंडी हवा अधिक नमीको समा नहीं सकती। अतः नमी उसमेंसे अलग होकर बादलोंके रूपमें इकट्ठी हो जाती है। इस प्रकार बादल रुईके ढेरसे होते हैं और क्यूम्युलस (cumulus) बादलोंके नामसे पहचाने जाते हैं। ऐसे बादलोंको सभी देख सकते हैं। उनके जिस भाग पर धूप नहीं पड़ती वह काला लगता है और जिस पर धूप पड़ती है वह रुईके ढेर-सा लगता है। (२) जब सीधे ऊपर जानेके बजाय आगेको ही बढ़ी हुई नमीयुक्त गरम हवाकी परतें जमकर बादलोंका पट बन जाता है तब ऐसा लगता है मानो आकाशमें बादलकी चादर या चंदोवा ही फैला हो। विज्ञानशास्त्री ऐसे बादलोंके प्रकारको स्तरमेघ या स्ट्रेटस (strata) बादल कहते हैं। सूर्योदय अथवा सूर्यास्तके समय कई बार आकाशमें ऐसे स्तरमेघ (बादलोंके स्तर) देखे जा सकते हैं।

जब हम बादलोंकी ऊँचाईके अनुसार उन्हें तीन भागोंमें बाँट दें। ऊँचे बादल, दरमियानी बादल और नीचे बादल। ऊँचे बादलोंके स्तरका तल पृथ्वीकी सतहसे बीस हज़ार फुट अथवा उससे भी ऊँचा हो सकता है। इसका अर्थ यह कि वे हिमकणोंके बने होते हैं। ऊँचे बादल भी तीन प्रकारके हैं (१) पिच्छमेघ (cirrus clouds) अर्थात् पक्षियोंके परनुमा या रुईके फाहे जैसे, आकाशमें तितर-बितर बिखरे गए सफेद बादल। ये बादल २०,००० फुट या उससे भी अधिक ऊँचाईपर होते हैं तथा सूक्ष्म हिमकणोंके बने होते हैं। यहाँ पर विषुवत्‌ वृत्त पर भी इतनी ऊँचाई पर तापमान हिमांकसे भी बहुत नीचा होता है। (२) पिच्छराशि मेघ (cirrocumulus clouds) अर्थात् परनुमा या रुईके फाहे-जैसे बादल जो इधर-उधर बिखरे होनेके बजाय करीब-करीब इकट्ठे हो गए हों। वे कुछ लहरोंके आकारके होते हैं और लगभग सारे आकाशपर छा जाते हैं। सौराष्ट्रमें ऐसे बादलोंको चीतरी कहते हैं। ये बादल भी बीससे पचीस हज़ार फुट ऊँचे होते हैं और हिमकणों होनेसे बने होते हैं। सारे आकाशमें छा जाने पर भी उनकी परछाई नहीं पड़ती क्योंकि वे बहुत पतले होते हैं। हाँ धूप और चाँदनीको ये जरा धुंधला अवश्य कर देते हैं। (३) पिच्छपट मेघ (cirrostratus clouds)—ये बादल सूक्ष्म हिमकणोंके बने होते हैं। इनकी पतली चादर आकाशमें चँदोवेकी तरह फैल जाती है। यह चादर इतनी महीन होती है कि उसमेंसे सूर्य और चन्द्रको भी कुछ धुंधले स्वरूपमें ही देखा जा सकता है। जब सूर्य और चन्द्रकी किरणें उसमेंसे गुजरती हैं तो सूर्य और चन्द्रके आसपास परिवेश (प्रकाशवृत्त halos) सा नजर आता है।

जब हम दरमियानी बादलोंका परिचय प्राप्त करें। ये बादल राशिमेघ हों या स्तरमेघ हों पर उनकी ऊँचाई पृथ्वीसे लगभग दस हज़ार फुट होती है। अगर वे स्तरमेघ (altostratus) हों तो भूरे गाढ़े अथवा पतले चँदोवे जैसे होते हैं जिनसे सूर्य चन्द्रके आसपास प्रकाशवृत्त नहीं बनता। पर अगर चँदोवा पतला हुआ तो उसमेंसे सूर्य और चन्द्र हल्के-हल्के से दीखते हैं। अगर राशिमेघ हों तो वे भूरे, मैले या सफेद रुईके फाहे जैसे लगते हैं। ऐसे बादल हिमकणोंके नहीं बने होते फिर भी ऐसे राशिमेघमें सूर्यके आसपास रंगीन आभा दिखाई देती है।

अन्तमें अब हम निचले बादलोंको देखें। इनकी निचली सतह पृथ्वीसे कुछ फुटकी ऊँचाईसे लेकर ६,५०० फुट तक होती है। इनके तीन प्रकार हैं (१) निचली सतहके स्तरमेघ धरतीकी सतहके नजदीक होते हैं और कुहरेसे लगते हैं। सौराष्ट्रमें उन्हें छाना या छादला कहते हैं। अर्थात् भरे बादलोंसे आकाश पोता हुआ सा लगता है। इनमें बादलोंकी गति नीचेसे ऊपरकी तरफ नहीं होती। इससे ऐसे बादलोंमेंसे सिर्फ रिमझिम वर्षा हो होती है। छींटोंकी बौछार होती है पर खुलकर वर्षा नहीं होती।

खुलकर बरसनेवाले बादलोंको वर्षामेघ (nimbostratus) कहा जाता है। इस घटाटोप, श्याम मेघाडंबरको देखकर ऐसा लगता है मानो मीठे पानीका समुद्र ही आसमानमें चढ़ गया हो!

स्तर राशिमेघ (stratocumulus)में बादल इधर-उधर बिखरे होते हैं। वे बरसात नहीं देते। कोई बड़ा बादल कभी छिड़काव कर जाता है। ये भी हैं तो बरसातके ही बादल, पर जब वे इकट्ठे हो जाते हैं तभी वर्षामेघका रूप धारण करते हैं और पानी बरसाते हैं।

पुळ विषुवतरानम जब आंधी और तूफान होता है तब बडा दर्शनीय दृश्य होता है। गरजते व बिजली चमकाते बादल (cumulonimbus)का तला धरतीके बहुत ही करीब होता है और धुएँके गुब्बारेकी तरह ऊपर उठा उसका ऊपरी छोर ऊर्ध्वमडलम ७५००० फुट तक पहुचा हो सकता है, क्योंकि नीचेसे ऊपरकी ओर बहनेवाला तूफानी पवन बादलको इतना ऊँचा ले जाता है। इसम उनका उपरी भाग जमकर सूक्ष्म हिमकणोका बन जाता है। ऊर्ध्वमडलम बहती हुई तेज हवा उसके सिरको लुहारकी निहाई सा चपटा बना देती है।

पानीके अनेक विभिन्न रूपोमसे एक रूप बादल है और बादलोके भी इतने विभिन्न रूप होते हैं।

अब हम पानीके अन्य रूप भी देखें।

वर्षामेघ जैसे बादल ही बरसते है अन्य जातके बादल लगभग निकम्मे होते हैं। यद्यपि बरसातके लिए वर्षामेघोका होना ही पर्याप्त नहीं है। उनके साथ तापमान रजकण हिमकण आदिकी अनुकूलता भी जरूरी होती है। हिमकण बननेके लिए यह आवश्यक है कि तापमान हिमाकसे भी नीचे हो। अलावा इन सबके, जब तक सूक्ष्म बिंदु मिलकर भारी कतरे नहीं बनाते तब तक वर्षा नहीं होती और पानीसे भरे बादल बिना बरसे ही आगे निकल जाते हैं।

हिमवर्षाम नन्हे फूल जैसी अथवा फुलकारी पखुडिया-सी हिमकणिकाएँ धीमे धीमे पवनम उडती-तैरती सी नीचे आ गिरती हैं। हमारे देशम हिमालय पर भी छ हजार फुटसे कम ऊँचाई पर हिमवर्षा नहीं होती। आकाशम भी गुजरात, बम्बई और केरलके ऊपर हिमकणोके बादल होते हैं और उनमम हिमकण बरसने भी हैं। आकाशम ही वर्षाबिन्दु हिमकणोसे लिपट कर उन्हें भारी बना देते हैं और नीचे गिराते हैं तथा नीचके गरम वातावरणम आकर वे पिघल जाते हैं। सन १९०६ ७म टामारकम ८,००० फुटकी ऊचाई पर ९० फुट हिमवर्षा होनेका रेकाड है।

किसी समय ऊपर जोरका पवन बहता है तो किसी समय उसी पवनकी गति नीचेसे ऊपरकी तरफ होती है। तब वर्षाके कतरे नीचे गिरनेके बजाय उस पवनके साथ उठकर और भी ऊँचे चढ जाते ह। वहाँ अत्यत ठडी हवाम वे जमकर ओले बन जाते है। उन पर अधिकाधिक हिमकण चिपकते जाते ह और उनकी परत चढती जाती है जिस प्रकार प्याजके परतके ऊपर परत होती है उसी प्रकार। इस जोरदार पवनम बारबार ऊपर नीचे उछाले जानेके बाद, भारी हो जानेसे, गुरुत्वाकर्षणके कारण जब ओले नीचे बरसने लगते ह तब हम इसे ओलोकी वर्षा कहते हैं। गरम प्रदेशोम हिमवर्षा नहीं होती पर वहाँ भी ओलोकी वर्षा तो हो सकती है। चूकि ओले आकारम बडे तथा भारी होते हैं इसम गरम वातावरणम आकर पिघलने से उससे पहले ही वे नीचे आ गिरते है, फिर भी गुजरातकी अपेक्षा हिमालयम तथा उसकी तलहटीके प्रदेशोम ओलोकी वर्षा अधिक सामान्य बात है। सामान्यतया ओले सुपारीसे लेकर नीबू जितने बडे होते हैं। सबसे बडे ओले पाटर (नेब्रास्का, अमरिका)म ता० ६ जुलाई, १९२८के दिन पडे थे। उनम एक ओलेका वजन डेढ पाउड, व्यास ५ ४ इच और घिराव १७ इच जितना था।

बडे ओलोकी वर्षाम मनुष्य और मवेशी मर जाते है। पेडोकी डालियाँ टूट जाती हैं। टेलीफोनके तार भी टूट जाते ह और खेतोम खडी फसल नष्ट हो जाती है। दुनियाम ऐसा सबसे

बडी दुर्घटना भारतमें ही उत्तर प्रदेशके मुरादाबादमें हुई थी। ता० ३० अप्रैल, १८८८को हुई ओलेकी वर्षा व तूफानमें २४६ आदमी मारे गए थे जो पशु पक्षी मरे, सो अलग।

यूरोप, अमेरिका और उत्तर एशियाके ठंडे प्रदेशोंमें तो मैदानोंमें भी हिमवर्षा होती है। परन्तु हमारे देशमें तो सिर्फ छः हजार फुट या उससे अधिक ऊँचाईवाले स्थलों पर ही जाडे व गरमीमें--यह भी दस-बारह हजार फुटसे अधिक ऊँचे स्थलोंमें ही--हिमवर्षा होती है। इससे ऊंचे शिखरों पर बारहों मास बर्फ रहती है। इन हिमप्रदेशोंमें इकट्ठा होनेवाला हिम अपने तहोंके भारसे दबकर सख्त बर्फ बन जाता है। यह हिमराशि धीरे धीरे नीचे सरकती है और जैसे जैसे उष्ण वातावरणमें आती है वैसे-वैसे पिघलकर नदीके रूपमें बहने लगती है। हिमके रूपमें सरकती-चलती यह राशि हिम सरिता (glacier) कहलाती है। वह २४ घंटेमें शायद ही कुछ फुट दूर सरकती है। ऐसा अंदाजा लगाया जाता है कि धरतीकी दस प्रतिशत सतह अर्थात ६० लाख वर्गमीलसे कुछ अधिक भूमि बारहों महीने हिमसरिताओंसे ढकी रहती है। हिमालयकी सबसे लम्बी हिमसरिता काराकोरम पर्वतमालामें है। वह ४७ मील लम्बी है और इसका नाम है सिआचेन। परन्तु दुनियामें सबसे लम्बी हिमसरिता दक्षिण ध्रुवप्रदेशपर २९० मील लम्बी है।

पहाडके शिखरों पर हिमराशि बढती जाती है तब एक समय ऐसा भी आ जाता है जब कि ऊपर अधिक हिम समा नहीं सकता। अतः जब हिमराशि अत्यधिक हो जाती है तब वह नीचे घाटियोंमें अचानक टूट पडती है। इसे हिम प्रपात (avalanche) कहते हैं। सबसे बडा हिमप्रपात हिमालयमें होता है। पहाडी लोग इसे सुनकर ऐसा मानते हैं कि देवता हिमालयमें क्रीडा कर रहे हैं।
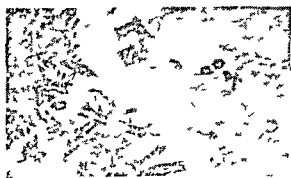
हिमप्रपातसे व्यापक विनाश

हिमालयके ऐसे हिम प्रपातवाले शिखरोंकी तलहटीमें गाँव नहीं बसे हैं पर यूरोपकी आल्प्स पर्वतमालामें हैं। जब जब हिमप्रपातसे हिम, मिट्टी और पत्थरोंका धुआंधार प्रपात नीचे गांवों पर आ गिरता है तब वहां भारी करुण दुर्घटनाएँ होती हैं। १९६१में दक्षिण अमरिकामें पेरूमें एण्डीज़ पर्वतमालामें हुआरास गांव पर एक हिमप्रपात आ गिरा तब उसमें लगभग पांच हजार मनुष्य मारे गए थे। ऐसा माना जाता है कि सन् १९५२के निम्सवरमें एवरेस्ट पर चढने गए रशियन दलके ४० बहादुर हिमप्रपातमें ही दब गए थे। कान्स्टेंटीनोपलमें तो एक सम्पूर्ण ट्रेन ही इसमें दब गई थी।

भारी हिमवर्षासे करीब रुकी हो गई यात्री एक्सप्रेस रेलगाड़ी।
पटरी पर जमे हिमके सामने इंजनकी एक भी न चली।

हिमप्रपातके महाभयानक और विनाशक स्वरूपका हम ठीक पता नहीं लगा सकते। हिमाच्छादित शिखरोंकी तराईमें बसनेवालोंको ही उसका अनुभव होता है पर अनुभव करनेवालोंमें सभी जीवित नहीं रहते। सन् १९१४में यूरोपमें आल्प्स पर्वतके माउंट ब्लैंक (Mount Blank) शिखर परसे जो हिमप्रपात हुआ था उसमें तीन करोड़ तीस लाख घनफुट बर्फ थी।

यह जानकर हमें आश्चर्य होता है कि किसी भी क्षण गिरनेवाली हिमराशिको गिरनेके लिए छोटे-से धक्के भी काफी होते हैं। इसके लिए किसी भी आवाजकी तरंगोंका उनसे टकराना काफी होता है। फिर वह रेलकी आवाज हो, विमानकी घरघराहट हो या मक्खियोंकी भिनभिनाहट हो, बन्दूकका धड़ाका हो, मनुष्यकी आवाज हो, सीटीकी आवाज हो, फुटबालका धमाका हो या पवनकी लहर हो। सन् १९१६में आस्ट्रियन सेनाने हिमगिरिके आल्प्सकी ढाल पर अपनी छावनी डाली थी। वे प्रथम विश्वयुद्धके दिन थे। ता० १५ दिसम्बर १९१६को दिन सेनाने तोपका एक धड़ाका किया। इसके साथ ही हजारों भाषाकी आवाजोंका भी गर्जना कर लेनेवाली बड़ी गर्जनाके साथ हिमप्रपात हुआ। पहाड़ोंके शिखरोंसे लाखों टन हिम पत्थर मिट्टी वगैरा लुढ़ककर वेगसे नीचेकी ओर बढ़े और उसमें हजारों सैनिक दबकर मर गए।

दुनियामें सबसे अधिक हिमवर्षा कहाँ हुई होगी या होती होगी यह कहना मुश्किल है क्योंकि ध्रुव प्रदेशों और हिमालयके शिखरों पर कोई उसे नापने नहीं जाता। परन्तु सिल्वर लेक (कोलोरेडो अमेरिका)में ता० १४-१५ अप्रैल, १९२१में २४ घंटोंमें ७६ इंच हिम वर्षा हुई थी और थामसन (अमेरिका)में ता० २६-३१ दिसम्बर १९५५के दिनोंमें लगातार होते रहे हिमझंझावातमें १७५.४ इंच हिमवर्षा नापी गई थी।

अधिकसे अधिक जलवर्षाका रिकार्ड भी जानने योग्य है। हमारे देशके आसाम प्रान्तमें चेरापूंजी और प्रशान्त महासागरमें अमरीकी हवाई टापू अधिकतम वर्षाके लिए प्रख्यात हैं। चेरापूंजीमें जुलाई, १८६१के एक महीनेमें ही ३६६.१४ इंच वर्षा हुई थी। अधिकतम वर्षाका

वार्षिक रेकार्ड भी चेरापूंजीका ही है। ता० १ अगस्त, १८६०से ३१ जुलाई, १८६१के वर्ष भरमें वहां १०४१.७८ इंच वर्षा हुई थी। आकाशसे जैसे लगातार जलप्रपात ही गिरते थे।

हिंद महासागरमें ज्वालामुखीसे बने रीयूनियन टापू पर १६ मार्च, १९५२के दिन २४ घंटोंमें ७३.६२ इंच वर्षा हुई थी। इसे सचमुच हम मूसलाधार वर्षा कह सकते हैं। यह २४ घंटोंमें प्रति एकड़ ८,३२० टन पानी हुआ।

हवाई टापू पर वाइयालील (Waialeale) पर्वतपर दुनियामें सबसे अधिक नम स्थान माना है। ५०८० फुट ऊँचे इस पहाड़ पर सन १९१२से १९४९ तक औसतन वार्षिक ४७१.६८ इंच पानी पड़ा था।

दक्षिण अमरिकाका चिली देश वर्षा और अकाल दोनोंमें अपना सानी नहीं रखता। उसके अताकामा रेगिस्तानमें पिछले करीब ३७५ वर्षोंसे बरसात नहीं हुई जबकि उसीके बाहिया फेलिक्स नामक स्थल पर वर्षके ३६५ दिनोंमेंसे ३२५ दिन वर्षा होती है और सन १९१६में तो ३४८ दिन वर्षा हुई थी।

प्रतिवर्ष समुद्रमेंसे कितना सारा पानी वाष्पीभवन द्वारा उड़ जाता है (कुछ धरती परसे भी) और हर वर्ष दुनियामें कितना सारा पानी वर्षाके रूपमें गिरता है इसका अनुमान भी आश्चर्यजनक होगा। हर वर्ष २६,००० घनमील पानी भरा जाए इतनी वर्षा होती है और पहाड़ों तथा हिमप्रदेशोंमें जो हिमवर्षा होती है सो अलग।

जो वर्षा धरती पर होती है उसमेंसे पांचवें हिस्सेका पानी फिरसे नदियोंके द्वारा बहकर समुद्रमें चला जाता है। कुछ पानी धरतीमें उतरकर भूगर्भ मार्गसे समुद्रमें जाता है और कुछ पानी धरती परसे सूखकर पुनः हवामें उड़ जाता है।

२० : वर्षा : प्राकृतिक और मानव निर्मित

वातावरणका सबसे अधिक प्रभावशाली और मनसे अधिक सुंदर दृश्य है गर्जनाके साथ बिजलीका कौंधना। बिजली सचमुच रौद्र नृत्य ही करती है न। और मेघ अपनी गडगडाहटसे उसकी संगत करता है। हजारों वर्षसे मानव भय और प्रशंसाके मुग्ध भावसे वर्षाके इस प्रभावशाली दृश्यको देखता आया है और यह क्या होती है, इसके बारेमें कुतूहल रखता आया है। पिछली सदीमें अमेरिकाके बेंजामिन फ्रेंकलिनने इस रहस्यको सुलझानेका श्रीगणेश किया।

दुनियामें ऐसे प्रदेश (उदाहरणार्थ रेगिस्तान) हैं जहाँ मनुष्य जिंदगीमें एक बार भी बिजलीका कड़कना या चमकना नहीं देख सकता। ध्रुव प्रदेशोंमें भी बिजलीके कड़कने चमकनेके दृश्य सुलभ नहीं हैं। पर समशीतोष्ण और खास करके उष्ण कटिबंधमें बिजलीकी कड़क और चमक सबसे अधिक प्रमाणमें होती है।

बिजलीकी कड़क और चमकवाले सबसे अधिक दिनका रिकार्ड बगोर नामकी पवन नगरीका है। उधर सन १९१६ से १९१९ तकके बिजलीकी कड़क चमकके तूफानोंका वार्षिक औसत ३२२ दिनका था। या तो सारी पृथ्वी पर किसी भी क्षण—आप यह पढ़ रहे हैं तब भी—औसतन दो हजार तूफान आ रहे होंगे। कुछ मेघगर्जनाएँ तो १८ मील दूर तक सुनी जा सकती है।

ऐसी अद्भुत बिजली क्या चमकती है, यह भी देख लें। नमीवाली गरम हवा जब सीधी ऊपर चढ़ने लगती है तब कभी तो वह २५००० मीटर अथवा उससे भी ऊँचे चढ़ जाती है और वहां मेघाडंबर रचे जाते हैं। तपी हुई धरतीके संपर्कसे हवा गरम होकर ऊपर चढ़ जाए अथवा धरती परकी हवा गरम हो और समुद्रकी हवा ठंडी हो तो इससे गरम हवा ऊपर चढ़ जाती है और वहाँ उसमें स्थित नमी जमकर बादल बन जाती है। वर्षाके साथ ऊपर की ठंडी हवा वेगसे नीचे उतर आती है और बादल बिजली के तूफानोंका सूचित करते चमक और कड़कके नगाड़े बजाती आगे बढ़ती है। यह ठंडी हवा आनेवाले तूफानकी अग्रदूत होती है।

बिजलीके तूफानी बादलोंमें कुछ अणु ऋण (negative) विद्युत भारवाले होते और कुछ धन (positive) विद्युत भारवाले होते हैं। अथवा कभी बादल और पृथ्वीके बीच अल ही प्रकारके विद्युत भार होते हैं। जब बादलोंमें आपसकी उथल-पुथल होती है तब वर्षा बिन् और हिमकणोंके घर्षणसे यह विद्युतभार उत्पन्न होता है। विरुद्ध प्रकारके विद्युतभार पर आकर्षित होते हैं। जब विद्युतभार अत्यधिक बढ़ जाता है तब बिजलीकी चमक स्पष्ट हो जाता है। उस समय बिजलीका नाग सा उठता है। आँखोंको चौंधिया देनेवाली बिज

यह प्रवाह वास्तवमें तो इलेक्ट्रोन परमाणुओंका ही प्रवाह होता है। ऊपर या नीचे जहाँ धन विद्युतभारवाले बादल घूमते हों वहाँ घुसकर इलेक्ट्रोनका यह जाथ अर्थात बिजलीका प्रवाह मिलकर उसमें समा जाता है। बिजलीके तूफानोंमें बलून भेजकर यह जानकारी पायी गयी है कि अधिकतर बादल ऋण विद्युतभारवाले होते हैं और ऊँचे आकाशमें स्थित हिमकणोंमें धन विद्युतभार होता है।

नये नये विद्युतभारकी रचना होती ही रहती है। बादल बिजली उत्पन्न करनेवाले डाइनेमो बन जाते हैं। ज्यों ज्यों ऋण विद्युतभार बढ़ता जाता है, बादल उस अधिक भारसे मुक्त होनेका प्रयत्न करते रहते हैं जिससे बिजली हवामें झड़ती रहती है। इसीसे गर्जनके समय तूफानमें बारबार बिजलीके प्रवाहकी लकीरें दिखाई पड़ती हैं। जब हवामें बिजली चलती है तब हवाके अणु इन इलेक्ट्रोनोंको ग्रहण कर लेते हैं और यों वे खुद भी विद्युतभारग्राही हो जाते हैं। आखिर हवामें भी इतना विद्युतभार बढ़ जाता है कि हवा स्वयं बादलोंकी बिजलीको पृथ्वी पर पहुँचानेका माध्यम बन जाती है। तभी बिजली पृथ्वी पर—समुद्र पर, धरती पर, मकानों पर मनुष्य पर मवेशियों पर या पेड़ों पर गिरती है।

इस प्रकार बिजली कभी एक बादलमेंसे दूसरेमें, कभी हवामें तो कभी पृथ्वी पर कूद पड़ती है। *संक्षेपमें, जहाँ इलेक्ट्रोनोंका अभावमें प्रोटोन भी प्रोटोन हों वहाँ इलेक्ट्रोन अणु वगैरा* पहुँच जाते हैं। जिस प्रकार पानीका प्रवाह उसके अणुओंका प्रवाह है उसी प्रकार बिजलीकी रेखा इलेक्ट्रोनोंका प्रवाह है। हमेशा ऋण भारधारी इलेक्ट्रोन धनभारधारी प्रोटोनोंकी तरफ बढ़ते रहते हैं।

जब वर्षाके बिन्दु एक सेकेण्डमें आठ मीटरसे भी अधिक गतिसे गिरते हैं तब वे खंडित हो जाते हैं। टूटे हुए वर्षाबिन्दु धीमी गतिसे गिरते हैं। ऊपर जाते हुए पवनके साथ ये नन्हे वर्षाबिन्दु नीचेके बजाय फिर ऊपरको चढ़ने लगते हैं। पर ऊपर चढ़ते पवनोंका प्रवाह एक सरीखा नहीं होता। अतः जहाँ ऊर्ध्व गति रुकी नहीं कि ये पुनः नीचे गिरने लगते हैं। इस प्रकार ये ऊपर नीचेकी तरफ मथे से जाते हैं। जब वर्षाबिन्दु टूटकर छोटे बिन्दुओंमें बँट जाते हैं तब धन तथा ऋण विद्युतभार अलग हो जाते हैं। हवा ऋणभार ले लेती है वर्षाबिन्दु धनभार ले जाते हैं।

आकाशमें इन विद्युतभारोंकी मिलावट कैसे होती है यह भी जानने योग्य है। ऋण *भारग्राही हवा जब तेजीसे ऊपर चढ़ती है तब वह अपना ऋणभार बादलोंको दे देती है। जहाँ* पवन एक सेकण्डमें आठ मीटरकी गतिसे बहता है वहाँ बादलोंके अग्रिम भागमें धनभार इकट्ठा हो जाता है। यह भार जब बढ़ जाता है तब कौंधके साथ उसमेंसे बिजली झड़ जाती है। अगर कौंधके दस सेकेण्डमें ही गर्जना सुनाई दे तो समझना चाहिए कि बिजली आसमानमें ठीक सिरके ऊपर ही है।

दुनियामें सबसे अधिक बिजली अगर किसी मकान पर गिरती हो तो वह है न्यूयार्ककी १ ४७२ फुट ऊँची इमारत एम्पायर स्टेट बिल्डिंग! और इनमेंसे भी ८० प्रतिशत बिजलीकी कौंध तो खुद इस इमारतमें होती है। इसका कारण यह है कि जिस तरह आकाशमें बिजलीका प्रवाह पृथ्वीकी तरफ बहता है, उसी प्रकार ऋणभार धरतीमेंसे आकाशकी ओर भी बहता है।

धरती पर गिरनेवाली बिजली कठोर चट्टानको भी चीर देती है। रेतको गलाकर काचमें परिवर्तित कर देती है। इस प्रकार बने काच जैसे गट्ठेको अंग्रेजीमें फल्युराइट (fulgurite) कहते हैं। गिरजाघरों पर लटकते विशाल घंटोंमें भी बिजलीने छेद कर दिए हैं। धरतीमें वह गाथा-मुकुल बिजलीसे बना देती है। मकान और पेडको चीर देती है। शिखर पर जहा बिजली गिरती है वहा तारेकी आकृतिकी दरारें दीखती है। सहाराके रेगिस्तानमें दो इचके व्यासके तथा ४० फुटकी लम्बाईवाले फल्युराइटके गट्ठे मिले है। ऐसे गट्ठोंको बनानेके लिए कमसे कम १६५० अश सें० उष्णता चाहिए।

आपने अपने विद्युत साधनोंमेंसे बिजलीकी चिनगारी होती अवश्य देखी होगी। आकाशकी बिजली भी एक महाकाय चिनगारी ही है। उसकी चौडाई कुछ ही सेंटीमीटरकी होती है पर लम्बाई कई किलोमीटरकी होती है। १६० किलोमीटर लम्बी चमकको भी राडार पर नापा गया है। यह चमक इतनी क्षणिक होती है कि एक सेकेण्डके दस हजारवे भागमें ही विलीन हो जाती है। फिर भी हम वह कुछ सेकण्ड तक दीखती है, क्योंकि हमारे दिमाग परसे उसके संस्कार हटनेको इतने क्षण लगते है। हमारी आखकी रमनेकी गति अति मद है। इसीसे जो चित्र सिनेमा पट पर एकके बाद दूसरा, एसी परम्परामें आते रहते हैं, उन्हें हम लगातार अखड चित्रके रूपमें देखते है।

मेघगर्जना कैसे होती है, यह भी देखें। बिजलीकी चमकसे भयकर गरमी होती है। इसमें उसके समागम आनेवाले हवाके अणु तत्काल गरम होकर सभी तरफ तेजीसे भागते है। इससे वे आस पासकी ठंडी हवाके अणुओंसे जोरसे टकराते है। परिणामस्वरूप धडाका—स्फोट होता है। इसीको हम मेघगर्जना कहते है। बिजलीका प्रवाह शाखाओंके आकारमें, पेडकी जडोंके आकारमें या पट्टीके आकारमें सभी दिशाओंमें फैल जाता है। इसीसे सभी जगह गर्जनेकी नाद सुनाई देता है।

या पहले बिजली होती है और फिर मेघगर्जना होती है। पर इनके बीचके समयका अन्तर नहीके बराबर होता है। फिर भी बिजलीके कुछ क्षण बादही हम गर्जन सुनते है। इसका कारण यह है कि प्रकाशकी गति एक सेकेण्डमें २,९९,३४० किलोमीटर (१८६००० मील) की होती है। जब कि आवाजकी गति एक सेकेण्डमें लगभग ३५० मीटर (लगभग ११०० फुट) की होती है। इस परसे कहा जा सकता है कि बिजलीकी कडक कितनी दूरीपर हो रही है। बिजली चमके कि तुरत एक, दो, तीन करके धीरे धीरे पाच तक गिन, तब तकमें यदि मेघगर्जना सुनाई दे तो यह कडक १६ किलोमीटरकी दूरी पर हुयी है। दस तक गिन सकें तो ३२ किलोमीटरकी दूरी पर हुई है।

बिजली वातावरणमेंसे कुछ प्राणवायुको ओझोन वायुमें बदल डालती है। ओझोन वायु जंतुनाशक है। वह हवाको स्वच्छ करती है। इसीसे बिजलीकी कडकके बाद हवा स्वच्छ तथा ताजा लगती है। बिजली हवामें से कुछ नाईट्रोजनको खादमें परिवर्तन कर देती है। यह खाद बरसातकी बूदोंके साथ मिलकर धरतीमें जाती है और वनस्पतियोंको पोषण देती है। यों बिजली विनाशक तो है ही पर साथमें सुन्दर और उपकारक भी है। प्रकृतिमें बिजलीकी कडक भडकवाले तूफान जैसे प्रभावशाली व रोमाचक दृश्य कम होते हैं—बशर्ते कि हम सुरक्षित स्थानपर हो।

हमने बादलोंके प्रकारोंसे परिचय किया और देखा कि सिर्फ एक अथवा दो प्रकारके बादल ही वर्षा कर सकते हैं। इसीसे कृत्रिम पद्धतिसे बरसात लानेके लिए भी बादल होने चाहिए, पर वे भी योग्य प्रकारके ही। जहाँ बादल नहीं होते वहाँ बादल बनानेकी कृत्रिम रीति अभी तक विज्ञान खोज नहीं पाया।

अगर पानी बरसानेके योग्य बादल हो, तो उन्हें बरसानेकी रीति विज्ञानशास्त्रियोंने खोज निकाली है। अक्सर अमेरिकामें तथा कभी कभी आस्ट्रेलियामें भी इस रीतिसे बरसात लायी गयी है।

मानव खेती करने लगा तभीसे उसे बरसातकी आवश्यकता रही है। प्राचीन कालमें उसने माना था कि पानी और बादलों पर अधिकार रखने वाला कोई देवता है। हमारे पुराणोंमें पानीके देवताको वरुण देव कहा गया है। उस देवताको प्रसन्न करके बरसात पानेके लिए आजभी हमारे यहाँ यज्ञादि होते हैं। कुछ प्रदेशोंमें बरसात पानेके लिए तरह तरहके नृत्योंसे देवताकी आराधना की जाती है। उत्तर अमेरिकाके आदि निवासी जिन्दा साँप लेकर बरसातके देवको रिझानेको नृत्य करते हैं।

बरसात कृत्रिम रीतिसे अर्थात् रासायनिक पद्धतिसे किस तरह बरसायी जाती है यह भी अब देख लें। जैसे-जैसे विमान ऊँचे उड़ने लगे उन्हें मालूम हुआ कि कभी-कभी उनके कल पुर्जों पर—विशेष करके उनके पंखों पर—हिम जम जाता है। इससे विमान भारी हो जाता है। यह अतिरिक्त वजन कभी-कभी खतरनाक भी सिद्ध हुआ। इससे विमान पर हिम न जमे, इसलिए उसके जमनेके कारणोंकी खोज की गई। (अब बहुत ऊँचाई पर उड़नेवाले विमानों पर हिम न जमे इसके लिए उनमें विशेष व्यवस्था की जाती है) डा० विंसेंट शेफर नामक विज्ञानशास्त्रीने खोज निकाला कि अगर बादलोंका तापमान शून्य अंश सेंटीग्रेडसे नीचा हो और उनपर अगर सूखे बर्फकी बुकनी (पाउडर) अर्थात् जमायी हुयी कार्बन डाइऑक्साइड छिड़की जाए तो उसकी प्रत्येक कणिकाके आसपास बादलोंमेंसे अगणित हिमकणिकाएँ चिपक जाती हैं और इस जमावटके कारण वजनदार होकर वे नीचे गिरने लगती हैं। नीचेकी हवा गरम होनेसे यह हिम समुदाय गिरते गिरते पिघलकर बरसातके रूपमें बरसने लगता है।

दूसरे एक विज्ञानशास्त्रीने बादलों पर पानी और सिल्वर आयोडाइड छिड़ककर बरसात गिरायी है। प्रयोगशालामें बादल बनाकर उनपर शून्यसे नीचे १०८ अंश फा० तापमानवाली 'सूखी बर्फ' छिड़ककर बरसात बरसायी गयी है।

अमेरिकामें तो अब रासायनिक प्रक्रिया द्वारा बरसात ला देनेवाली कम्पनियाँ भी कायम की गई हैं। पर यह पुरुषार्थ हमेशा इच्छानुसार बरसात देता ही है ऐसा नहीं। बादल हों पर बरसनेकी योग्य स्थितिमें न हों, बरसात आवश्यकतासे कम बरसे या अधिक भी बरसे, सूखी बर्फकी बोआईके बाद पवनसे बादल कहीं और घसीटे जाएँ और उसका फायदा किसी अन्य प्रदेशको हो अथवा जिसके खेतमें पानी न बरसना चाहिए वहाँ जाकर बादल बरसे तो उसका मालिक किसान नुकसानीका दावा भी करे। यों विज्ञानशास्त्री अभी बादलोंको नाथनेमें और उन्हें मानव सेवामें लगानेमें सफल हुए हैं, ऐसा दावेके साथ नहीं कहा जा सकता।

भारतमें इस प्रकारकी कृत्रिम वर्षाका प्रायोगिक कार्य १९५५से शुरू हुआ है। नयी

दिल्लीमें नेशनल फिजिकल लैबोरेटरीके अधीन बादल 'संशोधन केन्द्र' खोला गया है और दिल्ली आगरा तथा जयपुरमें इसके प्रयोग किये गए हैं। १९६४-६५में तो केरलमें भी प्रायोगिक कार्य किया गया था और उससे मालूम हुआ कि २० प्रतिशत अधिक बरसात कृत्रिम रूपमें बरसायी जा सकती है। हवाकी नमी पर नमकके कणोंका छिड़कनेसे उन कणोंके इर्द गिर्द पानीके बिन्दु जम जाते हैं जिससे बादल बन जाते हैं। बादल बननेकी यह क्रिया राडार पर दो सौ मीलके अन्तरसे भी देखी जा सकती है। हमारे बरसाती बादलोंका तापमान साधारणतया ऊँचा रहता है। अगर बादल बनानेके लिए बीजकी हैसियतसे नमककी रज मिल जाए तो बादल बनने लगते हैं। इस बीजके आसपास जमा हुए नमीके कण बरस बढ़कर अन्तमें बरसने लगते हैं।

चौमासेके प्रारम्भमें उठती आंधीमें अथवा ऊँचेकी तरफ जाने पवनमें नमकके बारीक कण ऊपर चले जाते हैं और बादल बनने लगते हैं। विमान द्वारा नमक छिड़कनेके प्रयोग असफल रहे हैं।

हमने वातावरणमें स्थित पानीको बरसात, ओले और हिमकणके रूपमें देखा। अब कुहासे और ओसके रूपमें भी देख लें। कुछ लोग कहते सुने जाते हैं कि आज तो बहुत ओस पड़ी। ओस कभी पड़ती ही नहीं, वह तो बनती है—जमती है। हम इसे छोटे पैमाने पर घरमें भी बना सकते हैं। एक धातुके प्यालेमें बर्फ डाल दो तो वह तुरन्त ठंडा हो जाएगा। तुरन्त उसके बाहरकी तरफ भाप सी खिचने लगेगी जो ठंडी होकर प्यालेके बाहरकी दीवार पर जलबिंदुके रूपमें जम जाएगी। यही ओस है। रात स्वच्छ हो और हवा शांत हो तथा हवामें काफी नमी हो और धरती व वनस्पतिका तापमान कम हो—नीचा हो—तो हवाकी नमी इस ठंडी सतहके संपर्कमें आनेसे ठंडी हो जाती है और तब ओसकी बूँदें जमती जाती हैं। गुजरातमें जाड़ेकी फसलको पोषण मिले इतनी ओस गिरती है। पहलगांव (कश्मीर)में बड़े सवेरे ओसका पानी पत्थरके छप्पर परसे बरसातकी झड़ीकी तरह गिरता है जबकि दूसरी तरफ रेगिस्तानमें ओसके दर्शन भी दुर्लभ हैं।

रेगिस्तानमें ओसका जितना महत्त्व है उतना अन्यत्र नहीं। वहां अगर ओस न पड़े तो वनस्पति और जीवसृष्टिके लिए जीना मुश्किल हो जाए। रातका ठंड और ओसमुहूर्तकी ओस पर ही वहांके जीवनका आधार होता है। प्राणी ओसको चाटकर अपने शरीरमें आवश्यक पानी जमा कर लेते हैं। वनस्पति भी ओसका पानी ग्रहण कर लेती है।

धूप निकलते ही हवाका तापमान बढ़नेसे ओसका पानी पुनः हवामें अदृश्य नमीके रूपमें समा जाता है जैसे पानीके गरम होते ही उसमें शक्कर पिघल जाती है।

ओस कितनी भी बन पर उससे हवा धुंधली नहीं होती। कुहरेकी बात अलग है। जब कुहरा गाढ़ा होता है तब विमान और जहाजी व्यवहार छिन्न भिन्न हो जाता है।

जब ठंडी सतह परसे गरम हवा बहती है, तब वह हवा अगर परितृप्त हो तो ठंडी सतहके स्पर्शसे ठंडी होती हवाकी नमी जमकर कुहरेके रूपमें फैल जाती है, अथवा जब ठंडी हवा अनुपातमें गरम पानीकी सतह परसे बहती है तब पानीमेंसे नमी हवामें मिलकर, जमकर, कुहासेके रूपमें फैल जाती है। किसी समय उषाकालमें पहाड़से नीचे तलहटीमें देखें तो वहां नहीं दिखाई देगी उसका कुहरेसे ढँका ठंडा मैला भाग दीखेगा। रातको पानीको ठंडा होनेमें देर लगती है पर पृथ्वी जल्दी ठंडी हो जाती है। इससे वह अपने संसर्गमें आनेवाली हवाको ठंडा कर देती है जिससे हवाकी नमी कुहरेके रूपमें दिखाई देती है।

कुहरा पृथ्वीकी सतहपर पासके बादल है, ऐसा कहा जा सकता है। इसमें, आकाश स्वच्छ होने पर भी पृथ्वीकी सतह पर हवा धुंधली जाती है।

जहाँ बादल होने पर भी बरसात नहीं होती वहाँ हवाई जहाजसे सूखी (बर्फ जमायी कार्बन डाइ ऑक्साइड) छिड़कनेसे बरसात लायी जा सकती है।→

“यह बादल बेचनेके लिए है। मिलिये” अमेरिकामें ऐसी वैज्ञानिक तरकीबसे बरसात ला देनेका दावा करने वाली कंपनियाँ हैं। इस कार्टून चित्रमें उनपर व्यंग किया गया है।↓

नाश्ते वगैरा पर जैसे हम नमक छिड़कते हैं [illegible], उसी तरह बादलों पर नमक छिड़कनेसे बरसात आती।
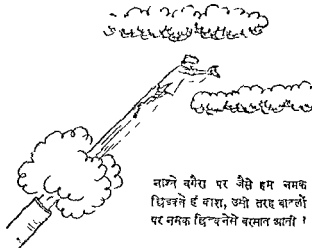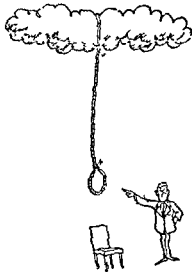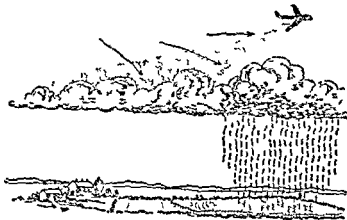
बादलोंके परिचयमें हमने देखा कि नमीको जमकर बादलोंके सूक्ष्म जलकण बननेके लिए रजकण आवश्यक होते हैं। उसी तरह कुहरेमें भी अति सूक्ष्म जलकणोंको जमनेके लिए हवामें उड़ते रजकण आवश्यक होते हैं। आसमें घूमने निकलें तो हमारे शरीर और कपड़ों पर भी *ओस जमती है पर कुहरेमें हमारा शरीर भीगता नहीं है। (कुहरेके बादल आकाश तक हों* तो बौछार पड़े भी)। कुहरेवाली हवा नमी युक्त जरूर कही जा सकती है पर वह मौसम भी तो जाती है। दमा तथा श्वसनके रोगियोंके लिए ऐसी आबोहवा अच्छी नहीं होती।

धुएँके आधार पर जो कुहरा जमता है वह अधिक भयंकर होता है क्योंकि धुएँमें *कार्बन* मोनॉक्साइड भी होती है जो कार्बन डाइऑक्साइडसे भी अधिक खतरनाक है। १९५२में लन्दनमें ऐसा धुएँवाला कुहरा इतना जमा था कि उसने चार हजार मनुष्योंकी जान ली। अंग्रेजीमें धुएँ

वाले कुहरेको स्मॉग (smog) कहते हैं। हमारे यहां ऐसा कुहरा होता है कि हम दस मीटरकी दूरीपर भी कुछ नहीं देख सकते, सूरज भी नहीं दीखता। पर यूरोपके ठंडे देशोंमें धुएँवाला कुहरा इतना तो गाढ़ा होता है कि दोपहरको भी मध्यरात्रि जैसा अंधकार छा जाता है। मोटरोंकी बत्तियाँ इस कुहरेको भेद नहीं सकतीं, इससे यातायात व्यवहार छिन्न भिन्न हो जाता है। जहाजोंके टकरा जाने और जानमालका भारी नुकसान होनेकी घटनाएँ घटती हैं। कई
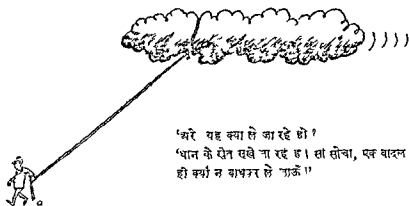
बार तो इतना गाढ़ा अंधकार छा जाता है कि पक्षी भी बेचारे धोखा खा जाते हैं कि रात होनेको है और अपनी सारी प्रवृत्तियां रोक सोनेके लिए घोंसलोंमें चले जाते हैं। फिर अगर पुनः अचानक कुहरा छंट गया और प्रकाश निकल आया तो इस प्रकाश छलके विरोधमें या प्रकाश होनेकी खुशीमें कलरव करके सारे वातावरणको गुंजा देते हैं।

ठंडे देशोंमें औद्योगिक नगरोंका धुएंवाला कुहरा मानवके आरोग्य तथा सुरक्षाके लिए शापरूप है। कोयलेके धुएँमें कार्बन मॉनॉक्साइडके अलावा गंधक आदि ऐसे रसायन होते हैं कि जो श्वसन-तंत्रकी श्लेष्म त्वचाके लिए दाहक होते हैं। इससे फेफड़ोंका कैंसर भी होता है। कार्बन मोनॉक्साइड फेफड़ोंमें जाकर रक्तकणोंसे चिपक जाता है जिससे रक्तकण प्राणवायु ग्रहण नहीं कर सकते। इससे शरीरको प्राणवायु नहीं मिलती और इससे मनुष्य घुटकर मर जाता है या बीमार हो जाता है।

जब सूर्य चमकता है तथा पृथ्वी तपने लगती है तो कुहरेके जलकण हवामें घुल मिल जाते हैं।

जाड़ेमें उत्तर भारतमें तथा कभी कभी कच्छ सौराष्ट्र और उत्तर गुजरातमें हवाका तापमान नहीं पर धरतीका तापमान शून्यसे भी नीचे जाता है तब धरती जम जाती है। उसके ऊपरकी सील जम जाती है। गुजरातमें इसे 'हिम' पड़ा कहते हैं। इसमें फसल 'जल' जाती है। यह 'हिम' वास्तवमें तो हमारी वनस्पति सहन न कर सके ऐसी ठंडी आबोहवा ही है। यूरोप तथा अमेरिकाके ठंडे प्रदेशोंमें धरतीका तापमान इतना नीचा जाता है कि जम गयी धरतीको खोदना भी मुश्किल होता है। इसीसे वहां धरती पर बड़े पेड़ भी नहीं उग सकते।
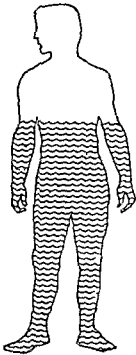
मानव शरीरमें $\frac{३}{१०}$ भाग घन पदार्थ है। बाकी सारा पानी है।

२१ : प्राण - प्रश्न : पानी

जीवन पानीमेंसे प्रकट हुआ था और पानी ही पर निर्भर है। पुराणकारोंने भी लिखा है कि पृथ्वीके सर्जनके पश्चात सर्वत्र पानी ही पानी था और धरती उसमें डूबी हुयी थी।

आदि समुद्र मीठा था, फिर धरतीके क्षार घुलकर ज्यों ज्यों उसमें मिलते घुलते गए त्यों-त्यों समुद्र अधिक खारा होता गया। फिर समुद्रमें प्रथम जीव पैदा हुआ तब पानीमें जितना खारापन था इतना आज भी हमारे खून और अन्य जीवोंके खून या रक्तरसमें है। *हमारे शरीरका $\frac{२}{३}$ भाग पानी है। हमारे आसपास हवामें पानी है।* हमारे पैरोंके नीचे धरतीमें पानी है। सारी सजीव और निर्जीव सृष्टिमें भी न्यूनाधिक मात्रामें पानी है ही। धरती परके जीव और वनस्पति बिना पानीके नहीं रह सकते। चाहे वह पानीके रूपमें मिले, खुराकके रूपमें मिले या हवामेंसे नमी (सील) के रूपमें मिले।

हमारे शरीरका $\frac{३}{१०}$ भाग ही घन स्वरूप है। इस $\frac{३}{१०}$ भागको कार्यशील रखनेके लिए $\frac{७}{१०}$ भाग पानी चाहिए। *मान लें कि हमारा वजन ७० किलोग्राम है तो उसमें २० किलो घन* अंगोंको क्रियाशील रखनेके लिए ५० किलो पानी निहायत जरूरी है क्योंकि इसमेंसे पांच किलो भी टट्टी पेशाब अथवा पसीनेके रूपमें निकल जाए तो मृत्यु हो जाए। हमारे पूर्वज जलचर थे इस बातको ३० करोड़ वर्ष बीत चुके हैं। फिर भी हमारा शरीर पानीमय है। इसमेंसे १० प्रतिशत पानी निकल जाए तो प्राणोंसे हाथ धोने पड़ें।

माताके गर्भमें बालक पानीमें तैरता होता है। उस पानीका खारापन हमारे खूनके खारेपन यानी आजके समुद्रके एक तिहाई खारेपनके बराबर है। तुरतके जन्मे तंदुरुस्त बालकका वजन *लगभग ३ किलो होता है।* वह लगभग इतने ही तीन लीटर ऊष्मा भरे पानीमें तैरता होता है।

हमारे पूर्वज जब समुद्रको छोड़कर पृथ्वी पर आये तब अपने साथ शरीरके अंदर ही एक छोटा सा समुद्र ले आये। हम आज भी अपने शरीरमें उस छोटेसे समुद्रको भरकर ही फिरते हैं। समुद्रके उसी पानीमें ही सब जीव—मानव-बाल भी—जन्म लेते हैं।

दूसरी बात यह है कि मानव जब जगली अवस्थाम था तबसे सकडो वर्षों तक जलाशयके किनारे पर ही रहना पसन्द करता था। पानीके द्वारा ही वह जगली अवस्थासे आजकी सभ्य अवस्थामे पहुँचा है।

पर अब पानीका प्रश्न विकट हो रहा है क्योकि पानी तो पथ्वीके साथ जितना पैदा हुआ था उतना आज भी है। पर मानव-बस्तीकी गुणन वद्धि हो रही है। कुछ शताब्दिया पहलेकी दुनियामे मानव-आबादी कुछ करोडोकी ही थी किन्तु आज वह तीन अरबकी सख्या पार कर चुकी है। पहले इस आबादीको दुगना होनेमे हजारो वर्ष लगते थे पर अब ३५ ४० वर्षोंमे ही दुगनी हो जाती है।

पथ्वी पर जितना पानी है उसमसे ९७ प्रतिशत समुद्रमे है और वह भी खारा है। बाकी पानीका लगभग पौना भाग ध्रुवो पर तथा हिमालय और दूसरे पवतो पर बफ या हिमके रूपमे पडा है। जो पानी धरतीमे है—सरोवरोमे भरा है या नदीके रूपमे बहता है—उसका प्रमाण अति अल्प है। अब वह समय आ गया है कि नदी, सरोवर और भूगभका सारा पानी मानवके लिए उपयोगमे लाया जाए तो भी पर्याप्त न होगा। जगतमे कई ऐसे स्थल है कि जहा न नदी है न सरोवर और भूगभमे भी पानी अति दुलभ है। पातालमे पानी हो भी तो उसका भडार अटूट नही होता। बरसातके द्वारा जितना पानी भूगभमे जाता है इतना ही वहा सगहीत होता है। वर्षामे जितना पानी मिलता है उससे अधिक हम नही बरसा सकते।

पथ्वीकी सतह पर ३६ अरब एकड जमीन है। उस पर औसतन २६ ३ इच पानी बरसता है। इस बरसातका ६१ प्रतिशत पानी धरतीमसे वनस्पतिमसे और मीठे पानीके जलाशयोमसे सूखकर पुन हवामे उड जाता है। बाकी ३९ प्रतिशत पानी सतह पर नदी द्वारा और भूगभमसे झरनोके रूपमे समुद्रमे बह जाता है। मीठे पानीके तालाबोमे भरा रहनेवाला पानी तो नहीके बराबर ही है।

धरतीकी सतह ३६ अरब एकड है। पर धरती पर जो पानी बरसता है उसे इकट्ठा किया जाए तो ८२ अरब एकड जमीन पर एक फट पानी भर जाए। इतना होने पर भी हमारे लिए आज भी यह पानी पर्याप्त नही है तो आनेवाले वर्षोंमे क्या होगा?

मनुष्य पानीका अधिकाधिक उपयोग करके प्रगति करता रहा है। जगली अवस्थाके मनुष्यको पानीकी आवश्यकता मुख्यतया पीनेके लिए थी। फिर जब उसने मास तथा धान्य पकाना सीखा तो उसे रसोईके लिए पानीकी जरूरत पडने लगी। खेती करना सीखा तो उससे और अधिक पानीकी जरूरत पडी। धातुए बनाना सीखा तो पानीकी आवश्यकतामे वद्धि हुई। उद्योग शुरू हुए तब तो इतने अधिक पानीकी आवश्यकता हुई कि जो मनुष्य उद्योगोसे परिचित नही है उसे इसकी कल्पना भी नही आ सकती। एक पीपा पेट्रोल बनाने या एक पीपा शराब बनानेके लिए ३५० से ५०० गलन मीठे पानी की जरूरत होती है। एक टन कागज बनानेके लिए पौने तीन सौ टन पानीका उपयोग होता है। एक मोटरके निर्माणमे $\frac{3}{4}$ टन लोहेका उपयोग होता है, पर इतना लोहा बनानेके लिए १७५ टन पानी खच होता है। हा, यह भी सच है कि यही पानी बिजली उत्पन्न करनेमे भी प्रयुक्त होता है।

एक गडरियेको अपने खुदके लिए बहुत कम पानी चाहिए, पर भेड-बकरी या गाय भैसके

लिए कई गुना अधिक पानीकी आवश्यकता होती है। पर एक सभ्य, सुसंस्कृत नागरिकको सौ गडरियोंसे भी अधिक पानीकी आवश्यकता होती है और एक छोटे कारखानेको भेड-बकरी या गाय भैंसके बडकी आवश्यकतासे भी कहीं अधिक पानी की आवश्यकता होती है।

असलमें मीठा पानी ही दुर्लभ होता जा रहा है तो पीनेके शुद्ध पानीका तो कहना ही क्या! नदियाँ हमारे स्वास्थ्यके लिए हानिकारक होती जा रही हैं। नदीके किनारे बडे आबादीवाले शहर और कारखाने बस रहे हैं। वे अपनी गन्दगीको नदियोंमें उँडेलते हैं। अमेरिका जैसे प्रगतिशील देशमें भी यह अनिष्ट बहुत ही बढ गया है। वहाँके कारखानोंमें टनोंसे हिसाबसे जो डीटरजेंट प्रयुक्त होता है वह गटरोंसे होकर पीनेके पानीके जलाशयोंमें जाता है और नलके पानीमें उसका झाग ऊपर चढ आता है। विष्णाताओंका कहना है कि अमेरिकामें पिछली सात दशाब्दियोंमें आबादी ढाई गुना बढी है। साथ ही साथ पानीमें अशुद्धि भी सात गुना बढी है। इस अशुद्धिको बढानेमें आन्तरिक जलमार्गोंमें चलते जहाजोंने भी हाथ बँटाया है। वे अनुपयुक्त तेलसे लेकर झूठन और मल मूत्र तककी गदगी नदीमें ही डालते रहते हैं। साथ ही, अब बगीचों खेतों आदिमें जतुघ्न रसायन छिडकनेकी प्रवृत्ति बढती जाती है। इन रसायनोंका जहर भी बरसातके पानीमें घुलकर नदी-नालोंमें मिलता रहता है।

मीठे पानीके सम्बन्धमें हमारे समक्ष अनेक प्रश्न उपस्थित हो गए हैं। अधिक पानी कैसे प्राप्त करना, पानीकी कमखर्ची कैसे करना, बिगाडको कैसे रोकना, उद्योगोंमें प्रयुक्त पानीको पुनः किस प्रकार शुद्ध किया जाए जिससे वह पुनः पुनः उपयोगमें लिया जा सके वगैरा।

सारी दुनियामें पडनेवाली बरसातकी औसत ७० सें० मी० होती है। भारतमें इससे बहुत अधिक पानी बरसता है। फिर भी हम करीब इस सारे पानीको समुद्रमें बह जाने देते हैं और प्रतिवर्ष कहीं न कहीं अकालकी पीडाको भोगते हैं। सतलज, बियास (व्यास) दामोदर, गोदावरी आदि कुछ नदियों पर बाँध बनाए गए हैं परन्तु जो पानी खेती और लोकोपयोगके लिए प्राप्य है उसकी तुलनामें तो यह पानी १० प्रतिशत भी नहीं है। बाकी पानी चौमासेमें नदीके बाढके रूपमें जानमालका विनाश कर जमीनका कटाव करके नयी नयी खाइ-कदराएँ बनाकर समुद्रमें विलीन हो जाता है।

नदीके पानीका श्रेष्ठ रीतिसे उपयोग करनेका सबक हमें अमेरिका और रशियासे सीखना चाहिए। अमेरिकाने टेनेसी जैसी छोटी नदीको नाथकर उसके संपूर्ण जलका सदुपयोग किया है। सिर्फ ६५० मील लंबी इस नदी पर पचीस बाँध बांधे गए हैं। अलावा इनके एल्युमिनियम कार्पोरेशनने इसके पानीका नियमन करनेके लिए और भी छः बाँध बनाए हैं। उसका यह ६५० मील लम्बा मार्ग खेतीके लिए उद्योगोंके लिए लोकोपयोगके लिए बिजली उत्पन्न करनेके लिए और साथ ही जलमार्गकी हैसियतसे भी उपयुक्त होता है। हमने दामोदर वेली (घाटी) कार्पोरेशनकी स्थापना करके टेनेसी कार्पोरेशनका अनुकरण किया है। इसी तरह हम सभी नदियोंके पानीको रोक लें—थाम लें तो हमारी पानीकी समस्या हल हो जाए। रशियाने दोन, वोल्गा और खास करके अपने एशियाई रेगिस्तानमें सिरदरिया आमु दरिया आदि नदियोंका श्रेष्ठ रीतिसे उपयोग करके रेगिस्तानके शुष्क प्रदेशको सरसब्ज बना लिया है।

मानव-संस्कृतिका पहला मापान है खेतीके लिए नदीके पानीका उपयोग। पाच हजार वर्ष पहले मिस्र (ईजिप्त)में नील नदीको और ईराकमें युफ्रेतिस तथा तग्रिस नदियोंके पानीको खेतीके लिए मोडकर रगिस्तानोको हरा भरा बनाया गया था। उस जमानेमें इजीनियरिंग विद्याका आजकी तरह विकास नही हुआ था, फिर भी श्रम और सहयोगके द्वारा रेगिस्तानको हरे भरे खेतोमें परिवर्तित किया गया था। पाँच हजार वर्ष पहले नील नदी पर, कादरा (काहिरा)के दक्षिणमें पत्थरोसे बाध बनाया गया था। हालांकि वह वह गया पर उसके अवशेष आज भी देखे जा सकते हैं। खेतीके लिए तथा जलमार्गके रूपमें भी इस प्रजाने नदीका उपयोग किया था। साढे तीन हजार वर्ष पहले उस प्रजाने नहर निकाल कर नील नदीको बिटर लेक' (कडवा-खारा सरोवर)के साथ और उसके द्वारा लाल समुद्रके साथ जोड दिया था। इस प्रकार भारतसे लाल समुद्रमें होकर यूरोपके भूमध्य समुद्र तक जानेके लिए जलमार्ग बन गया था। सन १८६६में मिले एक खडित शिलालेखसे मालूम होता है कि यह नहर ईरानके आये राजा दुरायुपन मिश्र को जीत लेनेके बाद बनायी थी। वह सौ फुट चौडी थी ऐसा माना जाता है।

नदियोंके पानीका उपयोग श्रेष्ठ रीतिसे कैसे किया जाए तथा उनकी नहरोंका अदर जमती रेत व भाठसे कैसे मुक्त रखा जाए यह बेबिलोनकी प्रजाका प्राण प्रश्न था। आज युफ्रेतिस और तेग्रिस नदियाँ (हमारी गगा यमुनाकी भाँति) समुद्रसे ५० मील ऊपर मिलती है। पर आजसे चार हजार वर्ष पहले वे एक दूसरसे लगभग ५० मील दूर रहकर एक दूसरेसे मिले बिना ही समुद्रमें जा मिलती थी। अपने द्वारा लायी गयी भाठने उन्होन समुद्रको १५० मील पीछे हटाया है।

पर, जो नासमझ प्रजा इन नदियोके उदगमके पास वनस्पतिका विनाश कर रही थी उसने बेबिलोनकी प्रजाका बडा भारी अहित किया। नदियो और नहरोसे धुलती रहनेके कारण वृक्ष विहीन जमीनकी मिट्टी पानीमें जमा होती ही रही और ये लोग नहरोमसे मिट्टी निकालते ही रहे। अतमें इस लगातार चलनवाली स्पर्धामें बेबिलोनके लोग हार गए। नहरे पट गई और समग्र ईराकका प्रदेश रगिस्तान बन गया तथा उसकी प्राचीन संस्कृतिका भी नाश हुआ। आज जब बाध और नहरें बनानेकी इजीनियरिंग विद्या विकसित हुई है तो पुन ईराकका वह रगिस्तान हरे भरे प्रदेशमें परिवर्तित होता जा रहा है। ईराककी प्राचीन प्रजाकी तरह ही आज भी ईराकी प्रजाके लिए पानी प्राण-सा महत्त्वका प्रश्न बना है। खनिज तेल उसको समृद्धि प्रदान करता है पर वह खुराक और पानी तो नही दे सकता। इसके बगलमें कुवैतसे कुवैतमें इतना सारा खनिज तेल है कि यहाकी प्रजाकी प्रति-व्यक्ति आमदनी अमेरिकी प्रजासे भी बढ गई है। पर इस निजल प्रदेशमें समुद्रमसे मीठा पानी बनानेके लिए करोडो रुपये खर्च कर कारखाने बनाये गए है।

प्राचीन भारतमें पानीकी कमी न थी। फिर भी उसके सहजन पर और सिचाई तथा बाढके नियन्त्रण पर ही आजसे चार हजार वर्ष पहलेकी सिंधु संस्कृतिवाली प्रजाका जीवन निर्भर था। बाढ नियन्त्रणका काम भी सिंचाईके बराबर ही महत्त्वका है। ४२०० वर्ष पहले चीनके सम्राट यू ने बाढ नियन्त्रणके कायम सफलता पायी इसीसे उसका नाम इतिहासमें अमर हो गया है। दूसरी तरफ भारतमें नेपाली हिमालयकी तरफसे आती कोसी नदी बिहारके मैदानमें इतनी सारी कटी मिट्टी बिछाती थी कि उसके कारण नदी छिछली और चौडी होकर मैदानोमें फैल जाती थी व हर

बाढके समय हजारा मीलम फ्लकर अपना वहाव वदल्ती रहती थी। परिणामस्वम्प खेती, मनुष्य और पशु उसकी बाढकी वलि वनते रहते थे। अब वह नाथ ली गई है।

सभी प्रदेश नदा या नहरका पानी पानका भाग्यशाली नही होते। इससे, जहा कुँएँ या तालाबका पानी भा नही मिल्ता वहा मनुष्य वस नही सकता। पश्चिम एशिया के रेगिस्तानक प्रदेशम कुँआ होना या कुएका मालिक होना वाइबिल्क जमानसे वडा सौभाग्य माना गया है। प्राचीन कालम गहर कुँए खादनेकी कलाका विकाम नही हुआ था। इसस पश्चिम एशिया और उत्तर अफ्रीकाम नालेके सूगे पटम गडडे खादे जाते थे। उनम साधारणतया १५ २० फुट (पाच छ मीटर)की गहराई पर पानी निकल्ता था। पर काहिराके पास जासफ'का कुँआ के नामसे ख्यात कुँआ ३ ७०० साल पहले ठोस चट्टानामे २९५ फुट (ल्गभग ९० मीटर) गहरा खोदा गया था। यह एक 'वावली' थी जिसम ढाल वनाकर खच्चराके द्वारा पानी ऊपर चलाया जाता था।

आजके इरानके ऊपरकी तरफ असीरियाका प्राचीन राज्य था। ल्गभग २,६५० वष पहले असूर वानीपाल्के समय न वह सस्कृतिकी पराकाष्ठा पर पहुँचा था। २,७०० वष पहले असीरियाके राजा सेनाकेरिव अपन निनवे नगरके महलम ५० मील दूरसे पत्थरकी नहरक द्वारा एक झरनेका पानी लाया था। बीचम ही पानी साख न लिया जाए इसलिए नहर पर उसन डामरकी परत चढायी थी। दरमियानम आनवाली घाटियाम इस नहरको ३०० मीटर लम्ब और ८ फुट चौडे पुल परस लाया गया था। इस नहरके अवशेष १९३२म मिले है।

प्राचीन रोमन लोग पानीक वहुत शौकीन थे। नहाने धानके लिए, खेती वारीके लिए फुहारे, स्नानागार और हौजके लिए उह वहुत पानीकी जरूरत थी। उनका प्रदश तो पहाडी था फिर भी वे अपनी नहराका पुला परस ले जाकर दूर दूरके झरनाम पानी लाते थे। आज भी इन विशाल जलमार्गों (acquaducts) के खँडहराको देखकर प्राचीन रोमनाके पानीके शौक तथा इञ्जिनियरिंग कौशल्यके बारम आश्चय होता है।

हम नहराके द्वारा सकडा मील दूर पानी पहुँचाना है पर वह सभी जगह पहुँचाया नही जा सकता। उदाहरणाथ—राजस्थानके रेगिस्तानका सरसब्ज वनानके लिए हिमालयमसे आनेवाली पजाबकी नदियाम भी पयाप्त पानी नही है। दक्षिण भारतका सभी नदिया अपनी धरतीकी प्यास का बुझा नही सकती। पहाडी प्रदेशाम नहर ले जाना सभव नही है। हमार देशम मीठे पानीके सरावर भी नहा। सिफ कश्मीरम वुलर आर डल सरावर है नागार्जुन सागर और गाविद सागर मानव निर्मित सरावर हैं जो क्रमसे गोदावरी और सतलज नदी पर बँध बाधकर बनाये गए हैं। दूसरा कोई गणना योग्य सरोवर नहा है। सारी पृथ्वी परके मीठे पानीक ३०० वें हिस्सका पानी ही सरावराम है। इसस सरोवर भी मानवकी प्यास वुझानम कोइ महत्वका सहयाग नही द सकते। नदीके रूपम वहता पानी भी भूगभम स्थित पानीकी तुलनाम कुछ भा नही है।

जहा मिट्टी रत या कँकरील स्तराम धरती वनी है वहाँ कठार चट्टानाकी अपक्षा अधिक पानी रहता है। यह पानी अधिक स्वच्छ भी होना है और उस निकाल्ना भी आसान होना है। सिधु यमुना-गगा तथा ब्रह्मपुत्रका साढे तीन हजार किलोमीटर लम्बा मदान इसका उदाहरण है। परन्तु ऐसा भी सभव है कि अधिक कटाववाली मिट्टीक स्तर अधिक छिद्राल होनक कारण तथा वरसातकी कमीक कारण पानी अधिक गहराइम उतर गया हो। राजस्थानम कुँएँके लिए सौ
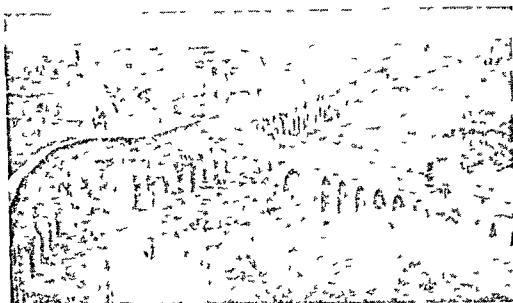
प्राचीन रोममें इन जलमार्गों (aequaducts)के द्वारा दूर दूरसे पानी लाया जाता था।

मीटर या उससे भी अधिक खोदना पडता है। वहां कुँएँ इतने गहरे होते हैं कि मोटके बैलोंको चलानेवाले किसानको पता भी नहीं चलता कि मोट ऊपर भरकर आया है या नहीं। इससे कुएँके पास खड़े मनुष्यको ढोल बजाकर यह बताना पड़ता है। राजस्थानमें हजार फुटसे भी अधिक गहराई पर मीठे पानीका सरोवर मिला है।

कई बार ऊँची भूमिमें भूगर्भमें होकर सकड़ों मील दूर बहकर पानी धरतीमें इकट्ठा होता है, जहां उस पर सख्त चट्टानोंका भारी स्तर होता है। इससे जब इस चट्टानको छेदा जाता है तब पानी स्वयं ही फुहारेकी भांति ऊपर चढ़ जाता है। अगर यह पानी ऊँचाईवाली सतह से नहीं आता तो उसे ऊपर चढ़ाना पडता है। इन दोनों प्रकारके कुओंको ट्यूबवेल (पाताल कुँआ) कहा जाता है। उत्तर गुजरातमें इस प्रकारके कुँएँ खोदनेका काम जारी है।

सर्वप्रथम बारहवीं सदीमें फ्रांसके आर्तोईजिम ऐसे कुएँ खोदे गए थे। इसीसे यूरोपमें ऐसे कुओंको आर्टिझियन कुँएँ कहते हैं। आस्ट्रेलियामें बहुत बडी संख्यामें ऐसे कुएँ खोदकर खेती की जाती है। आस्ट्रेलियाके दस लाख वर्गमीलके विस्तारमें फैले रेगिस्तानके भागमें ऐसे करीब १८००० कुए खोदे गए हैं। कई हजार फुट (लगभग ३०० मीटर)से कम गहरे हैं तो कई दो हजार फुट (लगभग ६०० मीटर)से भी अधिक गहरे हैं। सबसे अधिक गहराई ७००० फुट (लगभग २१०० मीटर)से भी अधिक है। प्रतिघंटे इनमेंसे ८० लाख गैलनसे भी अधिक पानी निकलता है। सभी कुँओंका पानी मीठा हो ऐसी बात नहीं है। फिर भी वह पशुओंको पिलानेके उपयोगमें लिया जा सकता है। आस्ट्रेलियामें पशुपालन एक बहुत ही बडा व्यवसाय है।

कुआंसे प्राप्त जलराशिकी दो मर्यादाएँ होती हैं। पहली जब कुँएमें फूटते सोतोंके द्वारा

आते पानीमे अधिक पानी निकाला जाए तो पानीकी सतह नीचे उतर जाती है। सौराष्ट्रकी वाडियाके कुँआम ऐसा होता है। पर अगर कुआको 'आराम' मिले तो य सात कुछ समयम खागे हुए कुँएँका फिरसे भर देत है। दूसरे, इन सभी कुँआमसे इतनी जल्दी और इतन प्रमाणम पानी निकाला जाए कि भूगभम उस जगहका मारा पानी खत्म हो जाए, ता कुएँ सूख भी जात हैं। भूगभम पानाक कोइ सागर नहा है कि जब जितना माग पानी मिलता रह। आखिर वह भी ता भूगभम वरसातका इक्टठा हुआ पानी ही है। अगर बरसात न हा ता इनमसे इतना पाना भी न मिले।

नीदरलैंडम वहुत सी जमीन समुद्रका पाटकर प्राप्त की गयी है। राइन नदीने प्राकृतिक प्रक्रियास ही कटी मिटटीमे नीदरलन्ड वनाया है। उद्यमी डच प्रजाने समुद्रको काफी पीछे हटाया है और अब भी उसे और पीछे हटाकर अधिकाधिक जमीन प्राप्त कर रही है। इस नयी धरतीम मीठा पानी भरापूरा रहे इस हेतुसे इस कटी मिट्टीकी वनी जमीनम डच लोग राइनका पानी डालते ही रहत है। भूगभके इस पानीका व बकका खाता ही मानते है। व उसम पानी जमा भी करत है और उसमस निकाल भी लेने है।

सौराष्ट्रम घेडका प्रदेश और भालका प्रदश तथा कच्छम रगिस्तानी प्रदेश समुद्रमसे निकला भाग है। सौराष्ट्रम घेडके सार प्रदेश पर भादर, ओझत मीणसार मधुवती इत्यादि नदियोन मीठी कटी मिट्टी बिछाकर इधरकी जमीनको उपजाऊ और खेतीके याग्य वनाया है। इस मिट्टीवाले प्रदेशम वरसातका पानी भरा रहता है। इससे इन नदियाके किनारेवाली खारी धरती परकी मीठी कटी मिट्टीके स्तर ही खेती वनस्पति और पानीके लिए उपयोगी हैं। सूखी ऋतुम काफी मेहनत और वक्त लगाकर स्त्रिया इसम गड्ढे खोदती है तब कहीं थोडा पानी प्राप्त करती है।

आज सारे समारके समक्ष पानीके दो मुख्य प्रश्न हैं। अविकसित या कम विकसित देशाम पानी इक्टठा कर उसका नियमन करके, प्रजाके लिए उसे प्राप्य बनाना और दूसरा प्रश्न विकसित देशाकी प्रजाकी आदताका ऐसा नियमन करना कि जिसमे पानी बकार खच न हा बिगडे नहीं और लागाको पर्याप्त प्रमाणम मिलता रहे।

खराकका बिगाडना समाजद्रोह है और पानीका बिगाड करना ता उसस भी वडा समाज द्राह है। एक जमानेम जगली आदमीका मिट्टीका एक घडा भी बनाना नही आता था। उस समय वह पानीके लिए नदी किनारे ही रहता था। जलाशयसे दूर पानी किस प्रकार ले जाना चाहिए यह उसे सूझता ही न था। आज हम वाध वनाकर नहरो द्वारा नदीमे सकडा किलोमीटर दूर, हजारा वग किलामीटर भूमि पर पानी फला सकते हैं और दूर दूरसे नला द्वारा हमारे घराम पानी ला सकते है। फिर भी जब करोडा मनुष्याको स्वच्छ मीठा पानी सुलभ नहा हाता तब शहरके लोग अपन अविचारीपनके कारण पानी बिगाड रहे ह। देशम लाखा किलामीटर धरती पानीके बिना तडपती है तब भारतकी अधिकतर नदियाका पानी समुद्रमे बहकर बेकार जाता है। जहा भारतम सवसे अधिक वरसात हाती है ऐसे चेरापूजीम भी जब चाहिए तब पानी नही मिलता। सूखी ऋतुम वहा पर भी स्त्रियाको पानीकी खोजम भटकना पडता है क्योकि वरसातका मूसलाधार पानी तो वहकर चला गया होता है।

प्राचीन वविलोनम अगर काई पानीका बिगाड करता तो उस वहाके कानूनके मुताबिक मौतकी सजा होती थी। आज जनसख्या बहुत बढ गयी है और प्रमाणम पानी कम है तब हमारा

कर्तव्य है कि उसका बंटवारा न होने दे। बम्बई जैसे शहरमें पानी पर भी राशनबंदी करनी पड़ती है। अर्थात् बारीके अनुसार हरेकके समय अमुक घंटे ही पानी दिया जाता है। जिनकी बारी रातको देरसे आये उन्हें जागना भी पड़ता है। पानी भरनेके लिए झगड़े भी होते हैं और क्वचित् खून भी होते हैं।

आर्य जब आर्यावर्त (पंजाब) में आकर 'सप्तसिंधु' नदियोंके किनारे बसे तब प्रजा कम थी, पानी बहुत था। इससे उन्हें पानीके लिए लड़ने की जरूरत न थी। पर तुर्कमान, कजाकस्तान और उजबेकस्तानमें लोगोंको सदियों तक पानीके लिए लड़ना पड़ा था। सिरदरिया और आमु-दरिया नामकी नदियोंमेंसे नहर बनाकर पानी लाया जाता था। प्रजाकी हर एक जातिके पास अपना मालिकाना नहर थी। उस जातिके प्रत्येक मनुष्यको पानी बांटा जाता था।

जिस पानीके लिए तुर्कमान प्रजा आपसमें सदियों तक लड़ी उसी पानीकी सहायतासे उन्होंने रशियनोंका सामना किया—हालांकि यह उनकी अंतिम लड़ाई थी। उन्नीसवीं सदीकी आठवीं दशाब्दीमें रशियन अपने साम्राज्यका विस्तार करते-करते यहां आ पहुंचे तब तुर्क प्रजाने जी तोड़कर उनका सामना किया तथा रशियनोंको पानीके अभावसे मार डालनेके लिए नहरों और कुँओंके पानीको दूषित कर दिया। इसके परिणामस्वरूप हजारों रशियन प्यास और रोगसे मारे गए।

प्रकृतिने पानीके बंटवारेमें न्याय नहीं किया है। ईरानकी राजधानी तेहरानमें पीछेके पहाड़में से आते अमृत से मीठे पानीके झरने नगरके बीचसे बहते हैं। पर इसी ईरानकी खाड़ीमें स्थित बहरीन टापूमें बेचारे लोग पानीके लिए समुद्रमें डुबकियां मारते थे। यह कुछ विचित्र सी बात लगती है पर वहां खारे समुद्रके तलमें भूगर्भके झरने, फुहारोंके रूपमें बाहर आते हैं। मोतीके लिए सीप निकालनेवाले पनडुब्बे मशक लेकर डुबकी लगाते और मीठा पानी भर लाते। आज तो बहरीन और कुवैतमें समुद्रके पानीमेंसे वाष्पीकरण अथवा आसवन द्वारा मीठा पानी बनानेके बड़े-बड़े कारखाने बनाये गए हैं।

रेगिस्तानको सरसब्ज कैसे बनाया जाए यह इजराइलसे सीखना चाहिए। तीन हजार वर्ष पहले इस रेगिस्तानके निवासी पत्थर और कंकड़ोंको इकट्ठा करके सीधी रेखामें उनकी ढेरियाँ लगा देते। दिनमें ये पत्थर खूब तपते थे—आसपासकी धरतीसे भी अधिक तप जाते थे और रातको तेजीसे ठंडे भी हो जाते थे क्योंकि पत्थर उष्णताके अच्छे वाहक हैं। इससे गरम श्वासमें रही नमी इन पत्थरों और कंकड़ोंके सम्पर्कमें आने पर ओसके रूपमें उन पर जम जाती। इस नमीका पानी धरतीमें चला जाता। फिर वहां पर लोग वृक्ष लगाते थे। इस प्रकार नगवके वीरान रेगिस्तानमें भी उस समयके लोग हरे भरे वृक्षोंकी घटा बना लेते थे। ऐन्जिनियरी विद्यापीठके प्रोफेसर रिंग हल्डरने अब भी वहां पर पड़े हुए इन पत्थरोंका निरीक्षण परीक्षण और उनसे प्रयोग करके बताया है कि प्राचीन लोग इस प्रकार पानी प्राप्त करके ओलिव (जैतून) के वृक्ष तथा अंजीरके पेड़ लगाते थे और यों रेगिस्तानको फलोंके बगीचोंमें बदल देते थे।

प्रथम दृष्टिमें ओसका पानी प्रमाणमें नहींके बराबर मालूम होता है। परन्तु नेगवमें एक वैज्ञानिकने उसके नापनेकी रीति भी खोज निकाली है। इससे ज्ञात हुआ है कि इस प्रकार गरमीकी प्रत्येक स्वच्छ रातको ¼ इंच (अर्थात् ०.६२ सेंटीमीटर) पानी मिलता है। इस हिसाबसे

प्रतिवर्ष लगभग १५ इंच पानी हुआ। भारत प्रदेशमें जाड़ेकी फसलमें गेहूँ, चना, कपास आदि जो पैदा होते हैं व आसानी ही फसल है ऐसा कह सकते हैं।

अगर तीन हजार वर्ष पहले पिछड़े लोग आसपास पानीका उपयोग कर सकते थे तो फिर आजके विज्ञानके जमानेमें तो ऐसा करना अधिक आसान होना चाहिए।

जहाँ मानव पुरुषार्थ करता है वहां रेगिस्तान भी सरसब्ज़ होकर खिल उठता है। ७८१५ मीलमें फैले इज़राइलका ज्यादातर प्रदेश रेगिस्तान है। फिर भी यहूदी लोग विज्ञानकी सहायतासे पानी पाकर और उसके श्रेष्ठ उपयोगसे रेगिस्तानमें खेती करने व जंगल उगानेके भगीरथ प्रयत्नमें लगे हुए हैं। उन्होंने इस रेगिस्तानी प्रदेशमें भी चार लाख एकड़ ज़मीनको सरसब्ज़ बनाया है। यह छोटा सा देश खेतीकी उपजका निर्यात भी करता है। नेगेवके रेगिस्तानमें ६ एकड़ ज़मीनको समुद्रके खारे पानीसे सींचकर उसमें अलग अलग १८० जातिकी वनस्पतियां उगाया गया है। उनमेंसे कुछ पशुओंको चरानेमें उपयोगी होती हैं तो कुछ रुई और कागज़ बनानेके काम आ सकें, ऐसी हैं। इज़राइलके वैज्ञानिकोंके ये प्रयोग ध्यानमें रखने योग्य हैं।

अगर भूगर्भमेंसे पानी प्राप्त किया जा सके और वनस्पतिका रक्षण किया जा सके तो रणको फिरसे एक बार सरसब्ज़ बनाया जा सकता है। जहां वर्षमें सिर्फ पांच इंच बरसात होती है ऐसे खातुमके बाहर नील नदीके पानीके द्वारा आज सुडान देश अपने जंगल उगा रहा है। अविचारी और स्वार्थी लोग उसमें अपने मवेशी चराकर या लकड़ी काट ले जाकर जंगलका नष्ट न कर इसलिए जंगलके चारों ओर बाड़बंदी की गयी है। हथियारबन्द रखवाले इनका रक्षण करते हैं। और हमारे यहां तो रक्षित जंगलोंका भी नाश हो रहा है!

अमरिका-कैनेडामें सेण्ट लारेंस नदी और अनेक छोटे-बड़े सरोवरोंको जोड़कर अमरिकाके मध्य भागको समुद्रके साथ जोड़ा गया है। यह जलमार्ग व्यापारी समृद्धि देता है व उसकी नहरें और बांध उद्योगोंको बिजली तथा खेतोंको पानी देते हैं।

इंजीनियरिंगके कौशल्यसे मीठे पानीका जो श्रेष्ठ सदुपयोग रशियाने किया है वह हैरत अंगेज़ है। वनस्पतिके नाशसे और उसके कारण धरतीके घुलनेसे जो नदी बेकाबू तथा विनाशक बन गयी थी उसे नाथ लिया गया है और उसका पानी खेती तथा बिजलीके लिए उपयोगी बनाया गया है। परन्तु वोल्गा कास्पियन समुद्रमें गिरती थी और चारों तरफसे धरतीसे घिर इस कास्पियन समुद्रको पर्याप्त पानी न मिलनेसे वह सूखता जाता था। ऐसा ही चलता रहता तो जहाज़-रानी और मत्स्य उद्योग छिन्न भिन्न हो जाता। इससे रशियनोंने युक्ति की। खारे ऐरिल समुद्रमें गिरते आमुदरिया (नदी)के प्रवाहको मोड़कर काराकुरमके रेगिस्तानको सरसब्ज़ बना लिया गया।

अर्वाचीन भारतमें जो एक दर्जन बड़े बांध हैं वे भारतके भगीरथ पुरुषार्थके परिणाम हैं। दुनियाके सबसे बड़े बांधोंमें गिने जानेवाले भाखड़ा बांधको बनते देख तथा उसमें हज़ारों लोगोंको दिन रात काम करते देखकर पण्डित नेहरूने कहा था कि जहां मानव मानव जातिके कल्याणके लिए परिश्रम करते हैं उन स्थानोंको भावी युगके मंदिर समझना चाहिए। जब भाखड़ा-नंगल बांधसे नाथी गई सतलज नदीके पानीको राजस्थानकी नहरमें मोड़ा गया तब उस रेगिस्तानके लोग दूर-दूरसे इस चमत्कारको देखने आये थे क्योंकि सैकड़ों पीढ़ियोंमें उन्होंने कुएँ के पानीसे अधिक पानीके दर्शन भी नहीं किये थे।

भाखड़ा, नगल, चम्बल, हीराकुड, नागार्जुनसागर दामोदर गंडक कोसी, कोयना आदि कई जलविद्युत योजनाएँ कार्यान्वित हुयी हैं और कुछ हो रही है। ये सब इस देशकी सूरतको बदल रही हैं। परन्तु हमारी आबादीके साथ हमारी भूख प्यास और अन्य आवश्यकताएँ भी बढ़ रही हैं। इसीसे, नदियोंके पानीका बेकार बह जानेसे रोक सकने तथा धरतीका घुलनेसे बचा सकने पर ही हमारा भविष्य निर्भर है। पर धरतीकी कटाई कोई साधारण सी समस्या नहीं है। जब भाखड़ा बाँध बन रहा था तब इंजीनियरोंकी ऐसी राय थी कि भाखड़ाके पीछे बननेवाले गोविन्दसागर—सरोवरमें कटी मिट्टी भर जानेसे बाँधको निकम्मा हो जानेमें सदियाँ लगेगी। परन्तु बाँधके बन जाने पर धरतीकी कटाईसे इतनी मिट्टी बाँधमें भरने लगी कि बाँधकी उपयोगिताका अन्दाजा केवल १५० वर्ष तकका हो गया। और अब तो ऐसा डर मालूम होता है कि सतलजके उद्गम प्रदेशमें जंगलोंका रक्षण करके धरतीके कटावको रोका न गया तो यह बाँध ७१ वर्ष भी काम नहीं दे सकेगा।

पंजाबमें हरिके नामक स्थानके पास, भारतके हिस्सेमें आयी तीन नदियोंका—रावी सतलज और व्यासका पानी इकट्ठा होता है। सतलज और व्यासके संगमसे ४२१ मील लम्बी राजस्थान नहर निकाली गयी है। इसमें ४६ लाख एकड़ धरती हिमालयके पानीसे सब्ज बनेगी ऐसी उम्मीद है। इसमें पहले यहाँ गंगा नहर (जो गंगा नदीसे नहीं आती) लायी गयी थी। उसने सिर्फ सात लाख एकड़ जमीनको ही सब्ज बनाया है।

राजस्थान नहर राजस्थानके गंगानगर, बीकानेर और जैसलमेर जिलोंकी प्यासको बुझाती है। इसके पश्चात् वह पाकिस्तानकी सीमाकी तरफ मुड़कर सीमासे समानान्तर २७ मीलकी दूरी पर रहकर बहती है। यहाँ नहरके किनारे मजबूत हट्टे-कट्टे किसानोंको बसाया गया है। इस तरह हमारे जीवन तथा रक्षाके लिए यह नहर बहुत ही महत्त्वकी है। उत्तर गुजरात और राजस्थानकी किसी भी नदीसे यह नहर बड़ी है और इसमें अधिक पानी बहता है।

अभावोंमें जब अकाल पड़ता है तब लाखों जंगली पशु बिना पानीके तड़फ-तड़फकर मर जाते हैं। प्याससे पागल बने पशुओंकी यातनाकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। हमारे देशमें तो अकालमें पाले हुए पशु भी प्याससे मर जाते हैं तो जंगली प्राणियोंकी चिंता कौन करे? १८६८-६९ के अकालमें राजस्थानके लोग बिना पानीके प्यासों मर गए थे। यही १९६६-६७में बिहारमें भी हुआ। राजस्थानकी धरतीमें पानी लगभग अप्राप्य है जब कि बिहारकी धरतीमें अधिकसे अधिक ५० फुट नीचे पानी है। फिर भी बिहारकी प्रजाको आकाशकी ओर आँख गड़ाकर देखना पड़ता है। यह कितने खेदकी बात है!

धरतीके अन्दरके पानीको सूखनेसे रोकनेके लिए उस पर वनस्पतिका ढक्कन आवश्यक है। फिर बड़े जलाशयोंमेंसे पानीको सूर्यके ताप द्वारा तथा पवन द्वारा उड़नेसे रोकना भी जरूरी है। जलाशयोंकी ऊपरी सतह पर अगर सेटिल (cetyl) अल्कोहॉलका एक परत बिछा दी जाय तो पानी उड़ नहीं सकेगा। इजरायल और आस्ट्रेलियामें ऐसा ही किया जाता है।

अलावा इनके अब हवाकी नमीसे सीधे पानी प्राप्त करनेके प्रयोग भी हो रहे हैं।

इस प्रकार संभव है उतने सभी उपायोंसे धरतीमेंसे मीठा पानी पा लेनेके बाद भी मीठे पानीकी कमी मिटनेवाली नहीं है। अलबत्ता समुद्रके पानीको गरम करके उसकी भापसे मीठा

पानी पाने कई कारखाने दुनियाम काम कर रहे है, पर उन सभीम खामी यह है कि व मर्यादित प्रमाणम ही पानी दे सकते हैं और वह भी काफी महँगा होता है। शायद अणुशक्ति द्वारा चलानेसे यह सस्ता किया जा सकेगा। फिर भी इससे बचे हुए गाढे खारे पानीके निकासका भी प्रश्न तो रहेगा ही।

एक दूसरी भी रीति है समुद्रके पानीको इस प्रकार जमा दिया जाए कि उसमसे नमक अलग हो जाए व मीठा पानी जमकर बर्फ बन जाए। ध्रुव समुद्रम प्रकृति स्वय ऐसा करती है।

पृथ्वी परके ध्रुव प्रदेशो तथा ऊँचे पर्वतोके शिखरो पर कुल १३६०० लाख घन किलो मीटर बर्फ है। उसमसे आमानीस ३५०,००० लाख घन किलोमीटर शुद्ध पानी पाया जा सकता है। इन हिमाच्छादित प्रदेशो पर राख या गरमी ग्रहण कर सके ऐसे पदार्थका पाउडर बिछा दिया जाए ता बर्फ सूर्यकी किरणोका परावर्तन न कर सके। इसस बर्फ अधिक मात्राम पिघलने लग और गरमीके मौसमम नदियाम अधिक पानी आ सके जो नहरोके द्वारा उपयोग म लिया जा सके।

यह पद्धति कहा तक व्यवहार्य है इसका अध्ययन किया जाना चाहिए।

तीसरी भी एक रीति है इसम एक खास प्रकारकी रासायनिक तहमसे पानीको गुजारा जाता है। इस पद्धतिम पानीके अणु गुजर जाते हैं, पर उसम घुले क्षारोके अणु नही गुजर सकते। इमसे इस तहमसे गुजरा हुआ पानी मीठा हो जाता है। परतु यह ललचाने वाली रीति अभी प्रयोगके रूपम ही है व्यवहारम अभी इसका उपयोग नही हो सका।

पानी बचानेका एक और परिणामकारी मार्ग भी है। भुक्खडकी तरह पानी पीनेवाले उद्योगोके प्रयुक्त पानीको शुद्ध करके फिरसे उपयोगम लाया जाना चाहिए। अब तो नहरोका गदा पानी भी शुद्ध करके उपयोगम लाया जाता है और उसके सेद्रिय मलको सुखाकर खादके रूपम उसका उपयोग किया जाता है। जहा पीने योग्य पानीका और भी उपयोग होता हो, वहा अगर अशुद्ध पानी प्राप्य हो तो शुद्ध पानीका उपयोग नही करना चाहिए। उदाहरणार्थ—बम्बईम आरे कालोनीकी डेरीम तथा दूध देनेवाले मवेशियोके लिए मनुष्यके पीने योग्य पानी प्रयुक्त होता था, पर इसके सबधमे ऊहापोह होने पर वहा अब केवल पशु पी सके ऐसे मीठे पानीका उपयोग किया जाने लगा है।

२२ · हवामान · गुजरात और भारतका

भारत एक विशाल देश है। इसके दक्षिणमें तीनों ओर महासागर गरज रहे हैं। उत्तरमें हिमाच्छादित हिमालयकी ऊँची पर्वतमालाएँ हैं। दक्षिणमें किनारेसे लगभग समानान्तर पश्चिमी घाटकी पर्वतमालाएँ और उनसे समकोण बनाती भारतके मध्यमें आड़ी पड़ी विन्ध्याचलकी तथा सतपुड़ाकी पर्वतमालाएँ हैं। सारा दक्षिण प्रदेश सोपान शिलाओंसे बना है। साथ ही वह विषुववृत्तके अधिक पास है। उत्तरमें हिमालयके दक्षिणमें गंगा-यमुनाका मैदान है। इस प्रकार विस्तृत अक्षांशमें फैले और अनेक प्रकारकी भूपृष्ठ रचनावाले इस एक पूरे खंड जैसे भारतमें एक सरीखा जलवायु नहीं यह स्वाभाविक ही है।

किसी भी देशका जलवायु कोई स्थानिक घटना नहीं है पर जगतव्यापी जलवायुका एक अति अल्प अंश ही होता है। अतः किसी भी देशके जलवायुका अध्ययन सारे संसारके जलवायुके सन्दर्भमें ही हो सकता है। ऐसे जलवायुके अध्ययनके लिए जलवायु विभागकी विशेष प्रयोगशालाएँ सतत कार्यरत रहती हैं।

भारत एक कृषि प्रधान देश है। अतः यहाँ बरसातका महत्त्व बड़ा भारी है।

हवामें हमेशा नमी होती है फिर वह चाहे राजस्थानकी सूखी हवा हो या सौराष्ट्रके किनारेकी भीगी हवा हो। समुद्रकी तरफसे बहती हवामें नमी भरी-पूरी होती है। जब वायु नमीसे संतृप्त होती है तब उसमें और नमी समानेकी गुंजाइश नहीं होती। परन्तु अलग-अलग तापमानमें हवा न्यूनाधिक नमी धारण कर सकती है। जैसे हवाका तापमान अधिक वैसे उसमें नमीको धारण करनेकी शक्ति अधिक। परन्तु ऊँचे तापमानमें नमीसे संतृप्त हुई हवामें तापमान घट जाने पर पहले जितनी नमी नहीं रह सकती। अतः परिस्थितिके अनुसार अतिरिक्त नमीका कुहरा ओस बरसात आदि रूपमें अवपतन (Precipitation) हो जाता है।

प्रति किलोमीटर ऊँचाई पर हवाका तापमान पाँच अंश घटता जाता है। अर्थात् नमीसे भरी हवा जैसे जैसे ऊँचे जाती है वैसे-वैसे नमीको धारण करनेकी उसकी शक्ति घटती जाती है। इससे वह अतिरिक्त नमीका अवपतन कर देती है। हवामें स्थित अनेक रजकण और विद्युतमय आयन (Ions) पर ऐसा अपतन होनेसे बादल बनने लगते हैं।

जून महीनेमें धरती दहकने लगती है तब दक्षिण महासागरमेंसे नमीसे भरी पूरी हवाएँ ...ने लगती हैं। ये पवन जब ठंडे होने लगते हैं तो अवपतन द्वारा बादलोंका सर्जन करते ... मानो बादलोंका महासागर ही आकाशमें चला हो वैसे राशिमेघका प्रवाह भरतखंडकी तरफ ...ता है। इन बादलोंका प्रवाह मलयाचलसे टकराकर ऊँचा चढ़ जाता है और वहाँ ठंडा होनेसे

सूखकर बरस जाता है। इस प्रकार मलाबारके किनारे तथा कोकणके किनारे २००से ४०० सटीमीटर अथवा उससे भी अधिक बरसात होती है।

मलयाचलका उत्तरी सिरा ताप्ती नदीके दक्षिण तक पहुँचता है। वहा उसके साथ मानो समकोण बनाती दो समानातर पर्वतमालाएँ हैं। ताप्ती और नर्मदाके बीच सतपुड़ा पर्वतमाला है और नर्मदाके उत्तरमे विन्ध्याचल नामकी पर्वतमाला है। उनके पश्चिमी सिरे दक्षिण गुजरात तक पहुँचते हैं। इससे उनमे टकरानेवाले पवन बादलोको ऊँचे पर ले जाकर ठण्डा कर देते हैं और य ठडे हुए बादल दक्षिण गुजरातको भी लगभग १०० सटीमीटर बरसात दे जाते है। विन्ध्याचलके उत्तरमे मालवाका उच्च प्रदेश है परन्तु वह इतना ऊँचा नही है कि वर्षा वायुको रोककर ऊचे चढाए। फिर भी उसके असरके परिणामस्वरूप उत्तर गुजरातके काफी हिस्सेको ६० से १०० सेटी० बरसात मिल जाती है। मेघराजाकी सवारी विन्ध्याचल और मालवाको पार करके हिमालयसे भेंटने चम्बल, गगा और यमुनाके प्रदेशोका पार करने चल पडती है।

उत्तर गुजरातकी सीमासे ही अरावलीकी पर्वतमाला शुरू होती है। वह नैऋत्य अर्थात दक्षिण-पश्चिमसे, ईशान अर्थात उत्तर पूर्व फैली है। वर्षा वायुकी दिशा भी यही है। इससे बादल उससे टकराकर ऊँचे चढनेके बजाय उसके समानातर आगे बढ जाते है। इसीसे इसके पश्चिममे राजस्थानका प्रदेश उजाड तथा सूखा है। राजस्थानका रेगिस्तान भी वही है। यहा २० ३० सेंटी० या उससे भी कम बरसात होती है।

बरसात, पर्वतोकी ऊचाई पर ही नही पर पर्वतावलिकी दिशा पर भी आधार रखती है। अरावलीमे आबू १,७२२ मीटर ऊँचा है और वहा १५० सटी० बरसात भी हो जाती है, परन्तु उसके पूर्व और पश्चिमकी तरफ ४० अथवा उससे भी कम बरसात होती है। अरावली और मालवाके उच्च पठारोके असरसे ही उत्तर गुजरातमे ५० सटी० तक पानी पड जाता है। दक्षिण सौराष्ट्रमे लगभग १२०० मीटर ऊचा गिरनार है और उसके नीचे अनेक पहाडिया है। अगर गिरनारके बराबर ऊँची पर्वतमालाएँ ओखासे भावनगर तक तथा कच्छमे लखपतसे अहमदाबाद तक होती तो अवश्य वे बरसाती पवनोको रोककर ऊपर चढा कच्छ और सौराष्ट्रमे कमसे कम १०० १२५ सेंटी० पानी बरसा देती। वहा कभी पानीकी तगी, अभाव या अकालका भय नही रहता। परन्तु सौराष्ट्र तथा कच्छमे ऐसी पर्वतमालाएँ न होनेके कारण बरसाती हवाएँ नमीका अवपतन किये बिना ही आगे बढ जाती है। फिर वर्षा वायुके प्रवाहका भी यहा अन्त आ जाता है, इसीसे पाकिस्तानके सिंधमे वर्षमे शायद ही १० सेंटी०से अधिक वर्षा हो पाती है।

बगालकी खाडीके ऊपर जो बरसाती पवन बहते हैं उनमे बादल अथवा नमीवाली हवाकी मोटाई या गहराई लगभग छ किलोमीटरके करीब होती है। भारतके दक्षिणी द्वीपकल्प पर वह भी लगभग इतनी ही होती है। परन्तु अरब सागर परसे नमी भरी हवाका जो प्रवाह मलयाचल अथवा पश्चिमी घाटोकी पर्वतमालाकी तरफ आगे बढता है उसकी मोटाई सिर्फ एकसे डेढ किलोमीटर ही होती है। फिर भी जब यह प्रवाह पश्चिमी घाटकी पर्वतमालाके नजदीक आता है तब पहाडके अवरोधके कारण इसकी मोटाई छ किलोमीटरके करीब हो जाती है क्योकि ऊँची पर्वतमाला इस ऊँचे चढनेको बाध्य करती है। ऊपरकी ठडी हवामे नमी फैल जाती है उसमे बादल बनते है और वे बरस पडते है। किसी समय तो ये बादल १२से १५

किलोमीटरकी ऊंचाई तक पहुँच जाते हैं। इसीसे पश्चिमी घाटकी यह पर्वतमाला महाराष्ट्रके लिए आशीर्वाद स्वरूप है। इस प्रकारकी कोई भी पर्वतमाला सौराष्ट्र और कच्छको नही मिली। सौराष्ट्र, कच्छ तथा पश्चिमी राजस्थान परसे बहनेवाले नमी भरे बरसाती पवनोंकी मोटाई डेढ किलोमीटरसे कम होती है। हवाके इस नमी भर पतले पट पर भी सूखी हवाका पट होता है और इन दोनोंके बीच हवाका अपरिवर्तनशील प्रवाह रहता है। इसीसे कच्छमें नमीका 'अवपतन' नहीं होता और बरसात नहीं होती।

चौमासेमें नैऋत्य और पश्चिममेंसे बरसाती पवनोंका प्रवाह कच्छके रणप्रदेश परसे गुजरता है। उसकी मोटाई धरतीकी सतहसे एक किलोमीटरकी ऊँचाई तक होती है। उसके ऊपर चार किलोमीटरकी ऊँचाई तक पश्चिम एशियाकी सूखी गरम धरती परसे आया हुआ सूखा गरम पवन बहता है। इन दो प्रवाहोंके बीच आधेसे एक किलोमीटरकी मोटाईवाला अपरिवर्तनशील पट फैला होता है। जैसे जैसे समुद्र परसे आयी नमी भरी हवा आगे बढती है जमीन परकी सूखी और गरम हवाके समागमसे उसकी नमी अपेक्षाकृत कम होती जाती है। यह नमी भरी हवा अधिक ऊंची नहीं चढ सकती, अगर वह ऊँचे चढ सके तो उसकी नमी ठंडी होकर निहाईके आकारके घटाटोप बादल बना ले। परन्तु वह ऊँचे चढे इससे पहले अपरिवर्तनशील हवाका वह पट उसकी नमीको अपनेमें सोख लेता है। इससे यह ऊपर चढती हवा वातावरणमें से अपने साथ रज ले जाने पर भी बादल नहीं बना सकती।

इसीसे कच्छका रणप्रदेश बरसातसे वंचित रह जाता है। दक्षिणमें हिन्द महासागरसे आनेवाले बरसाती बादलोंका एक शाखा प्रवाह बंगालके उपसागर परसे होकर आगे बढता है। मध्यमें मैसूर तथा मद्रासके उच्च प्रदेश और उड़ीसाके किनारे समानान्तर महेन्द्रगिरि और मलयगिरिके उच्च प्रदेश है। यहां १०० सेंटी० बरसात होती है—परन्तु ग्रीष्म तथा जाडेकी बरसात मिलाकर ही।

इस प्रकार जूनसे शुरू होता बरसाती पवनका प्रवाह बंगालके उपसागर पर बिना अधिक रुकावटके पूर्व पाकिस्तानके ऊपरसे होकर आगे बढता है और आसामकी गारो खासी, जंतिया नाग और लुशाई पर्वतमालाओंके साथ टकराता है। बड़े जोरसे आते इन बरसाती पवनोंको ये पर्वतमालाएं ऊँचे उठाती है। यहां पूर्व पाकिस्तानका प्रदेश अपेक्षाकृत निचाईवाले मैदान सा होता है। मरहट्ट पर ये ऊंचे पर्वत दीवारकी तरह अडिग खड़े है। बादलोंका यह महासागर इनसे टकराता है। इसके परिणामस्वरूप खासी पहाड़ोंमें चेरापूंजीमें ८०० सेंटीमीटर अथवा उससे भी अधिक बरसातके मानो प्रपात गिरते हैं।

जब यह बरसाती पवन बंगालके उपसागर परसे गुजरता है तब इसकी गहराई या मोटाई छः किलोमीटर होती है। पर इन पहाड़ोंसे टकराकर इनकी मोटाई कई गुना बढ जाती है। आसामके पहाड़ोंको लांघकर ब्रह्मपुत्रके मैदानी नम प्रदेश पर बरसकर मेघराजाकी सवारी आसामी हिमालयकी गगनचुंबी पर्वतमालाओंमें जा उतरती है। अब बरसाती पवन हिमालयमें उसके तराईवाले प्रदेश और ब्रह्मपुत्र-गंगा जमुनाके मैदानी प्रदेशमें मुडकर आगे बढता जाता है और बरसता भी जाता है। जैसे जैसे वह आगे बढता है वैसे बरस जानेके कारण इसका जोर कम होता जाता है। यह बरसाता पवन ठीक पंजाब, जम्मू और कश्मीरकी घाटियों तक पहुँचता है। इसीकी एक शाखा कभी राजस्थान पर होकर गुजरातमें सौराष्ट्रके किनारे और कच्छ तक

पहुँचती है। उस समयका दृश्य दर्शनीय होता है। नीचे नैऋत्यमें समुद्र पर टकराकर पवन बहता है और कभी-कभी झडी भी बरसा जाता है, तब दूसरी तरफ पूर्वमें बरसाती बादलोंके दल चढ आते है और वह घटाटोप आकाशमें लगातार मूसलाधार वर्षा करता है। बादलोंका यह पूर्वी दल खास करके दोपहरके बाद चढ आता है और रात्रिको देर तक वर्षा करके, धरतीकी प्यास बुझाकर, सुबह आकाशको पुन स्वच्छ कर देता है। बंगालके उपसागर परसे आते बरसाती प्रवाहकी एक शाखा अरावली पर्वतमालाके पूर्वकी ओरसे राजस्थानको भी तृप्त कर देती है।

भारतमें नैऋत्यके बरसाती पवनका बडा ही महत्त्व है। क्योंकि देशमें जो कुल वर्षा होती है उसकी ९० प्रतिशत वर्षा नैऋत्यके चौमासेमें अर्थात् जूनसे सितम्बर तक होती है। लका और केरलमें तो मई महीनेके आखिरमें ही चौमासा शुरू हो जाता है और जैसे जैसे सूर्य उत्तरमें कर्कवृत्तकी तरफ खिसकता जाता है वैसे तापमानका पट उत्तरकी ओर बढता जाता है। वहाकी हवाका दबाव घटता जाता है और बरसाती प्रवाह उस ओर आगे बढता जाता है। कभी ऐसा भी होता है कि अभी दक्षिणमें तो चौमासा शुरू भी न हुआ हो और उत्तरमें मेघराजा कडाकेके धडाकेके साथ बरस पडे हो।

ऊचे तापमानमें पानीकी बडी तेजीसे वाष्पीभवन होता है। इस समय कभी-कभी समुद्रके ऊपरके वातावरणमें हवाके नमी भरे कम दबाव चक्र (depressions) उत्पन्न होते है। उत्तरमें आसाममें तथा हिमालयकी पर्वतमालाओमें तथा पूर्वमें उडीसाकी पर्वत श्रेणियोंके कारण बंगालके उपसागरके उत्तरी भागके वातावरणमें ऐसे कम दबाव चक्रवाले क्षेत्र उत्पन्न हो जाते हैं। इस समय हवाका दबाव बहुत कम होता है अत आसपासके क्षेत्रोंमें हवा यहा पर घुस जाती है।

यह कम दबाववाले चक्र हवाको वर्तुलाकारमें घुमाते हैं। इससे उनकी नमी ठडी हो जाती है और बादल बनकर बरस जाती है, वे आगे बढते हैं और उनकी जगहको भर देनेके लिए बरसाती प्रवाह उनके पीछे पीछे घुस आता है।

ऐसा अरब सागरमें नही होता क्योंकि वहा ऊचे पहाड नहीं है। कभी कभी बंगालके उपसागरसे ऐसे कम दबाव चक्र गुजरात तक वर्षा ले आते है। कभी कभी अरब सागरसे भी ऐसे कम दबाव चक्र गुजरातकी ओर आते है। जैसे ऊपर बताया जा चुका है कभी कभी उत्तर गुजरात कच्छ तथा सौराष्ट्र पर से बरसाती पवन टकरा जाते हैं और उनसे भी बरसात हो जाती है। यो इन प्रदेशो पर अच्छी बरसात होनेकी परिस्थितिया कम ही अनिश्चित होती है।

भारतका हवामान भारतके भूगोल द्वारा बना कोई स्वदेशी हवामान नही है। अफ्रीकासे हिंद चीन और दक्षिण गोलार्धमें हिंद महासागरमें प्रवर्तित हवामानकी परिस्थितियोका भारतके हवामान पर काफी गहरा असर होता है। इससे हमारे देशमें प्रतिवर्ष औसतन जितनी बरसात होनी चाहिए उसमें तीन तरहके विक्षेप आते है (१) सारे देशमें चौमासा देरसे शुरू हो और जल्दी पूरा हो (२) चौमासा समय पर शुरू तो हो जाए पर फिर बरसात आनेमें विलम्ब होता रहे या बरसात बद हो जाए यानी चौमासा जल्दी खत्म हो जाए जिससे चौमासेकी फसल कमजोर हो और जाडेकी फसल निष्फल जाए और गरमीमें पानीकी तगी हो। (३) हो

सकता है कि देशके किसी भागमें चौमासा ज्यादा मुद्दतके लिए चलता रहे और अच्छी बरसात हो जबकि देशके और हिस्सोंमें मेघराजा रूठ जाएँ।

इस प्रकार, हमारे देशके किसी न किसी हिस्से पर ऐसा कोई न कोई विशेष आता ही रहता है।

जूनकी २१ ता०को सूर्य कर्कवृत्त पर आता है। तब तक कर्कवृत्त और हिमालयके दरमियानका सिंधु-गंगा-ब्रह्मपुत्रका मैदान खूब तप जाता है। इससे यहांका दबाव कम से कम होता है। ऐसे समय एक तरफसे अरब सागरका किनारा पार कर आनेवाला भारी बरसाती पवन तथा दूसरी तरफसे बंगालके उपसागरका किनारा पार करके आनेवाला पवन दोनों गंगा-यमुना परके आकाशमें आपसमें टकरा जाते हैं। आसामके ईशान कोन पर हिमालय अचानक मोड लेकर लगभग समकोण बनाकर ब्रह्मदेश (बर्मा)की तरफ मुड जाता है। अतः बरसाती हवाका प्रवाह इन दोनों तरफकी पेटीनुमा ऊँची दीवारोंसे टकराकर गंगा यमुनाके मैदानोंकी तरफ मुड जाता है। वहां हवाका दबाव बहुत कम होता है। यों तो भरतखंडमें सबसे अधिक गरमी राजस्थानके रेगिस्तानमें और वायव्यके प्रदेशोंमें होती है गंगा यमुना ब्रह्मपुत्रके मैदानमें नहीं। इसीसे हवाका कमसे कम दबाव तो पश्चिम पाकिस्तान व राजस्थानके रेगिस्तानमें होता है। हवाका दबाव 'मिलिबार'में नापा जाता है। जुलाई महीनेमें जब केरल मलयानिलकी शीतलताका अनुभव करता है तब वहांकी हवाका दबाव १०१० मिलिबार होता है, जब कि गुजरातमें १००१ से १००३ राजस्थानमें ९९७ और पश्चिमी पाकिस्तानमें यह उससे भी कम होता है।

दक्षिणमें विन्ध्याचल पूर्वमें आसामके पहाड और उत्तरमें हिमालय, ऐसी तीन दीवारोंके बीच आये गंगा यमुनाके मैदानमें टकराते इन बरसाती प्रवाहोंके कारण वहां एक अनोखे हवा मानका सृजन होता है। उसकी पश्चिमी दिशा खुली होती है। इन तीन दीवारोंके बीच जैसे जैसे बरसाती हवा घूमती जाती है वैसे वर्षा होती रहती है। उसके बीच जो कम दबाव चक्र गुजरते रहते हैं वे चौमासेका अधिक जोरदार बनाते हैं। ये कम दबाव चक्र, जैसे हमने ऊपर बताया, बंगालके उपसागरके उत्तरार्धमें आते हैं। इस प्रकार मेघराजाकी सवारीको लेकर आनेवाले कम दबाव चक्र आशीर्वाद रूप हैं। अगर इन कम दबाववाले चक्रोंका निर्माण न हो और ये बादलोंको न ले आए तो वर्षा ऋतु बडी अनिश्चित हो जाती है। अति वृष्टिके लिए ये कम दबाव चक्र जिम्मेदार होते हैं तो अकालके लिए भी इनका अभाव ही जिम्मेदार होता है।

सितम्बरकी २३ ता०को सूर्य विषुववृत्तको लांघकर दक्षिण गोलार्धमें प्रवेश करता है। तब अक्टूबरमें पवनकी दिशा उल्टी (विरुद्ध दिशामें) हो जाती है। उत्तर गोलार्धकी हवाका प्रवाह दक्षिण गोलार्धकी तरफ बहने लगता है। समुद्रमें ज्वार आने पर पानी किनारे तक आकर भाटा होने पर जिस प्रकार किनारेसे दूर चला जाता है उसी प्रकार हिमालय तक चढ आये नैऋत्यके बरसाती पवन लौटने लगते हैं।

हिमालयके उत्तरका प्रदेश अक्टूबरमें ठंडा हो जाता है। परन्तु भरतखंडके और प्रदेशोंमें अभी शीतलता नहीं आती। दिन तपते हैं और हवामें भी बहुत नमी होनेसे खूब उमस होती

है। उत्तरमे पंजाबसे लेकर दक्षिणमें कन्याकुमारी तक दैनिक औसतन तापमान २५ से २५.७ अंश से० या अधिक रहता है। उस समय, अर्थात अक्टूबरमें, लगभग सारे भरतखंडका तापमान एक सरीखा रहता है। इसमें ज्यादा फर्क नहीं होता और इससे हवाका दबाव भी लगभग सभी जगह एक सा रहता है। सिर्फ आसाममें कुछ अधिक होता है। इससे आसामकी ठंडी हवा बाकी भरतखंडकी तरफ बहने लगती है। आसाम ईशानमें है अतः यह बरसाती प्रवाह इशानी प्रवाहके नामसे पहचाना जाता है। जबसे शुरू हुआ नैऋत्यका चौमासा खतम हो जाता है और यह बरसाती इशानी प्रवाह आगे बढ़ने लगता है। इस समय जाड़ा शुरू हो जाता है।

जिस तरह भाटेमें समुद्रके उतरते पानीमें भंवर होते हैं उसी तरह अक्टूबरमें नैऋत्यका चौमासा विदा होता है तब भरतखंड पर हवाकी दिशा अनिश्चित हो जाती है। हवाका प्रवाह एक सरीखा एक ही दिशामें चौबीसों घंटे नहीं रहता। २४ घंटोंमें हवाकी दिशा बदलती रहती है। भिन्न भिन्न स्थानोंमें एक ही समयमें अलग अलग दिशामें पवन बहते हैं। बंगालके उपसागरमें हवाका दबाव कम हो जानेसे उस समय आसामकी तरफसे अधिक दबाववाली हवा वहां घुस आती है। वह समुद्रमेंसे अधिक नमी लेती है और उड़ीसा आन्ध्र तथा मद्रासमें जाड़ेकी बरसात होती है। अगर अनुकूल कम दबाव चक्र पैदा हो तो आंधीके साथ भारी बरसात होती है। १९६७के अक्टूबरमें ऐसा बरसाती आंधीने उड़ीसामें जानमालको भारी नुकसान किया था और समुद्रमें अनेक नौकाओंको डुबा दिया था। जब कम दबाव चक्र उत्पन्न होते हैं तब उपसागरमें कम दबाववाली हवाके आसपास भारी दबाववाली हवा चक्कीकी तरह घूमने लगती है और साथ ही चक्रगतिमें घूमते ये कम दबाव चक्र खिसकते खिसकते आगे भी बढ़ते जाते हैं।

नवम्बरमें हिमालयके उत्तरमें जाड़ा होनेसे ठंडी हवाका दबाव बढ़ जाता है और पवन दक्षिणकी तरफ बहने लगता है। बंगालके उपसागरमें कम दबाववाली हवाका क्षेत्र उत्तरकी तरफसे आनेवाली ठंडी हवाके दबावके कारण और भी दक्षिणकी तरफ धकेल दिया जाता है और उसके आसपास अपेक्षाकृत ठंडी भारी हवा वर्तुलाकारमें घूमने लगती है। वातचक्र-बवण्डर भी पैदा हो जाते हैं। ऐसा होना जरूरी भी है क्योंकि उत्तर भारतमें जाड़ेमें जब हवा सूखी होती है तब इन बवंडरोंके असरसे उड़ीसा, आंध्र, मद्रास और केरलमें अच्छे प्रमाण में बरसात होती है। कुछ राज्योंमें वर्षाकी अधिकतम बरसात इसी ऋतुमें होती है अगर ऐसा न हो तो अकाल पड़ जाए।

इशानका चौमासा आता है तब सूखी हवा और नमीवाली हवाके प्रवाह आपसमें टकराने लगते हैं। तब अनुकूल परिस्थितियां हों तो बरसातके तूफान भी होते हैं। उनमेंसे कुछ तो विनाशकारी बवंडरका रूप भी धारण करते हैं। अगर ज्वारके समय पर झंझावातके साथ तूफानी बरसात किनारा लांघकर धरती पर आ जाए तो प्रकृति पागल बनकर अति भयंकर विनाश करती है। तूफानी पवनोंसे धकेली गयी ज्वारकी लहरें अपना मर्यादा छोड़कर धरती पर चढ़ आती हैं और धरती परसे समुद्रकी ओर जाता बाढ़का पानी गुजरकर समुद्रमें नहीं गिर सकता। विनाशकारी तूफानोंके बाद कुछ ही दिनोंमें हम इस घटनाको भूल जाते हैं पर यदि यह विनाश हमने अपनी आंखोंसे देखा हो तो इसे भूला नहीं जा सकता। १९६६में ऐसे ही बंगाल तथा पूर्व पाकिस्तान पर इसी प्रकारके झंझावातोंने आक्रमण किया था।

अगर सम्भम यदि ज्वारके समय बवडर उठा हो तो वह समुद्रकी प्रचड जलराशिको ज्वार और पवनकी सहायतासे खभातकी सँकरी होती खाडीमे धक्ल देता है जो किनारेके अदरके भागम जाकर खेती लायक जमीनको भी खराब कर देती है।

हवामान पर भूपृष्ठ भागकी आकृतिका भी असर होता है। पहाडाकी ऊँचाई और दिशा बरसातके बँटवार पर परिणामकारी असर डालती है। धरतीकी आकृतिका असर कम दवाव चक्रों पर भी होता है। पवनकी दिशा और गति पर भी धरतीकी आकृतिका असर होता है। हिमालयम जब हजार मिलीमीटरसे अधिक बरसात होती है तब उसके ही सायम स्थित तिब्बतको बरसात नहीं मिलती। हमारे नजदीक ही का उदाहरण है। खडाला घाटमे ८,००० मिलीमीटरसे भी अधिक बरसात होती है जबकि घाटकी दूसरी तरफ पूनामे सिर्फ ७०० मिली मीटर बरसात होती है।

हिमालयकी गगनचुबी पवतमाला जाडे म साइबेरियासे आते ठडे पवनोको न रोकती होती तो कमसे कम विध्याचल तक हिमवर्षा होती। उत्तर अमरिकाम ऐसा होता है। वहा उत्तरी ध्रुव प्रदेशामसे आते ठडे हिम भरे पवनाको रोकनेके लिए उत्तरम कोई भी पवतमाला नही है। इससे ठडा पवन ठीक मेक्सिकोकी सरहद तक पहुच जाता है।

जसे कम दवाव चक्रके कारण नमीवाली हवा ऊपर चढ जानेसे जमकर बरस पडती है उसी प्रकार नमीवाली हवा ऊँचे पवतो पर भी चढने लगती है। तब नमी जमकर अधिकाधिक वर्षा होने लगती है। सौराष्ट्रम गिरिनार राजस्थानम आबू दक्षिणम सह्याद्रि या पश्चिमी घाटकी पवतमालाएँ तथा उत्तरम हिमालय इसके प्रत्यक्ष उदाहरण है। गगा यमुना और पजाबके मैदानाम बरसात कम होता है पर हिमालयम जसे जैसे ऊपर जाए वैसे वर्षा भी बढती जाती है। धरतीकी आकृति हवामान पर कितना असर करती है इसका यह दृष्टात है।

सिंध-पजाबके मदानी प्रदेशाके वायव्यम और पश्चिमम क्रमश बलोचिस्तान तथा अफगानिस्तानकी पवतमालाएँ फक्कर दासे छ किलोमीटर ऊँची दीवारा सी खडी है। ये दीवार ईरान और अफगानिस्तानमेसे आनेवाले जाडेके पवनाको निचाईम रोकती है। भूपृष्ठकी यह रचना उत्तरम यहा मध्यम श्रेणीके कम दबाव चक्र रचकर जाडेकी बरसात देती है जो गहू तथा रबी-फसलके अन्य धान्यके लिए बहुत अच्छी होती है।

बलोचिस्तानके पवत, समुद्र तक न पहुँचकर पश्चिमकी ओर मुड जाते है और समुद्रके समानान्तर एक से डेढ किलोमीटर ऊँची दीवार बनाते है। यह भूपृष्ठ रचना उत्तरी अरब सागरम शीतकालीन कम दबाव चक्रकी रचना करती है। ये जब पूव अथवा ईशानकी तरफ बढते हैं तब गुजरातम महावट होती है।

शीतकालीन चौमासके समय आसाम-ब्रह्मदेशकी पवतमालाएँ भी कम दबाव चक्र तथा वातचक्रकी रचना करनेम सहायता देती है, जिससे केरलसे उडीसा तक शीतकालीन बरसात होती है। परन्तु गुजरातम पवतमाला न होनेसे जिस तरह उसे नक्षत्रयके चौमासेका लाभ नही मिलता उसी तरह ईशानकी बरसातका भी शायद ही कभी लाभ मिलता है। परन्तु हमने देखा है कि राजस्थानम अरावली पवतमालाओने निचाई डेढ किलोमीटरसे कम ऊँचे होने पर भी बरसात पर गणना योग्य असर करते है। वे नक्षत्रयके बरसाती प्रवाहके आडे नही, पर समानान्तर

है। अत इन वरमाती पवनाका विशेषतया नही राक सकत। फिर भी उनके ऊच गिखरा पर भटकते वादल वरसत जात है। परिणामस्वरूप आवम १२५ सटामीटरस अधिक वरसात होती है जवकि अरावलीके पश्चिमके सपाट प्रदेशम वरसात क्रमस कमतर होती जाकर आगिरम उधर रेगिस्तान वन जाता है। अरावलीके पश्चिमम वरसात घटत घटत २० सेंटी० तक आ जाती है।

जाडम हिमाल्यम सव हिमवर्षा होती है । इसीसे हिमाल्यस आनवाली हमारी सभी नदियाका पानी मिल्ता रहता है। हिमालयम जा वफ पटती है उसका पानी राजस्थानके रगिस्तानम नहरा द्वारा लाया जा सकता है।

हिमालयम हिमप्रपाके रूपम शीतकालीन वरसात होती है । पर गुजरात या राजस्थानम इतन ऊँचे पवत न हानेमे गुजरातको इस प्रकारकी वरसातका लाभ नही मिल्ता । पश्चिम हिमाल्यम जस जसे नीच उतरे और पूवकी आर जाएँ वस यह शीतकालीन वरसात कम हाती जाती है। परतु वगालम वढती जाती है क्याकि वगालके उपसागरकी नमीवाली हवा इन कम

दवाव चक्रोंसे यहा सिंच आती है। पजावसे विहार तक यह वरसात न्यूनाधिक प्रमाणम वरसती है। राजस्थान या गुजरातम शायद ही शीतकालीन वरसात या महावट हाती है।

जाडेमे पश्चिमसे आते कम दवाव चक्रकी भाति वगालके उपसागरमे उत्पन्न होने कम दवाव चक्र भी पूर्वी घाटाके ऊँचे शिखरो पर अधिक वरसात लाते है। पर अन्दरके मदानको इसका लाभ कम मिलता है। फिर भी नीलगिरि पवतके ऊँचे हानसे उसका कभी-कभी जाडेम काफी अच्छी वरसात मिल जाती है। इसीसे अपने नामके अनुसार य नीलगिरि पवत वारहो महीने मरसब्ज रहते हैं। यह शीतकालीन वरसात आन्ध्र और मद्रास राज्योंकी चावलकी खेतीमे समृद्धि प्रदान करती है।

हमने देखा है कि शीतकालीन तथा चामासेके वरसाती प्रवाह कम दवाव चक्र और वातचक्रो पर निभर रहते है। य कम दवाव चक्र उत्पन्न न हो तो अनावृष्टि हो अधिक हो तो अतिवृष्टि हो। कम दवाव चक्र वननकी अवधिमे विलम्ब हो तो वर्षाऋतु छिन्न भिन्न हो जाए और वरसात आनमे विलम्ब होनसे फसल सूख जाए। राजस्थान गुजरात, महाराष्ट्रमे दक्षिणके उच्च पठार तथा मध्यप्रदेशमे सौ प्रतिशत अतिवृष्टि भी हो सकती है और लगभग सौ प्रतिशत अनावृष्टि भी हुई है।

है। अन इन बरसाती पवनाको विशेषतया नही रोक सक्ते। फिर भी उनके ऊचे शिखरा पर भटक्त बादल बरसत जात है। परिणामस्वरूप आवम १२५ सेंटीमीटरसे अधिक बरसात होती है जबकि अरावलीके पश्चिमके सपाट प्रदेशम बरसात कमसे कमतर होती जाकर आखिरम उधर रेगिस्तान बन जाता है। अरावलीके पश्चिमम बरसात घटते घटते २० सेंटी० तक आ जाती है।

जाडेम हिमालयम खब हिमवषा होती है । इसीस हिमालयसे आनेवाली हमारी सभी नदियोको पानी मिलता रहता है। हिमालयम जो बफ पडती है उसका पानी राजस्थानके *रेगिस्तानम नहरो द्वारा लाया जा सकता है।*

हिमालयम हिमवर्षाके रूपम शीतकालीन बरसात होती है । पर गुजरात या राजस्थानम इतन ऊचे पवत न होनस गुजरातको इस प्रकारकी बरसातका लाभ नही मिलता । पश्चिम हिमालयम जसे जस नीचे उतरे और पूवकी ओर जाएँ वस यह शीतकालीन बरसात कम होती जाती है। परन्तु बगालम बढती जाती है क्योकि बगालके उपसागरकी नमीवाली हवा इन कम
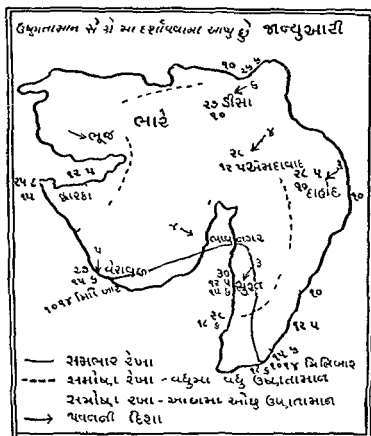
दबाव चक्रोंसे यहां खिंच आती है। पंजाबसे बिहार तक यह बरसात न्यूनाधिक प्रमाणमें बरसती है। राजस्थान या गुजरातमें शायद ही शीतकालीन बरसात या महावट होती है।

जाडेमें पश्चिमसे आते कम दबाव चक्रकी भांति बंगालके उपसागरमें उत्पन्न होते कम दबाव चक्र भी पूर्वी घाटोंके ऊँचे शिखरों पर अधिक बरसात लाते हैं। पर अन्दरके मैदानको इसका लाभ कम मिलता है। फिर भी नीलगिरि पर्वतके ऊंचे होनेसे उनको कभी कभी जाडेमें काफी अच्छी बरसात मिल जाती है। इसीसे अपने नामके अनुसार ये नीलगिरि पर्वत बारहों महीने सरसब्ज रहते है। यह शीतकालीन बरसात आन्ध्र और मद्रास राज्योंको चावलकी खेतीमें समृद्धि प्रदान करती है।

हमने देखा है कि शीतकालीन तथा चौमासेके बरसाती प्रवाह कम दबाव चक्र और वातचक्रों पर निर्भर रहते हैं। ये कम दबाव चक्र उत्पन्न न हों तो अनावृष्टि हो अधिक हों तो अतिवृष्टि हो। कम दबाव चक्र बननेकी अवधिमें विलम्ब हो तो वर्षाऋतु छिन्न भिन्न हो जाए और बरसात आनेमें विलम्ब होनेसे फसल सूख जाए। राजस्थान गुजरात, महाराष्ट्रमें दक्षिणके उच्च पठार तथा मध्यप्रदेशमें सौ प्रतिशत अतिवृष्टि भी हो सकती है और लगभग सौ प्रतिशत अनावृष्टि भी हुई है।

अब हम ग्रीष्म ऋतुके हवामानकी बात करें। गुजरात उत्तर अक्षांश २० और २५ के बीच है। यानि वह विषुवत्वृत्तसे बहुत दूर नहीं है और जहाँ सूर्य माथे पर आता है ऐसा कर्कवृत्त कच्छमेंसे गुजरनेके कारण मार्चसे अक्टूबर तक गुजरात गरम ही रहता है। डांगके सापुतारा और गिरनारके शिखरोंको छोड़कर गुजरातमें कहीं भी गणना योग्य ऊँचाईवाला प्रदेश नहीं है। अतः वहाँ भीतरी प्रदेशोंमें गरमी अधिक होती है। गुजरातको भारतमें सबसे लम्बा सागर किनारा मिला है। इसमें किनारेका भाग गरमीमें भी शीतल होता है। यों तो उत्तर गुजरात तथा कच्छमें मई जूनमें तापमान ४५ सें० (११५ फा०) से लेकर ४७ सें० (११८° फा०) तक पहुँचता है। भुज राजकोट तथा अहमदाबादका विक्रम ४७° सें० (११८ फा०) है डीसाका ४४.५ सें० (११२° फा०)। परन्तु जैसे जैसे हम समुद्रके नजदीक जाते हैं ग्रीष्ममें भी तापमान घटता जाता है। भावनगर समुद्रसे थोड़ी ही दूरी पर है। उस पर धरती परसे गरम हवा बहती है इससे उसने गुरुतम तापमान ४६ सें० (११६° फा०)का अनुभव भी किया है। जबकि जामनगर और वेरावल ४३ सें० (१०९ फा०) और द्वारका ४२ सें० (१०८ फा०)से अधिक उष्णताका अनुभव नहीं करते। पोरबन्दर चोरवाड मरोली और डुम्मसमें गरमीमें भी तापमान कम रहता है। परन्तु सूरत और बलसाड़में तापमान ४४° सें०से ४६ सें० (११६°–११५° फा०)

तक पहुँचता है। गिरनार पर, सापुतारा पर तथा गुजरातकी सीमाके पास आबूपर ग्रीष्ममें भी अपेक्षाकृत ठंडक रहती है।

वृक्षोंसे ढँकी पृथ्वी ग्रीष्ममें भी तप नहीं जाती। साथ ही, जो बाहरकी हवा वृक्षोंमेंसे गुजरती है वह नमी युक्त पत्तोंके संपर्कमें आनेसे ठंडी हो जाती है। संपूर्ण डांग प्रदेश समुद्रसे दूर होने पर भी, समुद्रके करीब स्थित सूरत और बिलीमोराकी अपेक्षा यहाँ जंगल प्रान्तमें बहुत कम गरमी लगती है। दक्षिण गुजरातकी अमराइयोंमें गरमीका अनुभव कम होता है। परन्तु सौराष्ट्र और कच्छकी नग्न धरती इस वक्त खूब गरम हो जाती है।

नवम्बरसे इस परिस्थितिमें परिवर्तन होने लगता है। सूर्य दक्षिण गोलार्धमें मकरवृत्तकी तरफ जाने लगता है। यद्यपि उत्तर गुजरातकी सूखी धरती जाड़ेके प्रारम्भमें भी गरम होती है, फिर भी रात्रिको जल्दी ठंडी भी हो जाती है। उत्तर गुजरातने कई बार भयंकर शीतका अनुभव किया है और हिमके कारण कई बार उसकी खेती बरबाद हो गई है। अहमदाबाद तथा जामनगरका २° सें० (३६° फा०) भुजका १° सें० (३४° फा०), दाहोदका ०° सें० (३२° फा०) राजकोटका ०° सें० (३२° फा०) और डीसाका २° तापमानका अनुभव उल्लेखनीय है।

पानीसे जिस प्रकार ग्रीष्ममें तपनेमें देर लगती है उसी प्रकार जाड़ेमें ठंडे होते भी समय लगता है। इससे समुद्र किनारे जैसे अधिक गरमी नहीं लगती वैसे ही अधिक ठंडी भी नहीं लगती। सौराष्ट्रके समुद्रके किनारे पर जाड़ेमें तापमान शायद ही १०° सें० (५० फा०) से नीचे जाता है, परन्तु वडोदरा और सूरत समुद्रसे अधिक दूर न होने पर भी जाड़ेके दिनोंमें क्रमसे -१° सें० (३० फा०) और ४° सें० (४०° फा०) का अनुभव कर चुके हैं।

गरम हवा पतली होती है अतः उसका दबाव कम होता है। इसकी अपेक्षा ठंडी हवा वजनदार होती है। जिन जिन स्थानों पर हवाका समान दबाव होता है उन्हें हवामानके नक्शों पर समान दबाववाली रेखाओंसे जोड़ दिया जाता है। संसारमें कहीं भी हवाका दबाव ८८७ मिलिबार (२६.१ इंच) से कम हुआ अभी तक नापा नहीं गया। जाड़ेमें ठंडसे भारी बनी हवाका दबाव जनवरीमें गुजरातमें १०१६-१०१७ मिलिबार नापा गया है। जब कि ग्रीष्ममें गरम होकर पतली हुई हवाका दबाव घटकर गुजरातमें ९९९-१००३ मिलिबार हो जाता है।

हवाके कम दबावसे कम दबाव चक्र उत्पन्न होते हैं। ये अगर समुद्रकी तरफसे आते हों तो बरसात लाते हैं। गुजरात और कच्छने असंख्य अकालोंका अनुभव किया है। कच्छमें तो अकाल नियम ही है 'सुकाल' अपवाद ही समझा जाता है। गुजरातमें बरसात पर भरोसा नहीं किया जा सकता। गुजरातने जल प्रलयोंका भी अनुभव किया है और अकाल भी देखे हैं परन्तु हवामान कोई स्थानिक घटना नहीं है। उसका संचालन तो सूर्य करता है। इसीसे सारे संसारके प्रदेशोंके तापमान और वातावरणके दबावके आधार पर हवामानकी पूर्व सूचनाएँ देनी पड़ती हैं। यह विद्या अच्छी तरह विकसित हुई है। फिर भी हवामानकी 'सनक' के बारेमें कुछ भी निश्चय पूर्वक नहीं कहा जा सकता।

फिर भी वायुशास्त्रीके द्वारा दी गई पूर्व सूचनाकी उपेक्षा करनेमें खतरा तो है ही। जब बरसात नहीं होती तब साबरमतीकी धारा पतली तथा सँकरी हो जाती है, उसके सूखे किनारे वाले हिस्सेमें खेती की जाती है। लोग झोपड़ियाँ बाँधकर वहीं रहते हैं। किनारे पर कपड़े धोए

जात है तथा अन्य कई प्रवत्तिया होती है। १९६७ म साबरमतीक उद्गम स्थल पर भारी बरसात पडनकी चेतावनी वायुशास्त्रियाने दी थी इसस साबरमतीम एकाएक बडी भारी बाढ आनेकी सभावना थी पर इस चतावनीक बावजूद लापरवाहीके कारण कई स्त्रिया इस बाढम फस गई थी।

हवामानकी आगाही सुनकर सावधान हो जाना विमाना जहाजा और किसानाक लिए अति आवश्यक है अयथा जान व माल खतरेम पड जात ह। जब वायुशास्त्री महाबटकी पूव सूचना दते है तब खलिहानाम पडे अनाजका सुरक्षित जगह ले जानकी सावधानी न बरतनवाले किसानका उस अनाजस हाथ धाना पडता है। वेधशालाआको सारे समारक विमाना और जहाजामें हवामानक बारम सूचनाएँ मिलती रहती है। उनके पास जा अपनी सूचनाएँ आदि हाती ह उनका भी य आपसम आदान प्रदान करत हैं। व देशक प्रत्यक स्थानमे पवनकी दिशा हवाका दबाव तापमान बादल नमीका प्रमाण आदिकी सूचनाएँ इकट्ठी करत है। इन सभीका अध्ययन करनके उपरान्त ही वायुशास्त्री कहा कसा हवामान रहगा इसकी पूव सूचना देत है। दुनियाम छाटी-बडी हजारा वेधशालाए हैं सभी आपसम सूचनाआका आदान प्रदान करती हैं। राडार स्टेशन कम दबाव चक्रकी सावधानीस निगरानी करत हैं। इनस प्राप्त सूचनाएँ रेडियो द्वारा प्रसारित की जाती हैं। अब ता पथ्वीके आसपास भ्रमण करनवाली ऐसी वेधशालाआका अवकाशम भेजा जाता है जो दुनिया भरके हवामानकी ध्यानस निगरानी कर सकें। व अवकाशमसे पथ्वीके हवामानकी तस्वीर भी भेजती है। इन्ह देखकर वायुशास्त्री तुरन्त ही कह सकत ह कि कहा पर हवामान अच्छा रहगा कहा खराब रहेगा और कहा बरसात बवडर या आधी आ रही है।

हवामानकी पूव सूचना किन किन बाता पर आधार रखती है यह हमने देखा। साथ ही ऐसी पूव सूचनाए दनेकी भारतम किस प्रकारकी व्यवस्था है तथा इसम कौन कौनसे वज्ञानिक साधन उपयागम लाये जात हैं यह भी जान लेना आवश्यक है।

भरतखडम हवामानका निरीक्षण करक उसका लेखा रखनेका काम १८वा सदीक अन्तिम भागम शुरू हुआ था। उस समय ईस्ट इडिया कम्पनीका राज्य था। माधन सम्पन्न पहली वेध शालाकी स्थापना मद्रासम सन १७९६ म हुई। उसक बाद १८४० म शिमलाम १८४१म बम्बई (कालाबा)म और १८४७म नीलगिरिम एसी वेधशालाए कायम की गइ। सन १८७४ ७५ इ०म केन्द्र सरकारन प्रान्तीय हवामान विभागाका सयुक्त करके निजा हवामान विभाग शुरू किया। साथ ही समग्र भारतम हवामानके निरीक्षणके लिए व्यवस्था की। इससे निरीक्षण तथा उसका लेखा करनेका काम बहुत व्यवस्थित और एक सरीखा हा गया। उसम समय समय पर सुधार किय गए। आज भारतम ४०० से अधिक स्थलापर हवामानका निरीक्षण हाता है और प्रत्यक निरीक्षण केन्द्र अपनी निरीक्षण सूचनाएँ सबधित वेधशालाआका पहुचाता है।

भारत सरकारक हवामान निरीक्षण विभागका मुख्य केन्द्र नयी दिल्लीम है और प्रादेशिक केन्द्रा, बम्बई, मद्रास नागपुर कलकत्ता और नया दिल्लीम हैं। इन पाचा केन्द्राका काय विभाजन इस प्रकार किया गया है कि प्रत्यक केन्द्र अपन अधीन प्रदशम विमाना, जहाजा रलगाडिया, सन्ग-व्यवहार सिंचाइ बिजलीके कारखाना खती आदिका हवामानकी सूचना और चेतावनी दत रह। भारतकी अय वेधशालाआम महाराष्ट्रम पूना कालाबा तथा

अलीबाग, नीलगिरिमें कोडाइकनाल और आसाममें शिलांगकी वेधशालाएँ महत्त्वपूर्ण हैं। ये वेधशालाएँ अपने प्रादेशिक केन्द्रके अधीन काम करती हैं।

भारतके हवामान पर उत्तर एशिया तथा हिमालयके हवामानका बहुत असर होता है। इसीसे नयी दिल्लीमें उत्तरगोलार्ध पृथक्करण केन्द्रकी स्थापना की गई है। उत्तरगोलार्धके प्रदेशोंमें हवामानकी सूचनाओंका आदान-प्रदान करनेके लिए पाँच विभिन्न केन्द्र हैं। उनमेंसे एक केन्द्रमें दिल्लीका उत्तरगोलार्ध पृथक्करण केन्द्र सूचनाओं वगैराका विनिमय करता है।

पूनामें उष्ण कटिबंधके हवामानके अध्ययनके लिए भी एक संस्था है जो हवामान तथा उससे संबंधित विषयोंमें अनुसंधान करती है।

केरलमें अवकाश अनुसंधानके लिए हमारा 'थुंबा' नामक रॉकेट अड्डा है। उस हवामानसे संबंधित विषयोंमें सहयोग देनेके लिए विशेषरूपसे एक खास विभाग खोला गया है। जब हिन्द महासागर तथा उसके हवामानके अनुसंधानके लिए आंतरराष्ट्रीय कार्यक्रम काम कर रहा था तब उनकी सहायता करनेके लिए बम्बईकी वेधशालामें एक खास विभाग खोला गया था।

बीसवीं सदीकी तीसरी दशाब्दीमें आसमानमें बलून भेजकर वातावरणके ऊपरी स्तरोंमें पवनकी दिशा, गति, नमी और तापमान नापनेका काम शुरू हुआ। तत्पश्चात् बड़े बलूनोंमें मीटियोरोग्राफ नामके यंत्र भेजकर, तापमान और नमी नापनेकी पद्धति अपनायी गयी। दूसरे विश्वयुद्धके बाद अधिकाधिक अच्छी पद्धतियोंके द्वारा इनमें सुधार किये गए। इससे विमानी व्यवहारके शुरू होनेसे इसमें बहुत मदद मिली।

अब हम हवामान नापनेके यंत्रोंका भी कुछ परिचय कर लें।

हवामान पर पवनका असर होता है। पवनकी दिशा और गति नापनेवाले यंत्रको ऐनिमामीटर कहते हैं। उसे सामान्य भाषामें मुर्गा अथवा पवनचक्की या फिरकी, चर्खी आदि नामोंसे पुकारा जाता है। उसमें कटोरीनुमा तीन या चार अर्धगोल चक्राकारमें फिरते रहते
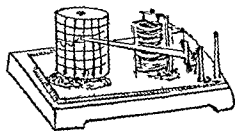
वातावरणके दबावका आलेखन करनेवाला साधन बैरोग्राफ
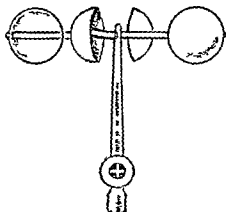
एनिमामीटर
पवनका वेग नापनेवाला साधन एनिमोमीटर
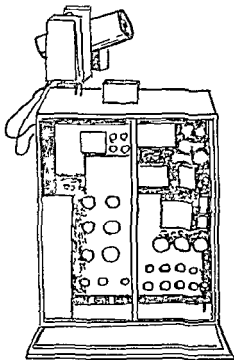
सीलोमीटर

उष्णतामान आलेखन साधन थर्मोग्राफ

हैं। उन्हें पवनगतिमापीटर कहते हैं। पवन इन कटोरियोंमें भर कर उन्हें घुमाता है। एक विद्युत यंत्र इन चक्करोंकी संख्या और गतिका आलेखन करके पवनकी गति बताता रहता है।

दूसरा उपयोगी साधन बरामीटर है। हवाका दबाव यह बरामीटर बताता है। जब दबाव घटता है तब पारा नीचे जाता है और बरसात अथवा तूफानी पवनकी सूचना देता है। दबाव बढ़ जाता है तो वह स्वच्छ सूखी हवा बताता है। हवामें होने इन रोज-ब-रोजके परिवर्तनोंका ग्राफ यंत्रोंमें अपने आप अंकित हो जाता है। इन परिवर्तनोंके आलेखन को बरोग्राफ कहते हैं।
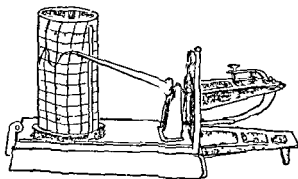
तापमान नापनेके लिए थर्मामीटर चाहिए। पारा शून्यसे नीचे ३८° से० ताप मान पर जम जाता है। अतः जब इससे अधिक नीचेका तापमान नापना होता है तब आल्कोहाल पर आधारित थर्मामीटर उपयोगमें लाये जाते हैं जो शून्यसे नीचे ११४° से० तकका तापमान नाप सकते हैं। थर्मामीटर पर आधारित थर्मोग्राफ नामक यंत्र, तापमानमें होते दैनिक अंतरका आलेख करता है।

हवामें स्थित सापेक्ष नमीकी मात्राको नापनेके लिए 'गीले सूखे' थर्मामीटरका उपयोग किया जाता है। उसमें एक थर्मामीटरका पारेवाला छोर सूखा रहता है तथा दूसरा छोर

ीला रहता है। दाना थमामीटगम दर्शित नापमानने अतर परसे हाइग्राग्राफ नामक आलेख द्वारा मापेश नमीका नाप मिउ जाता है। वरसात तथा हिम पडनेकी पूव-मूचनाके लिए सापश नमीका जानना अनि आवश्यक है।

वरसात नापनेके माधनको वरसात नापनेकी शीशी या 'रेनगॉज' कहते हैं। इमके कई प्रकार होते है। य वरमानका प्रमाण तो नापते ही हैं साथ ही हिमवपा भी नापते है। य एक विशेप यान्त्रिक रचनाके द्वारा वडी ही सावधानीसे ममय ममय पर आनेवाली वरमातका आलेखन करत जाते हैं।

मीटियाराग्राफ नामका यत्र चनुर्विध काम करता है। वह भी पवनकी गति तथा दिशा, वरसात आदि विपयाका लेखा करता है।

वरसातकी पूवसूचना देनके लिए वादलाकी ऊँचाई नापना जरूरी हाता है। विमान वादलाकी निचली सतह तक उडकर आल्टीमाटरके द्वारा उनकी ऊँचाइ नापता है अथवा इसके लिए धरती परसे वलून छाडे जाते हैं। ये वलून इस प्रकार फुलाए जात है कि एक निश्चित गतिसे ही य ऊँचे चढे। व जितन ममयम वादलाम प्रवश करते हैं उम समय परसे वादलाकी ऊँचाइ निश्चित की जाती है। रात्रिके ममय क्लिनामीटरके द्वारा वादलाकी ऊँचाइका हिमाव लगाया जा सकता है।

रोज कितने ममय तक धूप रही इसका लेखा मनशाइन टासमीटर नामक साधनम होता रहता है। आकाशम पवनका निरीक्षण छाटे वलून (गुब्बारे)के द्वारा किया जा मकता है। उसके द्वारा भिन्न ऊँचाइया पर वायुकी गति तथा दिशाकी जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

आकाशम विभिन्न ऊँचाइया पर तापमान दवाव और नमी नापनके लिए अब रेडियो साउड पद्धति अपनायी जाती है। उमका रिसीवर धरती पर होता है और ट्रासमीटर एक वलूनकी सहायतासे आकाशम भेजा जाता है। जसे-जसे यह यत्र इन सभी वाताका लेखा तयार करता जाता है वसे-वसे वह विद्युत स्पन्दनोम वदलकर रेडियो तरगा द्वारा नीचे रिसीवर पर अकित करता जाता है। कभी-कभी ता यह रेडियो साउड एक लाख फुटकी ऊँचाई तक भी चढता है।

हवामानके बारेमें जानकारी पानेके लिए बैलूनसे आसमानमें भेजा जानेवाला रेडियो साउन्ड।
रेडियो साउन्डमें स्थित ट्रासमीटर—यह रेडियो सदेशोंसे हवामान के बारेमें जानकारी भेजता रहता है।

ज़ारों साल पहले गुफावासी
ानवों ने गुफाओं में अंकित किये
हिरनों के ये चित्र उनकी
लादृष्टि के द्योतक हैं।

जल फेफड़े (Acqua Lungs) पहनकर समुद्रका तला जाँचता हुआ पनडुब्बा।

२३ : संस्कृति पर भूगोलका असर

डेढ़ लाख वर्ष पूर्वका शिकार करके पेट पालनेवाला निआन्डर्थल मानव

प्रगति उत्क्रान्तिका ही क्रम होती है। मानवकी प्रगति और उसकी संस्कृतिके विकासमें भूगोल अर्थात् धरती, हवामान, पानी और वनस्पतिका बड़ा ही महत्त्वका हिस्सा है। मानव-संस्कृतिकी तीन अवस्थाएँ रही हैं। पहली अवस्थामें वन्य संस्कृति थी, जिसमें शिकार करके पेट भरना तथा प्रजोत्पत्ति करना ये ही आदिमानवकी दो मुख्य प्रवृत्तियाँ थीं।

दूसरी अवस्थामें उसने धर्म पालना सीखा। प्रकृतिकी शक्तिसे प्रभावित होकर, डरकर उसने उनका आदर करना और उन्हें पूजना सीखा। जो अगोचर है उससे डरकर वह उसे भी पूजने तथा प्रसन्न करने लगा। ये बिजली, मेघगर्जना, पानी, प्रेतात्मा, आग आदि भय और श्रद्धाके कारण बने। बाघ, साँप आदि प्राणियोंके भयसे उनके प्रति भी आदर उत्पन्न हुआ। आज भी कुछ लोग साँपकी पूजा करते हैं। शीतला जैसे रोगको माता मानकर पूजते हैं और जब बाघ—सिंह मनुष्यभक्षी हो जाते हैं तब उनमें किसी अनिष्ट प्रेतात्माका वास है, ऐसा मानते हैं। प्रकृतिकी अगोचर और भयजनक शक्तियोंसे डरकर उन्हें प्रसन्न करके उनके कोपसे बचनेके लिए, मनुष्य उन्हें नरबलि, पशुबलि और पक्षीबलि भी देने लगा।

तीसरी अवस्थामें मानवमें ज्ञानका आरम्भ हुआ और वह बुद्धिसे सोचने तथा तर्क करने लगा। इससे, जो प्रगति प्रारम्भके लाखों वर्षोंमें की थी उससे अनेक गुना प्रगति कुछ ही हजार वर्षोंमें उसने कर ली और पिछले दो-तीन सौ वर्षोंमें तो इससे भी अनेक गुना और प्रगति की है।

वन्य संस्कृतिमें मानवने तीन मुख्य सिद्धियाँ पायीं, ऐसा कहा जा सकता है। पहले तो उसने भाषाका विकास किया। जगतमें लाखों प्रकारके जीव हैं तथा उनके स्वर भी हैं, पर भाषा नहीं है। भाषाका अधिकारी तो मनुष्य ही बन पाया है। अग्निका उपयोग उसकी दूसरी सिद्धि

थी। अग्नि कितनी उपयोगी है यह जानकर उसने अग्नि उत्पन्न करना सीखा। इसमें बहुत श्रम और समयकी जरूरत होती थी। इसलिए उसने अग्निको सदा सुरक्षित रखना पसन्द किया। जिस जमानेमें मनुष्यने अग्नि उत्पन्न करना नहीं सीखा था उस समय वह उसे सहेज कर रखता था। उसे गुफाके एकान्तमें अगर कोई भूल हुयी और वह बुझ गयी तो वह एक बड़ी भारी आफत मानी जाती थी। इस संस्कृतिकी तीसरी बड़ी सिद्धि थी—शिकारके लिए अस्त्र तथा शस्त्रोंका निर्माण करना। इसमें मनुष्यने पत्थर और लकड़ीके आगे बढ़कर धनुष-बाणका निर्माण करना सीखा। यह कोई साधारण सिद्धि न थी क्योंकि मनुष्यके सिवा और कोई प्राणी हथियार या औजारका प्रयोग नहीं करता।

संस्कृतिकी दूसरी अवस्थामें मनुष्यने खेती करना सीखा। पशुओंको पालना सीखा और मिट्टीके बरतन बनाना सीखा। पहियेका आविष्कार और आग जलाकर पत्थरोंमेंसे धातु भी निकाली। मानव संस्कृतिके विकासमें यह एक बहुत बड़ा कदम था। यह एक ऐसी महान सिद्धि थी जिससे वह पशु ही नहीं बल्कि पशु जैसे जंगली लोगोंसे और अन्य जातियोंसे भी बहुत आगे निकल गया। पहियेकी खोज प्राचीन इराकके सुमेर प्रजाजनोंने की ऐसा माना जाता है।

अपने विचारोंको वाणी द्वारा प्रकाशित करनेकी भाषाका विकास तो मनुष्यने बहुत प्राचीन कालसे शुरू किया था। पर वह सिर्फ वाणी ही थी। उन सूक्तोंको जाननेका तो केवल सुनकर ही याद रखा जाता था। वंश-परम्परासे ज्ञान सदा चलता रहा। भाषाके मूल रूप रहनेके लिए उसे दृश्य रूपमें लाना जरूरी था। आरम्भमें मानवने संकेतोंसे लिपिका प्रारम्भ किया था। प्राचीन मिस्रकी लिपि संकेतात्मक चित्रलिपि ही थी। लिपिका आरम्भ होते ही मनुष्य पहले मिट्टीकी ईंटों पर फिर पत्थर पर फिर भोजपत्रों पर फिर धातुपत्रों पर तथा अन्तमें कागज पर अपने विचार व्यक्त करने लगा। यह कोई साधारण सिद्धि न थी। पहले मनुष्य जन्म लेता था मर जाता तो उसके साथ उसके विचार भी चले जाते थे। अब आदमीके मर जानेके बाद भी उसके विचार भविष्यकी प्रजाके लिए सुरक्षित रहने लगे। अशोकके शिलालेख आज भी हम पढ़ते हैं।

परन्तु जो कुछ लिखा गया उसकी नकलें जल्दी और आवश्यक संख्यामें करनेकी तरकीब जब तक हाथ न लगी तब तक ज्ञानका प्रचार पाठशालाओं आश्रमों मन्दिरों द्वारा ही अधिक होता रहा। इसमें ज्ञानको पुस्तकोंमें भरनेके बजाय मनुष्योंके दिमागमें ही अधिक भरना पड़ता था। पर जब मुद्रणकला हाथ लगी तब अग्नि और चक्र (पहिये)की खोजको भी मात करने वाली महान क्रांति हुई। फिर तो औजारोंके द्वारा यन्त्र बने, इंजन भी बने। पवन, अग्नि पानी बिजली और अन्तमें अणुशक्ति आदि सभीको मानवने अपनी सेवाके लिए वशमें कर लिया। प्रकृतिकी इन अनन्त शक्तियोंपर स्वामित्व पाकर मनुष्य वामनसे विराट बन गया।

मानवकी इस सांस्कृतिक यात्राके दरमियान अनेक संस्कृतियोंकी परत पर परत चढ़ी है। ये संस्कृतियाँ एक दूसरेसे स्वतन्त्र रूपमें विकसित हुयी थीं। मिस्रमें नीलके किनारे ईराकमें युफ्रेतिस तिग्रिस नदीके किनारे भारतखण्डमें सप्तसिंधुके तट पर और चीनमें ह्वांग तथा यांगत्से नदीके किनारे संस्कृतियोंका उदय हुआ था। इससे पता चलता है कि संस्कृतियाँ नदियोंके किनारे, पानीके आधार पर ही उन्नत हुयी और पनपी है। संसारके प्रथम नगर तथा नगर राज्य भारतके पश्चिममें सुमेर प्रजाने स्थापित किये।

नदी किनारा परसे ही संस्कृतिका विकास इसलिए हुआ कि खेती और पशुपालनके लिए नदी अनिवार्य थी। यहाँ मानवको सिर्फ अपना पेट भरनेके लिए ही अपना समय और शक्तिका उपयोग नहीं करना पड़ता था। आज भी कैनेडाके उत्तरमें एस्किमो तथा यूरोप और रशियाके उत्तरमें लोप लोगोंको अपनी शक्ति और समय, सिर्फ खुराक पानेके लिए शिकार करनेमें ही खर्च करना पड़ता है। इसीसे वे पिछड़े हुए हैं। उत्तर ध्रुव प्रदेशके टुण्ड्रिस्तानमें अनाज उग नहीं सकता और शिकारके लिए प्राणी भी कम है। परंतु लोप लोग रेंडियर नामके साभर हिरनोंके झुंडोंको वहाँकी एकमात्र वनस्पति सिवार पर ही पालते हैं। अतः उन्हें खुराक अपेक्षाकृत आसानीसे मिल जाती है और इसीसे वे अन्य ध्रुवीय जातियोंकी अपेक्षा अधिक सुधरे हुए हैं। इस प्रकार एक प्रजाकी कुछ प्रगति तथा अन्य प्रजाकी पिछड़ी अवस्था उनके अपने प्रदेशके भूगोल, बसनेके स्थान के हवामान तथा वनस्पति व वहाँकी प्राणि-सृष्टि पर आधारित है।

प्राचीन ईराककी प्रजा भी अपनी संस्कृतिका विकास इसलिए कर सकी क्योंकि नदीके पानी से वहां अल्प प्रयत्नसे ही खेती हो सकती थी। अतः उन्हें सोचने विचारनेके लिए काफी वक्त मिलता था। इससे विचारोंको व्यक्त करनेके लिए सुमेर लोगोंने लिपिका निर्माण किया, पशुपालन किया तथा पहियेका व्यवहारमें उपयोग किया और जंगली गधोंको पालकर गाड़ीमें जोता। मनुष्यकी तमाम प्रगति पहिये पर ही आधारित है।

खुराक और वाहनके सुलभ होनेपर इन नगर राज्योंकी प्रजाको अपने आसपासकी दुनियाके बारेमें जिज्ञासा हुयी। उन्होंने विद्या, स्थापत्य, चित्रकला तथा युद्धकलाका भी विकास किया। वे आपसमें लड़े भी। युद्धमें नयी नयी आवश्यकताओंके उपस्थित होनेसे नयी नयी खोज भी होती गयी। इसीसे सुमेर लोगोंने शस्त्रोंके लिए धातुओंकी खोज की। इस तरह धातुविज्ञानका आरम्भ हुआ। विजेताओंने युद्ध-कैदियोंको गुलाम बनाकर गुलामीकी अनिष्ट प्रथा शुरू की। उनकी लड़ाइयां दूसरोंकी अधिक समृद्धिपूर्ण खेतीको हड़प लेनेके लिए था। सुधरी हुई प्रजाने प्रकृतिसे प्रभावित होकर धर्म सम्प्रदाय शुरू किये और देवमन्दिरोंकी स्थापना की। इसके साथ ही धर्मगुरुओंका वर्ग बना जो राज्यकर्ता वर्गके बराबर ही बलवान था।

ऐसा ही मिस्रमें नील नदीके किनारे आर्यावर्तमें सप्तसिंधुके किनारे तथा चीनमें ह्वांग तथा यांगत्सेके किनारे हुआ। खेतीके साथ साथ खेतोंकी सीमाको निश्चित करनेकी जरूरत उपस्थित हुयी इसमेंसे पैमाइश और भूमिति (ज्यामिति)का प्रारम्भ हुआ। खेती द्वारा जीवन स्थिर हुआ, और इससे निवासके लिए मकान बनानेकी कलाका भी विकास होता गया।

मिस्रमें नील नदी न होती तथा ईराकमें यूफ्रेटिस और टिग्रिस नदियां न होती तो वहां पर संस्कृतिका उदय होना ही नहीं। वहां कोई प्रजा न बसती। वहां अरबस्तानके रेगिस्तानोंकी भांति सिर्फ रेगिस्तान ही होता। नदीकी बाढ़के पानीको नहरों द्वारा किनारे परके खेतोंमें लाये जानेके कारण ही इन दोनों प्रदेशोंकी प्रजाएँ लिपि, गणित, खगोल, वैद्यक, रसायनशास्त्र आदि इतना सब दे सकी हैं। आज भी जहां इन नदियोंका पानी नहीं पहुँच पाता वहां रेगिस्तान ही है।

नील नदीका पानी प्राचीन मिस्रके लोगोंको कमसे कम मेहनत पर अधिकसे अधिक खुराक देता था, इससे प्रजाको अन्य प्रवृत्तियोंके लिए खूब समय मिलता था। उन्होंने कल्पनाको विकसित किया। मृत्युके बादके जीवनकी कल्पना की तथा उसे कमसे अधिकसे अधिक सुखी बनाया

जाए इसकी भी कल्पना कर, अपने सभी मुख्य साधनोंको वे मृतदेहके साथ कब्रमें रखने लगे। नहर बाधनमें उन्होंने इजीनियरिंग कौशल्यका विकास किया और उस कलाके परिपाकके रूपमें वहाँकी प्रजाने पिरामिडोंकी रचना की। जिस जमानेमें वाहन या यंत्र नहीं थे उस जमानेमें महाकाय चौकोर पत्थर दूर-दूरसे लाकर पर्वतके समान ऊँचे पिरामिड बनाये गए। इन पिरामिडोंके तहखानोंमें मृतदेह और प्रेतात्माके लिए—जो कल्पनाएँ की गई थीं उन सभी 'जरूरी' वस्तुओंके लिए—विशाल गुप्तखंड बनाये गए। शवको हजारों वर्ष तक सुरक्षित रखनेकी कलामें भी उन्होंने सिद्धि प्राप्त की।

बादमें जब रोमन तथा ग्रीक संस्कृति विकसित हुयी तब मिस्रने उनके सहयोगसे नीलके किनारे अलेक्जेन्ड्रियाका महान विश्वविद्यालय बसाया। एक ओर ग्रीस और रोम तथा दूसरी तरफ भारतके दरमियान मिस्र विद्या और व्यापारकी कडी बन गया। इसके लिए लाल सागरको नहरसे नील नदीके द्वारा भूमध्य सागरके साथ जोड दिया गया। इन कार्यक्षमताओंके पीछे एक ही शक्ति थी और वह थी नील नदीका पानी।

परिस्थितियाँ अनुकूल होने पर भी कुछ स्थानोंमें संस्कृतिका विकास क्यों नहीं हुआ और कुछ स्थानोंमें परिस्थितियाँ कम अनुकूल होने पर भी संस्कृति क्यों फली फूली इसका कोई ठीक उत्तर हम नहीं मिल पाता। परंतु प्रसिद्ध इतिहासकार श्री आर्नोल्ड टायन्बीने कहा है कि परिस्थितियोंने कई प्राचीन प्रजाओंको मौका देकर संस्कृतिके सर्जनके लिए ललकारा। इनमेंसे कुछ प्रजाओंने बीडा उठाकर संस्कृतिका विकास किया तथा वे जंगली अवस्थामेंसे संस्कृत बनी।

संस्कृतिके विकासकी भव्य सवारीमें सिंधु संस्कृतिका स्थान अत्यंत विस्मयकारी है। लगभग पाँच हजार वर्ष पहले ईरानके उच्च प्रदेशोंमेंसे और बलोचिस्तानके पहाडी प्रदेशोंमेंसे, एकके बाद दूसरी लहरके समान विविध जातियाँ शताब्दियों तक आती रहीं और सिंधुके मैदानोंमें बसती गयीं। वे जंगली नहीं थीं। वे ईराककी सुमेर संस्कृतिसे रंगी थीं और सुमेर संस्कृतिको भी मात कर दे ऐसी भव्य संस्कृतिके निर्माणके लिए भारतके तत्कालीन सिंधु प्रदेशमें आ बसी थीं।

सिंधु प्रदेशमें गाँव बसाकर यह प्रजा खेती करने लगी। सिंधुमें बडी बडी बाढ आती और किनारे पर कटी मिट्टी बिछाकर चली जाती। अतः यहाँ पर नाममात्रकी मेहनतसे अतुल फसल होती थी। इससे इस प्रजाने अपना बाकी समय चतुर्दिक प्रगतिमें लगाया। यहाँ उन्होंने ग्राम राज्योंकी रचना की जिनके राज्यकर्ता धर्मगुरु थे। धर्मगुरुओंकी छत्रछायामें समाज व्यवस्था निखरी। वे मिट्टी काम, धातु काम, काष्ठ काम, खेती, पशुपालन, वाहन-व्यवहार, शृंगार, मनोरंजन, व्यापार और उद्योग आदिमें प्रवीण बने। उनके पास चित्रलिपि थी। बादमें सर्वत्र लिपिका विकास किया। वे ताँबे और काँसेसे लेकर सोने और जवाहरात तकके सभी पदार्थोंका उपयोग करते थे।

सप्त सिंधुका प्रदेश कटी मिट्टीका प्रदेश है चट्टानोंसे बना नहीं है। प्राचीन मिस्रकी प्रजाने चूनेके पत्थरोंके द्वारा अपनी इंजीनियरिंग कलाका विकास किया। तब बिना पत्थरके सिंधु प्रदेशकी इस प्रजाने मिट्टी-काममें अपनी कलाका विकास किया। ईराककी सुमेर संस्कृतिमें कच्ची (बिना पकायी) मिट्टीका ही उपयोग होता था। वहाँ बरसात न होनेसे उनके मिट्टी कामके घुल जानेका भय न था। उस समय सिंधु प्रदेशमें काफी अच्छी बरसात होती थी और बाढका पानी भी काफी दूर तक फैल जाता था। इससे सिंधुकी प्रजाने मिट्टीको पकाकर ईंट, बरतन, खिलौने
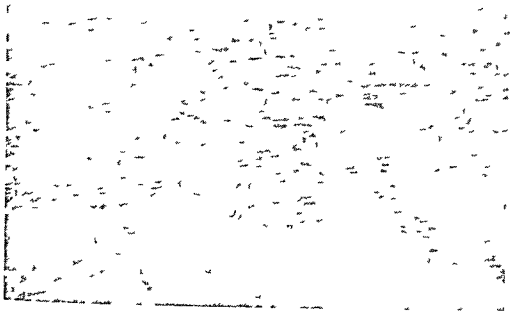
करीब तीनसे पाच हजार साल पुराने सिंधु सस्कृतिके अवशेष मोहन-जो-दडोमें पाये गए।
उस जमानेके लोगोंका नगर आयोजनका ज्ञान कितना अच्छा था, वह इससे ज्ञात होता है।

प्रतिमा आदि अनेक चीज बनाना शुरू किया। उनका सबसे बडा कारनामा था नगरोकी रचना जो उस समय एक नवीन बात थी। आज तक उनके तीन नगर मिले है। सिधमे सिंधुके किनारे मोहन-जो-दडो, वहासे ईशान कोणमे ४०० मील दूर रावी नदीके किनारे हडप्पा और सौराष्ट्रमे खभातकी खाडीके किनारे लोथल बन्दरगाह। ये नाम तो हमने दिये है। इन नगरोमसे कोई दस्तावेज अथवा शिलालेख नही मिले है। आज तक जो वस्तुएँ उधरसे उपलब्ध हो सकी हैं उन्हीसे उनके जीवन-व्यवहारकी कडियोको शृखलाबद्ध क्रमसे जोडनेका प्रयत्न किया गया है।

इटोके नापसे लेकर नगर रचना तकमे जो चौकसी उन्होने बरती थी उससे प्रतीत होता है कि वे इजीनियरिंग विद्यामे पारगत थे। उनके नाप-तौल दशाश पद्धतिमे थे। उस समय आबादी बहुत अल्प थी अत उनके अनुपातमे मोहन-जो-दडो तथा हडप्पाको महानगर कहा जाना चाहिए। क्योकि छ से सात वर्गमीलमे फैले इन नगरोमे सहज ही बीससे पचीस हजारकी आबादी होगी। बारबार आती बाढसे नुकसान न हो इसलिए घरकी दीवारो पर डामर पोता जाता था। ऐसी कुछ दीवारें सुन्दाईमे पूर्ण सुरक्षित अवस्थामे खडी मिली है। चौडे रास्ते पक्की नालिया (गटर), सार्वजनिक स्नानगृह सीधे मार्ग मकानोकी एक सीधी कतारमे निर्माण, हरेक मकानके बीच खुला आगन, खिडकी और अनाज भरनेके कोठार आदि जताते है कि सिंधु सस्कृतिकी प्रजाने समृद्धि

तथा वैभव प्राप्त किय थ। इनके नगर आयोजनमे प्रजाकी सुविधाओ, तन्दुरस्ती और स्वच्छताक पूरा ध्यान रखा जाता था।

सिंधु संस्कृति लगभग छ लाख वर्गमीलके प्रदेशमे फैली थी। खेती और हुनरकी विपु पैदाशके कारण यहाका व्यापार व्यवहार भी बहुत विस्तृत था। वहासे मिले विविध प्राणियाक खिलौने बताते है कि इन्हे बनानेवाले कारीगरो तथा उसका उपयोग करनेवाली प्रजाको पशु पक्षियोका ज्ञान और शौक भी था।

मकान रास्ते नालिया, किले बरतन खिलौने आदि सभी वस्तुएँ मिट्टीसे ही बनायी जाती थी पर ईंटे पकानेके लिए कितनी सारी लकड़ियोका उपयोग होता होगा! सिंधुका प्रदेश उज गया इसके अनेक कारणोमसे कुछ थ वनस्पतिकी बेहिसाब व बल्गाम कटाई, नदियोके बदल प्रवाह और आर्य नामसे पहचानी जानेवाली प्रजाके आक्रमण।

खेती तथा हुनर उद्योगकी पैदावार इतनी अधिक थी कि उनका समुद्र पार भी निर्या होता था। साढे तीन हजारसे साढे चार हजार वर्ष पहले खभातकी खाडीके किनारे लोथल बन्दरगाह देश और विदेशोके साथ व्यापारी संबंध रखता था। खेती और हुनरकी पैदावारक निर्यात यहासे होता था। उसकी गोदी ७१० फुट लम्बी और १२० फुट चौडी थी। उसमे प्रवे करनेका द्वार २३ फुट चौड़ा था। माल चढानेका पुर्जा ८०० फुट लम्बा था। लोथल शहरक आयोजन सुन्दर ढगसे किया गया था। इस व्यापारी बन्दरगाहका अपना एक अलग बाजा भी था।

नदियो के द्वारा पनपी संस्कृतिको यहा पर समुद्रके द्वारा पुष्टि मिली थी। गुजरातसे सौराष्ट्र कच्छ सिंध और बलोचिस्तानके सागर किनारे तक यह प्रजा बसती थी। इसका मतलब यह है कि सिंधु संस्कृति की प्रजा जहाज निर्माण उन्हे चलाने तथा दिशा-खोज या दिशा निर्देशन (Navigation) मे भी प्रवीण थी। खेती हुनर व्यापार और जहाजरानीसे यह प्रजा न जाने कितनी समृद्ध हुई होगी! ईरानकी खाडीमे भी बहरीन टापू पर सिंधु संस्कृतिके अवशेष मिल है इससे पता चलता है कि यहाकी प्रजाका ईरानकी खाडीके मार्गसे ईराककी सुमेर जाति और अन्य प्रजाओके साथ भी संबंध था।

सिंधु संस्कृतिके भग्नावशेषो पर आर्योने भी सप्तसिंधुमे अपनी अनोखी संस्कृतिका विकास किया। जैसे वनस्पति पककर, सूखकर सड जाती है और उसीमेसे पोषण पाकर दूसरी वनस्पति पनपती है उसी प्रकार धराशायी हुई एक संस्कृतिमेसे ही पोषण पाकर दूसरी संस्कृति *फूलती फलती है।*

सिंधु संस्कृतिकी चित्रलिपि अथवा सकेत लिपिका अभी तक पता (ज्ञान) नही ज सका। उसमे २५०के करीब संकेत तथा ४००के लगभग आकृतिया था। यह प्रजा शक्ति पूजक थी और शक्तिको विश्वमाता मानती थी। प्राप्त मूर्तियोसे पता चलता है कि इसका पूजा प्रत्येक घरमे होती होगी—सार्वजनिक मन्दिरो नही। मंदिर नही मिल है। मुद्राओमे जिन प्राणियो और वनस्पतियोकी सुन्दर और ताद्दश आकृतिया पायी गयी है उनमे पीपल भी है। आर्योने पीपलको पवित्र माना था और आज भी हिन्दुओ तथा बौद्धोमे पीपलको पवित्र ही माना जाता है। (अश्वत्थ सव वृक्षाणाम—गीता अ० १० श्लो० २६)

माहन जो दडोव

कासकी प्रतिमा

प्रस्तर शिल्प
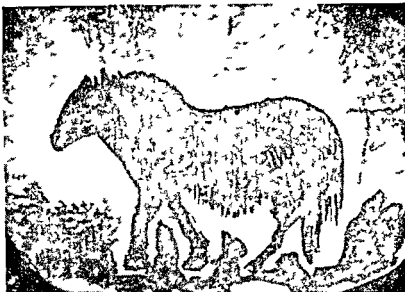
हजारों साल पहले गुफावासी मानवों द्वारा
गुफाओं की दीवारों पर अंकित किये सुन्दर चित्र।
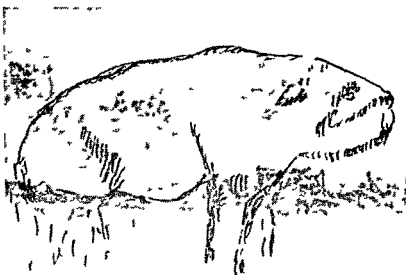
इनने बडे प्रदेशमे प्रजाकी रहन-सहनमे जो साम्य दीखता है (उदा०—सभी जगह न
तौल दशाश पद्धति पर आधारित थे)। यह इंगित करता है कि समग्र प्रजा एक केन्द्रीय शासन
थी। फिर भले ही वह एकचत्री शासन न हो। पर दुखकी बात तो यह है कि जिस प्रकार
प्राचीन मिस्र प्रजाका सिलसिलेवार इतिहास मिलता है उस प्रकार सिंधु-संस्कृतिका इतिहास
नहीं मिलता। अत यहाँके राजकर्ता कौन थे, उनका शासन कैसा था, यह हम नहीं जान पाते।
धर्मगुरुके रूपमे पूजे जाते राजकर्ताओके एकचत्र शासनमे यह प्रजा रहती थी ऐसी पुरातत्व
शास्त्रियोकी राय है। संभव है कि इतने बड़े प्रदेश पर सभी जगह सारा वक्त किसीका एकचत्र
राज्य न भी रहा हो फिर भी इतना तो निश्चित रूपसे कहा जा सकता है कि समग्र सिंधु
संस्कृतिकी प्रजा एक ही रंगमे रंगी तथा एक ही संस्कृति और समाज व्यवस्थामे सकलित थी।
इस प्रकार हजारो वर्षों तक जगमगाकर सिंधु-संस्कृति नष्ट हुयी और उसके अवशेष
धरतीमे समा गए। उसके नगरो और देहातो पर नदी द्वारा लायी गयी मिट्टी तथा रेगिस्तानकी
रेत बिछ गयी।

इसके बाद आजसे २६०० वर्ष पहले ईरानी आये। राजा दारायस तथा उसके
अनुयायी राजा दारायुसने बलोचिस्तान सिंधु तकके प्रदेशको जीत लिया। आजसे २,२०० वर्ष
पहले ग्रीक आये सिकन्दरने ईरानके आये साम्राज्यको हराकर सप्तसिंधुमे राजा पोरसको पराजित
किया। लगभग तभीसे हमारे इतिहासका हाल मिलता है।

आज मुख्य रूपसे जो अनाज हम खाते हैं वही सिंधु-संस्कृतिकी प्रजाकी भी खुराक
था। मछली भी मुख्य भोजनमे ही स्थान रखती थी। मालवासे पश्चिम एशिया तक जो सांस्कृतिक
साम्य था उससे ज्ञात होता है कि उस समयकी समग्र प्रजामे सांस्कृतिक अथवा भौगोलिक
सीमाएँ न था।

राजस्थानमे बनास नदीके किनारे बसी हुइ अन्य प्रजाने अपनी धरतीमेसे ताबा निकालनेका
श्रीगणेश किया था। मिट्टीके कलामे इस प्रजाके बरतन कुछ अलग ही ढगके है। अत अनुमान किया
जाता है कि यह प्रजा किसी अन्य सभ्यतावाली थी। सप्तसिंधु और बनासकी तरह ही गुजरात
और मध्यप्रदेशमे ताप्ती और नर्मदाके किनारे भी साढे तीन हजार वर्ष पहले संस्कृति पनपी थी
यह हम उस युगके मिट्टीके रंग बरतनोसे ज्ञात होता है।

सबसे प्राचीन चित्र महाराष्ट्रकी धरतीमेसे मिले मिट्टीके बरतनो पर पाये गए हैं
सुदर हैं। यहाँ पर भी संस्कृति गोदावरी, कृष्णा भीमा आदि नदियोके किनारे खिली
। आज जिस प्रकार विशाल महाराष्ट्रकी भाषा और प्रजा पर उसके उत्तर पूर्व और
णके पडोसियोका असर है उसी प्रकार उस समयके पडोसियोका भी असर पडा था यह हम
समयके औजार मिट्टीके बरतन तथा रहन-सहन आदिसे कह सकते है। महाराष्ट्र
० वर्ष पूर्व भी मध्यभारत तथा दक्षिण भारतको जोडनेवाली कडी था। अभी हाल
नर्मदा नदीके किनारे मिले प्राचीन नगरो की संस्कृति भी बहुत प्राचीन मालूम
है।

आजसे ४२०० वर्ष पहले आन्ध्र, तमिलनाड और मैसूर प्रदेशमे द्राविड-संस्कृति खिली
की अपनी अनोखी विशेषताएँ थी। वह भी बगालके उपसागरको बहती नदियो पर

आधारित थी। उसका सप्तसिंधु (मोहन-जो दडो हडप्पा)की सस्कृतिसे सबध न था। परन्तु जो सस्कृति सप्तसिधुसे सौराष्ट तक फली थी उसका सीधा सबध अफगानिस्तान तथा ईरानके साथ था। वास्तवम तो पश्चिम एशियामसे समय समय पर आयी विभिन्न जातिया कच्छ और सौराष्ट्र तक फलती रही। इन सभी जातियाकी सूरत मूरत, रस्मोरिवाज और पोशाक आदि सभी बातोम उनकी अपनी अपनी विशिष्टता थी। उनकी मुखाकृतिकी विशेषताएँ रस्मोरिवाज और पोशाक अभी तक उनके वशजोम दखी जाती है। इसीसे हमारे सुप्रसिद्ध पुरातत्त्वविद श्री एच० डी० साकलियान सौराष्ट्रको इन जातियोका जीवित 'म्यूजियम' कहा है। उदा०—मर लोग जो चोरणा (चूडीदार पाजामा) तथा 'आगडी (अँगरखी) पहनते ह, व भारतम अयत्र देखने को नही मिलती।

तीन हजार वष पूव, उत्तर-पश्चिमम काबुल नदीस लेकर दक्षिणम कोल्हापुर तक फैली सस्कृति पूवम गगा यमुना तथा उनकी शाखाओके सहारे ठीक बगाल तक फली थी। रगबिरगी और चमकते हुए मिट्टीक पात्रोसे हम इसकी प्रगतिका खयाल आ सकता है। इस सस्कृतिक साथ ब्राह्मीलिपिका विकास हुआ। दक्षिणकी लिपिया ब्राह्मीमस विकसित हुयी थी। उसी समय दक्षिणम द्राविडोकी अपनी सस्कृतिका भी विकास हुआ। दक्षिणकी इस प्रजाने केवल वरसात और नदियो पर आधार रखनके बजाय जगह जगह तालाब और सरोवर बनाए थे, जिनम पानीका सग्रह किया जा सके व उसक द्वारा खेती हो सके। यह प्रथा आगे भी जारी रहा। मद्रासके नजदीक पक्षीतीथके पहाड परसे आसपास दूर तक दृष्टि डालन पर आज भी कइ नय व पुरान तालाब नजर आत है।

इस प्रकार उत्तरम आय सस्कृति तथा दक्षिणम द्राविड सस्कृति एक दूसरस स्वतन्त्र रूपम विकसित हुयी थी। इन दो महान सस्कृतियोके प्रवाहोका सगम करनेका प्रथम प्रयास सम्राट अशोकने किया था। उसने साम्राज्यमे द्राविड प्रजाको अपनेम समा लिया। ब्राह्मीलिपि और प्राकृत भाषाम पत्थर पर खुदवाय अशोकके अनेक आदेश लेख भरतखडम जगह जगह पर मिलते है। अशोकने अपने साम्राज्यको धमविजय कहा है और सचमुच वह तलवारकी विजय नही बल्कि धम और सद्भावनाकी ही विजय थी।

उस समय हमारा समुद्री व्यवहार विकसित हो चुका था और भारतीय व्यापारी अग्नि एशियाके बदरगाहोके साथ अच्छा-खासा व्यापार करते थे। भारतके कई व्यापारियोकी उन प्रदेशोम नाम्याए थी। अयात उत्कल, तलग और तमिलनाडुके समुद्री किनारो परस भरतखडकी यह सस्कृति धम विजयक हतु अग्नि एशियाम दूर दूर तक छा गयी और उनको अभूतपूव विद्या, कला तथा सम्पन्नता समर्पित करने लगी। अभी हाल ही म श्री चमनलाल उदाहरणो तथा तर्कोके द्वारा तमिल साहित्य सम्मेलनक समय जाहिर किया था कि दक्षिण भारतके किनारे परसे मानव आबादी दक्षिण अमरिकाम गया थी और उसने वहा पर सस्कार धामोकी स्थापना की थी। लकाकी सस्कृति भी इसीके आधार पर विकसित हुयी थी।

जसे भारतम वसे अयत्र भी नदियोके किनारेक बाद सस्कृतिका दूसरा उदगम स्थान सागरका किनारा था। भौगोलिक स्थिति तथा खाडीके गरम प्रवाहोक कारण मिले समशीतोष्ण हवामानने ब्रिटेनको समुद्रकी महारानी बना दिया था। इसीस यह प्रजा सारी पथ्वी पर अपना

साम्राज्य फल सकी। जब समुद्र परकी अमेरिकाकी अधिक शक्तिशाली सत्ताकी तुलनामें ब्रिटेनकी शक्ति फीकी पड़ गयी तब उसे अपने साम्राज्यसे भी हाथ धोने पड़े। अमेरिकाके दोनों तरफ विशाल सागर है। जब उसने सागर पर सर्वोपरि सत्ता स्थापित की तब वह दुनियाका सबसे शक्तिशाली देश बन गया।

जब एशियाके अधिकांश भागके और यूरोपके लोग हजारों वर्षों तक पिछड़ी हालतमें भटकते थे उस समय भी भूमध्य सागरके पूर्वी किनारे स्थित फिनिशियन प्रजा अपने जहाजों पर चक्कर अफ्रीकाके उत्तरी किनारे तथा यूरोपके दक्षिणी किनारे पर घूम चुकी थी। ये आगे जहाजी अटलांटिक महासागरमें भी पहुँच गए। यूरोपके पश्चिमी किनारों पर उन्होंने जहाजरानी की। प्रवास मनुष्यको ज्ञान और समृद्धि प्रदान करता है। साहसवृत्ति सहनशीलता व होशियारी बढ़ाता है। व्यापार और विग्रहका आपसमें बड़ा घनिष्ठ संबंध होता है। फिनिशियन केवल व्यापारी न थे, वे कुशल योद्धा भी थे। प्रवासने उनमें कुतूहलवृत्ति और जिज्ञासा पैदा की और वे खोजी बने। विग्रह और व्यापारके कारण वे कई देशोंकी प्रजाके सम्पर्कमें आये व उनकी कलाएँ भी उन्होंने सीख ली। समुद्रके पार उपनिवेश कायम करनेवाली यह प्रथम प्रजा थी। आजके लेबनान नामक अरब राज्यमेंसे यह उत्तर अफ्रीका और यूरोपके किनारे फैल गयी थी। इन लोगोंने दिशा निर्देशन, वाणिज्य जहाजरानी, युद्ध विद्या, कला कारीगरी, स्थापत्य शिल्प उद्योग आदिमें प्रगति की थी। सुमेर प्रजाकी भांति फिनिशियन प्रजाके भी नगर राज्य थे। साढ़े तीन हजार वर्ष पूर्वकी इनकी विकासोन्मुख संस्कृति तीन हजार वर्ष पहले अपनी उन्नतिकी पराकाष्ठा पर पहुँच गयी थी। समुद्र और समशीतोष्ण हवामान उनकी संस्कृतिके लिए अनुकूल था।

ईसाकी आठवीं सदीसे दसवीं सदी तक जो स्केन्डीनेवियन वाइकिंग प्रजा पूर्वमें रशियासे पश्चिममें उत्तर अमरिका तक फैल गयी थी उसकी संस्कृति भी समुद्रके सहारे ही फूली फली थी। ऐसे कुशल जहाजी दुनियाने बहुत कम देखे होंगे।

ई वी सनके प्रारंभसे लेकर करीब एक हजार वर्ष तक भारतके जहाजी धर्म प्रवर्तक और व्यापारी अग्नि एशियामें भारतीय संस्कृतिका जो प्रसार करते रहे इसका श्रेय भी हमारी नौविद्या को ही है। पश्चिममें दक्षिण भारत और लंकासे पूर्वमें ब्रह्मदेश स्याम, मलाया इंडोनेशिया, हिंद चीन और ठीक चीनके दक्षिण किनारे तक भी फल श्रीविजय जैसे सांस्कृतिक और राजकीय साम्राज्योंमें भारतीय संस्कृतिका जितना प्रचार और विकास हुआ उसमें समुद्र और उपजाऊ भूमिका बड़ महत्त्वका हिस्सा है। आज भी वह संस्कृति मिट नहीं गयी। मलाया और इन्डोनेशियाकी प्रजाने भले ही इस्लाम धर्मको स्वीकार किया हो पर उनकी संस्कृतिका हार्द तो अभी भी हिंदु ही है।

पश्चिम भारतने—उसमें भी विशेष करके गुजरातके—नाविकोंने पश्चिम एशियामें और पूर्व अफ्रीकामें भले ही संस्कृतिका विकास न किया हो पर अपने व्यापारी उपनिवेश अवश्य स्थापित किये थे जिनका अस्तित्व आज तक वहाँ दीखता है।

इस्लामी संस्कृतिका विकास अरबके वनजारोंकी अपेक्षा जहाजोंके द्वारा समुद्री मार्गमें ही ज्यादा हुआ था। जो धर्मांध सुल्तान अन्य धर्मोंका नाश करने और लूट मचानेके हेतु चढ़ाई करते थे, वे वास्तवमें इस्लामी संस्कृतिके प्रचारक नहीं थे परन्तु अरबके जो विद्वान और नाविक पूर्वमें

इटलीका यात्री मार्कोपोलो एशियाके भारत तथा और देशोंकी यात्रा करके लौटता है—एक प्राचीन चित्र।

चीन तथा पश्चिममें भारतसे आगे स्पेन तक फैल गए थे। उन्होंने वहां व्यापार, हुनर और विज्ञानके क्षेत्रमें गौरवपूर्ण सहयोग दिया है। वे खगोल, गणित, रसायनशास्त्र, वैद्यक, भूगोल, दिशा-निर्देशन, जहाजरानी आदि विज्ञानोंके वाहक तथा प्रचारक थे। उनके विद्वानोंने ग्रीक और लेटिन भाषाकी पुस्तकोंके अरबीमें अनुवाद किये और साथ ही भारतीय तथा अरबी ग्रंथोंके स्पेनिश भाषामें भी अनुवाद किये।

यूरोपीय संस्कृतिका प्रसार समुद्रके द्वारा शुरू हुआ और वह आज भी जारी है। इसका प्रारम्भ करनेवाला था पुर्तगालके राजा ज्हान प्रथमका साहसी पुत्र हेनरी (सन १३९४से १४६०) जो अच्छा जहाजी भी था। इसके बाद कोलम्बस, वास्को-डि-गामा, अल्बुकर्क, मेगेलन, कुक और अन्य कई यूरोपीय साहसी समुद्र पर अधिकाधिक घूमने लगे। अंतमें वे बहादुर जमीन और जलमार्गसे सारी दुनियाके प्रदेशोंपर पहुँच गए। मार्कोपोलोने यूरोपको कुबलाईखानकी संस्कृति और समृद्धिके दर्शन कराये। इन सभी प्रवासियों, व्यापारियों और नाविकोंने तथा उनके अनुगामियोंने भी दुनियामें व्यापार, विद्या, विज्ञान और और धर्मको फैलाया और अपने देशोंके लिए साम्राज्योंकी स्थापना भी की।

इस प्रकार जो भी प्रगति आज दुनियाने की है उसका यश युगोंसे सागर पर घूमनेवालोंको है।

मानव संस्कृति पर सागरके किनारेकी भांति ही जंगलोंने भी प्रभाव डाला है। अगर मनुष्य जंगलमें ही फँस जाए और उसपर अपना प्रभुत्व स्थापित न कर सके तो वह प्रगति नहीं

कर सकता, वह जंगली ही रह जाता है। ब्राज़ीलके जंगलोंमें तथा हमारे अंडमानके जंगलोंमें आज भी ऐसे मनुष्य बसते हैं जो पत्थर-युगमें ही जीते हैं और हमारी संस्कृतिसे दूर भागते हैं।

दुनियाके जंगलोंमें जंगली प्रजा भी बसती है और जंगलोंपर प्रभुत्व स्थापित कर जंगलकी समृद्धि द्वारा सांस्कृतिक समृद्धि प्राप्त करनेवाली प्रजा भी बसती है। जंगलोंमें भटककर अपना जीवन निर्वाह करनेवाली जंगली प्रजाकी भी अपनी प्रणालियाँ—प्रथाएँ होती हैं। उनके बीच जाकर रहनेवाले ईसाई मिशनरियोंने इनका अच्छा अध्ययन किया है और उन्हें ईसाई बनानेके लिए भगीरथ परिश्रम भी किया है। जंगलोंका जंगलीपन अनेक बार रोगप्रद भी हो जाता है। जंगल पर स्वामित्व पाया जाए तभी जंगल भी समृद्धि, आरोग्य और सौन्दर्यका धाम बन सकता है। ब्राज़ील, अफ्रीका और न्यूगिनीके पिछड़े जंगलियोंकी तुलना अगर हम कनाडा, अमरिका, रशिया, फिनलैण्ड आदि देशोंकी प्रजासे करें तो हम जान लेंगे कि वहाँकी प्रजाने जंगलों पर अपना आधिपत्य जमाकर उसमेंसे लकड़ी, शहद, औषधियाँ, चिरोंजी, गोंद, मोम, रेशम आदि प्राप्त किया है। वहाँके मानवने लकड़ीमेंसे आर्टसिल्क (नकली रेशम) तथा कागज़ बनाकर समृद्धि पायी है। चीड़जैसे टरपेन्टाइन बनता है। वहाँ जंगलोंमें पक्के रास्ते, शुद्ध पानी, बिजली, मकान आदिकी व्यवस्था करके सुधरी हुई प्रजाने अपने आरोग्यका रक्षण किया है और जंगलोंमें भी मंगल कर लिया है। परन्तु अफ्रीकामें मलेरिया जैसे जंगलोंमें होनेवाले रोगोंके कारण अफ्रीकी प्रजा आज तक पीड़ित है और अब भी पिछड़ी हुई है।

जंगलको जीतकर मानवने अपनी संस्कृतिका कुछ विकास किया ही है पर रेगिस्तानोंने तो मानव-संस्कृतिका गला ही घोंट दिया है। मानव संस्कृतिका जीवनरस पानी है जो रेगिस्तानमें नामको भी नहीं है। जब और जहाँ बसने योग्य भूमि रेगिस्तानमें बदलती गयी मानव उसमें कैद होता गया और उसमें घुटता रहा। आजसे ढाई हज़ार वर्ष पूर्व भी उत्तर अफ्रीकाके कार्थेजियन लोग रोमन साम्राज्यको कंपा सके थे और हैनिबाल उत्तर अफ्रीकामेंसे हाथियोंकी सेना लेकर रोम पर आक्रमण कर सका था क्योंकि फिनिशियनोंकी भाँति कार्थेजियन भी पानी और वनस्पतिका श्रेष्ठ उपयोग करना जानते थे। वनस्पतिके कट जानेसे और पानीके गायब हो जानेसे आज उत्तर अफ्रीकाका ज्यादातर हिस्सा रेगिस्तान बन गया है।

हमारे देशकी संस्कृति खेती और पशुपालन पर पनपी थी। कमसे कम श्रमसे अधिकसे अधिक उपज देनेवाले ये दोनों व्यवसाय हमारे पूर्वजोंको सभी इच्छित वस्तुएँ देते थे। इससे उन्हें सोचने विचारने तथा विद्या विज्ञान और तत्त्वज्ञानका विकास करनेके लिए काफी फुरसत मिलती थी। जिस प्रकार मनुष्यको जंगलके अधीन नहीं हो जाना चाहिए उसी प्रकार पशुओंमें भी अपने आपको खो नहीं देना चाहिए। पशु, प्रगतिके साधन हैं साध्य नहीं। पशुपालनसे जीवनकी प्राथमिक आवश्यकताएँ प्राप्त हो जाती हैं, इतने हीसे अगर संतोष मान लिया जाए तो गुजरातके रबारी गड़रियों तथा अहीरोंकी संस्कृतिसे ही हमें संतोष करना पड़े। मंगोलियन भी इन्हींकी भाँति जहाँ भी घास चारा मिला वहाँ अपने पशुओंके साथ भटकते रहते थे। परन्तु जैसे ही उन्हें आसानीसे पर्याप्त घास चारा मिलने लगा और उन्हें अपने पशुओंकी चिंतासे मुक्ति मिली कि मंगोल सवार विस्फोटकी नाईं एशिया और यूरोपके अधिकतर भागोंपर फैल गए और उन्होंने नये राज्यों तथा साम्राज्योंकी स्थापना की। अगर बाबरके पूर्वजोंने मवेशियोंको चराकर ही संतोष

पाया होता तो हिंदुस्तानम मुगल साम्राज्यकी स्थापना ही न हो पाती और चगेजखाके घुडसवार मगोलियाकी चरागाहोंसे बाहर न निकले होते तो चीनको कुब्लाईखान और उसकी मगोल संस्कृति कभी न मिल पाती।

आज आस्ट्रेलिया और अमेरिकाम जहा भी पशुपालनका व्यवसाय है वहाके प्रदेश और जलवायु भारतके समान ही हैं। हमारे गडरिये व रबारी अपने पशुओंके बीच ही खो-से गए है, क्योंकि उन्होंने पशुओंको ही अपना साध्य माना है। इसस न तो उनकी प्रगति हुयी है और न ही उनके ढोरो (पशुओं)की औलाद ही सुधरी है। जब कि आस्ट्रेलिया, कनडा और अमेरिका तथा पश्चिमी देशोंने पशुओंको अपने उद्योगोंका साधन समझ कर ही पशुपालनका व्यवसाय अपनाया है। इससे व भी समृद्ध हुए हैं और अपने पशुओंकी औलादको भी सुधार सके है। यो पशुपालन भी संस्कृतिके विकासका एक साधन है। न्यूजीलैण्ड डेनमार्क और हालैण्ड जसे छोटे देश भी आज हजारो टनके हिसाबसे दूधकी रबडी, दूधका पाउडर, पनीर और मक्खन आदि दूधके बने पदार्थ अन्य देशोंको भेजते हैं, क्योंकि उन्होंने पशुपालनमे विद्या और विज्ञानका भी उपयोग किया है।

पशुपालनकी कलाने मानव प्रगतिमे कितना साथ दिया है यह देखनेके बाद पशुपालन न होनेसे मानव प्रगतिमे किस प्रकार बाधाए पहुची हैं यह भी देख लेना चाहिए। आस्ट्रेलियाकी सारी भूमि रेगिस्तान न थी। फिर भी जब यूरोप निवासी वहा जाकर बसे उस समय वहा पालने योग्य पशु नही थे। सिर्फ कुत्ता ही था। उसे वहाके आदिमनिवासियोंने पाला था। यो वहाँ संस्कृतिके विकासके लिए कोई गुंजाइश न थी। वहाके आदिवासी बाहरी दुनियासे जसे अलग ही हो गए थे। इसीसे व पत्थर युगमे ही जीते रहे। अपनी संस्कृतिकी पूंजी लेकर उधर जानेवाले यूरोपीय लोग अपने साथ गाय घोडा भेड आदि पालतू जानवर भी वहा ले गए जल सम्पत्तिका विकास कर रेगिस्तानमे भी कई जगह पातालकुएँ (टयूबवल) खोदकर भूगर्भसे पानी प्राप्त किया, धरतीको उपजाऊ बनाया और उसमसे खनिज भी प्राप्त किये। इस प्रकार उन्होंने पशुपालन खेती और खनिजोंके द्वारा संस्कृतिका विकास किया।

अमरिकाके खड भी देख ले। यूरोपके लोग उधर गए उससे पहले वहा उत्तर अमेरिकाम (मैक्सिको और मध्य अमरिकाम) आज्तेक संस्कृति पनप चुकी थी। दक्षिण अमेरिकाम मय और इका संस्कृतियोंका विकास हुआ था। उन्होंने खेती नहरें इजीनियरिंग राजतन्त्र वास्तुकला शिल्प और समाज-व्यवस्थाम प्रगतिकी थी। जमीन उपजाऊ थी ही पानीकी भी तंगी न थी। परन्तु वहा पालने योग्य पशु न थे। दक्षिण अमरिकाकी एडीज पर्वतमालाम सिर्फ लामा तथा आल्पाकाको पाला जाता था। परन्तु ये ऊनके पूर्वज गाय घोडे या ऊटका स्थान तो ले नहा सकते थे। इका संस्कृतिवाली प्रजाने मय संस्कृतिवाली प्रजाने तथा मैक्सिकोकी आज्तेक प्रजाने नहरे बनाकर खेती तथा रक्षा करनेके लिए उनका उपयोग किया था। इन तीनो प्रजाओंने वास्तुकला व इजीनियरिंगम आश्चयजनक प्रगतिकी थी। परन्तु दूधके लिए खेतीके लिए तथा वाहनके तौरपर जो पशु चाहिए थे व उनके पास न थे। स्पेनका अयन खूखार और दगाबाज साहसी वीर कोर्टेज जब आज्तेक साम्राज्यको जीतनेके लिए घुडसवारोको लेकर मेक्सिकोकी धरती पर पहुँचा तब तक आज्तेकोंने इससे पूर्व कभी घोडे न देखे थे। इससे व आश्चर्यचकित रह गए। उन्होंने घोडा और सवार दोनो मिलकर एक ही प्राणी है ऐसा मान लिया। उस समय भी उत्तर अमेरिकाम

करोड़ोंकी संख्यामें गायसी विचित्र प्राणी (bisons और musk ox) जंगली हालतमें भटकते फिरते थे, पर पालनेके लिए वे अच्छे न थे व आदिवासी उनका उपयोग केवल मांसके लिए ही करते थे।

ठंडे प्रदेशोंमें घोड़ेने और गरम प्रदेशोंमें बैल और भैंसने ही खेतीके विकासमें हाथ बँटाया है। यांत्रिक हल तो अब बने। अभी भी दुनियाके अधिकतर देशोंमें घोड़ा, बैल, ऊंट तथा भैंसोंकी सहायतासे ही खेती होती है। अगर मनुष्यने इन पशुओंको बैलोंमें न जोता होता तो आज तक खेतीका इतना विकास न हो पाया होता।

प्रगतिके लिए गतिकी आवश्यकता है और गतिके लिए भारवाही पशु आवश्यक हैं। आजके यंत्र-युगमें भी उनके बिना काम नहीं चलता।

अगर एशियाकी जंगल, पानी और कीचड़वाली भूमिमें मनुष्यने हाथीको पालकर उसका उपयोग न किया होता तो उन देशोंमें भारतीय और चीनी संस्कृति कभी न फैल पाती व देश जंगली ही रह गए होते। दूसरी तरफ अफ्रीकाकी प्रजा अभी भी हाथीका काम कर अपने उपयोगमें नहीं ला पायी है, अतः वह पिछड़ी हुयी है। परन्तु उत्तर अफ्रीकाके कार्थेजियन विजेता हैनिबालने हाथियोंको पालकर यरोपमें रोमन साम्राज्य पर आक्रमण करनेके लिए उनका उपयोग किया था।

उसी प्रकार अगर अरबों तथा मुगलोंने ऊँटको पालकर वाहनके तौर पर (और दूध, मांस, ऊन तथा चमड़ा प्राप्त करनेमें) उसका श्रेष्ठ उपयोग करना न सीखा होता तो अरब लोग तीन खंडों (महाद्वीपों)के कई देशोंको अपनी सेना तथा संस्कृतिके द्वारा जीत न सके होते और मंगोल लोग मध्य एशियाके चरागाहोंमें ही उलझे पड़े रहते। मंगोलिया जंगली घोड़ोंका वतन माना जाता है। अगर मंगोलोंने दूधके लिए और सवारीके लिए घोड़ोंको न पाला होता तो वे अन्य साम्राज्योंको न तोड़ सकते और न ही मंगोल साम्राज्यकी रचना ही कर पाते। वाहन-व्यवहार तथा युद्धके लिए घोड़े प्राचीन दुनियाकी सभी संस्कृतियोंके हित अनिवार्य थे, और आज भी हैं।

छ हजार वर्ष की प्राचीन कब्रोंसे ऊँटकी हड्डियां मिली हैं। इससे पता चलता है कि पशुपालन कितने प्राचीन कालसे होता आया है। मनुष्यने हाथी और ऊँट सरीखे इन विशाल बलवान तथा भयंकर प्राणियोंको पालनेका खतरा उठाकर जो परिश्रम किया उससे मालूम होता है कि इन लोगोंने भी इन पशुओंकी आवश्यकताको महसूस किया था। जंगली घोड़ा भी कुछ कम खतरनाक नहीं है। पत्थर-युगके गुफावासी पशुपालनके द्वारा ही आगे बढ़ सके थे।

संस्कृतिके विकासमें हाथ बँटानेवाली दूसरी शक्ति है खनिज। उजड़ प्रदेशोंमें जहां पानी ही नहीं है वहां न खेती ही हो सकती है और न ही पशु-संवर्धन हो सकता है। परन्तु अगर वहाँ कीमती खनिज निकल आएं तो वहां आधुनिक नगर भी बस जाते हैं। आस्ट्रेलियाके रेगिस्तानोंमें तथा अलास्काके बर्फिस्तानोंमें भी लोग सोनेके लिए दौड़ पड़े। पचास वर्ष पहले रशियन लोग साइबेरियाके नामसे भी कांप उठते थे। आज उत्साही और महत्वाकांक्षी युवकों और युवतियोंका प्रवाह साइबेरियाकी तरफ बहने लगा है क्योंकि वहाँ सोना, तेल, हीरा, यूरेनियम वगैरा कीमती खनिज विपुल प्रमाणमें निकलने लगे हैं। इसी गरमीमें ध्रुव और शीतकालमें अधेरा जिन कठोर हिम प्रदेशोंमें कोई भी मनुष्य जानेकी हिम्मत न करता था वहां आज अद्यतन सुख सुविधाओंवाले नगर बस गए हैं जो अब विभिन्न प्रवृत्तियोंसे मुखर हो उठे हैं।

उसी प्रकार दक्षिण अफ्रीकामें जहां हीरा और सोना निकला वह निर्जन प्रदेश था। आज वहीं पर किम्बरली और जोहान्सबर्ग जैसे आधुनिक सुख सुविधाओंसे भरे नगर बसे हुए हैं। आज जहां जमशेदपुरके कारखाने धमधमा रहे हैं वहां पिछली सदीके पूरे होने तक पहाड़ी जंगलोंमें हिंस्र प्राणी विचरते थे। परंतु जहां लोहा, मैंगनीज, कोयला और अभ्रक वगैरा उपयोगी खनिज निकले हैं वहां बहुतसे लोग दूर-दूरके प्रदेशोंसे आ बसे हैं। आसामके पहाड़ी प्रदेशोंमें जानेकी किसीकी हिम्मत न थी, पर जबसे वहां तेल निकला है उस विकट पहाड़ी जंगलमें भी मानव संस्कृति लहराने लगी है।

धरतीकी समृद्धि तथा उस पर बसनेवाली प्रजाकी समृद्धिको निहार कर कम नसीब लोग ललचाते हैं। यूरोपमें धार्मिक असहिष्णुतासे त्रस्त होकर जो लोग हिजरत कर गए वे भूमध्यसागर जैसे सरोवरनुमा समुद्रके दूसरी तरफ अफ्रीकाके उत्तरी किनारे जाकर न बसे क्योंकि उस पानी रहित वीरान प्रदेशमें कोई आकर्षण नहीं था। परंतु पूरा महासागर लांघकर अजनबी अमरीकी खंड पर जा बसे क्योंकि वहांकी धरती बिना जोती गई पर उपजाऊ थी और उसमें कीमती खनिज थे। समयके बीतने पर यह सिद्ध हो गया कि ऐसा करनेमें उन लोगोंने सयानापन ही बरता था। युनाइटेड स्टेट्स आफ अमरिका और उसके बाद कनेडा दुनियामें सबसे समृद्ध देश बने और आज वहां यूरोपीय संस्कृतिकी अमेरिकन आवृत्ति पूरी बहारमें खिल रही है।

भरतखंडने भी अपने लंबे इतिहासकालमें कई प्रजाओंको ललचाया है। आजके अभावो वाले और अधिक आबादीवाले वर्तमान कालको भूल जाएं पर जब यहांकी समृद्धि उफन रही थी उस युगमें यूरोपके उत्तरीय प्रदेशोंमसे आर्य भटकते हुए पश्चिम एशिया होकर यहां आये। फिर पश्चिम एशियामेंसे अनेक जातियां भी आयीं। इरानमेंसे पारसी आये, अरबस्तानमेंसे अरब, अफगानिस्तानमेंसे अफगान, मध्य एशियामेंसे तुर्क और मुगल आये। फिर तो भरतखंडकी खोजमें यूरोपसे पुर्तगीज, डच, अंग्रेज और फ्रेंच भी आये। इन सभी प्रजाओंने इस देशकी संस्कृतिके विकास पर अपना न्यूनाधिक प्रभाव डाला है। एशिया और यूरोपमेंसे जो भी जातियां आयीं, वे सभी भरतखंडकी नदियों पर आधारित संस्कृति और समृद्धिसे आकर्षित होकर आयी थीं। जो केवल लूटनेके लिए ही आये थे वे इस देशके सोने, चांदी, जवाहरात, रेशमी कपड़े, गरम मसाले आदिसे लुभाकर आये थे। जो यूरोपीय जहाजी हिंदुस्तानकी खोजमें आये थे वे यहांके मसाले, रेशमी और सूती कपड़े आदिका व्यापार करनेके हेतु ललचाकर आये थे और उसी लालचमें भरकर यहां राजकीय सत्ता भी जमाने लगे थे।

आवश्यकताने मनुष्यको प्रतिकूल प्रकृति पर भी विजय पानेकी प्रेरणा दी है। लाखों वर्गमीलके रेगिस्तानोंमें अनेक अरब जातियां रहती हैं। परंतु वे रेगिस्तानके कैदी बनकर बिल्कुल पिछड़ा और गरीब जीवन बिताती हैं। परंतु इसी रेगिस्तानके बीच इजराइलके रेगिस्तानी प्रदेशमें यहूदियोंने आकर बसना पसंद किया क्योंकि उन्हें अपना निजी वतन चाहिए था जो एक राष्ट्र हो। दूसरा कारण यह भी है कि ढाई हजार वर्ष पहले यही पेलेस्टाइन (इजराइल) यहूदियोंका वतन था। यूरोपके अनेक समृद्ध और उपजाऊ प्रदेशोंमसे उखड़ जानेके कारण अथवा धार्मिक असहिष्णुतासे ऊबकर जिनके नाकों दम आ गया था ऐसे यहूदियोंने अमरिकाके हरे भरे तथा समृद्ध प्रदेशोंसे ललचानेके बजाय वीरान पलेस्टाइन पर अधिकार जमानेके लिए इस रेगि

गैस—कुआँ खोदनेके लिए समुद्रका तला तोड़ने पर पाये गए धरतीके भिन्न भिन्न स्तर।

स्तानमें जाकर गुजार युद्ध कर
मरना ज्यादा पसन्द किया। अ
वार फिरसे उस स्थानको अपना
बनाकर बाइबिलकी भविष्यवाणीके
सार व रेगिस्तानको पुन सरसब्ज
फला बना रहे है। अब तो व बड़ पमा
फलोंका निर्यात भी करते है।

जब मनुष्य भौगोलिक समृद्धि
उपयोग करने लगता है तब प्रकृतिकी इ
संपत्तिका सदुपयोग भी उसकी संस्कृति
पर प्रभाव डालता है। इसाइ पादरी
मौतकी सजाकी भी परवाह किये बगर
जब चोरी चोरी रेशमके कीड़ोंके अंडे
तथा बीज चीनसे बाहर लाये तभी
पश्चिमी जगत रेशम प्राप्त कर सका।
उसी प्रकार यूरोपके साहसी जब दक्षिणी
अमरिकासे चोरी चोरी रबरके बीज ले
आये तथा उनके पौधे लगाये तब कहीं
भारत लंका मलाया और इण्डोनेशिया
रबरसे संपन्न हुए। आसाम और चीनमें
चायके पौधे पाये गए तो भारत और
लंकामें उन्हें लगाकर दुनियाकी प्रजाको चाय
पीना सिखा दिया गया। ईथोपियामें जब
काफीके पौधोंका सदुपयोग होने लगा
तो दुनियाने काफी पीना शुरू कर दिया।
कोकोके बीजोंका जब उपयोग सूझा तो
जगतको कोको और चाकलेट मिले और
अफ्रीकाके कुछ देशोंको मानो इस वनस्पतिने
सोनेकी फसल समर्पित की। आज दुनियाकी
प्रजाके जीवनमेंसे रबर चाय और कोकोको
उठा लिया जाए तो प्रजाका जीवन कैसा लगेगा? कोलम्बसने अमरिकासे तम्बाकू लाकर
जगतको धूम्रपानकी अनिष्टकर आदत दी। उससे पहले किसीको तम्बाकूकी आवश्यकता न
थी। परन्तु आज सभी देशोंकी प्रजा चायकी भांति तम्बाकूकी भी गुलाम हो गयी है।
चाय काफी कोको और तम्बाकूके उद्योगोंमें हर साल अरबों रुपयोंकी उथल-पुथल होती
रहती है।

मनुष्य और मनुष्येतर प्राणियोंमें एक बड़ा अंतर यह है कि मनुष्यने औज़ार बनाना तथा उन्हें उपयोगमें लाना सीखा है पर दूसरे प्राणी यह नहीं सीख पाये। पहले हड्डियोंके फिर धातुके और यों उत्तरोत्तर अधिकाधिक अच्छे औज़ार बनाकर मनुष्य प्रगति करता गया। उसका भौतिक वैभव बढ़ता गया। लोहे और काँसेसे आगे बढ़कर वह सोने चांदी और हीरे मानीका उपयोग करने लगा।

परंतु औज़ारोंके उपयोगकी एक मर्यादा होती है। औज़ारोंके द्वारा किसी वस्तुके निर्माणमें समय और श्रम दोनों ही लगते हैं। परंतु शक्ति संचालित यंत्रोंमें कमसे कम श्रम द्वारा कमसे कम समयमें, अधिकसे अधिक उत्पादन किया जा सकता है। औज़ारोंकी अपेक्षा यंत्रोंसे उत्पादन बड़ी तेजीसे होने लगा। जब तक हाथसे लिखना पढ़ना था या चीनमें हाथसे एक एक टाइप द्वारा छपाई करनी पड़ती थी तब तक उत्पादनमें गति या विशेष वृद्धि नहीं हुयी। क्योंकि कलम और हाथसे छापनेके टाईप दोनों केवल औज़ार ही थे। परंतु जब जर्मनीके गुटनबर्गमें यंत्रोंसे छपाई होने लगी तब कम मेहनतसे कम समयमें आश्चर्यजनक बड़े पैमाने पर उत्पादन होने लगा।

फिर तो यंत्रोंमें भी क्रांति हुई। जब तक छापाखाना (प्रेस) मनुष्यकी शक्तिसे चलता था या गन्नेका कोल्हू पानीकी मोट या तेल पेरनेका कोल्हू बैल, भैंसा या ऊँटके बल पर चलता था तब तक इन यंत्रोंकी भी एक मर्यादा थी। परंतु जब प्राकृतिक शक्तियोंको मानव सेवामें लाया गया तब दुनियामें औद्योगिक क्रांति हुई। सर्वप्रथम पवनको वशमें करके उसके द्वारा चलता पवन चक्की और जहाज बनाये गए। फिर भापको वशमें किया गया फिर बिजलीको फिर खनिज तेलों और गैसको और अब अणुशक्तिको मानव सेवामें लगाया गया है। जब तक दुनियामें चक्र (पहिया) रूपी औज़ारकी खोज न हुयी थी तब तक मानवकी प्रगति उसकी दौड़नेकी गतिसे

हिमाच्छादित पर्वतों पर आरोहण।

गोलाके पेट पर घूमते हुए बादल तथा तूफान भी देखे जा सकते हैं।

बराबर ही थी। जब पहियेकी खोज हुई तब मानवकी गति घोड़ोंकी गतिके बराबर हो गयी। जब भापसे गाड़ीके इंजिनोंमें उपयोग किया गया तब बोझ ढोनेकी तथा तेज भागनेकी उसकी शक्तिमें आश्चर्यजनक वृद्धि हो गयी।

जब अन्य शक्ति, बिजलीको मानव सेवामें लगाया गया तब मनुष्यका भविष्य भी बिजलीकी तरह उज्ज्वल हो गया। जब खनिज तेल और गैसको काममें लिया गया तब मानवकी प्रगति पवन वेगसे होने लगी। इतना ही नहीं वह पक्षीसे ऊँचा उड़ कर विमानमें उड़ने लगा। जब उसने अणुशक्ति पर प्रभुत्व पाया तब तो मानवकी शक्ति और प्रगतिकी कोई सीमा ही न रही और आज तो वह अवकाशमें भी पहुँच गया है। वह पृथ्वी परसे चन्द्र और चन्द्र परसे मंगल पर पहुँचनेकी तैयारी कर रहा है।

जरा सोचिए तो सही, अभी कुछ करोड़ वर्ष पहले मानवके पूर्वज एककोषी जीवके रूपमें पानीमें प्रकट हुए थे, और कुछ लाख वर्ष पहले तो उनके पूर्वज पेट पर रेंगते समुद्रमेंसे किनारे पर आकर जीने लग गए थे। कुछ ही लाख वर्ष पहले उसके वानर-पूर्वज पेड़ परसे उतर कर धरती पर

उपग्रहोंके द्वारा प्राप्त किये जाने वाले संदेश

चलना सीख रहे थे अभी कुछ ही हजार वर्ष पहले मानवके पूर्वजोंने लकड़ी और पत्थरोंसे शिकार करना सीखा था। भूस्तरशास्त्रीय घड़ीके अनुसार बारह बजनेमें अभी पांच सेकेंड बाकी थे तब मानव पृथ्वी पर प्रकट हुआ और आज तो वह महामानव बननेकी तैयारीमें लगा हुआ है। सागरके गर्भमें वह ११००० मीटर अर्थात ३५००० फुट्स भी अधिक गहराईमें उतर चुका है तो दूसरी तरफ संसारके ऊँचेसे ऊँचे पर्वतोंके शिखरोंको उसने सर कर लिया है। वह अवकाश यानमें बैठकर उड़ने लगा है। पृथ्वी पर बैठे बैठे ही चन्द्र और शुक्र पर अपने यांत्रिक प्रतिनिधिको भेजकर वह उधरकी जानकारी पाने लगा है। पृथ्वी पर बैठे बैठे ही वह अवकाशमें अरबों प्रकाश वर्ष दूरकी थाहको पानेका यत्न कर रहा है।

दूर दूर कोई पांच अरब वर्ष पहले भूतकालमें यह सवारी शुरू हुयी थी। आज वह वर्तमानके द्वार पर आ खड़ी हुयी है। भूस्तरीय घड़ीमें तो अभी पूरे बारह भी नहीं बजे हैं। नया प्रभात कैसा होगा यह कौन बता सकता है? पृथ्वीके जन्मसे चली इस सवारीका दर्शन हमने शुरू किया था। यह आगे बढ़ती ही रही है, और आगे बढ़ती ही रहेगी।

०००

ફૂટમાં
દરિયાઈ સપાટી
ધ્રુવપ્રદેશો
ઉત્તર અમેરિકા અને દક્ષિણ અમેરિકા
આફ્રિકા
યુરોપ

આફ્રિકા
ઑસ્ટ્રેલિયા

આંતરરાષ્ટ્રીય ધોરણસરના
ભૂકંપ મથકોની જગતવ્યાપી હારમાળા
યુનાઈટેડ સ્ટેટ્સ કોસ્ટ એન્ડ જિયોડેસિક સર્વે
● સ્થપાયેલાં
○ સ્થપાનારાં

परिशिष्ट २

महत्त्वपूर्ण घटनाएँ

ई० स० पूर्व

३२१ — ग्रीक सागरवेत्ता पाइथियासने उत्तरमें आइसलैंड तक यात्रा की। अक्षांश मापनेका तरीका पता किया। चन्द्रके कारण ज्वार भाटा होता है—यह कल्पना भी उसकी थी।

ई० स०

९१४ — अरब इतिहासकार मसूदीने वाष्पीभवन तथा बरसात होनेके कारण पता किये। समुद्रका पानी खारा क्यों है, यह समझाया।

१००३ — नोर्स एरिक्सन नामक वाइकिंगने अटलांटिक पारकर ग्रीनलैंड तक यात्रा की। वह उत्तर अमरीका तक पहुँचा।

११०० — चुम्बकीय गुणवाली सुई नाविकोंके लिए मार्गदर्शक होती है—इस बातका प्रयम लगा।

११००–१३०० — अरब तथा पर्शियाके व्यापारी प्रवर्तित हवाके पालवाले जहाजोंमें प्रशान्त महासागरकी यात्रा की। वे हवाई टापू, मार्केसस टापू तथा न्यूजीलैन्ड बस गए।

१२९२ — चीनमें १७ साल रहकर मार्कोपोलो सुमात्रा, सिलोन, ईरान तथा वेनिस होकर अपने १४ जहाजोंके साथ यूरोप वापस लौटा।

१४१६ — पुर्तगीज राजाने साग्रेस बंदरगाहमें जहाजरानीका विशेष विद्यालय कायम किया।

१४८८ — बार्थोलोम्यु डायाज—पहला यूरोपी यात्री जिसने अफ्रीकाका चक्कर लगाकर पहली बार हिन्द महासागरमें प्रवेश किया।

१४९२ — क्रिस्टोफर कोलम्बस भारतकी खोजमें निकला परन्तु अमरिका जा पहुँचा।

१४९९–१५०१ — अमरिगो वेस्पुकी दक्षिण अमेरिकाके ६,००० मीलके किनारे घूम आया। रेखांश खोजनेका व्यवहार्य तरीका पता किया। पृथ्वीका विषुववृत्तीय व्यास निश्चित किया। आधुनिक पद्धतिके हिसाबसे इसमें सिर्फ ५० मीलका फर्क था।

१५१३ — वास्को नूनेज—पनामाकी उस ओर सारे प्रशान्त महासागरमें घूम आया।

१५१९ — फर्डिनान्ड मेगेलन—दक्षिण अमेरिकाका चक्कर लगाकर एशियाके लिए निकला। वह तथा उसके साथी फिलिप्पाइन्समें लड़ाईमें मारे गए। परन्तु उसका एक साथी जुआन डेल्केनो, हिंद महासागर पार करके पूरी पृथ्वी प्रदक्षिणा करके अपने वतन लौटा।

१५७६ मार्टिन फ्राबिशरने उत्तर ध्रुव समुद्र पार करके पूरबमें जानेका प्रयत्न किया।

१५८५ मरकेटरने तारोंके ज्ञानकी विशिष्ट पद्धतिसे नक्शा और उसके आधार दुनियाके नक्शे बनाये।

१५९४ विलियम बरेंटसने तीन बार आगे पहुंचनेके प्रयत्न किये—तीनों असफल रहे। वह स्पिट्सबर्गेन तक पहुंच गया।

१६०१ हेनरी हडसन—हडसन नदी पार करके दूर हडसनके उपसागर पर घूम आया।

१६०६ विलियम बैफिनने उत्तर महासागरकी यात्रा करके अपनी राय जाहिर की कि उत्तर पश्चिम होकर जानेका सबसे सही मार्ग खोजनेका प्रयत्न व्यर्थ है। ऐसा कोई मार्ग है ही नहीं।

१६४२ एबल तासमानने आस्ट्रेलियाके चारों ओर चक्कर लगाया। उसने तस्मानिया और न्यूजीलैंडकी खोज की।

१७३७ बंगालके उपसागरमें महाभयानक भूकम्प। ३ लाख मानव मर गये और २० हजार नौकाएं सागरमें डूब गयीं।

१७६८–१७७६ कप्तान जेम्स कुककी एण्डेवर जहाजमें वैज्ञानिक यात्रा। दक्षिण ध्रुववृत्त लांघनेवाला प्रथम जहाज। भिन्न भिन्न गहराइयोंमें समुद्रके उष्ण तापमानका लेखा किया। समुद्री प्रवाहोंके नक्शे बनाये। कोरल रीफ्स मूंगेके बने टापुओंके बारेमें जानकारी प्राप्त की।

१७६० बेंजामिन फ्रेंकलिनने गल्फ स्ट्रीमका अभ्यास किया और उसका नक्शा बनाया।

१७९०–१८३० अंग्रेज भूगोलशास्त्री जेम्स रेनेलने पवनके प्रवाह तथा अटलांटिक महासागरके प्रवाहोंके बारेमें व्यापक अनुसंधान किया।

१८१८ सर जान रासने समुद्रके ६००० फुट गहरे तलसे मिट्टी लाकर उसमें रहे जीवोंका अध्ययन किया।

१८४१ एडवर्ड फोर्ब्स तथा मैथ्यू मेरीने समुद्रके वैज्ञानिक विभाग निश्चित किये तथा अनुसंधान शुरू किया। समुद्र विज्ञानकी नींव डाली।

१८४५ सर जान फ्रेंकलिन—उत्तर पश्चिम मार्गकी खोजमें रवाना हुए। पूर्व तथा पश्चिममें उनकी सहायताके लिए आये जहाज मेलविल साउंड (उपसागर)में मिल गए। मार्ग मिल गया पर फ्रेंकलिनकी मृत्यु हो गयी।

१८६४ नार्वेके स्वेंड फोयनने व्हेल शिकारके लिए हारपून गन बनायी। व्हेल शिकारकी पद्धतिका विकास किया।

१८७२–१८७६ आधुनिक समुद्र विज्ञानके विकासके लिए चैलेंजरकी यात्रा। सर चार्ल्स व्यविल थाम्सनने ६९ ००० मीलकी यात्रा की। इस लम्बी यात्राके दरमियान समुद्रकी गहराईके नाप, समुद्रके पानीका पृथक्करण, समुद्रके तलकी मिट्टीका वैज्ञानिक अध्ययन वगैरा किया गया।

१८८३ क्राकाटोआका विस्फोट—सारा टापू उड़ गया। ३६ ३८० मानवोंकी बलि ली।

१८९३–९६ नानसन—उत्तर महासागरमें फ्राममें यात्रा की।

१९०३	'आमुंडसनने उत्तर-पश्चिम जलमार्गमें सफल यात्रा की।
१९०९	एडमिरल रॉबर्ट पियरी, उत्तरध्रुव पहुँच गए।
१९११	रानाल्ड आमुंडसन दक्षिण ध्रुव पहुँच गए। उनके बाद केप्टन स्कॉट पहुँचे।
१९२४	एफ० ए० वनिंगन मीनज़ पनडुब्बी (सबमरीन)में लोलक-पद्धतिसे गुरुत्वाकर्षणका लेखा लिया।
१९२७	उत्तर ध्रुव समुद्रमें २,९७५ फेदम (१ फेदम=६ फुट)की गहराईमें 'नाटिलस' सबमरीन द्वारा ध्रुव तक पहुँचनेका असफल प्रयत्न।
१९३४	आटिस बार्टन तथा विलियम बिब 'वेथीस्फियर'में, समुद्रमें ३०२८ फुटकी गहराई तक जाते हैं।
१९३७	डॉ० मोरिस यूगने कृत्रिम भूकम्पन द्वारा भूगर्भका अध्ययन करनेकी पद्धतिका विकास किया।
१९४५	कुजनेनबर्ग, ७० फुट लम्बी नलीके द्वारा, समुद्रके तलेसे मिट्टीके नमूने पानेका तरीका खोजा।
१९४७	हरॉल्ड यूरीने ऑक्सिजन थर्मामीटरकी खोज की। समुद्र तलेकी मिट्टीमें स्थित मूलतत्वोंके समस्थानिक गुणात्मकके द्वारा समुद्र तलेकी उम्र निश्चित करनेकी पद्धतिका विकास किया। हेस पेटर्सनने अटलांटिकके तलेका अध्ययन करके बताया कि समुद्रका तला सपाट नहीं है। अटलांटिकमें १२ ००० फुट मोटा स्तर सिर्फ पटावसे बना है।
१९५०–५२	फिलिपाइन ट्रेंच समुद्रकी १०,०६० मीटरकी गहराईसे डेनिश जहाजने जीवित जीवोंके नमूने इकट्ठे किये। कहा जाता था कि नियापिलि नामक जीव साढ़े तीन करोड़ वर्ष पहले नामशेष हो गए थे। परन्तु समुद्र तलेसे ये जीव भी पाये गए।
१९५०–५७	स्क्रिप्स इन्स्टिट्यूट ऑफ ओशनोग्राफीकी ओरसे पैसिफिक महासागरके तलेकी पैमाइश। इस तलके ३,००,००० निरीक्षणोंका लेखा लिया गया।
१९५०	एलवा रूप—जक पेकार्डकी सहायतासे व्हेलोंका अध्ययन। जेक्स कास्टोने व्हेलोंका पर्यवेक्षण किया।
१९५२	अमेरिकाने बड़े पैमानेपर प्रवाल-टापुओंका अनुसंधान कार्य शुरू किया। कोरल टापू पर बोरिंग करनेसे नीचे ज्वालामुखी पाया गया।
१९५६	समुद्र तले परका ४०,००० मील लम्बी पर्वतमालाका पता चला। उसकी पैमाइशका काम चार साल तक चला।
१९५७–५८	अन्तर्राष्ट्रीय भू भौतिक वर्ष मनाया गया। कई अनुसंधान-कार्य हुए। विकिरण प्रकृतिवाले पदार्थोंको समुद्रमें डुबा दिया जाए तो कैसी परिस्थितिका निर्माण हो तथा आबोहवाके परिवर्तनमें महासागरोंका हिस्सा वगैरह के बारेमें अध्ययन। समुद्रसे प्राप्त खुराकका पूरा फायदा उठाया जाए तो दुनिया भरके मानवोंको पर्याप्त प्रोटिन प्राप्त हो—अनुसंधानोंका एक निष्कर्ष

	अटलांटिक पैसिफिकमें ३० स्थायी निरीक्षण केन्द्र तथा ८० अनुसंधान जहाजोंके द्वारा समुद्र अनुसंधानका कार्य हो रहा है।
१९५८	अमरीकी पनडुब्बी (सबमरीन) उत्तर महासागरमें—उत्तर ध्रुवके नीचेसे सुरक्षित रूपसे निकल गयी।
११६०	जेक पिकाड तथा डान वाल्सन 'त्रिस्त' बथिस्काफमें समुद्रकी सतहसे ३५,००० फुट नीचे गहराईमें जाकर रिकार्ड स्थापित किया।
१९६१	विलार्ड बस्काम नामक अमरीकी विज्ञानशास्त्रीने 'मोहोल' प्रोजेक्टका काम शुरू किया। इसके लिए डेढ़ फर्लांग गहरी खुदाईका काम शुरू किया।

परिशिष्ट ३

बॉफोर्ट मात्रा

बॉफोर्ट क्र स	पवनका वर्णन	पवनका वेग प्रति घंटा
०	स्थिर हवा, धुआं सीधे ऊपर चढ जाता है।	१ किलोमीटरसे कम
१	हवा—मंद गति, पवनकी दिशा धुएँके मार्गसे मालूम होती है।	२ से ६ किलोमीटर (१ से ३ मील, १ से ३ नाट)
२	हवाकी हल्की लहरें। चेहरे पर पवनका स्पर्श महसूस किया जाता है। पत्तो की ममर।	७ से १२ किलोमीटर (४ से ७ मील, ४ से ६ नाट)
३	पवनकी हल्की लहरोंमे पत्ते व टहनिया हिलती रहें। हलका झंडा कुछ फहरे।	१३ से १८ किलोमीटर (८ से ११ मील, ७ से १९ नाट)
४	साधारण-सा पवन, धूल व कागज उडने लगें छोटी डालियां हिलती रहे।	१९ से २६ किलोमीटर (१२से १६ मील, ११ से १८ नाट)
५	शरीर पर महसूस किया जाने वाला पवन, पत्तेवाले छोटे पेड-पौधे झूमने लगें, तालाब व सरोवरमे नन्ही लहरें।	२७ से ३५ किलोमीटर (१७ से २२ मील १५ से १९ नाट)
६	तेज पवन, पेडकी बडी डालियां हिलने लगती हैं। टेलिग्राफके तारोसे गुजरता पवन गूजन लगे। छाता खुला रखना मुश्किल हो।	३६ से ४४ किलोमीटर (२३ से ४७ मील, २० से २४ नाट)
७	साधारण तूफानी पवन, पूरे पेड हिलने डुलने लगें। पवनकी विरुद्ध दिशामे चलनेमे कठिनाई महसूस हो।	४५ से ५५ किलोमीटर (२८ से ३४ मील २५ से ३० नाट)
८	काफी तूफानी पवन—पेडोंकी शाखाएँ टूट जाएँ पवनकी विरुद्ध दिशामे चलनेमे अवरोध महसूस हो।	५६ से ६६ किलोमीटर (३५ से ४१ मील, ३१ से ३५ नाट)
९	जोरदार पवन चिमनियाँ पौधोंके गमले और खपडे उड जाएँ।	६७ से ७७ किलोमीटर (४२ से ४८ मील, ३६ से ४२ नाट)
१०	जोरदारसे बहता पवन, पेड उखड जाएँ, इमारतोंको काफी नुकसान पहुँचे जमीन पर पैर न टिकें।	७८ से ९० किलोमीटर (४९ से ५६ मील, ४३ से ४९ नाट)
११	झझावात, शायद ही देखनेको मिले व्यापक हानि।	९१ से १०४ किलोमीटर (५७ से ६७ मील, ५० से ५६ नॉट)
१२	बवंडर, समुद्र परकी हवा फेन व तुषार जलकणोसे भरी-पूरी।	१०५ किलोमीटर से अधिक (६८ मील अर्थात ५६ नॉटसे अधिक)

परिशिष्ट ४

उष्णता (गरमी), उष्णतामान तथा उष्णताधारक शक्ति

१ ग्राम पानीको गरम करने पर उसका उष्णतामान १° सें० जितना हो तब पानीने एक कैलरी गरमी पायी, ऐसा समझा जाता है।

उष्णतामानका मतलब है, किसी भी पदार्थमें स्थित उष्णता (गरमी)की सतह सूचित करने वाला अंक। किसी सँकरे बरतनमें थोड़ा पानी भरने पर भी पानीकी सतह ऊँची होती है। इतना ही पानी किसी चौड़े बरतनमें भरा जाए तो पानीकी सतह अपेक्षाकृत नीची होती है। एक बहुत ही वजनदार पदार्थका बड़ा टुकड़ा और उसी पदार्थका एक छोटा टुकड़ा लेकर दोनोंको समान प्रमाणमें उष्णता दी जाए तो बड़े टुकड़ेका उष्णतामान इतना ऊँचा नहीं होगा जितना छोटेका होगा। छोटे टुकड़ेके उष्णतामानकी सतह अपेक्षाकृत ऊँची होगी—हालांकि दोनोंको उष्णता समान प्रमाणमें दी गई होगी।

उष्णता कैलरीमें नापी जाती है। उष्णतामानका नाप थर्मामीटरके द्वारा होता है। दो प्रकारके थर्मामीटर व्यवहारमें चलते हैं—फारेनहाइट और सेंटीग्रेड पिघलती बर्फका उष्णतामान ३२ फा० या ०° सें० कहलाता है और उबलते हुए पानीका उष्णतामान २१२° फा० या १०० सें० कहलाता है। सेंटीग्रेड (स) उष्णतामान निम्नलिखित सूत्रसे फारेनहाइट (फा°) में बदला जा सकता है

$$\text{स}^\circ = \frac{५}{९}(\text{फा}^\circ - ३२) \text{ या } \frac{\text{स}^\circ}{५} = \frac{(\text{फा}^\circ - ३२)}{९}$$

भिन्न भिन्न पदार्थोंकी उष्णताधारक शक्ति भिन्न भिन्न होती है। १ ग्राम ताँबेको तथा १ ग्राम पानीको समान प्रमाणमें गरमी दी जाए तो ताँबा जल्दी गरम हो जाएगा। पानीको गरम होनेमें देर होगी। समान प्रमाणमें गरमी दी जाने पर भी पानीका उष्णतामान जब १° स० ऊँचा होगा तब ताँबे का उष्णतामान १०° सें० होगा। यह उष्णताधारक शक्ति कैलरीमें नापी जाती है। किसी भी पदार्थको, उसका उष्णतामान १ सें० ऊँचा होने तक गरम किया जाए तब तक उस पदार्थसे ग्रहण की गयी गरमी उसकी उष्णताधारक शक्ति कही जाती है। पानीकी उष्णताधारक शक्ति १ कैलरी है। ताँबेकी उष्णताधारक शक्ति ०.१ कैलरी है। उष्णताधारक शक्ति जितनी कम, पदार्थ उतनी अधिक शीघ्रतासे गरम होता है।

કસ્તુરી વૃષભ
સાઇબેરિયા
ઝેબ્રા
અલાસ્કા
બિસન
મૂઝ
જળ બિલ્લી
સમયનો સમુદ્ર કિનારો

परिशिष्ट ४

उष्णता (गरमी), उष्णतामान तथा उष्णताधारक शक्ति

१ ग्राम पानीको गरम करने पर उसका उष्णतामान १ सं० जितना हो, तब पानीने एक कैलरी गरमी पायी, ऐसा समझा जाता है।

उष्णतामानका मतलब है किसी भी पदार्थमें स्थित उष्णता (गरमी)की सतह सूचित करने वाला अंक। किसी सँकरे बरतनमें थोड़ा पानी भरने पर भी पानीकी सतह ऊँची होती है। इतना ही पानी किसी चौड़े बरतनमें भरा जाए तो पानीकी सतह अपेक्षाकृत नीची होती है। एक बहुत ही वजनदार पदार्थका बड़ा टुकड़ा और उसी पदार्थका एक छोटा टुकड़ा लेकर, दोनोंको समान प्रमाणमें उष्णता दी जाए तो बड़े टुकड़ेका उष्णतामान इतना ऊँचा नहीं होगा जितना छोटेका होगा। छोटे टुकड़ेके उष्णतामानकी सतह अपेक्षाकृत ऊँची होगी—हालाँकि दोनोंको उष्णता समान प्रमाणमें दी गई होगी।

उष्णता कैलरीमें नापी जाती है। उष्णतामानका नाप थर्मामीटरके द्वारा होता है। दो प्रकारके थर्मामीटर व्यवहारमें चलते हैं—फारेनहाइट और सेंटीग्रेड पिघलती बर्फका उष्णतामान ३२° फा० या ०° सें० कहलाता है और उबलते हुए पानीका उष्णतामान २१२ फा० या १००° सें० कहलाता है। सेंटीग्रेड (सं) उष्णतामान निम्नलिखित सूत्रसे फारेनहाइट (फा°) में बदला जा सकता है

$$स = \frac{५}{९}(फा° - ३२) \text{ या } \frac{स°}{५} = \frac{(फा° - ३२)}{९}$$

भिन्न भिन्न पदार्थोंकी उष्णताधारक शक्ति भिन्न भिन्न होती है। १ ग्राम ताँबेको तथा १ ग्राम पानीको समान प्रमाणमें गरमी दी जाए तो ताँबा जल्दी गरम हो जाएगा। पानीको गरम होनेमें देर होगी। समान प्रमाणमें गरमी दी जाने पर भी पानीका उष्णतामान जब १ सं० ऊँचा होगा तब ताँबेका उष्णतामान १०° सं० होगा। यह उष्णताधारक शक्ति कैलरीमें नापी जाती है। किसी भी पदार्थको, उसका उष्णतामान १° सें० ऊँचा होने तक गरम किया जाए तब तक उस पदार्थसे ग्रहण की गयी गरमी उसकी उष्णताधारक शक्ति कही जाती है। पानीकी उष्णताधारक शक्ति १ कैलरी है। ताँबेकी उष्णताधारक शक्ति ०.१ कैलरी है। उष्णताधारक शक्ति जितनी कम, पदार्थ उतनी अधिक शीघ्रतासे गरम होता है।

કસ્તુરી વૃષભ
ઝેબ્રા
બિસન
મૂઝ

प्राकृतिक रूपसे बना पत्थर की कमान

अनुक्रमणिका

प्राकृतिक रूपस बना पत्थर की कमान

अनुक्रमणिका

• • •